

प्रो. लाल सिंह

लेखक की छपी पुस्तकें

1. श्री गुरु रविदास जी उनका गुरु तथा श्री गुरु ग्रन्थ साहिब
2. सटीक बाणी श्री गुरु रविदास जी तथा तत्त सिद्धांत
3. मूल मंत्र अनुसार आदि धर्म बनाम विश्व धर्म के सृजक - गुरु रविदास जी
4. ''बेगमपुरा सहर को नाऊ'' में स्थापित विश्व संविधान के सृजक - गुरु रविदास जी
5. गुरु रविदास जी का धर्म सिन्धु घाटी के आदिवासी अछूतों का आदिधर्म
6. आदिधर्म बनाम विश्व धर्म ग्रन्थ पोथी साहिब के सृजक सतगुरु रविदास जी
7. सतगुरु रविदास जी की ऐतिहासिक जीवनी
8. फौजों के सुप्रीम कमांडर सतिगुरु रविदास जी

पुस्तकें मिलने का पता

श्री गुरु रविदास बाणी तथा आदि धर्म खोज केन्द्र
बी-32, ई-13/241, अमन नगर, समीप ग्रीनलैंड
पब्लिक स्कूल, लुधियाना (पंजाब)-141008, मो. - 94175-57751
श्री गुरु रविदास मिशन प्रचार संस्था पंजाब (रजि.)
गांव बिनपालके समीप भोगपुर, ज़िला जालंधर-144201, मो. 98722-42944

सटीक बाणी श्री गुरु रविदास जी तथा तत्त सिद्धांत पुस्तक आप पंजाबी तथा हिन्दी में www.begumpuramission.com पर भी पढ़ सकते हैं।

सटीक बाणी श्री गुरु रविदास जी तथा तत्त सिद्धांत

प्रो. लाल सिंह

सटीक
बाणी श्री गुरु रविदास जी
तथा
तत्त सिद्धांत



आदि धर्म अनमोल रत्न - कौम के हीरे
प्रो० लाल सिंह एडवोकेट
एम.ए.एल.एल.बी., पी.इ.एस. (1) (सेवानिवृत्त)
पूर्व प्रमुख - पोस्ट ग्रैजुयेट पंजाबी विभाग
सरकारी कालेज, होशियारपुर (पंजाब)

सटीक
बाणी श्री गुरु रविदास जी
तथा
तत्त सिद्धांत

आदि धर्म अनमोल रत्न - कौम के हीरे

प्रो० लाल सिंह एडवोकेट

एम.ए.एल.एल.बी., पी.इ.एस. (1) (सेवानिवृत्त)

पूर्व प्रमुख

पोस्ट ग्रैजुयेट पंजाबी विभाग

सरकारी कालेज, होशियारपुर (पंजाब)

अनुवादक

राम सिंह आदवंशी (सेवानिवृत प्रिंसीपल)

आदिधर्म अनमोल रत्न

बार्ड नम्बर-1, कृष्णा नगर, हमीरपुर हिमाचल प्रदेश।

मो. 9418945621, 8219016240

Satik
Bani Shri Guru Ravidass Ji
Ate Tat-Sidhant

© PROF. LAL SINGH

M.A.L.L.B; P.E.S. (1) Retd.

(Former) Head

Post Graduate Department of Punjabi

Govt. College, Hoshiarpur, Punjab

© समस्त अधिकार लेखक की पत्नी जगदीश कौर के पास आरक्षित हैं।

किसी भी प्रकार की कानूनी कारवाई लुधियाना की अदालत में की जायेगी।

भारत में मूल्य - रुपये - 500, पौंड - 8, डालर - 15

प्रकाशक

श्री गुरु रविदास बाणी तथा आदि धर्म खोज केन्द्र

बी-32, ई-13/241, अमन नगर, समीप ग्रीनलैंड

पब्लिक स्कूल, लुधियाना (पंजाब)-141008,

मो. - 94175-57751

मुद्रक

वालिया पेपर एंड स्टेशनर्ज़, जालन्धर।

समर्पित

मुझे उच्च बुलंदियों पर पहुंचाते हुये
बहुत ही ग़रीबी के साथ जूझते
हुये महान् बलिदानी योद्धा पिता स. शाम सिंह जी
व
माता श्रीमती हरनाम कौर जी को समर्पित यह पुस्तक

दानी सज्जन

संत स्वामी सुअैम दास जी (गद्दीनशीन आदि दुआर रुड़की)
संत माधो बलवीरा जी (अमरीका)
अश्विनी कुमार, गांव पुआदड़ा जालन्धर (इटली)
राम सरूफ बंगड़, गांव मल्ला सोढ़िया, स.भ.स. नगर (इटली)
दलविन्द्र सिंह, गांव तैगड़पुर, स.भ.स. नगर (इटली)
बौबी विरदी, गांव राये पुरबलां, जालन्धर (इटली)
गुरबख्श लाल जस्सल, गांव अबादपुरा, जालन्धर (इटली)
अृमतपाल, गांव ढकान कला, होशियारपुर (इटली)
जसविंद्र कुमार, गांव फराला, स.भ.स. नगर (इटली)
रूबी धीर, गांव खानखाना, स.भ.स. नगर (इटली)
मुखविंद्र पाल सरोय, गांव मसाणी, स.भ.स. नगर (इटली)
बलविंद्र कुमार ढंडा, शहर व्याना, आस्टरीया (यूरप)
नरेश महे, बूटा मंडी, जालन्धर



तत्त सिद्धान्त एक आदर्श दस्तावेज़

गुरु रविदास जी महाराज के दर्शन का आभास उन विद्वानों को होता है, जो खुद भी दार्शनिक हों। गुरु जी ने मनुवादी विचारों को अपनी तेज धार तलवार व बड़ी नृशंसता से काट कर, तर्क के आधार पर विश्व में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। उन्होंने धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और जीवन के हर पहलू पर अपने अमूल्य सिद्धांतों का सृजन किया है, जिन का बहुमुखी अध्ययन अगर किसी ने किया है, तो पंजाबी भाषा के प्रकांड विद्वान प्रोफैसर दित्त सिंह जी और प्रोफैसर लाल सिंह जी ने ही किया है, जिन की विद्वता के बारे में उन के सारगर्भित क्रांतिकारी साहित्य का अनुशीलन करने के बाद ही ज्ञात हो सकता है।

प्रोफैसर दित्त सिंह जी ने ही सर्व प्रथम गुरु ग्रंथ साहिब की विशद व्याख्या कर के ग्रंथ के वास्तविक ज्ञान और अर्थों को जन-जन तक पहुंचाया है, जिस कारण वे इतिहास में अपना नाम स्वर्ण अक्षरों में दर्ज करवा गए हैं मगर प्रोफैसर लाल सिंह जी ने जहां गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पूर्ण अध्ययन कर के, उस के गूढ़ अर्थों की व्याख्या की है, वहीं उन्हे जहां कहीं भी कोई त्रुटि नज़र आई है, उस को भी जनमानस के अंतर्मन तक प्रेषित किया है।

आज तक गुरु रविदास जी महाराज के साहित्य की व्याख्या करने वालों ने उन की वाणी का प्रयोग केवल अपने पेट भरने का साधन बना कर रखा हुआ था, गुरु जी की वाणी का उपयोग केवल धर्म-कर्म तक ही सीमित कर के किया जा रहा था।

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस॥
ते नर दोजक जाहिगे सति भाखै रविदास॥२४२॥

सभी संत महापुरुष उपरोक्त दोनों ही पंक्तियों को अपने उद्‌वोधन से पूर्व उच्चारण कर के अपने सत्संग का आग़ाज करते आए हैं। केवल स्वर्ग-नर्क का भय दिखा कर जनता को भयभीत किया जाता था। इस के बाद संगत को इकठ्ठा करने के लिए, ये लोग गुरु जी की एक और पंक्ति का उच्चारण करते हुए

फरमाते हैं कि-

सतिसंगति मिली रहियो माधो जैसे मधुप मखीरा।

सभी संत इस पंक्ति की व्याख्या करते हुए फरमाते हैं कि, संगत को मधुमक्खियों की तरह मिलजुल कर, एकता बना कर रहना चाहिए, इस से आगे इस पंक्ति की व्याख्या करने की किसी भी संत महापुरुष को हिम्मत नहीं होती थी मगर प्रोफैसर लाल सिंह जी ने अपनी क्रांतिकारी लेखनी से इस पंक्ति के दूसरे भाव को जन साधारण तक पहुंचा कर मनुवादियों के असहाय गुलाम शूद्र मूलनिवासी समाज को सामझाया है कि-

संगत को मधु मक्खियों की तरह जहां, मिल जुल कर रहना चाहिए वहाँ मधु मक्खियों की तरह, हिम्मत और साहस से भी जीना सीखना चाहिए, क्योंकि मधुमक्खियां जहां भिखारी को भीख देती हैं, चोर को चोरी करने देती हैं, वहीं उन को इस चोरी की कोई सजा नहीं देती हैं, मगर यदि कोई उन के आशियाने को पत्थर मारे तो वे दुश्मन को मौत के घाट उतार कर ही चैन लेती हैं, वे दुश्मन को भी मार देती हैं और खुद भी शहीद होती हैं, जब कि मूलनिवासी सवर्णों के अत्याचार सहन करते रहते हैं और मनुवादी अत्याचार करते ही जाते हैं। गुरु जी फरमाते हैं कि मधुमक्खियों की तरह दुश्मन को भी उस के कुकृत्यों की सजा अवश्य दो। इस व्याख्या ने भारत में ही नहीं अपितु विश्व में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है।

प्रोफैसर लाल सिंह जी ने तत्व सिद्धांत ऐतिहासिक पुस्तक लिख कर, गुरु जी के क्रांतिकारी दर्शन को बड़ी बारीकी से समझा है और साहित्य के सिद्धांतों के अनुसार परख कर, पाठकों को उपलब्ध करवाया है, जिस से भावी स्कालर लाभ उठा कर, रिसर्च करने के लिए लाभान्वित होंगे। काव्य सिद्धांतों के आधार पर गुरु रविदास जी महाराज की वाणी की बहुमुखी विवेचना की है।

मेरा सौभाग्य है कि, मुझे तत्व सिद्धान्त पंजाबी पुस्तक का हिंदी में अनुवाद करने का सुअवसर मिला है, जिस के लिए मुझे प्रोफैसर लाल सिंह जी की प्रवीण अर्धांग्नि जगदीश कौर ने उपयुक्त पात्र समझा है, जिस के लिए मैं आभारी हूँ। मैं पाठकों से भी विनम्र अनुरोध करता हूँ कि, मैं पंजाबी भाषा का तो अल्प ज्ञानी हूँ, इसीलिए भाषाई कमियाँ रहना स्वाभाविक ही हैं, जिन के लिए आप योग्य पाठक मुझे क्षमा करेंगे।

राम सिंह आदवंशी

विषय सूची

नं.	विषय	पृष्ठ सं.
	सलोक	
	(i) सोहम/ੴ के सिद्धांत का निरूपण	29=43
	(ii) यह सलोक गुरु रविदास जी का ही है।	
	(iii) सलोक का अंतरीव विचार-विधान।	
	(iv) सलोक का अर्थ	
	१ सिरी राग	
1.	तोही मोही मोही तोहि	44=62
	(i) ੴ / सोहम का सिद्धांत (सृष्टि सृजन का सिद्धांत)	
	(ii) पुनर सुरजीती का सिद्धांत	
	(iii) ब्रह्म ज्ञान के सिद्धांत का सृजन	
	(iv) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(v) शब्द अर्थ	
	२ राग गऊड़ी।	
2.	मेरी संगति पोच	63=76
	(i) प्रस्तावना नंबर २ की अर्थ समस्या	
	(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(iii) शब्द अर्थ	
3.	बेगमपुरा सहर को नाउ	77=108
	(i) गुरु रविदास वाणी और मार्क्सवाद	
	(ii) विश्व सरकार बनाम विश्व खालसा सरकार का संविधान	
	(iii) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(iv) शब्द अर्थ	
4.	घट अवघट डूगर घणा	108=125
	(i) ब्रह्म ज्ञान के एकमात्र मालिक तथा विक्रेता गुरु रविदास जी	
	(ii) गुरु रविदास जी और गुरु नानक देव जी का सच्चा सौदा।	
	(iii) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(iv) शब्द अर्थ	
5.	कूप भरिओ जैसे दादिरा	126=130
	(i) ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति का सिद्धांत	
	(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(iii) शब्द अर्थ	
6.	सतयुगि सतु तेता जगी	131=148
	(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान (हिंदू धर्म की विचारधारा का खंडन और नए विश्व धर्म की विचारधारा की उत्पति)	
	(ii) शब्द अर्थ	
	३ राग आसा	
7.	मिृग मीन भृंग पतंग कुंचर	149=157
	(i) गुरु रविदास जी तथा मूल मंत्र	
	(ii) शब्द में सिद्धांतों का सृजन	
	(iii) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(iv) शब्द अर्थ	
8.	संत तुझी तनु संगति प्रानि	158=165
	(i) शब्द में सिद्धांतों का सृजन	
	(ii) संगत की परिभाषा और सिख विद्वान	
	(iii) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(iv) शब्द अर्थ	
9.	तुम चंदन हम इरंड बापरे	166=175
	(i) मधुप मखीरा का अर्थ (साधक के गुण)	
	(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान (सूरमे की सृजना)	
	(iii) शब्द अर्थ	
10.	कहा भइओ, जउ तन भइओ छिन छिन	176=178
	(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(ii) शब्द अर्थ	
11.	हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे	179=181
	(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान	
	(ii) शब्द अर्थ	

12. माटी को पुतरा कैसे नचत है 182=184
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

४ राग गुजरी।।

13. दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ 185=190
(i) पूजा सामग्री का नया सिद्धांत
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ

५ राग सोरठि ।।

14. जब हम होते तब तू नाही 191=199
(i) गुरु रविदास जी तथा विज्ञान
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ
15. जओ हम बांधे मोह फास 200=207
(i) सरबत के भले का सिद्धांत
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ
16. दुलभ जनमु पुन्न फल पाइओ 208=211
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ
17. सुख सागर सुरितरु चिंतामनि 212=236
(i) सिंधु घाटी के मूल निवासी तथा विश्व की लिपियां
(ii) गुरु रविदास जी भाषा वैज्ञानिक
(iii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iv) शब्द अर्थ
18. जउ तुम गिरिवर त्यो हम मोरा 237=240
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ
19. जल की भीति पवन का थंम्भा 241=261
(i) महान वैज्ञानिक गुरु रविदास जी
(ii) जाति-पाति हिंदू धर्म की देन है, पांच तत्वों की नहीं

(iii) शिल्पकारी रूपक के रहस्यवादी गुरु रविदास जी
(iv) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(v) शब्द अर्थ
20. चमरटा गांठि ना जनई 262=265
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

६ राग धनासरी

21. हम सरि दीनु दइआल न तुम सरि 266=273
(i) प्रभ के अस्तित्व का परिपक्व
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ
22. चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो 274=279
(i) प्रभ प्राप्ति की विधि का सिद्धांत
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ
23. नाम तेरो आरती मजनु मुरारे 280=285
(i) नए धर्म की नई आरती
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ

७ राग जैतसरी।।

24. नाथ कछअ ना जानउ 286=292
(i) गुरु रविदास जी का गुरु कौन ?
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ

८ राग सूही।।

25. सह की सार सुहागनि जानै 293=296
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ
26. जो दिन आवहि सो दिन जाही 297=300
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

27. ऊचे मंदर साल रसोई 301=303
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

९ राग बिलाबल।।

28. दारिदु देखि सभ को हसै 304=307
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ
29. जिह कुल साधु बैसनो होइ 308=315
(i) क्या गुरु रविदास जी विष्णु भक्त थे?
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ

१० राग गोंड।।

30. मुकंद मुकंद जपहु संसार 316=320
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ
31. जे ओहु अठसठि तीर्थ न्हावै 321=324
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

११ राग रामकली

32. पडीये गुनीये नामु सभु सुनीये 325=328
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

१२ राग मारू।।

33. ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै 329=337
(i) क्रांतिकारी गुरु रविदास जी
शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

शब्द अर्थ

34. सुख सागर सुरतरु चिंतामनि 338=348
(i) समूचे शब्द की विचारधारा तथा राग
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ

१३ राग केदारा।

35. खुद कर्म कुल संजुगतु है 349=354
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

१४ राग भैरउ

36. बिनु देखे उपजै नही आसा 355=389
(i) आदि धर्म, बुद्ध धर्म तथा वाणी गुरु रविदास जी
(ii) गुरु रविदास वाणी और जपुजी के पांच खंड
(iii) शब्द का अंतरीव विचार विधान (महात्मा बुद्ध वाणी तथा गुरु रविदास वाणी की विचारधारक समरूपता)
(iv) शब्द अर्थ

१५ राग बसंत।।

37. तुझहि सुझंता कछू नाहि 390=396
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ

१६ राग मलार।।

38. नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं 397=402
(i) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(ii) शब्द अर्थ
39. हरि जपत तेऊ जना 403=419
(i) एक प्रभ का संकल्प और नए विश्व धर्म की स्थापना
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ
40. मिलत पिआरो प्रान नाथु 420=424
(i) साध संगत के सिद्धांत की सम्पूर्णता
(संगत द्वारा प्रभ प्राप्ति)
(ii) शब्द का अंतरीव विचार विधान
(iii) शब्द अर्थ

प्रस्तावना

जब अन्तर आत्मा में से आवाज़ निकलती है तो उस परम पिता परमात्मा तक अवश्य पहुंचती है। यह बात अटल सत्य है। कितने समय से मन की इच्छा थी कि प्रो० लाल सिंह जी की पुस्तक ''सटीक बाणी श्री गुरु रविदास जी तथा तत्व सिद्धांत'' को अन्य भाषाओं में भी प्रसारित किया जाये। अत: अब इस को हिन्दी में छापकर यह मेरे मन की इच्छा पूर्ण हो रही है।

अत: मेरे मन की इच्छा को पूरी करने में श्री राम सिंह जी ने पूर्ण साथ दिया। उन्होंने दिन-रात एक करके इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद किया है। उनकी भरपूर मेहनत के कारण ही आज यह धार्मिक पुस्तक साध-संगत तक पहुंचने के लिये तैयार है। अत: मैं श्री राम सिंह जी का तन्मयता से धन्यवाद करती हूँ। उस प्रभ से उनके अच्छे स्वास्थ्य की कामना करती हूँ।

अब बात इस पुस्तक की करते हैं, ''सटीक बाणी श्री गुरु रविदास जी तथा तत्व सिद्धांत'' की एक अलग ढंग के साथ व्याख्या की। सर्वप्रथम इसमें शब्द का अंतरीव विचार-विधान दिया गया ताकि पाठकों को अर्थ समझने में कोई परेशानी (मुश्किल) न आये, साथ ही साथ पाठकों को यह भी पता चल जाये कि सतगुरु रविदास महाराज जी हमें क्या समझाना चाहते हैं? शबद की रचना के समय उनके मन में क्या विचार चल रहा था, उसे परिपक्वता से प्रकट किया है।

दूसरे सबसे महत्वपूर्ण भाग 'रागों' का है। जब तक आप को राग का सुभाव नहीं पता चलता, तब तक आप शबद का सही अर्थ नहीं कर सकते, यह अटल सत्य है। इस कारण प्रो० लाल सिंह जी ने सर्वप्रथम राग के स्वभाव को समझा, फिर उनका अर्थ करने में आसानी हुई। वह कहते थे कि मैं स्वयं नहीं लिखता हूं, सतगुरु मुझ से स्वयं लिखवाते हैं।

अत: यह पुस्तक एक धार्मिक ग्रन्थ के समान है। पुस्तक में जो सतगुरु महाराज की बाणी में हमें सही उपदेश है, उसे सही ढंग से हम तक प्रो० साहिब

जी ने पहुंचाया है।

''सिरी राग'' में ''मुड़ सुरजीती'' का सिद्धांत है। ब्रह्म ज्ञान के मालिक और विक्रेता केवल और केवल श्री गुरु रविदास जी है। श्री गुरु ग्रंथ में दर्ज बाणी में दर्ज शबद ''घट अवघट डूगर घणा'' में बताया गया है कि ब्रह्म ज्ञान के मालिक तथा विक्रेता सतगुरु रविदास जी हैं।

मधु मक्खियों का उदाहरण देकर हमें संगत में विचरना सिखाया है। इसी प्रकार हम अपने अधिकारों के लिये मधु-मक्खियों की तरह लड़ना है। इस प्रकार मधु-मक्खियां अपने अधिकार शहद को छीनने वाले को डंक मार-मार कर मार तक देती हैं। उसी प्रकार सभी को अपने अधिकारों के लिये मर-मिटने का आदेश दिया है सतगुरु जी ने।

इस प्रकार अनेकों कई शिक्षाएं जो श्री गुरु रविदास जी ने श्री गुरुबाणी में दर्ज हमें दी हैं, उसके प्रो० लाल सिंह जी ने अर्थ करके समझाया है। उसे उनकी अनथक मेहनत को मैं प्रणाम करती हूं। शारीरिक तौर पर तो बेशक वह हमसे बहुत दूर हैं, परन्तु वह हमेशा हमारे साथ रहते हैं, हमेशा रहती दुनिया तक रहेंगे।

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन्त कृष्ण नाथ जी गद्दीनशीन डेरा 108 सन्त बाबा फूल नाथ जी चहेड़ू की ओर से नानकनगरी चहेड़ू ज़िला कपूरथला द्वारा 10-06-1999 को प्रकाशित किया गया। इस डेरे के प्रमुख आवाज़-ए-कौम सन्त कृष्ण नाथ जी ने इस पुस्तक के 22 वर्ष पूरे होने पर पुस्तक के लेखक को 09-06-2021 को गोल्ड मैडल (स्वर्ण पदक) के साथ सम्मानित करने की योजनाबंदी की। परन्तु प्रो० लाल सिंह 03-05-2021 को गुरप्रवास कर गये। सन्त महापुरुष स्वयं भी इस किताब से गुरु साहिब की बाणी का प्रचार कर रहे हैं, हम उनका दिल की गहराइयों से धन्यवाद करते हैं। वह हमेशा ही कौम में गुरु साहिब की बाणी का प्रचार-प्रसार करते रहे।

अत: मैं अतिधन्यवादी हूं श्री अमरीक महे भाई साहिब जी का जिन्होंने इस पुस्तक में आर्थिक सहायता करने के लिये शेष सभी सज्जनों को प्रेरित किया। मैं उन सभी भक्तों का तन्मयता से धन्यवाद करती हूं, जिन्होंने इस पुस्तक को प्रकाशित करवाने के लिये प्रेरित किया तथा सहायता की। मैं बी.एस. माधो

बलवीरा निवासी अमरीका का भी धन्यवाद करती हूं, जिन्होंने पुस्तक छपवाने में हमारी सहायता की है। स्पैशल धन्यवाद आदरणीय डॉ. चरणजीत सिंह बिनपालके और बख्शी राम दरावां जी का, जिन्होंने हमें हर सम्भव सहयोग दिया। जिस काम पर उनकी ड्यूटी लगाई, उन्होंने पूरी तन्मयता से निभाई। अत: सुखजीत सिंह वालिया जी का बहुत-बहुत धन्यवाद है, जिन्होंने समय पर पुस्तक छपवा कर हमें सौंपी। उन्होंने भी बहुत मेहनत की। अत: किसी का ज़िक्र करना रह गया हो तो माफ़ करना।

संगत के आगे अपील है कि किताब को आप पढे तथा दूसरों को भी पढ़ने के लिये प्रेरित करें ताकि सतगुरु का क्या सन्देश है? उसका पता लग सके कि कोई कमी दिखाई दे तो हमें बताने का कष्ट अवश्य करें जी। मैं तथा मेरा सुपुत्र श्री गुरकीरत सिंह आप के धन्यवादी हैं जिस-जिस ने भी हमें इस पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग दिया।

धन्यवाद।

जगदीश कौर पत्नी प्रो० लाल सिंह
ई-13, 241, अमन नगर,
समीप ग्रीनलैंड स्कूल लुधियाना, पंजाब-141008
मो. 94175-57751

प्रस्तावना

जब किसी कौम (समुदाय) को नष्ट करना हो तो उस का इतिहास नष्ट कर दो, वह कौम स्वयं ही नष्ट हो जाएगी। आर्यों ने मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के इतिहास को तो नष्ट किया ही है, आर्यों ने भविष्य के लिए ऐसे मानव विरोधी और असभ्य कानून बनाए कि मोहनजोदड़ो की महान कौम के महान विरासत धर्म, संस्कृति, विज्ञान और महान भवन निर्माण कला को नष्ट करने के साथ-साथ वहां के आदिवासियों को पशु बना कर रख दिया है। इस तथ्य को गुरु रविदास जी ने अपनी वाणी में निरूपित कर के मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के इतिहास का नव निर्माण किया है। इस ऐतिहासिक पुस्तक में 'आदि धर्म, बुद्ध धर्म तथा गुरु रविदास वाणी' और महान वैज्ञानिक गुरु रविदास जी के सरलेख के अन्तर्गत सृजित किया गया है। इसलिए गुरु रविदास जी ने आर्यों द्वारा नष्ट किए गए इतिहास को पुन: सजीव कर एक महान कौम को तो पुनर्जीवित किया ही है, साथ ही साथ उस कौम की महान विरासत धर्म समाज और सभ्यता का सृजन भी किया है, जिस समूची आदिवासी कौम जिस को आज शूद्र का नाम दिया हुआ है, पुन: इतिहास के नवनिर्माण में पूर्ण साहस के साथ जुट गई है।

इसलिए खुशी की बात है कि मोहनजोदड़ो और हड़प्पा का इतिहास सृजित किया जा रहा है, वहां के लोगों की विचारधारा, संस्कृति, धर्म, इतिहास आदि उन की लिखी हुई मोहरों (Seals) से प्रकट हो रहा है। वेदों में दास, पानी, नाग आदि बहादुर कौमों का ज़िक्र है, जिन्होंने अपनी आज़ादी कायम रखने के लिए अपनी और अपने परिवारों का बलिदान दिया है। रामायण में दलित योद्धे जिस प्रकार महात्मा रावण और महाबली बाली अपने स्वाभिमान के लिए लड़ते-लड़ते मारे गए और रामायण में भी ही ब्रह्म ज्ञानी महर्षि शंभूक धार्मिक लड़ाई लड़ते हुए शहीद हो गए। महाभारत में दलितों का महान योद्धा एकलव्य धोखे से नकारा कर दिया गया। महाभारत में भी जग संपूर्णता के लिए महर्षि बाल्मीकि के आगे 'भगवान' कृष्ण और समूची आर्य कौम को झुकना पड़ा।

गुरु रविदास जी ने इन हिंदू धर्म के भगवानों और धर्म ग्रंथों को रद्द किया है और नई विचारधारा का सृजन करके विश्व धर्म की स्थापना की है। इस विश्व धर्म और इस की विचारधारा को हिंदुओं के बड़े-बड़े महान धार्मिक नेताओं, ब्राह्मणों ने स्वीकार किया है और गुरु जी को अपना गुरु भी स्वीकृत किया है।

गुरु रविदास जी ने दुनिया के सब से अधिक माने जाने वाले धर्मों को उपदेश दिया है। इन में महत्वपूर्ण है हिंदू धर्म, बुद्ध धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म तथा इन की जगह पर विश्व धर्म स्थापित किया है।

1. हिंदू धर्म की विचारधारा और कर्मकांड को 'सतयुग' 'सत तेता जगी' वाले शब्द में रद्द किया है और इस की जगह इसी शब्द में एक नई विचारधारा का सृजन कर के नए विश्व धर्म की स्थापना की है।

2. बुद्ध धर्म की विचारधारा में 'बिन देखे उपजे नहीं आसा' में आत्मा और परमात्मा के संकल्प को शामिल कर के, उसमें सुधार किया गया है और एक नई विचारधारा का सृजन किया गया है।

3. 'हरि जपत तेऊ जना' वाले शब्द में ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म की विचारधारा और कर्मकांड को रद्द किया गया है। इसमें हिंदू धर्म के भगवानों को रद्द कर के प्रभ के संकल्प को दृढ़ किया गया है और एक नई विचारधारा का सृजन किया गया है।

सिख धर्म के मुख्य संस्थापकों में से वह एक थे। यह तथ्य गुरु ग्रंथ साहिब के पृष्ठ नंबर 475 के ऊपर दिए गए मूल मंत्र से ही सिद्ध हो जाता है और 40 शब्द और एक सलोक भी इस तथ्य के साक्षी हैं।

इस तरह गुरु रविदास जी ने बड़ी गहनता और गंभीर सोच विचार के बाद जानबूझ कर उपरोक्त धर्मों की विचारधारा और कर्मकांड को रद्द करके नई विचारधारा पर आधारित एक नए विश्व धर्म का सृजन किया है। वास्तव में यह नई विचारधारा मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की विचारधारा का ही नया रूप है। इसी कारण पंजाब में निवास करते मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के वारिसों (सन्तान) ने इस नई विचारधारा पर आधारित नए विश्व धर्म को 'आदि धर्म' का नाम दिया है, जिस को दोआबा के लोगों ने पूर्ण रूप में अपना लिया है। इस विश्व धर्म का संविधान (विचारधारा) धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सभ्यता

आदि पक्षों से 'बेगमपुरा शहर को नाऊ' में निरूपित किया गया है। इस तथ्य से यह कथन दृढ़ हो गया है कि इतिहास स्वयं को दोहराता है। गुरु रविदास जी की गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज़ वाणी 'आदि धर्म', सिख धर्म की नींव है। यह तथ्य हस्त लिखित पुस्तक के समूचे अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है।

दूसरा नुक्ता जो पूर्ण रूप में स्पष्ट तौर पर उभर कर सामने आता है, वह है सिख विद्वानों का गुरु वाणी की विचाराधारा प्रकट करते हुए, उन का पक्षपाती दृष्टिकोण, वे हर हथकंडे का उपयोग करते हैं, पंजाब के गुरुओं को महान सिद्ध करने का! ऐसे सिख विद्वानों का 'आज कल' डॉक्टर बलकार सिंह नेतृत्व कर रहे हैं, उन्होंने तो इस उद्देश्य के लिए पांच लेख ''अज्ज दी अवाज़'' में प्रकाशित किये हैं, कि गुरु रविदास जी को गुरु 'लिखना' और कहना गलत है, केवल भगत लिखना ही सही है।

इसलिए हे प्यारे दलित, समान भाईचारे तथा समानता के इच्छुक लेखको! यह भूल जाओ कि ऊंची जाति वाले ब्राह्मण और सिख मत में विराजमान डॉक्टर बलकार सिंह जैसे ब्राह्मणवादी लोग आप के महान गुरु साहिबानों जिस प्रकार गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी आदि की विचारधारा को वास्तविक रूप में मान्यता देकर उभारेंगे और प्रचार करेंगे।

हे प्यारे दलित लेखको! महान विद्वानो! यह बात गांठ बांध लेने वाली है कि बुद्ध धर्म और सिख धर्म का विकास उनके विद्वानों और राजनीतिज्ञों ने ही किया है। बुद्ध धर्म को महाराजा अशोक और तत्कालीन विद्वानों ने ही समूचे संसार में प्रचारित और उभारा था। सिख धर्म में ब्राह्मणवादी विद्वानों ने ना तो गुरु रविदास जी की मूलभूत और महान विचारधारा को उभारा है और न प्रचार किया है, और न ही भविष्य में ऐसा करेंगे। उदाहरण स्वरूप 'बेगमपुरा सहर को नाऊं' और गुरु ग्रंथ साहिब के पृष्ठ नंबर 475 अंकित मूल मंत्र के मूलभूत सिद्धांत और विचारधारा को इन विद्वानों ने जानबूझ कर ही विचार करने तक का प्रयास नहीं किया। एक अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि का सिख धर्म का, खास कर गुरु नानक वाणी का विद्वान है। उस ने गुरमत बनाम मार्क्सवाद पर एक लेख लिखा है, परंतु उस में गुरु रविदास जी के शब्द 'बेगमपुरा' का उल्लेख तक नहीं था, जब कि मार्क्स का पूरे का पूरा सिद्धांत इस शब्द में निरूपित है। दूसरा पृष्ठ नंबर 475 में अंकित

मूल मंत्र का किसी भी विद्वान ने आज तक ज़िक्र नहीं किया है, कारण - क्योंकि इस मूल मंत्र के साथ तीन ब्रह्म ज्ञानी चिंतक गुरु कबीर, गुरु नामदेव और गुरु रविदास के नाम अंकित हैं। अब तक सिख विद्वानों की ओर से इस मूल मंत्र का और 'बेगमपुरा' शब्द का उल्लेख इस कारण नहीं किया गया, क्योंकि ऐसा करने से गुरु रविदास जी की विचारधारा गुरुमत में निधड़क उभरती और महान बन जानी थी और गुरु रविदास जी की महानता भी शिखर पर पहुंच जानी थी।

इसी कारण मैं दलित विद्वानों, लेखकों और राजनीतिज्ञों से अपील करता हूं कि वे गुरु रविदास जी की विचारधारा का विश्लेषण करें। परन्तु वे सिख विद्वानों के कारनामों की नकल न कर के उस के अनुसार गुरु जी की विचारधारा का अध्ययन हर हालत में न करें। ऐसा करने से आप गुरु रविदास वाणी की नई संभावनाओं को ढूंढने में असमर्थ हो जाएंगे। हां, सिख विद्वानों के गुरु नानक देव जी के प्रति मूलभूत सिद्धांतों के किए गए उल्लेख पर गहन और अन्वेषणात्मक दृष्टि से अध्ययन अवश्य करें। कारण, जो कुछ पहले गुरु रविदास जी अपनी वाणी में मूलभूत सिद्धांत दे चुके हैं, गुरु नानक देव जी की वाणी में उसी का ही उल्लेख है, उसी का ही विस्तार है।

पर निश्चय ही यह बात आप, गांठ बांध लें कि नकल कर के, न तो आप गुरु रविदास जी को समझ सकोगे और न ही अध्ययन करते समय उन के साथ न्याय कर सकोगे। अत: आप ने ऐसी नकल से बचना है और निष्पक्ष रह कर के गुरु जी की विचारधारा पर विचार करना है, प्रचार करना है, और उभारना है, यदि ऐसा न किया गया तो आने वाली पीढ़ियां उपरोक्त बताए ब्रह्मज्ञानी चिंतकों की विचारधारा के महान गौरव से वंचित रह जाएंगी, कि गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी आदि ने गुरु ग्रंथ साहिब में विद्यमान महापुरुषों की विचारधारा का नेतृत्व किया है, इस तथ्य को डॉक्टर साहब सिंह ने भी 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब दर्पण' में वैज्ञानिक दलीलें दे कर पूर्ण रूप में दृढ़ किया है।

हे दलित वीर लेखको! यह बात भी स्पष्ट हो जानी चाहिए कि विद्वानों और राजनीतिज्ञों की ओर से दलित लेखकों का विरोध होना शुरू हो गया है। गुरु रविदास चेयर चंडीगढ़ में बनी है और फिर अमृतसर। अब उच्च जाति के

डॉक्टर बलकार सिंह जैसे ब्राह्मणवादी सिख लेखक और राजनीतिज्ञ यह विरोध कर रहे हैं कि चेयर के नाम के साथ गुरु क्यों जोड़ा गया है? परंतु ऐसे विद्वान और राजनीतिज्ञ गुरु शब्द हटाने में असमर्थ हैं, कारण - गुरु शब्द का उल्लेख दलित राजनीतिज्ञों और लेखकों की कुर्बानियों के कारण ही लिखा गया है परंतु यदि गुरु कबीर जी, गुरु नामदेव जी, के साथ गुरु शब्द नहीं जुड़ सका, तो इसका कारण इस वर्ग के विद्वानों और राजनीतिज्ञों की ही कमज़ोरी है।

अब मेरी अपील भारत के दलित वर्ग के साधु समाज के समक्ष हैं।

हे साधु समाज के महान ब्रह्म ज्ञानी संत साहिबान! आदि धर्म, संपूर्ण धर्म है। इस धर्म की धार्मिक विचारधारा का अंतिम लक्ष्य गुरु रविदास जी की ही विचारधारा है। इस विचारधारा में गुरु रविदास जी के अंत:कर्ण में जल रही प्रचंड अग्नि है, जो हिंदू धर्म के ग्रंथों को नष्ट करके आदि धर्म की कौम अर्थात् शूद्रों आदि को उन के अधिकार लेकर देने हेतु दृढ़ है। उन्होंने इस अग्नि को झोंका बनने नहीं दिया, जो एक बार भड़क कर शांत हो जाता है, फिर पुन: सिर नहीं उठाता है। गुरु जी ने इस अग्नि को 'मारू राग' के शब्द **'ऐसी लाल तुझ बिन कौन करै'** और **'सुख सागर सुरतर चिंतामणि'** में हर तरह से प्रचंड किया है। इस मुर्दा बन चुकी कौम के बीच साहस भर कर एक क्रांतिकारी लहर का रूप दिया है, जिस ने बड़े-बड़े शहनशाह, बड़े-बड़े ब्राह्मणों के प्रधान धार्मिक नेताओं को अपने पांवों के समक्ष झुकाया है। गुरु जी चाहते थे कि आप जड़ से ही जला कर राख बना दो, जिस का विकास केवल ज़हर उगलता है, इसलिए मेरी संत समाज के आगे विनम्र प्रार्थना है कि वे अपनी धार्मिक लहर को आदि धर्म का नाम देकर एक क्रांतिकारी लहर का रूप दे तांकि द्रविड़, शूद्र आदि एक शक्ति बन कर नफरत फैलाने वाले इंसानियत के कातिल धर्मों का सफाया कर सकें। डॉ अंबेडकर में भी गुरु रविदास जी की ही आत्मा विराजमान थी। यदि गुरु जी ने हिंदू धर्म का आदि से लेकर अंत तक खंडन करके अपनी नई विचारधारा दी है, तो डॉक्टर अंबेडकर ने भी हिंदू धर्म का 'रिडल्ज इन हिंदुइज्म' वोल IV में हिंदू धर्म की विचारधारा का नाश करके दलित कौम को इज्ज़त सम्मान प्रदान किया है, जो गुरु जी ने किया है, वही डॉक्टर साहब ने किया है, फिर संत समाज इस लहर को आगे क्यों नहीं ले जा रहा है? मेरी

समाज से अपील है कि वे गुरु रविदास जी के 'मारू राग' में दर्ज हुकम को लागू करने के लिए अपने सेवकों को इतना प्रचंड करें, इतना प्रचंड करें, कि उन का नाम सुनते ही नफरत फ़ैलाने वाली शक्तियां कांप उठें और अपना ज़हर उगलना, उगलने वाला रास्ता त्यागने के लिए मजबूर हो जाएं। इस तरह इंसानियत से प्यार करने वाली शक्तियां प्रचंड बन कर संसार को शांति और प्यार के बंधन में बांध सकें, जिस को गुरु रविदास जी ने बेगमपुरा में भी निरूपित किया है।

अब, टिप्पणी करते समय पुस्तक में प्रयोग की गई विधि का उल्लेख करते हैं। शब्द के टिप्पणी से पहले शब्द में अंतरीव विचार विधान दिया गया है। इस के बिना गुरु रविदास जी की विचारधारा का सही मूल्यांकन पाठकों तक पहुंच नहीं सकता था। विचार विधान में व्याख्या की आज़ादी होती है, परंतु टिप्पणी करते समय ऐसी आज़ादी नहीं ली जा सकती है, इस कारण हम विचार विधान में शब्द में दी गई विचारधारा की हर पक्ष से गहनता के साथ खोज करके परख कर परीक्षण किया है और नापा है और शब्द की विचारधारा में निरूपित सिद्धांतों को खोल कर अलग तौर से दिया गया है। इसलिए पाठकों से प्रार्थना है कि वे शब्द के अर्थों को पढ़ने से पहले 'शब्द का अंतरीव विचार विधान' ज़रूर पढ़ें।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि हर शब्द की व्याख्या को राग के सिद्धांत के अनुसार जांच पड़ताल कर गुरु रविदास वाणी की नई संभावनाएं, जो पहले उजागर नहीं हो सकी थीं या जानबूझ कर सिख विद्वानों की ओर से उजागर नहीं की गई थीं, उन को वैज्ञानिक दृष्टि से परख कर उजागर किया गया है।

अगली बात यह है कि हम ने गुरु कबीर जी की अपेक्षा पहले गुरु रविदास जी को स्थान दिया है, क्योंकि गुरु रविदास जी उन की अपेक्षा उम्र में बड़े हैं। गुरु रविदास जी का जन्म 1433 संवत दृढ़ हो गया है और भाई काहन सिंह नाभा तथा भाई जोध सिंह गुरु कबीर जी का जन्म 1455 संवत मानते हैं। इसी कारण गुरु रविदास जी बड़े हैं।

सतगुरु ब्रह्मनाथ जी तथा उनके शिष्य सन्त कृष्ण नाथ जी का में अति धन्यवादी हूं, जिनके आशीर्वाद के बिना इस पुस्तक ने कभी सूर्य के मुंह नहीं देखना था। इस पुस्तक के प्रकाशन के लिये इन महापुरुषों का हर पक्ष से भरपूर

आशीर्वाद मिला है। यह आशीर्वाद प्राप्त करने में श्री जोगिन्द्र पाल जी का बहुत सहयोग है। उनके सहयोग के बिना यह आशीर्वाद प्राप्त नहीं हो सकता था। मैं 'दास' उनका भी धन्यवादी हूँ।

अन्तिम प्रार्थना विद्वानों और पाठकों के आगे है। गुरवाणी पर टिप्पणी करना अति कठिन कार्य है। उत्तम टिप्पणी, शब्द में निरूपित विचारधारा के साथ, उत्तम रूप में ओतप्रोत हुए बिना संभव नहीं है। इस कारण टिप्पणी करते समय कई बार एक 'तुक' यहां तक कि एक 'शब्द' के अर्थ करते समय कई कई दिन की घोर तपस्या के बाद ही तुक या शब्द का अर्थ प्राप्त करने में सफलता मिली है, फिर भी यदि कहीं टिप्पणी करने में कमी या त्रुटि रह गई हो, तो भुलक्कड़ मनुष्य समझ कर माफ कर देना और साथ ही साथ उस के सही अर्थ दास लेखक को भेजने की कृपा करें, तांकि दास उसमें संशोधन कर सकें और आगे से ऐसी गलती न हो सके। ऐसा करने से नया संस्करण प्रकाशित करते समय पुस्तक को संशोधन करने में भी सफलता मिलेगी, ऐसे संशोधन के लिए, दास विद्वान सज्जनों का धन्यवादी होगा।

लाल सिंह
E-13/241, अमन नगर,
लुधियाना।

प्रस्तावना

तीसरा संकलन।।

जब अंतरात्मा बाहरी अनंत के साथ एक स्वर हो जाती है, तब कई प्रकार के विशाल अलौकिक विचारों का सृजन होता है। ये विचार अपने आप ही फूट पड़ते हैं और अद्भुत, विलक्षण और विस्मयकारी होते हैं। जो लिखते समय लेखक के मन, मस्तिष्क में भी नहीं होते। यही प्रभ विचार हैं, जिन को ब्रह्म ज्ञान कहा जाता है। इस ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति उस समय होती है यदि जीव अपने पवित्र विचारों को वास्तविक रूप दे दे। ऐसा जीव अनंत बन जाता है।

संत अनंतहि अंतरु नाही॥ गुरु रविदास जी
नानक ब्रह्म गिआनी आपि परमेश्वर।। म:५

जब लेखक ऐसी मानसिक स्थिति में विचरण कर रहा होता है, उस समय वह ब्रह्म ज्ञान का सृजन कर रहा होता है। ऐसी रचना पढ़कर पाठक स्वयं आत्मिक आनंद भोगने लगता है। जब पाठक रचना को पढ़ता पढ़ता आत्मिक आनंद की अवस्था में विचर रहा होता है, उस समय ही वह अलौकिक आनंद भी प्राप्त कर रहा होता है और रचना में भी निरूपित ब्रह्म विचारों की परिपक्वता भी कर रहा होता है।

मेरी पुस्तक 'सटीक वाणी श्री गुरु रविदास जी और 'तत्त सिद्धांत' पढ़कर कुछ इस तरह के विचार और प्रभाव महापुरुषों ने व्यक्त किए हैं - (ऊ) 'सटीक वाणी श्री गुरु रविदास जी और तत्त सिद्धांत' पुस्तक तुम स्वयं नहीं लिख सकते। यह तो आप के द्वारा गुरु रविदास जी ने स्वयं लिखी है।

(अ) मैंने सटीक वाणी श्री गुरु रविदास जी और तत्त सिद्धांत जैसी पुस्तक आज तक नहीं पढ़ी। मैं प्रो. लाल सिंह से मिलना चाहता हूं।

बरनई से श्री महेंद्र संधू महेडू का 10 अक्टूबर 1999 को पत्र आया। इस पत्र के आने से पहले मैं उन को कभी नहीं मिला था। उन्होंने पत्र में 'सटीक वाणी रविदास जी और तत्त सिद्धांत' के बारे में लिखा था। 'आज तक मैंने बहुत

सी पुस्तकें पढ़ी हैं, लेकिन आप जी की तरह कोई दीपक दिखाई नहीं दिया। आप बात लिखते हो वह भी निधड़क होकर। परंतु दुख की बात यह है कि कौम की तो बात रही एक किनारे, हमारे साधु-समाज की तरफ से भी जो आपका सत्कार सम्मान होना चाहिए था, किसी संत जन ने नहीं किया। चलो फिर काशी वाले के बिना किसी और की ओट (सहारा) देखने की ज़रूरत नहीं।'

23 फरवरी 2000 को डेरा सतगुरु टहल दास जी सलेमटाबरी लुधियाना के वर्तमान गद्दी नशीन श्रीमान संत सरवण दास जी ने लेखक को 3100 रुपए, एक शाल और एक शानदार स्मृति चिन्ह के साथ सम्मानित किया है।

सम्मानित करने से पहले, संत सरवन दास जी महाराज लेखक की किताबें खरीद कर संगतों के बीच मुफ्त बांट चुके थे। संत महाराज जी ने इन पुस्तकों की हर जगह, हर समारोह में भरपूर उपमा की है। उन्होंने गांव हकीमपुरा बंगा के समीप, ज़िला नवांशहर अब शहीद भगत सिंह नगर में गुरु रविदास जी के गुरु पर्व के अवसर पर 8 मार्च 2000 को प्रवचन करते हुए स्पष्ट कहा है -

''मैंने अनेकों पुस्तकें पढ़ी हैं परंतु 'सटीक वाणी श्री गुरु रविदास जी और तत्त सिद्धान्त' जैसी पुस्तक न तो आज तक लिखी गई है और न ही आगे लिखी जाएगी।''

संत महाराज जी के प्रवचन सुन कर एक पढ़ा-लिखा नौकरी पेशा नौजवान श्री अमरजीत कुमार समारोह के बाद महाराज जी से मिला और पुस्तक के बारे में पूछा। महाराज जी ने उपरोक्त पुस्तक उस नौजवान को भेंट कर दी। उस ने पुस्तक की कीमत पूछी? महाराज जी ने कहा, कि पुस्तक पढ़ कर बताओ, कि किस प्रकार की है? श्री अमरजीत कुमार कुछ दिनों के बाद महाराज जी से मिला, पुस्तक की प्रशंसा की और खुश होकर अनंत माया भेंट करते हुए चरणों में शीश झुकाया।

इसलिए अनेक महापुरुषों-संतों की ओर से की गई इस पुस्तक की प्रशंसा लाखों श्रद्धालुओं के लिए प्रेरणा स्तोत बनेगी, परंतु जिस प्रकार इस पुस्तक के पहले संकलन की भूमिका में लिखा था, कि ब्राह्मणवादी सिख पाठकों और विद्वानों ने गुरु रविदास जी की वाणी में उजागर हो रहे गुरु ग्रंथ साहब के मूलभूत सिद्धांतों को न कभी पहले सराहना की है और न ही आगे से प्रशंसा करेंगे। ऐसा करने से उन के अहंकार को ठेस पहुंचती है, क्योंकि गुरबाणी के बारे में उनकी लिखी पुस्तकों की बुनियाद हिल जाती है।

परंतु यह बताते हुए मुझे अपार खुशी हो रही है कि दलित वर्ग के विद्वानों और पाठकों ने इस पुस्तक की खूब प्रशंसा की है। पाठकों की प्रशंसा के साथ-साथ पुस्तक की मांग भी बहुत बढ़ गई है। इसलिए पाठकों के प्यार और प्रशंसा के कारण उन की भरपूर मांग को पूरा करने के लिए पुस्तक 'सटीक वाणी श्री गुरु रविदास जी और तत्त सिद्धान्त' तीसरी बार प्रकाशित की जा रही है।

श्री महेंद्र संधू महेडू के हम बहुत ही धन्यवादी हैं, जिन्होंने इस पुस्तक की प्रशंसा की है और इस के पुनर प्रकाशन के लिए ज़ोर डाला है। उन्होंने हर तरह की सुहृदयता के साथ मदद कर के हमारा धैर्य बढ़ाया है। हम उन का एक बार फिर धन्यवाद करते हैं। उन्होंने हर प्रकार के सहयोग के साथ सहायता कर के हमारा हौसला बढ़ाया है। हम उनका एक बार फिर धन्यवाद करते हैं।

मैं चौधरी करमचंद सेठ, सिद्धार्थनगर, बूटा मंडी, जालंधर का भी अति धन्यवादी हूं, जिन्होंने हमें एक इखलाकी और माया की मदद के साथ भरपूर करके हौसला बढ़ाया है।

हमें इस बात की अत्यंत खुशी है, कि 10 जून 1999 से आज तक हमें किसी प्रकार की त्रुटि या कमी के लिए कोई पत्र प्राप्त नहीं हुआ है। अब भी यदि किसी पाठक या विद्वान को कोई त्रुटि या कमी का पता लगे तो कृपा कर के लिखित रूप में हमें भेजने की कृपा करें, ताकि उस में संशोधन किया जाए। ऐसे संशोधन के लिए दास विद्वान पाठकों का अति धन्यवादी होगा।

श्री गुरु रविदास वाणी और आदि धर्म खोज केंद्र **लाल सिंह**
गांव शेरवानी कोट, तहसील और डाकखाना मालेरकोटला,
ज़िला मालेरकोटला, पंजाब (भारत)।

सलोक

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस॥
ते नर दोजक जाहिगे सति भाखै रविदास॥२४२॥

(पृष्ठ १३७७)

पद अर्थ - हरि- करतार, पारब्रह्म, परमेश्वर। सो- वह, पारब्रह्म, करतार। हीरा-करतार, पारब्रह्म, गुरु कबीर जी ने शब्द 'हीरा' को करतार के अर्थ में प्रयोग किया है। 'हीरा करउ आदेश' (राम कबीर) सलोक 207 * आन-दूजा।

नोट - अधिकतर विद्वान 'सो' का अर्थ (उस जैसा) करते हैं। इस तरह 'सो' को उपमा अलंकार के तौर पर प्रयोग करते हैं। इस सलोक में अर्थ (उस जैसा) नहीं बनता। डॉक्टर ओम प्रकाश स्पष्ट करते हैं कि-

> ''उपमा के अंदर किसी वस्तु की समानता कर के तोला (तुलना) अर्थात् परीक्षा की जाती है।
>
> जहां किसी वस्तु के रूप गुण की विशेषता प्रकट करने के लिए किसी व्यर्थ उत्कृष्ट वस्तु के साथ इस की समानता की जाती है, वहाँ उपमा अलंकार होता है।''[1]

इस सलोक में पारब्रह्म की समानता के लिए कोई भी वस्तु नहीं है और न ही समूची सृष्टि में कोई ऐसी वस्तु उपलब्ध है। गुरु रविदास जी इस विचार को और परिपक्व करके दृढ़ करते हैं कि प्रभ की पैदा की हुई वस्तु न तो उस के समान हो सकती है और न ही प्रभ से अधिक श्रेष्ठ विशेषता वाले गुण उस वस्तु में हो सकते हैं। अत: स्पष्ट है कि पारब्रह्म प्रभ के लिए उपमा अलंकार का प्रयोग किया ही नहीं जा सकता है, क्योंकि प्रभ जैसा तो प्रभ केवल स्वयं ही है। उन के अपने शब्दों में-

कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै॥
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै॥३॥१॥[2]

(पृष्ठ ८५८)

---

1. अलंकार विधान-पृष्ठ : ६७
2. आदि ग्रन्थ-पृष्ठ : ८५८

* महान कोष

अत: गुरु रविदास जी ने आधुनिक उपमा अलंकार के सिद्धांत को छ: शताब्दियां पहले ही अपनी वाणी में स्पष्ट रूप में अंकित कर दिया था। इस प्रकार जो कुछ गुरु जी ने सांकेतिक रूप में रूपमान किया है, आज के विद्वान उस संकेत को ही गहनता और गहराई के साथ अध्ययन करके व्याख्या कर रहे हैं। इस कारण और गहनता के साथ विचार करने पर भी 'सो' के अर्थ उपमा मूलक सिद्ध नहीं होते हैं। डाक्टर ओम प्रकाश के अनुसार उपमा अलंकार के चार अंग हैं। उन के सिद्धांत के अनुसार 'सो' का अध्ययन करते हैं।

1. उपमेय – 'जिस वस्तु की समानता किसी विशेष वस्तु की समानता की जाती है, उस को उपमेय या प्रस्तुत कहते हैं'।[1]

इस सलोक के बीच 'हरि' उपमेय है और इस की समानता 'हीरा' के साथ की गई है। परंतु यह समानता इस सिद्धांत के अनुसार सही नहीं हुई है, क्योंकि 'हीरा' 'हरि' का ही सृजन है। इसलिए हरि से श्रेष्ठ विशेषता वाली वस्तु नहीं है। इस कारण 'हरि' उपमेय सिद्ध नहीं होता है।

2. उपमान – 'जिस वस्तु के साथ किसी वस्तु (उपमेय) की समानता की जाए, वह उपमान या अप्रस्तुत कहलाता है'।[2]

जिस वस्तु 'उपमान हीरा' के साथ समानता करनी है, वह वस्तु तो उपमेय भाव 'हरि' की अपेक्षा श्रेष्ठ नहीं है। इस तरह 'हीरा' इस सिद्धांत के अनुसार उपमान सिद्ध नहीं होता है।

3. समान धर्म (विशेषता) – 'उपमेय और उपमान के अंदर जो समान गुण नज़र आता है, उस को समान धर्म कहते हैं'।[3]

हरि और हीरा के बीच समान धर्म का अभाव है। इस तुक में दोनों का समान धर्म 'करै आन की आस') को ही बनाया जा सकता है, परन्तु इस आधी पंक्ति का संबंध 'हरि' के साथ या 'हीरा' के साथ नहीं है। यह तो भूतकाल में विचरण कर रहा जीव है। इस सिद्धांत के अनुसार जीव न 'उपमेय' है और न ही 'उपमान'। इस प्रकार समान धर्म लुप्त या प्रकट किसी भी रूप में विचरण नहीं करता है। अत: चर्चा से स्पष्ट है कि इस सलोक के बीच उपमा अलंकार ही रूपमान नहीं है।

1 से 3 अलंकार विधान – पृष्ठ : ६७

4. वाचक शब्द – 'उपमेय' और 'उपमान' की समानता व्यक्त करने वाला शब्द 'वाचक-शब्द' कहलाता है।[1]

इस सलोक में उपमेय और उपमान की समानता प्रकट करने वाला कोई शब्द नहीं है और न ही समान धर्म (विशेषता) को प्रकट करने वाली कोई तुक या शब्द है। इस कारण इस तुक में वाचक शब्द नहीं है। यदि 'सो' को वाचक शब्द मान भी लिया जाए तो फिर यह शब्द 'हरि' और 'हीरा' के बीच की कौन सी समान विशेषता को प्राप्त करेगा? जब कि समान धर्म (विशेषता) सलोक के बीच है ही नहीं। स्पष्ट है कि शब्द 'सो' 'वाचक शब्द' ही नहीं है।

उपरोक्त समूची चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि उपमा अलंकार के सिद्धांत अनुसार किसी भी पक्ष से 'सो' शब्द की उपमा, अलंकार सिद्ध नहीं होती है, इसलिए 'सो' के अर्थ किसी भी तरह 'जैसा' (की तरह) नहीं हो सकते।

अत: समूचे सलोक के अंतरीव भाव के साथ मेल खाता 'सो' का अर्थ पारब्रह्म ही है। यही अर्थ सलोक की विचारधारा के बीच निरूपित सिद्धांत का आधार बनता है।

1. अलंकार विधान-पृष्ठ : ६७

सोहम/ੴ के सिद्धांत का निरूपण

गुरु ग्रँथ साहिब में अंकित 'भगतों की वाणी' में आज तक किसी भी विद्वान ने मूलमंत्र के तत्त सिद्धांत ढूंढने की कोशिश नहीं की। प्रथम सिद्धांतात्मक अध्ययन होने के कारण 'भगतों की वाणी' के बीच मूलमंत्र के सिद्धांतात्मक विचारों की खोज करके सिद्धांत स्थापित करना एक कठिन कार्य बन गया है। ये इस कारण बन गया है, क्योंकि पहले ऐसा कोई मॉडल उपलब्ध नहीं है, चाहे वाणी की विशेष कर जपु जी की चर्चा करते हुए विद्वानों ने सैद्धांतिक मॉडल स्थापित किये हैं। सलोक -

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस॥
ते नर दोजक जाहिग सति भाखै रविदास॥२४२॥

(पृष्ठ १३७७)

में सोहम ੴ का सिद्धांत उपलब्ध है। सोहम से ही सृष्टि का सृजन हुआ है। इस की पुष्टि के लिए नीचे अध्ययन करते हैं।

इस सलोक के आरंभिक तीनों शब्दों का अर्थ पार ब्रह्म प्रभ बनता है। 'हरि' का अर्थ पारब्रह्म है, 'सो' का अर्थ पारब्रह्म है और हीरा का अर्थ भी करतार अर्थात् पारब्रह्म ही है। इस के साथ एक और महत्त्वपूर्ण विचार स्पष्ट होता है- 'हरि' एक वचन है, 'सो' एक वचन है और 'हीरा' भी एक वचन है। इस से बड़ी परिपक्वता के साथ स्पष्ट हो जाता है, कि पारब्रह्म एक है। इस तरह गुरु रविदास जी का पारब्रह्म करतार को तीन बार प्रकट करने का उद्देश्य उस के महानतम गुण की पारब्रह्म केवल और केवल एक ही है कि तथ्य के अस्तित्व को परिपक्वता के साथ दृढ़ कर के इस सलोक (पृष्ठभूमि) में विचर रहे उस के अंश जीवों का बोध करवा कर, और दूसरी तुक के बीच 'ते नर' के रूप को प्रकट रूप में स्पष्ट कर उस की सृजित सृष्टि की अटल सच्चाई का बोध करवाता है, इस से एक महान सिद्धांत का सृजन होता है।

सो-(एक वचन) वह पारब्रह्म एक है।

ते नर - (बहुवचन) ज्योति, अंश, हिस्सा समस्त पारब्रह्म की ज्योति हैं।

नर - (एक वचन) जीव, मैं प्रभ की ज्योति, अंश हूँ।

मैं - अहं।

हं - अहं का संक्षेप।

इस प्रकार पृष्ठभूमि में विचर रहा जीव उस से (पारब्रह्म) की ही अंश है। दोनों के बीच कोई अंतर नहीं है। दोनों का अटूट संबंध है। इस संबंध को दिखाने के लिए ही 'छाड़ि' के शब्दों का सृजन किया गया है। इस तरह सिद्ध हो गया है कि 'सो' (पारब्रह्म) की अंश पृष्ठभूमि में विचर रहा अहं (जीव) है। 'सो' समास बन गया है-सोहम। 'सोहम' का अर्थ है-वह मैं हूँ। दोनों के बीच कोई अंतर नहीं है। सो 'सोहम' एक सिद्धांत है। सोहम से ही सृष्टि का सृजन हुआ है, जिस की गुरु रविदास जी ने अपनी वाणी में सिद्धांत की परिपक्वता को स्पष्ट करते हुए संकेत रूप में बड़ी स्पष्टता के साथ निरूपित किया है। इस सिद्धांत की परिपक्वता करते हुए गुरु जी फरमाते हैं कि-

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा॥
कनक कटिक जल तरंग जैसा॥१॥[1]

तोहि मोहि और मोहि तोहि दोनों शब्दों के स्थानांतरण की अदला बदली कर के गुरु जी ने पूर्ण रूप से स्पष्ट किया है कि 'तूँ' और 'मैं' और 'मैं' और 'तूँ' दोनों एक ही हैं, दोनों के बीच कोई अंतर नहीं है। अंतर केवल दृष्टि के रहस्य का ही है।

सो-तोहि-पारब्रह्म।

अहं-मोहि-पारब्रह्म की अंश।

सृष्टि के सृजन के समय 'तोहि' ने ही 'मोहि' का सृजन किया है अत: 'तोहि' से ही 'मोहि' का जन्म हुआ है और पीछे सृष्टि को समेटने के समय 'मोहि' 'तोहि' के बीच ही समा जाता है। गुरु रविदास जी पारब्रह्म के सृष्टि सृजन और फिर उसे समेटने की प्रक्रिया की ओर संकेत करते हैं। इस संकेत का आधार 'तोहि' और 'मोहि' के स्थान की अदला बदली है। जिस के साथ 'ओह मैं हां' और 'मैं ओह हूं', अर्थात् सोहम का सिद्धांत तो सिद्ध होता ही है, इस से सृष्टि सृजन का सिद्धांत भी सिद्ध हो जाता है।

इन दोनों सिद्धांतों को गुरु रविदास जी ने दो दृष्टांत देकर और भी स्पष्ट कर दिया है, जिस प्रकार सोना (सो) सोने का ही अंश है (हं), अहं का ही संक्षेप) से बने गहने हैं : जब सोने के आभूषणों को ढाल (समेट) लिया जाता

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ९३

है, तब वे सोना ही बन जाते हैं। जिस प्रकार पानी 'सो' और पानी अंश (हं) लहरें हैं : जब लहरें मिट जाती हैं, तब वे पानी ही बन जाती हैं। उसी प्रकार पारब्रह्म (सो) और पारब्रह्म की अंश आत्मा (हं) सृष्टि के बीच निरूपित है: जब सृष्टि समेटी जाती है, तब पारब्रह्म की अंश आत्मा (हं) पारब्रह्म 'सो' के बीच समा जाती है। स्पष्ट है कि तोहि (सो) और मोहि (हं) एक ही हैं। इन के बीच कोई भी अंतर नहीं है।

इस प्रकार परिपक्व हो गया है कि –

सो–वह अर्थात् पारब्रह्म तोहि –उ

हं–अंश अर्थात् पारब्रह्म की अंश, मोहि –अं

उ, वह का संक्षेप है और अं, अंश का संक्षेप है।

सो 'सोहम' सिद्धांत की स्थापना के साथ ही साथ ओम की स्थापना भी सिद्ध हो गई है और सोहम ओम से सृष्टि के सृजन का संकल्प भी दृढ़ हो गया है। इस की परिपक्वता गुरु नानक देव जी के निम्नलिखित लिखे गए शब्द से हो जाती है।

ओअंकारि ब्रहमा उतपति।।

ओअंकारि कीआ जिनि चित।।[1]

अर्थात् वह, परमात्मा ही सृष्टि का सृजनहार है अर्थात् सोहम/ओअं से ही सृष्टि की सृजना हुई है। अत: ओअं, १ओ ही है। इस से ये भी सिद्ध हो जाता है कि सोहम के बीच ओअं व्यापक है।

अत: गुरु रविदास जी ने सलोक के बीच निरूपित किये गए अपने सोहम के सिद्धांत की अपनी वाणी के बीच भी सचेत हो कर बड़ी दृढ़ता और परिपक्वता के साथ ग्वाही भरी है।

बस यही नहीं, गुरु रविदास जी ने 'सोहम' सिद्धांत की बुनियाद, पारब्रह्म एक ही है, उस की प्रमुख शक्तियां देहधारी भगवानों का खंडन आदि को बारीकी के साथ खोल कर दिखाया है। सलोक के बीच आए शब्द हरि की अपनी वाणी के बीच दिखा कर वे स्पष्ट करते हैं कि हरि पारब्रह्म केवल और केवल एक है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों उस के भक्तों के बराबर भी नहीं हैं। इसी विचार ने भविष्य में १ओ के सिद्धांतक रूप को प्रकट किया है। सन्त हीरा दास जी गांव चक हकीमा (फगवाड़ा) लिखते हैं –

1. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : ९२९

'हे सिख सर्व वर्ण जो अछर है, उन में सोहम दोनों अछर व्यापक हैं। 'सो' के उच्चारण से ओ होता है। हं के उच्चारण से अं होता हैं, ऐसे ही सोहम से मैं 'ओअं' व्यापक है'।[1]

अत: सोहम में ओअं व्यापक है। सोहम के इस गुप्त रूप ओअं को प्रकट कर के विश्व व्यापी विचारधारा के आधार ओअं को १ओ का स्वरूप दिया है। इस तरह से 'सोहम' ओअं तथा १ओ तीनों शब्दों के अर्थों में कोई अंतर नहीं मानते है। हरि जपत तेऊ जन वाले शब्द के बीच गुरु रविदास जी ने सोहम/ओअं को और व्यापक अर्थों के बीच खोल कर व्याख्या की है। इस व्याख्या के साथ सोहम ओअं का स्वरूप बदल कर ओअं बन गया है। अत: उन्होंने सोहम को १ओ का स्वरूप देकर विश्व व्यापी विचारधारा को परिपक्वता और दृढ़ता प्रदान की है। उन का कथन है कि –

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
तास सम तुलि नही आन कोऊ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥[2]

इस सलोक में आए हरि के अर्थ को इस शब्द के बीच दर्ज हरि स्पष्ट करता है। ये स्पष्टता भी 'रहाउ' के अन्तर्गत है। 'रहाउ' वाले प्रस्तावना में समूचे शब्द का मूलभूत सिद्धांत और मुख्य उद्देश्य होता है इस तरह हरि के अर्थों की स्पष्टता और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। इस के बीच आए हरि के अर्थ हैं, पारब्रह्म केवल और केवल एक हैं। विष्णु, महेश तथा ना कोई अन्य ब्रह्मा आदि हरि भक्त के भी बराबर नहीं है। अत: पारब्रह्म एक है, सृष्टि का सृजन उस का पालन करना और उस का संहार करना उस की शक्तियां हैं। वह एक से अनेक हो कर अपनी सृष्टि के बीच विचर रहा है। विज्ञान भी यही कहता है। विज्ञान ने इस 'एक' को ऊर्जा कहा है और इस ऊर्जा विद्युत के कणों के साथ ही सब कुछ बना हुआ है। एक से ही सब कुछ बना हुआ है। विज्ञान कहता है कि ऊर्जा इलैक्ट्रीसिटी तीन में विलीम होती है–इलैक्ट्रान, न्यूट्रॉन और प्रोटान। यही तीन शक्तियाँ जन्म, पालन, और संहार का कार्य करती हैं। अर्थात् ऊर्जा परमात्मा है और इस की तीन शक्तियाँ हैं : जन्म देना, पालना और उस का संहार करना। ब्रह्मा, विष्णु और महेश उस का ही सृजन है और पारब्रह्म उन के बीच

1. रविदास दीप – पृष्ठ : २४४ 2. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : १२९३

ही विराजमान है, इस कारण वे भगवान बन नहीं सकते। वे आम व्यक्ति ही हैं गुरु रविदास जी के इस विचार की पुष्टि गुरु नानक देव जी भी जपुजी में करते हैं। इस तरह उपरोक्त विश्व व्यापी वैज्ञानक विचारधारा ने भगवानों के संकल्प को रद्द कर के हिन्दू धर्म की विचारधारा को भी रद्द कर दिया है। उपरोक्त चर्चा के अनुसार सलोक में आए हरि के अर्थ बनते हैं। पारब्रह्म एक है और जन्म देना, पालन और संहार करना इस की तीन प्रमुख शक्तियाँ हैं। इस कारण सो अर्थात् पारब्रह्म एक ही है अत: हं भाव 'मैं' उस का सृजन-उस का अंश है।

परिणामस्वरूप गुरु ग्रँथ साहिब में दर्ज मूलमंत्र का ੧ਓ इस सलोक के बीच निरूपित है, क्योंकि सोहम ओअं और ੧ਓ तीन शब्दों के अर्थों के बीच अंतर नहीं है।

सोहम - ओअं

सो - ओ (एक वचन इक) = ੧ਓ

हं - अं

सोहम - ੧ਓ

"ओ - ओअं"[1]

सो सोहम - ੧ਓ

गुरु नानक देव जी की वाणी से भी स्पष्ट हो जाता है कि ओअं'' के बीच 'एक' व्यापक है -

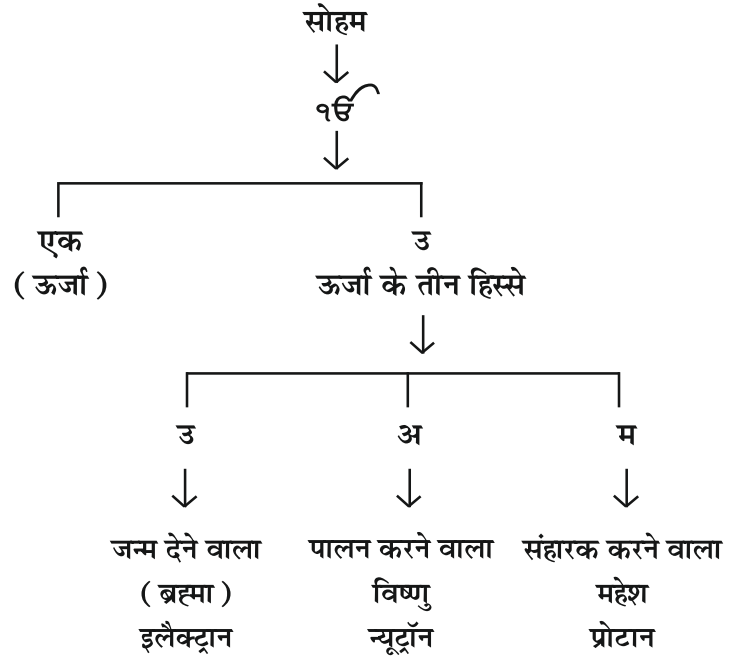
੧ਓ ब्रह्मा उत्पत्ति ।।

੧ਓ किया जिनी चिति।।[2]

सो ओअं ही ੧ਓ है। सो सोहम -- ੧ਓ।

इस का टेबल निम्नलिखित अनुसार है।

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण : पोथी प्रथम - ४४
2. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ९२९



ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि भगवानों को रद्द कर के सिद्ध किया गया है कि ये तीन गुणं (1) सृष्टि की उत्पत्ति है (2)उस की पालना करना (3) उस का संहार करना महापुरुषों की ही शक्तियाँ हैं। उपरोक्त भगवान देहधारी और पारब्रह्म की ही रचना हैं। सृष्टि की हर रचना के बीच वह स्वयं विचर रहा है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश के बीच भी वह स्वयं ही विराजमान है, फिर पारब्रह्म की अपनी रचना ही उस की बराबरी किस प्रकार कर सकती है? इस कारण ये तीन देहधारी भगवान उस की शक्तियों के मालिक नहीं बन सकते। यही विचार गुरु नानक देव जी ने जपुजी में निरूपित कर के ੧ਓ के सिद्धांत को और परिपक्व और दृढ़ता प्रदान की है।

एका माई जुगति बिआई
तीनि चेले परवाणु।।
इकु संसारी इक भंडारी
इकु लाए दीबाण।।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै

जिव होवे फुरमाणु।।
ओहु वेखै ओना नदरि ना आवै
बहुता एहु विडाणु ।।
आदेसु तिसै आदेसु।।
आदि अनीलु अनादि अनाहित
जुगु जुगु एको वेस।।३०।।

इस प्रकार इस सलोक के बीच सोहम / ੧ਓ से सृष्टि सृजन का संकल्प स्पष्ट हो गया है और साथ ही साथ 'हरि सो हीरा' का अर्थ पारब्रह्म, केवल और केवल एक ही है-भी स्पष्ट हो गया है।

यह सलोक गुरु रविदास जी का ही है

सलोक 'हरि सो हीरा छाडि कै' के कर्ता बारे विद्वान एक मत नहीं हैं। डाक्टर साहब सिंह और जसवीर सिंह साबर इस सलोक को गुरु कबीर जी का मानते हैं। डा. सावर ने ऐसा मानते हुए कोई दलील नहीं दी है। केवल वह फुट नोट में लिखते हैं कि -

> सब प्रतियों में यह साखी गुरु रविदास जी के नाम के अन्तर्गत है, जब कि श्री गुरु ग्रँथ साहिब में यह साखी कबीर जी के सलोक नंबर 243 में है।[1]

पहली बात यह है कि सलोक नंबर 243 नहीं है यह सलोक नंबर 242 में दर्ज है। डा. सावर ने बिना विचार किये और बिना किसी दलील के इस सलोक को गुरु कबीर जी मान लिया है। इस निर्णय ने विवाद तो किया ही है, इस ने आम व्यक्तियों को भी गुमराह किया है, उस का यह निर्णय सही नहीं लगता है।

डाक्टर साहब सिंह ने भी बिना दलील दिये ही यह तर्क रहित निर्णय दे दिया है, कि वह सलोक नंबर 242 को गुरु कबीर का बताते हुए इस निम्न नोट में लिखते हैं -

> 'नोट! भगत नामदेव जी और गुरु रविदास जी के कोई सलोक नहीं हैं, केवल शबद हैं। जिस प्रकार सलोक नंबर 212 ओर 213 को गुरु कबीर जी के अपने उच्चारण किये हुए हैं, वैसे ये सलोक नंबर 241 और 242 कबीर जी के अपने हैं। कबीर जी कहते हैं कि हम ने उन की वाणी पढ़ कर देखी है, वह भी हमारे साथ सहमति रखते हैं।[2]

उपरोक्त नोट के अन्तर्गत परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं और गहने अध्ययन की माँग करते हैं।

1. गुरु रविदास और गुरु नामदेव जी ने कोई सलोक नहीं रचे।
2. जिस प्रकार सलोक नंबर 212 और 213 का आरंभ में सरलेख न होने के कारण गुरु कबीर के ही हैं, उसी प्रकार सलोक नंबर 241 और 242 भी गुरु कबीर के ही हैं।

---

1. ''भक्त गुरु रविदास स्रोत पुस्तक''-पृष्ठ : २९८ सम्पादक-डा. जसवीर सिंह साबर
2. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण-पोधी दसवीं-पृष्ठ : २९३

अब हम इन परिणामों का विश्लेषण करते हुए विचार करते हैं।

1. यह कह कर सिद्ध कर देना कि गुरु नानक देव जी और गुरु रविदास जी ने सलोक रचे ही नहीं हैं, इस कारण सलोक नंबर 241 और 242 गुरु कबीर जी के हैं, दोनों महापुरुषों के साथ घोर अन्याय है। इस कारण बिना किसी दलील के तर्कहीन निर्णय और बेबुनियाद है। इसीलिए यह कथन किसी भी तरह मानने योग्य नहीं है।

दूसरा, गुरु ग्रँथ साहिब से बाहर, गुरु रविदास जी की वाणी के बीच सलोक नंबर 242 सभी प्रतियों में उपलब्ध है, जिस का उदाहरण डाक्टर जसवीर सिंह सावर के उपरोक्त कथन से मिल जाता है। उन की पुस्तक गुरु रविदास स्रोत पुस्तक के पृष्ठ -298 में साखी भाग के बीच कुछ अंतर के साथ उपलब्ध है। यह सलोक प्रोफैसर धर्म पाल सिंगल संपादित की हुई पुस्तक 'वाणी गुरु रविदास जी' के पृष्ठ 75 और सलोक नंबर 1 और 3 में दर्ज है और भाषा विभाग पटियाला द्वारा प्रकाशित पुस्तक वाणी गुरु रविदास के पृष्ठ नंबर 19, पद नंबर-20 में दर्ज है।

इन तथ्यों से नि:सन्देह और संकोच से सिद्ध हो गया है कि, गुरु रविदास जी ने सलोंकों की रचना की है। इस तथ्य को झुठलाया नहीं जा सकता है, क्योंकि बाहरी वाणी के सारे के सारे उपलब्ध प्रारूपों में ये सलोक दर्ज हैं, इसलिए सिद्ध हो गया है कि, डाक्टर साहिब सिंह का निर्णय सही नहीं है और यह भी सिद्ध हो गया है कि, यह सलोक नंबर 242 गुरु रविदास जी की ही रचना है।

2 निष्कर्ष नंबर 2 के अनुसार, डाक्टर साहिब सिंह ने सरलेख न होने के कारण यह निर्णय ले लिया है, कि सलोक नंबर 242 गुरु कबीर जी का ही है। इस तथ्य की परिपक्वता सलोक नंबर 212 और 213 के अन्तर्गत दिया गया नोट करता है -

> **'नोट' :** 'महला 5' के सलोक सिर्फ तीन हैं - नंबर, 209, 210, 211। अब फिर कबीर जी द्वारा उच्चारित सलोक हैं, क्योंकि इन का सरलेख 'महला-5' नहीं है।'[1]

डाक्टर साहिब सिंह इस नोट में दलील देते हैं कि सलोक नंबर 212 और

1. वही-२६७

213 के आरंभ में सरलेख नहीं है। इसलिए ये सलोक गुरु कबीर जी के हैं, परंतु ये निर्णय सही नहीं है, क्योंकि सलोक नंबर 212 और 213 के लिए अलग सरलेख की ज़रूरत नहीं है। सलोक नंबर 209, 210 और 211 के लिए 'महला 5' सरलेख तो 'गुरु नानक पंजवाँ' अर्थात् गुरु अर्जुन देव जी को कर्ता के तौर पर स्पष्ट करने के लिए आया है। परंतु 'भक्तों की वाणी' के बीच ऐसी कोई समस्या नहीं है। इस कारण सलोक नंबर 212 और 213 के कर्ता गुरु कबीर जी नहीं हैं, बल्कि इन सलोकों के बीच जिन महापुरुषों के नाम दर्ज हैं, वही उन के कर्ता हैं।

इस प्रकार यदि सलोक के आरंभ में कोई सरलेख नहीं है और सलोक के अंदर दर्ज नाम, मुख्य सरलेख वाले नाम से भिन्न है, तब भी वह सलोक हर हालत में सलोक के बीच दर्ज नाम वाले की ही रचना है।

इस सिद्धांत की परिपक्वता गुरु अर्जुन देव जी ने 'सलोक शेख फरीद के' सरलेख के अन्तर्गत आए सलोकों में की है, जिस प्रकार सलोक नंबर 21 में 'नानक' नाम दर्ज है और इस के आरंभ में कोई सरलेख नहीं है -

मुख्य सरलेख - 'सलोक शेख फरीद के'

हउ (मैं) ढूढेदी (तलास) सजणा, सजणु मैडे नालि।।
नानक अलखु न लखीए, गुरमुखि देई दिखालि।। ।।१२१।।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब पृष्ठ 1384

डाक्टर साहिब सिंह ने इस सलोक को गुरु रामदास जी का माना है। इस तरह 'सलोक भगत कबीर जीऊ' में सलोक नंबर २४२ में 'रविदास' नाम दर्ज है। इस सलोक के आरंभ में कोई सरलेख नहीं है -

मुख्य सरलेख - 'सलोक भगत कबीर जीऊ के'

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस॥
ते नर दोजक जाहिग सति भाखै रविदास॥२४२॥

(पृष्ठ १३७७)

डा. साहिब सिंह ने इस सलोक को गुरु कबीर का माना है। उपरोक्त दोनों सलोकों के बीच सँयुक्त नुक्ते नीचे लिखे हैं -

1. दोनों सलोकों के मुख्य सरलेख हैं।
2. दोनों सलोकों के आरंभ में कोई सरलेख नहीं है।
3. दोनों सलोकों में मुख्य सरलेख की अपेक्षा अलग नाम दर्ज है।

इन संयुक्त नुक्तों से परिणाम भी सँयुक्त अर्थात् एक ही निकलेगा परन्तु डा साहिब सिंह दोनों सलोकों की उपरोक्त सांझ के होते हुए भी एक सांझा निर्णय नहीं लेते हैं। वे सलोक नंबर 121 को तो गुरु रामदास जी का मानते हैं और सलोक नंबर 242 को गुरु कबीर जी का मानते हैं। डाक्टर साहिब सिंह का यह निर्णय सही नहीं है। यदि उपरोक्त नानक नाम वाला सलोक गुरु रामदास जी का है तो उपरोक्त रविदास नाम वाला सलोक गुरु रविदास जी का क्यों नहीं। इस को दूसरे ढंग से भी प्रस्तुत किया जा सकता है। यदि गुरु रविदास नाम वाला उपरोक्त सलोक गुरु कबीर जी का है, तब उपरोक्त नानक नाम वाला सलोक शेख फरीद जी का क्यों नहीं है?

डाक्टर साहिब सिंह का नानक नाम वाले सलोक वाला निर्णय सही नहीं है। इस आधार से ही सलोक नंबर 242 वाला निर्णय लेना पड़ेगा, इसलिए गुरु रविदास वाले सलोक के कर्ता का नाम गुरु रविदास जी ही है।

नानक नाम वाले सलोक नंबर 121 का निर्णय क्यों सही है? इस पर विचार करते हैं –

उपरोक्त नानक नाम वाले सलोक के आरंभ में महला का उल्लेख नहीं है। इसी कारण ये निश्चित करने में मुश्किल हो गई है कि यह किस नानक का सलोक है ? इस सलोक का निर्णय करने के लिए डाक्टर साहिब सिंह लिखते हैं–

'**नोट** – यह सलोक गुरु रामदास जी का है। राग कानड़े की वार की पंद्रहवीं पौउड़ी में आया है।'[1]

उपरोक्त नोट से स्पष्ट हो जाता है कि यह सलोक 'चौथे नानक' गुरु रामदास जी का है परन्तु यह सहायता लेना इसलिए ज़रूरी हो गई है कि यह निर्णय किया जा सके कि यह सलोक किस नानक का है ? क्योंकि मुख्य सरलेख सलोक शेख फरीद के अन्तर्गत सलोक नंबर 121 के आरंभ में कोई महला दर्ज नहीं है।

इस नोट का यह अर्थ बिल्कुल ही नहीं है कि गुरु रामदास जी का सलोक गुरु ग्रन्थ साहिब में राग काहनड़ा की वार में मिलता है। इसलिए गुरु रामदास जी का है। इस विचार को मानने से तो यह सिद्ध हो जाता है कि यदि यह सलोक वार के बीच न होता तो डॉक्टर साहब सिंह के अनुसार यह सलोक शेख फरीद जी की रचना सिद्ध हो जानी थी, जिस प्रकार उन्होंने सलोक नंबर 242 को गुरु

1. वही–३५६

कबीर जी का मान लिया है। अत: इस नोट का मुख्य उद्देश्य केवल यह स्पष्ट करना है कि यह सलोक गुरु राम दास जी का है। इस सहायता के बिना इस सलोक के कर्ता का पता ज्ञात नहीं होंना था। जिन सलोकों के आरंभ में महला दर्ज है, वहां ऐसी सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ी है, क्योंकि महला स्पष्ट कर देता है कि यह किस गुरु का श्लोक है।

जिस प्रकार उपरोक्त चर्चा से यह सिद्ध हो गया है कि सलोक नंबर 121 शेख फरीद जी का नहीं है बल्कि गुरु रामदास जी का है। उसी तरह यह भी सिद्ध हो गया है कि सलोक नंबर 242 गुरु कबीर जी का नहीं है, बल्कि गुरु रविदास जी का है।

एक अन्य दृष्टिकोण पर विचार करने से भी सलोक नंबर 242 गुरु रविदास जी का ही सिद्ध होता है जहां सलोक के आरंभ में महला सरलेख आया है और सलोक के अंदर दर्ज नाम गुरु कबीर जी या बाबा फरीद जी के ही हैं, वहां विचार तो उपरोक्त दोनों महापुरुषों के ही हैं परंतु महला उन्हीं विचारों को संदेह पढ़ने से बचाने के लिए और स्पष्ट करता है।

जहां सलोक के आरंभ में महला सरलेख नहीं है, परंतु अंदर नानक नाम दर्ज है, वहां नानक के विचार हैं। इस प्रकार के सलोक अगले और पिछले सलोकों की विचारधारा की कड़ी को निरंतर जारी रखने के लिए प्रयोग किये गए हैं। यदि ऐसे सलोक दर्ज नहीं किए जाते हैं, तो सलोकों में विचरण कर रही विचारों की कड़ी टूट जानी थी और विचारधारा में निराशा पड़ जानी थी, जिस कारण समूची विचारधारा अस्पष्ट और धुंधली बन कर साधक के रूहानी विकास में रुकाबट बन जानी थी।

इस दृष्टि से चर्चा करने के उपरांत भी यही सिद्ध होता है कि सलोक नंबर 242 गुरु रविदास जी का है और सलोक नंबर 121 गुरु रामदास जी का है। सलोक नंबर 242 की जगह पर गुरु कबीर जी का कोई भी ऐसा सलोक नहीं था, जो विचारधारा में पड़ी खाई (अंतराल) को पूरा कर सकता। इसलिए गुरु रविदास जी के इस सलोक के अंतराल को पूरा करने के लिए ही यहाँ सलोक नंबर 242 में दर्ज किया गया है। सलोक में गुरु रविदास जी का नाम दर्ज होने के कारण और सलोक के आरंभ में सरलेख न होने के कारण ये गुरु जी के शुद्ध, उन के अपने ही मौलिक विचार हैं।

कई विद्वानों ने डॉक्टर जोध सिंह के इस सलोक को गुरु रविदास जी का

माना है। उन्होंने नि:सन्देह और संकोच के अपनी पुस्तक 'भक्त रविदास की जीवनी और रचना' के अंत में इस सलोक को पृष्ठ नंबर 51 में दर्ज किया है।

इसलिए परिपक्वता से स्पष्ट तौर पर निश्चित हो गया है कि सलोक नंबर 242 गुरु रविदास जी की ही मौलिक रचना है, जिसको गुरु कबीर जी के सलोंकों में विचरण कर रही विचारधारा के बीच पड़ी दरार (अंतराल) को पूर्ण करने के लिए उपयोग किया गया है।

सलोक का अंतरीव विचार-विधान

इस सलोक की पहली पंक्ति में 'हरि' का मुख्य रूप में उल्लेख कर के उसके महत्व को निश्चित किया गया है, जबकि नर जीव अतीत के बीच विचर रहा है परन्तु जीव के कर्म को अतीत के बीच नहीं रखा गया है, बल्कि बड़े शक्तिशाली ढंग से, स्पष्ट रूप में उभार कर प्रभ के साथ जीव के संबंधों को उसके कर्म अनुसार सृजन किया गया है। इस प्रकार इस पंक्ति में जानबूझ कर पारब्रह्म-परमात्मा और उसकी अंश आत्मा का गहरा और अटूट संबंध दृढ़ किया गया है और समझाया गया है कि अपने पिता-परमात्मा को त्याग कर अर्थात् कूड़ के प्रसार मलीन होकर जीव-आत्मा के लिए बख्शिश संभव नहीं है।

दूसरी पंक्ति में, पहली पंक्ति के अतीत के बीच भी विचरण कर रहे 'ते नर' को अतीत के बीचों बीच निकाल कर मुख्य रूप में सामने रख कर उभारा गया है। इस प्रकार पहली पंक्ति में निरूपित कूड़ के व्यवहार को स्पष्ट किया गया है, कि पारब्रह्म-पिता के साथ जीव संबंध तोड़ कर सीधा नर्क को ही जाएगा, यह अटल सत्य है।

सलोक के अर्थ

जो जीव अपने वास्तविक पारब्रह्म प्रभ के साथ संबंध तोड़ कर किसी अन्य के साथ अर्थात् देवी देवताओं खास कर ब्रह्मा, विष्णु और महेश के साथ संबंध जोड़ते हैं, जिन को गुरु रविदास जी ने 'नाथ कछुआ ना जानयो' और 'हरि जपत तेऊ जना' के बीच वेदों, पुराणों के आधार पर पांच विकारों का शिकार साबित किया है, वह माया के दूत पांच विकारों के साथ अपने आप को ओतप्रोत करके मुक्ति की आस नहीं सकते हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि इस प्रकार के जीव निसंदेह सीधे नर्कों को जाएंगे, यह अटल सत्य है।

शब्द - 1

सिरी रागु बाणी श्री रविदास जी की

ੴ सतिगुरु प्रसादि।।

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा॥
कनक कटिक जल तरंग जैसा॥१॥
जउ पै हम न पाप करंता अहे अनंता॥
पतित पावन नामु कैसे हुंता॥१॥रहाउ॥
तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी॥
प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी॥२॥
सरीरु आराधै मो कउ बीचारु देहू॥
रविदास सम दल समझावै कोऊ॥३॥[1] **(पृष्ठ ९३)**

पद अर्थ - **तोहि**-तुम, पारब्रह्म। **मोहि**-मैं, पारब्रह्म की अंश, जीव। **अंतर**-भेद, फर्क। **तोहि-मोहि, मोहि-तोहि**, सृष्टि सृजन से पहले भी पारब्रह्म (तोहि) सुन्न समाधि के बीच था और सृष्टि समेटने के पीछे भी पारब्रह्म (तोहि) सुन्न समाधि के बीच लीन हो जाता है। इस आधी तुक के बीच पहले 'तोहि' है और अंत में भी तोहि है। अत: आरंभ और अंत में 'तोहि' ही है और मध्य के बीच में पारब्रह्म का सृजन उस की अंश जीव (मोही) हैं। अत: आरंभ, मध्य और अंत में पारब्रह्म ही है। फिर अंतर कैसा? **कनक**-सोना। **कटिक**- कड़ा। **जल**-पवित्र, पानी। 'जल' शब्द का प्रयोग इत्तफाक से ही नहीं हुआ है। गुरु रविदास जी ने जल का प्रयोग जानबूझ कर पवित्रता का अर्थ बताने के लिए किया है। अत: 'जल' पवित्रता का प्रतीक है, इसलिए कहा जाता है कि 'जल मिलिया परमेश्वर मिलिया।' 'जब हम होते तब तुम नाहीं' वाले शब्द में भी 'जल केवल जल माहीं' प्रयोग कर के गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि जीव आत्मा पवित्र बन कर अपने पारब्रह्म परम आत्मा के साथ जा कर अभेद (समरस) होती है। अत: यहां पर भी जल पवित्रता का प्रतीक है। **तरंग**-लहर, तरंग की

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ९३

भावना और स्वभाव संगीतात्मक होने के कारण पवित्रता की प्रतीक है। **जैसा**–जिस प्रकार।।१।।

जउपै–जे, यदि। **हम**–मैं (एक वचन)। **अहे**–हे। **अनंता**–जिस का अंत नहीं, प्रभ। **पतित**–अपवित्र, विकारों से भरे हुए। **पावन**–पवित्र करने वाला, पापियों को तारने वाला। **हुन्ता**–होता है।।१।। रहाउ।।

तुम–तूँ, पारब्रह्म। **जु**–जो। **नाइक**–नेतृत्व करने वाला प्रभ, मुक्ता होने के कारण समास है। '**प्र**'–सं, **वय**–इस शब्द के साथ मिलकर–आरंभ, गति, अति, प्रसिद्धि आदि अर्थ देता है। **जिवें**– जिस प्रकार= प्रचंड, प्रबोध, प्रभाव आदि।[1] '**भ**' – 2 सं, **संज्ञा**–प्रकाश, रोशनी।[2] प्रकाश का अर्थ ज्ञान है। इसी तरह प्रभ का अर्थ बनता है, प्रसिद्ध ज्ञान अर्थात् ब्रह्मज्ञान। सो प्रभ, ब्रह्म–ज्ञान का एको एक आदि स्रोत है, जिस प्रकार प्रस्तावना के दूसरे तुक 'प्रभ ते जन जानी जै जन ते सुआमी' में ब्रह्म–ज्ञान का वर्णन है।

प्रभ – स्वयं ही साधक को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है। उस के साथ साधक प्रभ–रूप बन जाता है। इसी तरह प्रभ से साधक की पहचान हो जाती है। साधक के प्रभ रूप माडल के साथ प्रभ की पहचान हो जाती है। इस तरह पहले प्रभ से साधक की पहचान होती है, फिर वही साधक प्रभ की पहचान का साधन बनता है।

'**प्रभ–सुआमी**' – आरंभ में भी प्रभ का ब्रह्म ज्ञान था और अंत में भी। मध्य में प्रभ के ब्रह्म ज्ञान के साथ वरसोया साधक है। अत: आरंभ, मध्य और अंत के बीच ब्रह्मज्ञान ही है। अत: प्रभ स्वयं ही ब्रह्म ज्ञान का सृजनहार है तथा वह स्वयं ही ब्रह्म गुरु बन सेवक को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है। जन–साधक, सेवक। जानी जै–पहचाना जाता है। सुआमी–प्रभ।।२।।

सरीरू–तन–मन की एक स्वरता। **सरीरू अराधै**–एक स्वर, एक मन हो कर सिमरन करूं। **मो कउ**–मुझे। **बीचारु**–ब्रह्मज्ञान का विचार। **समदल**–अनेकों में एक, दृष्टि में व्यापक, **सर्व**= सर्वव्यापक प्रभ। **कोऊ**–सब के बीच में से कोई एक।।३।।

1. महान कोश पृष्ठ : ४२४
2. महान कोश पृष्ठ : 673

१ओ ⁀/सोहम का सिद्धांत
(सृष्टि सृजना का सिद्धांत)

इस शब्द के बीच कई सिद्धांतों का सृजन संभव हुआ है। गुरु रविदास जी के इस शब्द के बीच एक १ओ ⁀/'सोहम' का सिद्धांत मूर्तिमान होता है और 'सोहम' से ही सृष्टि के सृजन का सिद्धांत प्राप्त होता है। इस शब्द की पहली तुक के पहले शब्द से ही गुरुजी स्पष्ट कर देते हैं कि 'पारब्रह्म एक ही है।' तोही एक वचन है और अर्थ बनता है, पारब्रह्म एक ही है, इसी तुक का दूसरे शब्द मोही है और अर्थ होता है 'मैं' अर्थात् पारब्रह्म की अंश, जीवात्मा। इस तरह पहली तुक का अर्थ स्पष्ट हो जाता है कि परमात्मा और जीवात्मा एक ही हैं। कोई भी अन्तर नहीं है। यहां यह स्पष्ट करना ज़रूरी है, कि यह जीव आत्मा विकारों से मुक्त हुई आत्मा नहीं है, बल्कि यह जीवात्मा तो अभी विकारों के प्रभावों के बीच आई ही नहीं। अभी तक यह कंज कवारी जीव आत्मा है। इसी कारण स्थानांतरण संभव हो सका है।

'तोही मोही, मोही तोही' (९३)

ऊपर दिए गए विवरण से स्पष्ट है कि निर्गुण तोही से ही सगुण मोही की रचना हुई है, वह गुप्त से ही प्रकट होती है। सूक्ष्म से अस्थूल के बीच परिवर्तन का सिद्धांत (तोही से मोही के स्थान परिवर्तन का सिद्धांत) गुरु ग्रँथ साहिब में अंकित है। वैज्ञानिक आइंस्टाइन ने प्रयोगों के आधार पर इसी सिद्धांत को हिसाब के फार्मूले द्वारा लोगों के आगे प्रस्तुत किया है, वह फार्मूला है $E= mc^2$, अर्थात् कि जितनी भी उत्पति हुई है, वह सारी शक्ति से ही हुई है और शक्ति गुप्त है। यह शक्ति हर कण–कण में समाई हुई है। (एक ही एक अनेक होई बिस्थारियो आन रे आन भरपूरि सोऊ।।) विज्ञान का विवरण देखो 2 I और 2 J"[1]

(नोट – बरैक्ट वाले शब्द के पीछे से पाए गए हैं – लाल सिंह।)

विवरण 2।

1. गुरवाणी और विज्ञान, प्रो. त्रिलोचन सिंह, फिजिक्स विभाग, खालसा कालेज पटियाला, पृष्ठ नंबर–२६

Materialization means generally speaking transformation of energy in to particales with a rest mass. Materialiazation played a vital role in the every period of the universe (The Big Bang) about 10,000 million years.

अर्थ - भौतिकीकरण साफ शब्दों के बीच शक्ति से पदार्थ के बीच परिवर्तन की क्रिया है। भौतिकीकरण की ब्रह्मांड के पहले के समय लगभग 10, 000 लाख वर्ष पहले (बड़े धमाके के समय) बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है।

By: Josip kieczek and Peter Jakes

From:The universe and planet Earth. Page-43''.[1]

विवरण 2j

By Einstein Equation $E=mc^2$ (Where E is Energy, M is mass and c is velocity of light) energy is proportional to mass.

अर्थ - वैज्ञानिक Einstein के फार्मूले के अनुसार

शक्ति = पुंज (प्रकाश की गति)^2

शक्ति और पुंज का आपस में परस्पर संबंध है।

By Stephen W Hawking

From : A Brief History of time from the Big Bang to black Holes. Page:- 114"[2]

कर रे गिआनी ब्रह्म विचारु।
जोती अंतरि धरिया पसारू।।

(९७२) गुरु कबीर जी।

अथवा

एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥

(१२९३) गुरु रविदास जी।

समस्त प्रसार ज्योति से ही हुआ है, ज्योति से तात्पर्य है, 'शक्ति' प्रभ या बेअंत। विज्ञान के अनुसार भी यही है कि पदार्थ की रचना शक्ति से हुई है। यदि हम किसी वस्तु के पुंज को M के साथ लिख लें, तब यह देखने के लिए कि इस

1-2 वही - पृष्ठ : ३८

में कितनी शक्ति है, इस पुंज को C^2 के साथ गुणा किया जाता है, C से तात्पर्य प्रकाश की गति है।

mc^2 मादा = E शक्ति

Universe is created from energy.

$Mc^2 = E$"[3]

नोट : बरैक्ट वाले शब्द के पीछे पाए गए हैं-लाल सिंह।

इस सिद्धांत ($E= mc^2$) को हम और स्पष्ट करते हैं। शक्ति से पदार्थ पैदा हुआ है। मनुष्य भी पदार्थ ही है। अत: मनुष्य ही शक्ति है। जब मनुष्य अपने भौतिक शरीर को शक्ति (energy) के बीच बदलने की क्षमता पैदा कर लेता है, तो उस में समूचे ब्रह्मांड की शक्ति (Energy) पैदा हो जाती है। जब गुरु रविदास जी 'संत अनंतहि अंतर नाही' कहते हैं तब वे उपरोक्त सिद्धांत की ही साक्षी भरते हैं। विज्ञान के अनुसार ब्रह्मांड की रचना भी शक्ति से ही हुई है। शक्ति गैसों के ठोस रूप में तबदील होने के कारण एक बहुत बड़ा आग का गोला अस्तित्व में आया है। इस शक्ति के कारण ही इस आग के गोले में बड़ा धमाका (Big Bang) हुआ है। इस गोले के अनेकों टुकड़े बन गए और ब्रह्मांड अस्तित्व में आया है, इसलिए शक्ति से पदार्थ की ही उत्पत्ति हुई है। इस उत्पत्ति के बीच मनुष्य भी शामिल है। स्पष्ट है कि शक्ति से ही मनुष्य की उत्पत्ति हुई है।

इसलिए मनुष्य ही शक्ति है। जो मनुष्य अपने शरीर (पदार्थ) को शक्ति के रूप में तबदील कर लेते हैं, तभी वह सारे का सारा शक्ति बन जाता है। गुरु रविदास जी ने इसी शक्ति को पारब्रह्म (प्रभ) कहा है, जिससे सारी सृष्टि की रचना (सृजन) हुई है, इसी कारण गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि संत जन अपने शरीर (पदार्थ) को शक्ति में ही तबदील कर लेते हैं और वह शक्ति ही बन जाते हैं।

रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु॥
संत अनंतहि अंतरु नाही॥४॥२॥ **(पृष्ठ ४८६)**

अर्थात् गुरु रविदास जी महाराज के कहने का तात्पर्य है कि जो प्रभ को जान लेता है अर्थात् अपने शरीर (पदार्थ) को शक्ति के बीच तबदील कर लेता

1. वही - पृष्ठ : २७

है, तब वह महाशक्ति पारब्रह्म (प्रभ) ही बन जाता है। इसलिए शक्ति और महाशक्ति एक ही हैं, कोई अंतर नहीं है।

स्पष्ट है कि गुरु रविदास जी ने E= mc² सिद्धांत को वास्तविक रूप में प्रकट कर दिया था। आइंस्टाइन ने सवा छः सौ साल पूर्व इस सिद्धांत को प्रत्यक्ष रूप में सही सिद्ध किया है।

गुरु रविदास जी ने अपनी वाणी के बीच शरीर को शक्ति के बीच परिवर्तन करने का भाव मनुष्य की प्रभ को प्राप्त करने की विधि को भी स्पष्ट किया है।

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो
स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ॥
मनु सु मधुकरु करउ चरन हिरदे धरउ
रसन अंम्रित राम नाम भाखउ॥१॥
मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि घटै॥
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै॥१॥ रहाउ॥
साधसंगति बिना भाउ नही ऊपजै
भाव बिनु भगति नही होइ तेरी॥
कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ
पैज राखहु राजा राम मेरी॥२॥२॥

(पृष्ठ ६९४)

अतः गुरु रविदास जी ने शरीर (पदार्थ)) को शक्ति में तबदील करने का सिद्धांत देकर स्पष्ट कर दिया है कि शरीर को शक्ति के बीच तबदील किया जा सकता है अर्थात् प्रभ को प्राप्त किया जा सकता है।

इस तरह गुरु रविदास जी ने आइंस्टाइन के फार्मूले ई= एम सी² (E=mc²) को आज से सवा छः सौ साल पूर्व अमली रूप में प्रकट कर दिया था, जिस को कुछ वर्ष पूर्व आइंस्टाइन वैज्ञानिक ने तजुर्बे करके E=mc² का फार्मूला ईजाद करके गुरु रविदास जी की अटल सच्चाई को सैद्धांतिक रूप से सिद्ध करके आत्मिक शक्ति और पदार्थ के बीच निरूपित शक्ति को 'एक' ही साबित कर दिया है। आइंस्टाइन के फार्मूले E=mc² की साक्षी गुरु रविदास जी के अन्तर्गत दी गई प्रस्तावना को और भी परिपक्व कर देती है, जिस में रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि वह एकमात्र शक्ति (पारब्रह्म) अनेकों रूप (पदार्थ) रूप धारण करके प्रसारित किया हुआ है।

एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥

(१२९३) गुरु रविदास जी

उपरोक्त प्रस्तावना में गुरु रविदास जी यह भी स्पष्ट कर देते हैं, कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश प्रभ के भक्त के भी बराबर भी नहीं है, अतः हिंदू धर्म के ये 'भगवान' प्रभ तो क्या, प्रभ के भक्त के भी बराबर नहीं है। इसका अर्थ है कि वह 'भगवान' शक्ति नहीं हैं। इस कारण हिंदू धर्म के 'भगवान' पदार्थ (सृष्टि) की रचना करने के भी समर्थ नहीं है, बल्कि वे, भगवान शक्ति द्वारा पैदा किए गए पदार्थ अर्थात् आम मनुष्य ही हैं।

अतः उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि सृष्टि का सृजन पारब्रह्म अर्थात् शक्ति से ही हुआ है। अतः सृष्टि और पारब्रह्म स्वयं ही हैं। इस कारण गुरु रविदास जी ने इस शब्द के प्रथम प्रस्तावना की पहली आधी तुक के बीच तोही के साथ मोही और मोही के साथ तोही के स्थानांतरण के साथ सृष्टि सृजन की प्रक्रिया को स्पष्ट करके पारब्रह्म और जीवात्मा को एक सिद्ध किया है। सोहम से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। यह सृष्टि सृजन की प्रक्रिया से स्पष्ट हो जाता है। सृष्टि सृजन की प्रक्रिया के अनुसार सृष्टि सृजन से पहले भी पारब्रह्म तोही सुन्न समाधि में था और सृष्टि समेटने के पीछे भी पारब्रह्म सुन्न समाधि के बीच लीन हो जाता है। इस आधी तुक के बीच प्रथम शब्द भी तोही है और अंत में भी शब्द तोही ही है, अतः आरंभ और अंत के बीच तोही अर्थात् पारब्रह्म ही कायम दायम है और मध्य में पारब्रह्म का सृजन, विश्व रचना के बीच पारब्रह्म की अंश जीव मोही ही है। इसलिए आरंभ, मध्य और अंत के बीच भी पारब्रह्म ही है। दूसरे अर्थों में पारब्रह्म के बीच जीव समाया हुआ है और जीव के बीच पारब्रह्म समाया हुआ है, दूसरे अर्थों में सृष्टि समेटने के बाद सृष्टि, पारब्रह्म में सिमट जाती है, फिर सृष्टि सृजन के पश्चात् पारब्रह्म सृष्टि में सिमट जाता है। फिर अंतर कैसा? इस प्रकार गुरु रविदास जी निर्णय देते हैं कि दोनों के बीच किसी भी प्रकार का कोई अंतर नहीं है। विश्व में तोही और मोही का रिश्ता परमात्मा और जीव आत्मा का है। अब अंतर केवल दृष्टि भेद करके दृष्टिगोचर होता है, वास्तविक तौर से परमात्मा और जीवात्मा एक ही हैं, कोई अंतर नहीं है। संसार के बीच तोही और मोही का रिश्ता परमात्मा और जीवात्मा का है। अब अंतर केवल दृष्टि भेद कर दृष्टिगोचर होता है। वास्तविक तौर से परमात्मा

और जीव आत्मा एक ही है, जिन में कोई अंतर नहीं है। जो अंतर दृष्टि भेद कर के है, वह ऐसा है, जिस प्रकार सोना और सोने से बने आभूषण या पानी और पानी में उठी तरंगों का है। यह दृष्टांत स्पष्ट करते हैं कि दृष्टि भेद कर के ये अलग-अलग लगते हैं, परन्तु वास्तविक तौर से दोनों एक ही हैं। जब भूषण ढालकर, पिघला कर समेटे जाते है, तब फिर सोना बन जाते हैं, जब लहरें मिट जाती हैं, तब वे पानी बन जाती है। इसी प्रकार जब पारब्रह्म सृष्टि समेटता है, अनेकता सिमट कर एकता अर्थात् शुद्ध पारब्रह्म रह जाता है। इस स्थिति के बीच परमात्मा और जीवात्मा का दृष्टि भेद भी मिट जाता है। पारब्रह्म भी सुन्न समाधि के बीच जा कर विराजमान हो जाता है। इस तरह गुरु रविदास जी ने बड़ी गहनता और गहराई के साथ सृष्टि सृजन के सिद्धांत का निर्माण किया है और निश्चय किया है कि सोहम से ही सृष्टि का सृजन हुआ है।

उपरोक्त चर्चा से एक और महत्वपूर्ण और बहुमूल्य सिद्धांत एक ओम/सोहम का सृजन होता है। ੧ओ/सोहम ही प्रभ बेअंत शक्ति है -

'उह मैं हाँ, मैं उह हाँ'

(तोही मोही मोही तोही)

'उह' का अर्थ है, पारब्रह्म और मैं का अर्थ है, पारब्रह्म की अंश। इस तरह पारब्रह्म और जीव एक ही हैं, ज़रा भी अंतर नहीं है। इसलिए उपरोक्त 'रहाउ' वाली प्रस्तावना की व्याख्या अब ज़रूरी बन गई है। कारण -

1. गुरु अर्जुन देव साहिब जी ने पूरे मूल मंत्र के साथ श्री गुरु रविदास जी का नाम दर्ज करके सृष्टि के सृजन के सिद्धांत की ग्वाही भर दी है।

2. उपरोक्त बताए गए हिन्दू धर्म के भगवानों को केवल रद्द ही नहीं किया अर्थात् हिन्दू धर्म ग्रंथों के सृष्टि सृजन के सिद्धांत को उसके स्थान पर प्राकृतिक नियमों पर आधारित सिद्धांत भी दिया है, जिसकी आधुनिक विज्ञान ने भी अब पृष्टि कर दी है।

श्री गुरु रविदास जी ੧ओ की सृजना करते हुए सिद्ध करते हैं कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि हिन्दू भगवानों को रद्द करके सिद्ध करते हैं कि ये तीन गुण 1. सृष्टि की उत्पत्ति 2. उसका पालन करना 3. और उनका संहार करना पारब्रह्म की ही शक्तियां हैं। उपरोक्त हिन्दू भगवान देहधारी हैं तथा पारब्रह्म की ही रचना है। सृष्टि की हर रचना एक वह स्वयं विचर रहा है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश में भी वह स्वयं विराजमान हैं। तत्पश्चात् पारब्रह्म की रचना उसकी

बराबरी कैसे कर सकती हैं। इसलिए ये तीनों देहधारी भगवान पारब्रह्म शक्तियों के मालिक नहीं बन सकते। यही कारण है कि श्री गुरु रविदास जी ने पहले इन तीनों भगवानों को रद्द किया, फिर उसके स्थान पर गुरु रविदास जी ने पारब्रह्म का सृष्टि सृजने का नया वैज्ञानिक सिद्धांत दिया, जिस को आज विज्ञान ने भी स्वीकृत कर लिया है। वह सिद्धांत है पारब्रह्म केवल मात्र एक ही है। विष्णु, शिव तथा ब्रह्मा प्रभ के भक्त के बराबर भी नहीं हैं। अतः पारब्रह्म एक है, सृष्टि सृजना, उस का पालन करना तथा उसका संहार करना, उसकी शक्तियां हैं। ये शक्तियां किसी अन्य के पास नहीं हैं।

विज्ञान ने भी इस (1) को ऊर्जा (Energy) कहा है तथा इस ऊर्जा के कणों के साथ ही समूची सृष्टि का सृजन हुआ है। जिसको गुरु रविदास जी ने लगभग साढ़े छह सौ वर्ष पूर्व (650) यह कह कर स्पष्ट कर दिया था कि ''एक ही एक अनेक होई विस्थारयो आन रे आन भरपूरि सोऊ।'' अतः गुरु रविदास जी तथा विज्ञान ने भी इस 'एक' से ही सब कुछ का सृजन हुआ है। इस ऊर्जा की तीन अलग-अलग शक्तियां इलैक्ट्रान (जन्म वेद वाली शक्ति) न्यूट्रान (पालन करने वाली शक्ति) तथा प्रोटान (संहार करने वाली शक्ति)। चाहे ऊर्जा पारब्रह्म है तथा ऊर्जा की उपरोक्त शक्तियां पारब्रह्म की ही शक्तियां हैं।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी ने जानबूझ कर, सुचेत होकर तीनों हिन्दू भगवानों को वैज्ञानिक सिद्धांतों के साथ रद्द करके, उन्हें आम मनुष्य ही घोषित किया है। साथ में यह भी सिद्ध किया है कि इन भगवानों के साथ जोड़ी गई शक्तियां पारब्रह्म की ही सृजना हैं। इस कारण वह पारब्रह्म की शक्तियों के किसी भी स्थिति में मालिक नहीं हो सकते।

उपरोक्त समूची चर्चा से दृढ़ निश्चय हो गया है कि पारब्रहम केवल मात्र 'एक' ही है। उसकी तीन शक्तियां हैं-जन्म देना, पालन करना तथा संहार करना। दूसरे शब्दों में गुरु रविदास जी ने ''सोहम अर्थात् ੧ओ की'' वैज्ञानिक तौर पर तथा सैद्धांतिक सृजन किया है। तोही -उह -उ (उह का संक्षेप)

मोही-मैं, उस की अंश -अं (अंश का संक्षेप) दोनों का समास बनता है, ओङ्ग।

उ-सो

अं-हं (अहं का संक्षेप)

दोनों का समास बनता है 'सोहम'। सोहम का अर्थ है 'वह मैं हूं'।। (or thou) that very person Willium Munior.[1]

हम पहले विचार कर चुके हैं कि तोही एक वचन है और तोही के बीच मोही समाया हुआ है। यह सुन्न समाधि की अवस्था है। इसलिए 'उ' बन जाता है '१ओ'। अत: ओअं बन जाता है '१ओ'

'1- एक। उ-ओअं...'[2]

उ और ओअं के अर्थ एक ही होने के कारण उ के बीच (अं) भी समाया हुआ है। इस तरह गुरु रविदास जी ने सचेत हो कर सहज ही प्रमुख सिद्धांत १ओ का सृजन किया है। यही कारण है कि गुरु अर्जुन देव जी ने पूरे मूलमंत्र से गुरु रविदास जी का नाम दर्ज किया है :

''१ओ सतिनामु करता पुरख निरभउ निरवैर अकाल मूरत अजूनी सैभं गुरप्रसादि।। राग आसा बाणी भक्ता की कबीर जीउ नामदेव जीउ रविदास जीउ।।''[3]

एक और शब्द के बीच १ओ की पुष्टि करते हुए उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया है, कि विष्णु, शिव और ब्रह्मा पारब्रह्म के बराबर तो क्या होने थे, वे तो पारब्रह्म के भक्त के भी बराबर नहीं है। इस तरह गुरु जी ने हिंदू धर्म के अनुसार सृष्टि सृजन करने, उस की पालना करने और संहार करने वाले देहधारी भगवानों को रद्द कर के ये तीन शक्तियां १ओ अर्थात् प्रभ की ही मानी हैं। गुरु रविदास जी के यह विचार उनके अपने शब्दों में इस प्रकार दर्ज हैं-

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
तास सम तुलि नही आन कोऊ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥[4]

इसकी पुष्टि गुरु नानक देव जी ने 'जपुजी' की तीसवीं पौड़ी में करके '१ओ' के संकल्प को परिपक्वता प्रदान की है।

1. Dictionary of William Munir
2. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण - पृष्ठ : ४४
3. आदि ग्रन्थ पृष्ठ : 475
4. वही - पृष्ठ १२९३

पुनः सुरजीती (पुनर सजीव) का सिद्धांत

इस शब्द के 'रहाउ' में समूचे शब्द के विषय को निश्चित किया गया है जीवात्मा विकारों के साथ अपवित्र होती है और परमात्मा पतित (अपवित्र) जीवात्मा को पावन (पवित्र) करने की सामर्थ्य रखता है। इस कारण गुरु रविदास जी ने प्रभ को पतित पावन कहा है।

प्रथम प्रस्तावना में जीव आत्मा पवित्र थी पर 'रहाउ' में पतित बन गई है। परमात्मा जीव आत्मा को पापों से मुक्त कर के उस को पुन: पवित्र करने में समर्थ है -

जउ पै हम न पाप करंता अहे अनंता॥
पतित पावन नामु कैसे हुंता॥१॥रहाउ॥

इस प्रकार इस शब्द के बीच सुरजीत (पुनर सजीव) के सिद्धांत की भी सचेत होकर सृजन किया गया है। यह शब्द सिरी राग के बीच दर्ज है। सिरी राग का आधार ही भ्रष्ट और अपवित्र हुई जीवात्मा को पुन: सुरजीत करने का ही है। 'राग नादु शब्दी सोहणे' पुस्तक में गठित प्रमुख संगीत शास्त्रियों की कमेटी द्वारा प्रमाणित निर्णय भी गुरु रविदास जी के शब्द के बीच निरूपित मुड़ सुरजीती के सिद्धांत की परिपक्वता करता है।

'सिरी राग बड़ा पुरातन, मधुर तथा कठिन राग है। सिरी राग को मुड़ सुरजीती का राग माना गया है।'[1]

गुरु रविदास जी का मुड़ सुरजीती का यह सिद्धांत समूचे गुरु ग्रंथ साहिब का सिद्धांत सिद्ध होता है, क्योंकि उनसे पीछे गुरु कबीर जी ने भी इस सिद्धांत को सिरी राग के बीच 'जनन जानत....' वाले शब्द के बीच निरूपित किया है। गुरु कबीर जी गुरु रविदास जी की अपेक्षा उम्र में भी छोटे थे,

ऐसा तैं जगु भरमि लाइया।।
कैसे बुझै, जब मोहिआ है माईआ।।१।। रहाउ।।

- - - - - - - - - - - - - - - -

1. राग नाद शबदि सोहणे - पृष्ठ : ४८

इतु संगति ना ही मरना।।२।।

हुकमु पछाणे ता खसमे मिलणा।।१।। रहाउ।।[1] **(पृष्ठ ९२)**

उपरोक्त शब्द में दो 'रहाउ' हैं। पहले 'रहाउ' के बीच गुरु कबीर जी अपवित्र जीवात्मा का ज़िक्र करते हैं और दूसरे 'रहाउ' में वे फरमाते हैं कि जब अपवित्र जीवात्मा प्रभ के हुकुम को मानकर, पहचान कर प्रभु को प्राप्त हो सकती है।

गुरु नानक देव जी ने भी 'जपुजी' की पहली पौउड़ी में मुड़ सुरजीती के सिद्धांत को निरूपित कर दिया है परंतु यह पौउड़ी सिरी राग के बीच दर्ज नहीं है।

गुरु जी फरमाते हैं कि –

किव सचिआरा होईये, किव कूड़ै तुटै पालि।।

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिया नालि।।१।[2]

इस प्रस्तावना में गुरु नानक देव जी वही विचार व्यक्त करते हैं, जो पहले गुरु रविदास जी और गुरु कबीर जी ने प्रकट किए हैं। उपरोक्त प्रस्तावना में गुरु नानक देव जी प्रश्न करते हैं कि अपवित्र जीव सचियारा (पवित्र) किस प्रकार बन सकता है? इसका उत्तर वे इसी प्रस्तावना की दूसरी तुक में देते हैं। वह स्पष्ट करते हैं कि प्रभ के हुकुम को मान करके उसके अनुसार कर्म करके जीव पवित्र बन जाता है।

इस प्रकार गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु रविदास जी का मुड़ सुरजीती का सिद्धांत मुख्य सिद्धांत के तौर पर स्पष्ट हो गया है, क्योंकि गुरु ग्रंथ साहब का प्रमुख विषय ही यही है, इस कारण यह सिद्धांत गुरु ग्रंथ साहिब की विचारधारा का प्रमुख और मूलभूत सिद्धांत है। स्पष्ट है कि इस विचारधारा का मुख्य उद्देश्य, विकारों के कारण अपवित्र बन गई जीवात्मा को पवित्र बना कर, पुनः जीवात्मा को पवित्र बना कर पुनः परमात्मा के साथ अभेद करना है। यही गुरु रविदास जी का मुड़ सुरजीती (पुनः सजीव) का सिद्धांत है।

1. आदि ग्रन्थ –पृष्ठ : ९२
2. वही – पृष्ठ – १

ब्रह्म-ज्ञान के सिद्धांत का सृजन

गुरु रविदास जी ने सुचेत होकर ब्रह्म ज्ञान के सिद्धांत का सृजन किया है और सुरजीती के सिद्धांत का आधार यही ब्रह्म ज्ञान है। पारब्रह्म स्वयं ही अपने ब्रह्म ज्ञान के साथ जीव आत्मा को पापों से मुक्त कर उसे पुनः सुरजीत कर देता है। ब्रह्म ज्ञान का सृजनहार केवल और केवल पारब्रह्म स्वयं ही है। इसका वर्णन गुरु जी इस शब्द की द्वितीय प्रस्तावना में करते हैं–

तुम जु नाइक आछहु अंतरजामी॥

प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी॥२॥

प्रभ द्वारा साधक की पहचान ही तब होती है, जब वह ब्रह्म गुरु बन कर अपने नेतृत्व में साधक को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है। उस समय साधक प्रभ के साथ एक स्वर हो जाता है। इस एक स्वरता के कारण ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करके साधक जो वचन और कर्म करता है वास्तव में प्रभ के ही वचन और उसके ही हुकुम अनुसार कर्म हैं। साधक की यह विलक्षण विचारधारा और कर्म ही प्रभ द्वारा साधक के प्रभ रूप होने की गवाही है। उपरोक्त विचारों की पुष्टि गुरु नानक देव जी द्वारा भी हो जाती है –

घड़ी पऐ सबदू सच्ची टकसाल।।

जिन कउ नदरि करमु, तिन कार।।

नानक नदरि नदरि निहाल।।३८।।[1]

इस तरह प्रभ कृपा करके खुद ही ब्रह्म गुरु बनकर साधक को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है। उस ब्रह्म ज्ञान के कारण साधक प्रभ रूप बन जाता है। यही प्रभ के द्वारा साधक की पहचान है। इससे सिद्ध हो जाता है कि जिस प्रकार का प्रभ होता है। वह उसी जैसा उसका भगत/साधक होता है। गुरु अर्जन देव जी से इस सिद्धांत की पुष्टि (परिपक्वता) हो जाती है –

नानक ब्रह्म गिआनी आपि परमेश्वर।।६।।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि प्रभ द्वारा साधक की यह पहचान निर्णायक तौर

1. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : ८

पर साधक को प्रभ रूप मॉडल के तौर पर स्थापित कर देती है। अत: स्पष्ट तौर से साधक के इस प्रभ रूप मॉडल द्वारा प्रभ की पहचान हो जाती है। इस पहचान के कारण ही ब्रह्म ज्ञान आधारित नेतृत्व के साथ संसार में प्रभ की श्रेष्ठता निश्चित हो जाती है। इस से सिद्ध हो जाता है कि जैसा भगत /साधक होता है, वैसा ही उस का प्रभ होता है। गुरु रविदास जी से ही इस की पुष्टि हो जाती है-

संत अनंतहि अंतरु नाही ॥ (४)

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि पहले प्रभ के ब्रह्म ज्ञान से साधक की पहचान होती है, फिर वही साधक ब्रह्म ज्ञान के कारण प्रभ की पहचान का साधन बनता है।

एक अन्य दृष्टि से विचार करने से, यह संकल्प और भी स्पष्ट हो जाता है। गुरु रविदास जी ने इस शब्द की द्वितीय प्रस्तावना की दूसरी तुक में ब्रह्म ज्ञान के सिद्धांत को स्पष्ट किया है।

प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी ॥२ ॥

इस तुक में गुरु जी ने प्रभ के साथ जन की और 'जन' के साथ प्रभ (स्वामी) की स्थान बदली के साथ ब्रह्म ज्ञान की प्रक्रिया को स्पष्ट करके भ्रम पारब्रह्म और जीवात्मा की अभेद्यता को सिद्ध किया है।

अत: प्रस्तावना 2 में ब्रह्म ज्ञान की प्रक्रिया अनुसार आरंभ में भी प्रभ का ब्रह्म ज्ञान था और अंत में भी है। मध्य में प्रभ के ब्रह्म ज्ञान के साथ वरसोया साधक है। इस प्रकार आरंभ, मध्य और अंत में ब्रह्म ज्ञान ही है। इसी शब्द की प्रथम प्रस्तावना की पहली आधी तुक से यह स्पष्ट हो गया था, कि सृष्टि सृजना की प्रक्रिया अनुसार आरंभ, मध्य और अंत में पारब्रह्म ही है। दोनों प्रस्तावनाओं में यह परिपक्व और स्पष्ट हो जाता है कि आरंभ मध्य और अंत में पारब्रह्म और उस का ब्रह्म ज्ञान ही विचरण करते हैं। जहां पारब्रह्म है वहीं ब्रह्मज्ञान है, क्योंकि ब्रह्म ज्ञान पारब्रह्म का ही सृजन है। इससे सिद्ध हो गया है कि पारब्रह्म ही ब्रह्म ज्ञान है और ब्रह्म ज्ञान ही पारब्रह्म है। अत: गुरु रविदास जी ने बड़ी विद्वता के साथ दोनों को निखार कर दोनों की महत्ता को अलग-अलग तौर पर सिद्ध करके अलग-अलग उद्देश्यों के लिए उपयोग किया है। पहली प्रस्तावना में पारब्रह्म का महत्व और उद्देश्य (पहचान) निश्चित है। इस तरह गुरु रविदास जी ने विचारों को बड़ी गहराई और बारीकी से सृजन किया है। इनमें सैद्धान्तिक विचारों का वैज्ञानिक आधार होने के कारण उनकी सृष्टि सृजन और ब्रह्म ज्ञान

के साथ पहचान की परिपक्वता और स्पष्टता सिद्ध हो गई है।

इस प्रकार यह ब्रह्मज्ञान के साथ पहचान का साधन बनता है। गुरु रविदास जी ने स्पष्ट किया है कि प्रभ की प्राप्ति या उसकी पहचान का साधन केवल और केवल ब्रह्म ज्ञान ही है।

इस कारण गुरु रविदास जी प्रभ से प्रार्थना करते हैं, कि हे ब्रह्म ज्ञान के स्रोत प्रभ! मैं तन मन से तेरा सिमरन करता हूं, कृपा करके मुझे ब्रह्मज्ञान (विचार) दे दो और यह भी कृपा करो कि कोई महापुरुष मुझे यह समझ दे कि तुम एक ही सारी सृष्टि (अनेकता) के बीच विचरण कर रहे हो।

गुरु रविदास जी की उपरोक्त प्रार्थना का महत्व और भी बढ़ जाता है, जब यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरु जी को यह प्रार्थना इस कारण प्रभ के आगे करनी पड़ी, क्योंकि ऐसी अगुवाई और ऐसा ब्रह्म ज्ञान न तो हिंदू धर्म ग्रंथों में उपलब्ध था और न ही उनके धार्मिक नेताओं से प्राप्त हो सका है। हिंदू धर्म ग्रँथों के अनुसार तो ब्राह्मण भगवान को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है, क्योंकि ब्राह्मण भगवान का गुरु है। इस कारण ब्राह्मण गुरु भगवान को हिंदू धर्म के अनुसार घोषित शूद्र के क़त्ल करने का हुक्म इस करके देता है कि शूद्र प्रभ की प्राप्ति के लिए तप करता है। हिंदू धर्म ग्रंथों के ऐसे हज़ारों ही फ़तवे हैं, जो ब्राह्मण के हुकुम के अधीन 'हिंदू भगवान' जीव का कत्ल करते हैं और अनेकों असंख्य जुल्म ढाह कर मनुष्यता का कत्ल करते हैं।

इसलिए गुरु रविदास जी हिंदू धर्म ग्रंथों की विचारधारा और उनके भगवानों को रद्द करके सीधा प्रभ के साथ ही संपर्क करते हैं और उसके ही सृजित ब्रह्म ज्ञान की मांग करते हैं और ऐसे महापुरुषों के दर्शनों की प्रार्थना करते हैं, जो इस ब्रह्म ज्ञान के अनुसार प्रभ के बारे में समझा दें।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि प्रभ की अगुवाई और उसके ब्रह्म ज्ञान के बिना जीव प्रभ रूप नहीं बन सकता है और जीव के प्रभ रूप बने बिंना प्रभ की पहचान नहीं हो सकती है, अर्थात् पवित्र से अपवित्र हुई जीव आत्मा को प्रभ के ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के साथ पुन: पवित्रता प्रदान होती है। यही मुड़ सुरजीती का संकल्प है, जिसका आधार केवल और केवल ब्रहम ज्ञान ही है। यही ब्रह्म ज्ञान के सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य है।

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

पारब्रह्म (तोही) और जीवात्मा (मोही) सुन्न समाधि से सृष्टि सृजन तक और सृष्टि समेटने से लेकर सुन्न समाधि तक किसी भी तरह अलग नहीं होती है। दोनों एक ही हैं और दोनों में कोई अंतर नहीं है। इस तरह गुरु रविदास जी ने तोही के साथ मोही की और मोही के साथ तोही की स्थान बदली करके, सृष्टि की प्रक्रिया को स्पष्ट कर के परमात्मा और जीवात्मा को एक ही सिद्ध किया है। अत: पहली प्रस्तावना सृष्टि सृजन का संकल्प निरूपित है।

एक और पक्ष से भी यही अर्थ बनता है। पहली तुक के पहले अर्ध के आरंभ में भी तोही है और अंत में भी तोही है और मध्य में पारब्रह्म का सृजन उसकी अंश मोही (जीव) है। अत: आरंभ के मध्य और अंत के बीच पारब्रह्म ही है। फिर अंतर किस किस्म का?

नोट-(1) तोही एकवचन है और इसका अर्थ है पारब्रह्म एक है। मोही पारब्रह्म की अंश है।

'तोही मोही, मोही तोही' शब्द की प्रस्तावना नंबर 1 की पहली तुक स्थान बदली है, पारब्रह्म जीव बन जाता है और जीव पारब्रह्म। इस कारण दोनों में नाममात्र का अंतर भी नहीं है।

परन्तु, 'जब हम होते तब तू नाही' शब्द की प्रस्तावना नंबर 1 की पहली तुक में स्थान बदली नहीं है, बल्कि जीव के विकारी होने के कारण अहंकार तो है, परन्तु पारब्रह्म नहीं है। यहाँ अंतर ही अंतर है।

इसलिए उपरोक्त दोनों प्रस्तावनाओं को एक स्तर पर नहीं रखा जा सकता, परंतु फिर भी कई विद्वान दोनों प्रस्तावनाओं के तथ्यों और स्थिति को एक मानकर इन की विचारधारक स्तर से तुलना करते हैं, क्योंकि तोही मोही के बीच जल पवित्रता का प्रतीक है, इसलिए इसके ऊपर उठी तरंग (लहर) भी पवित्रता का प्रतीक है, इसलिए इसके ऊपर उठी तरंग संगीतात्मक है, संगीत पवित्रता का प्रतीक है। स्पष्ट है कि इस प्रस्तावना में जीवात्मा कंज कंवारी है, अभी तक विकार इसके नजदीक नहीं, पहुंच सके हैं।

2. तोही मोही मोही तोही वाले शब्द में ही जीवात्मा के मलिन होने का

संकेत तक नहीं है, यह आज भी विकारों के प्रभाव के बीच आई ही नहीं है। यह तो कंज कवारी जीवात्मा है।

परन्तु 'जब हम होते तब तू नाही...' शब्द में ऐसी जीव आत्मा का वर्णन है, जो विकारों के साथ मर्लिन हो चुकी है। 'जब हम होते' वाले शब्द के बीच मन रूपी समुद्र में विकार रूपी तूफानी लहरें उठने का कारण शक्तिशाली विकार रूपी तूफानी आंधी है। तूफानी आंधी विकारों की प्रतीक है, अपवित्रता की प्रतीक है। इस कारण जीव आत्मा अपवित्र मलीन हो गई है, यह तथ्य 'जब हम होते' से भी सिद्ध हो जाता है। इस के पीछे जीवात्मा विकारों से मुक्त हो जाती है, इसका प्रमाण 'अब तू ही है मैं नाही' से मिल जाता है। इस तरह इस शब्द के बीच पहले जीव आत्मा मलिन थी, उस के पीछे पवित्र हो जाती है। इस प्रस्तावना की दूसरी तुक का दूसरा अध 'जल केवल जल माही' भी इसकी परिपक्वता करता है। परिणाम - पहले जीवात्मा मलिन थी, उसके पीछे पवित्र बन जाती है। इसलिए दोनों शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन करना ठीक नहीं है, दोनों शब्दों में पानी की स्थिति भिन्न-भिन्न होने के कारण दोनों के अर्थ भी भिन्न-भिन्न हैं।

3. तोही मोही मोही तोही बाली अवस्था को 'संत अनंतहि अंतरू नाही' वाली अवस्था के साथ मिलाना ठीक नहीं है, क्योंकि तू ही तोही मोही बाले शब्द में मोही के ऊपर विकारों का प्रभाव नहीं है। यह अवस्था पवित्रता वाली है। इस कारण यहां मोही के अर्थ 'संत' नहीं बनते। संत तो विकारों के ऊपर काबू पाने के बाद ही बनता है।

तोही मोही के बीच सृष्टि सृजन के बीच आत्मा और परमात्मा की एकता की प्रक्रिया को निरूपित किया गया है, जबकि 'संत अनंतहि' के बीच साधक की आत्मा के विकास की प्रक्रिया को निरूपित किया है। इसलिए दोनों अवस्थाओं की तुलना करना उचित नहीं है।

यह विचार भलीभांति स्पष्ट उभर कर और निखर कर सामने आता है कि जीवात्मा विकारों के प्रभाव के बीच ही नहीं आई। यह अभी कंज (पवित्र) कंवारी है, परन्तु रहाउ के भी संकेत मात्र माया का संकल्प निरूपित किया गया है। जीव माया के दूत विकारों के बीच फंसे पाप करते हैं। इस कारण प्रभ से बिछुड़ जाते हैं। प्रभ पापियों को तारने की सामर्थ्य रखता है, इसलिए पतित पावन या भावार्थ पापियों को तारने वाला कहा जाता है, परन्तु इस संकल्प को

गुरु रविदास जी ने बड़े ही कमलामय और अपनत्व भरे भावों के साथ निरूपित किया है। वह फरमाते हैं कि हे प्रभ! तूँ और मैं एक ही हैं परन्तु मैं पाप करने के कारण आप से दूर हो गया हूँ। अब मैं आप को पहचान नहीं सकता हूँ, परन्तु श्रद्धा भरपूर लहजे के साथ अहसान करते रहते हैं कि हे प्रभ! मैं पाप न करता तो फिर आप को पापियों को तारने वाला किसी ने नहीं कहना था। इसलिए मेरे पापी होने के कारण ही आप का नाम 'पतित पावन' प्रसिद्ध हुआ है।

दूसरी प्रस्तावना में गुरु रविदास जी ने पापियों को तारने के लिए प्रभ की ब्रह्म गुरु के रूप में अगुवाई और उसके ब्रह्म ज्ञान के संकल्प को निरूपित किया है। इस कारण प्रभ के साथ जन की और जन के साथ प्रभ स्वामी की स्थान बदली करके ब्रह्म ज्ञान की प्रक्रिया को स्पष्ट कर पारब्रह्म और जीवात्मा की अभेद्यता को सिद्ध घोषित किया है। प्रभ खुद ही साधक को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है, जिस कारण साधक प्रभ रूप बन जाता है। इस प्रकार जीव प्रभ की अगुवाई और उसके ब्रह्म ज्ञान के कारण प्रभ से सेवक की और सेवक से प्रभ की पहचान करता है। इस तरह प्रथम प्रस्तावना के विचारों का विकास दूसरी प्रस्तावना में किया है। दोनों के बीच गहरी सांझ है। दोनों प्रस्तावनाओं के विचार मॉडलों को प्रकट करने की तकनीक भी साझी है। दोनों विचार मॉडलों का आधार वैज्ञानिक दलीलों तथा अटल सच्चाइयों पर आधारित है।

इस तरह तीसरी प्रस्तावना में रविदास जी ने स्पष्ट किया है कि दुनिया में कोई भी ऐसा नहीं है जो ब्रह्म ज्ञान प्रदान करके प्रभ की पहचान करवा सके, क्योंकि हिंदू धर्म की विचारधारा के अनुसार शूद्र प्रभ भक्ति नहीं कर सकता है। इस कारण यह विचारधारा पक्षपाती और मानव विरोधी है।

इस कारण गुरु रविदास जी प्रभ अर्थात् ब्रह्म गुरु जो सर्व व्यापक है, सब का जन्मदाता है, जो निष्पक्ष हो कर अपना ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है। आगे प्रार्थना करते हैं कि, हे प्रभ! तूँ मुझे अपना ब्रह्म ज्ञान बख्शिश कर और मुझे ऐसा महापुरुष बताओ जो मुंझे तेरे बारे समझा दें।

इसलिए समूचे शबद में स्पष्ट किया गया है कि प्रभ ब्रह्म गुरु बन कर, मनुष्य के मन में विराजमान है, उसकी ब्रह्म ज्ञान के अनुसार अगुवाई करता है, जिस से मनुष्य की पहचान होती है, फिर मनुष्य के प्राप्त किये गए ब्रह्म ज्ञान के कारण ही प्रभ की पहचान होती है। ऐसे ब्रह्म ज्ञान की ही गुरु रविदास जी प्रभ से मांग करते हैं।

शब्द अर्थ – गुरु रविदास जी प्रभ को संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि हे प्रभ! तूँ मैं हूँ और मैं, तूँ है। मैं आप में समाया हुआ हूँ और मेरे बीच तूँ विराजमान है, दूसरे शब्दों में मैं समाया हुआ हूँ। दूसरे शब्दों के बीच सृष्टि सृजन से पहले 'तोही' अर्थात् पारब्रह्म के बीच 'मोही' भाव में समाया हुआ था और सृष्टि सृजन के पीछे मैं के बीच तू विराजमान है। इस तरह तोही मोही से कभी अलग नहीं होता हूँ फिर तेरे मेरे के बीच किस किस्म का अंतर हुआ? गुरु जी उत्तर देते हैं कि दोनों के बीच ज़रा भी अंतर नहीं है। अंतर केवल दृष्टि भेद कर के है। जिस प्रकार सोना और सोने से बने गहनों और जल तथा जल के ऊपर उठती लहरों के बीच दृष्टि भेद है। सोने के गहने ढालने के बाद सोना ही बन जाता है और लहरों के मिट जाने के बाद पानी ही बन जाता है। इसी तरह सृष्टि समेटने के बाद जीव पारब्रह्म के बीच समाकर पारब्रह्म बन जाता है। अब दृष्टि भेद नहीं रहा। इसलिए अंतर भी नहीं रहा। दोनों ही एक हो गए हैं।।१ ।।

हे प्रभ! मैं पापी हूं। माया के जाल में फंसा हुआ हूं, परंतु यदि मैं पाप न करता, तो आपको पापियों को तारने वाला किसी ने नहीं कहना था। फिर तेरा नाम पतित पावन किस प्रकार होता? ।।१ ।। रहाउ।।

हे प्रभ! तूँ, (सबके मनों में विराजमान होने के कारण) सबके दिलों की जानता है। इस कारण आप ब्रह्म गुरु बन कर ब्रहम ज्ञान आधारित समर्थ अगुवाई करने वाले हैं। इस अगुवाई अधीन साधक तेरे हुकुम (ब्रह्म ज्ञान) को पहचानता और स्वीकार करता है। इस के अनुसार जो वचन और कर्म साधक करता है, उससे साधक की पहचान होती है, कि कैसा है ? ऐसे पहचाने हुए प्रभ रूप साधक से (साधक की विचारधारा और उस के अनुसार किए कर्मों से प्रभ का ब्रह्म ज्ञान दृढ़ हो जाता है) प्रभ की पहचान और परख हो जाती है।

पहचान के पीछे प्रभ और साधक, साधक और प्रभ के बीच कोई अंतर नहीं रहता है। इस प्रस्तावना से यह ज़रूर स्पष्ट होता है कि प्रभ की अगुवाई का आधार ब्रह्म ज्ञान है, जिसके अनुसार साधक अपने आप को ढालकर प्रभ रूप बनता है। इस ब्रहम ज्ञान को प्राप्त करने के लिए गुरु रविदास जी प्रभ के आगे प्रार्थना करते हैं कि ज्ञान के आदि स्रोत प्रभ! कृपा करके मुझ रविदास को ज्ञान (विचार) दो और तन मन से सिमरन करने की शक्ति प्रदान करो। यह कृपा भी करो कि मुझ रविदास को कोई महापुरुष यह समझा दे कि तूँ (एक) ही सारी सृष्टि (अनेकता) के बीच विचर रहा है।।३ ।।

शब्द - 2

रागु गौउड़ी गुरु रविदास जी के पदे

गौउड़ी गुआरेरी

१ॐ सतिनाम करता पुरखु गुरप्रसादि।।

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती॥
मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती॥१॥
राम गुसईआ जीअ के जीवना॥
मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा॥१॥ रहाउ॥
मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई॥
चरण न छाडउ सरीर कल जाई॥२॥
कहु रविदास परउ तेरी साभा॥
बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा॥३॥१॥[1] **(पृष्ठ ३४५)**

पद अर्थ - संगति- संबंध, मेल मिलाप। पोच- ऊंच-नीच सबसे नीच, माया के दूत पांच मुख्य विकार- काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार हैं।

नोट - पोच के अर्थ नीच जात के नहीं होते हैं। 99.9% विद्वान पोच का अर्थ नीच-जाति करते हैं। उसके अर्थ हैं महानीच माया के प्रमुख पांच दूत- काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार हैं। इन अर्थों को परिपक्व करने के लिए हम गुरु रविदास जी के शब्द से सहायता लेते हैं।

त्रिगद जोनि अचेत, संभव पुन पाप असोच।।
मनुखा अवतार, दुर्लभ, तिहि संगत पोच।।२।।

टेढ़ी चाल चलने वाले जीव, जिस प्रकार सांप, पशु आदि सोचते ही हैं। पुण्य, पाप की उन्हें समझ नहीं होती है, जिस कारण उन्हें किसी किस्म का दोष नहीं दिया जा सकता है, परंतु मनुष्य जन्म तो दुर्लभ है, वह तो सोच सकता है और उसको पुण्य पाप की समझ भी है, फिर भी मनुष्य की संगत महा नीच

1. आदि ग्रन्थ - ३४५

विकारों वालों के साथ है।

उपरोक्त विचारों का संबंध समूची मनुष्य जाति से है - अकेली शूद्र जाति के साथ नहीं है और न ही चमार जाति के साथ है। परिणाम स्वरूप यह स्पष्ट है कि इन महानीचों ने समूची मनुष्य जाति को अपनी चपेट में लिया हुआ है, चाहे वह ब्राह्मण हो या शूद्र हो। अत: पोच का अर्थ नीची जाति के साथ संबंधित न होकर समूचे पांच विकारों वाली मनुष्य जाति से संबंधित है। इस तरह गुरु रविदास जी फरमाते हैं, कि उनकी संगत इन महानीच विकार वालों के साथ होने के कारण वह हर पल चिंतित हैं। वह इस कारण बिल्कुल ही चिंतित नहीं हैं, कि उन्होंने चमार जाति में जन्म लिया है।

सोच-फिक्र, चिंता। **कुटिलता**-कपट, छल घटिया चाल-चलन। **जन्म**-'2 जीवन ज़िंदगी'[1] **जीवन**- '4 उपजीविका, गुजारा।'[2] **ज़िंदगी**-संज्ञा- जीवन 2 उमर, अवस्था।[3]

नोट - यदि जन्म का अर्थ पैदा होना मान लिया जाए तो फिर एक बहुत बड़ी समस्या खड़ी हो जाती है, कि क्या पैदा होना भी बुरा हो सकता है ? क्या ''जन्म कुभांति'' के यह अर्थ कर लिए जाएं, कि जीव बड़े बुरे ढंग से पैदा होता है? उत्तर न में ही है, क्योंकि न तो जीव का पैदा होना बुरा है और न ही उस का पैदा होने का ढंग बुरा है। जन्म-मरण की प्रक्रिया तो कुदरती प्रक्रिया है। सृष्टि के विकास का आधार है। किसी भी धर्म ने जन्म प्रक्रिया की निंदा नहीं की है। इसलिए जन्म कुभांति के अर्थ किसी भी हालत में जन्म प्रक्रिया से संबंधित नहीं हैं।

अत: जन्म के अर्थ जीवन या ज़िंदगी बनते हैं, अर्थात् जन्म के पीछे चल रहा जीवन किस प्रकार का है? इसलिये जन्म कुभाँति के अर्थों का संबंध जन्म से पीछे के जीवन प्रवाह के साथ है कि जीव जीवन के पवित्र परवाह से संबंधित है या अपवित्र प्रवाह से संबंधित है।।

इस प्रस्तावना के बीच जीव अपवित्र है, पापी है। अत: जन्म कुभांति के अर्थ हैं-पापों से भरा हुआ जीवन।

कुभाँति-बुरा, अबगुणों वाला, अपवित्र।।१।

गुसईया- ''सं, गोस्वामी, संज्ञा, गो (पृथ्वी का मालिक, जगत नाथ, करतार)''।[4] **जीपा के**-जीव के। **जीवना**-क्रि-जीना, ज़िंदा रहना।। रहाउ।।

1. महान कोश पृष्ठ : ३९९
2. वही - ३८२
2. वही - ३९५
4. वही - ३४५

हरहु-काटो, दूर करो। **बिपति**-विकारों की बुरी संगत के कारण उत्पन्न संकट, मुसीबत (कौन सी मुसीबत है, कैसा संकट है? जिससे मुक्त होने की गुरु रविदास जी बेनती करते हैं) यह संकट प्रथम प्रस्तावना में दर्ज है। इस प्रस्तावना के अर्थ लगभग सभी विद्वान जातपात ही करते हैं, परन्तु दूसरी प्रस्तावना में गुरु जी इस संकट को दूर करने की प्रार्थना करते हैं। इस प्रस्तावना में आई तुक 'मेरी हरहु बिपत' के अर्थ वह स्पष्ट नहीं करते हैं कि, गुरु जी कौन से संकट को हरने के लिए विनती करते हैं? क्या गुरु रविदास जी का संकट जात पात का संकट है ? नहीं, गुरु जी का यह संकट बिल्कुल ही नहीं है, यदि ऐसा होता तो वह कभी भी अपने नाम के साथ चमार जाति न जोड़ते। दूसरी जात पात के कारण आत्मा कभी भी अपवित्र नहीं होती है। इससे सिद्ध होता है कि इस तुक के अर्थ से जातपात के संकट दूर नहीं किए जा सकते हैं। इस के अर्थ से विकारों के संकटों से मुक्त करने के ही अर्थ निकलते हैं।)

जन-सेवक, दास। **करहु**-प्रदान करो, बना दो। **सुभाई**-उत्तम किस्मत वाला, खुशनसीब। प्रभ चरणों की प्रेम प्राप्ति वाला। **कल**-नाश, मौत। **जाई**-हो जावे, आ जावे।।२।।

परहुं- पड़ता हूं, पड़ा हूँ। **साभा**- शरण, ओट, संभाल। **वेगि**- जल्दी। **विलाबा**- देर ढील।।३।।

प्रस्तावना नंबर 1 के अर्थ की समस्या

गुरु रविदास जी ने इस की प्रस्तावना नंबर १ के बीच जीवात्मा के पवित्र होने के कारणों की खोज की है। अपने भीतरी (शरीर के बीच निवास करने वाला आदपुरष) को पहचाना है, उस का विश्लेषण किया है। उनकी इस खोज ने विश्वव्यापी अटल सच्चाई को निरूपित करके स्पष्ट किया है, कि जीव द्वारा पांच विकारों की संगत करने से उसका कर्म ही घृणित हो गया है, जिस कारण जीव का सारा जीवन अपवित्र और घटिया बन गया है। इस तरह गुरु रविदास जी ने मूलभूत और वैज्ञानिक विचारधारा की इस प्रस्तावना में खुलकर व्याख्या की हुई है।

परंतु इस के विपरीत टिप्पणीकारों ने इस प्रस्तावना के अर्थों को समूल ही गलत समझा है। यदि इस प्रस्तावना में भ्रम (संदेह) पाने वाली आधी तुक 'जन्म कुभाँति' के रहस्य को खोल दिया जाये, तब समस्त प्रस्तावना के अर्थ स्पष्ट हो जाते हैं। पहले हम कुछ विद्वानों की टिप्पणियां प्रस्तुत करते हैं -

डॉक्टर साहब सिंह, '.... मेरा जन्म भी नीची जाति में हुआ है।'

'हे प्रभ! दिन-रात मुझे यह सोच रहती है कि मेरा क्या बनेगा ? बुरे लोगों के साथ मेरा उठना बैठना है, घटिया (बुरा, अनुचित) मेरा (नित्य) कर्म है, मेरा जन्म भी नीची जाति में हुआ है।।१।।'[1]

भाई जोध सिंह.....

'दिन-रात यही सोच रहती है कि मेरी संगत बुरी है, काम भी घटिया हैं, जन्म भी नीच लोगों के घर में हुआ है।'[2]

संत हीरा दास जी,

'हे प्रभ! मेरी सँगत नीच पुरखों के साथ है। यही तो मुझे सोच चिंता रही है दिन रात। मेरे घर मेरी सँगत का कलिआण मुझे कैसे होवेगा। ''कहते मेरा करम कुटलता मेरे काम भी पशुओं का चाम उतारनादि टेढ़े पने

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण -पोथी दूसरी - पृष्ठ : १०१६
2. भक्त रविदास जीवनी व रचना - पृष्ठ : १६

दा है।'' अर्थात् महामंद है, पुना करमो वत मेरा जनम कुभाँति जनम भी वरण शंकर आदक दोख से खोटी तरह का है।'[1]

श्री श्री 108 संत बाबा किरपाल सिंह जी, (सचखंड बल्लां जालंधर की ओर से प्रकाशित)

'हे वाहिगुरु! मैनूं दिने राती इहो सोच-चिंता है कि मेरी सँगत पोच-नीचाँ दी है अते चम कटने बढने वाला करम भी कुटिलता-खोटा है, जनम वी कुभाँति-खोटे लगन दा है, जिस ते मैं शूद्र जाति बिच पैदा होया हाँ।'[2]

उपरोक्त अर्थ सही नहीं है और भी अनेकों विद्वानों ने ऐसे अर्थ किए हैं, अब हम इस आधी तुक 'जन्म कुभांति' पर चर्चा करते हैं।

उपरोक्त महापुरुषों और विद्वानों ने 'जन्म कुभाँति' के अर्थ लगभग एक जैसे ही किये हैं, 'जन्म नीवीं जात विच्च है' जन्म नीच जाति के बीच हुआ है।

जन्म तो जन्म ही है। कभी जन्म भी बुरी तरह का हुआ है ? क्या चमार जाति के बीच जन्म लेना बुरा है ? क्या परमात्मा ने भी मनुष्य को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के तौर पर पैदा किया है? यदि ऐसा है तो अन्य जातियों की तरह, (सांप, शेर, पशु) इनके शरीर एक ढांचे के बीच फर्क क्यों नहीं पाया है? क्या ब्राह्मण की अपेक्षा शूद्र के बीच शारीरिक पक्ष से या किसी अन्य पक्ष से कोई कमी या आधिक्य है? उपरोक्त सभी प्रश्नों के उत्तर 'न' में ही हैं। इसका अर्थ यह है कि मनुष्य की उत्पत्ति केवल मनुष्य के रूप में ही हुई है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र आदि के रूप में नहीं हुई है। इसलिए कुदरत द्वारा मनुष्य का जन्म बुरा या घटिया नहीं बनाया गया है। गुरु रविदास जी ने तो मनुष्य के जन्म को अवतार कहा है -

उ) मानुखा अवतार दुलभ
तिही संगति पोच ॥२ ॥

अ) दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ
बिरथा जात अबिबेकै ॥

गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य का जन्म अवतारों वाला है, इसकी प्राप्ति अच्छे कर्मों के फलों के कारण है। यह इस कारण दुर्लभ है, परंतु मनुष्य ने विकारों की संगत के साथ इसको घटिया और अपवित्र बना दिया है,

1. रविदास दीप - पृष्ठ : २६०
2. अमृत वाणी श्री गुरु रविदास जी महाराज (सटीक) पृष्ठ : ८

इसलिए जन्म कुभाँति के अर्थ 'चमार जाति में जन्म लेना' कर के बताना, सरासर गलत है।

अत: टिप्पणीकारों ने इस शब्द के बीच विषय को केवल जात-पात के साथ जोड़कर एक तरह से शब्द के बीच निरूपित विषय को रद्द कर दिया है। क्या जात पात जीव की गिरावट का कारण बन सकती है ? कभी नहीं, जात पात तो माया के प्रमुख पांच विकारों का हिस्सा ही नहीं है। माया तो प्रभ का सृजन है, परन्तु जात पात तो प्रभ का सृजन नहीं है। प्रभ का सृजन विश्वव्यापी है और हर जीव के बीच विचरण कर रही है, परंतु जात पात केवल हिंदू धर्म की पैदा की हुई है। दुनिया के किसी भी अन्य धर्म में इसका ज़िक्र तक नहीं है, क्योंकि जात पात विश्वव्यापी नहीं है और न ही प्रभ का सृजन है, इसलिए यह माया के विकारों में शामिल नहीं है।

इसका एक अन्य पक्ष भी है। हिंदू धर्म के जात पात या वर्ण व्यवस्था के सिद्धांत के अनुसार शूद्र प्रभ की भक्ति नहीं कर सकता है। भक्ति का काम है, विकारों के कारण अपवित्र और पापी बने जीव को विकारों से मुक्त कर, पवित्र बनाना है, परंतु यदि शूद्र भक्ति करता है, तो उसको मौत की सजा मिलती है। रामायण में राम चन्द्र ऋषि शंभूक का कत्ल इस कारण करता है, क्योंकि वह शूद्र है और प्रभ की भक्ति करता है, इस तरह हिंदू धर्म शूद्र को भक्ति करने की अनुमति ही नहीं देता है, फिर शूद्र विकारों से मुक्ति प्राप्त करके पवित्र किस प्रकार होगा ? इससे स्पष्ट है कि हिंदू धर्म शूद्र को सदा-सदा के लिए अपवित्र, पापी और गुलाम बनाए रखना चाहता है। इस तथ्य से साबित हो गया है कि जात पात विकार नहीं है, बल्कि जात पात का सिद्धांत विकारों को शक्तिशाली बनाने का साधन है, अर्थात् हिंदू धर्म विकारों को शक्तिशाली बनाने का साधन है। यही कारण है कि जात पात का सिद्धांत शूद्र को नफरत करने का आदेश देता है और ब्राह्मण को इज्ज़त-मान देने का आदेश देता है।

इस प्रकार जात पात का सिद्धांत एक को नफरत और दूसरे को सम्मान और इज्ज़त देता है, परंतु विकार हर एक को अपवित्र और पापी ही बनाते हैं, चाहे वह ब्राह्मण हो या शूद्र। परिणाम स्पष्ट है कि जात पात की पहुंच व्यक्तिगत और पक्षपाती है, जबकि विकारों की पहुंच विश्वव्यापी और निष्पक्ष है।

इसलिए परिपक्व तौर से सिद्ध हो गया है कि जात पात माया के दूत विकारों में शामिल नहीं है, इससे यह भी सिद्ध हो जाता है कि टिप्पणीकर्ता जब इस शब्द

की पहले बन्द में जात पात को विकार के रूप में प्रयोग करते हैं, तब अर्थ गलत हो जाते हैं क्योंकि बन्द नंबर 2 और 'रहाउ' में दिए गए विचार राग गौउड़ी गुआरेरी के मूलभूत नियमों और ज़रूरतों के अनुसार ही सृजित किए गए हैं। इन दोनों के बीच बिलखती, तड़फती जीव की आत्मा को दर्ज करके प्रभ मिलाप के लिए विह्वलता दर्शाई गई है। इस कारण इस शब्द को इस राग के तत्वों के अनुसार अध्ययन करने से पता लगता है कि विषय की गहराई और इसकी बारीकियों को तर्क के साथ समझ कर, परख करके सृजित किया है, परन्तु टिप्पणीकर्ता अनजाने ही जात पात के अर्थ करके गुरु ग्रंथ साहब की विचारधारा के बीच टकराव पैदा कर देते हैं, क्योंकि जो विचार गुरु रविदास जी ने प्रस्तावना नंबर 1 और 'रहाउ' में दिए हैं, वही विचार आज के प्रमुख संगीत शास्त्री दे रहे हैं। 'राग नादु सबदि सोहणे' के बीच प्रमुख शास्त्रियों के विचार दर्ज हैं कि –

> ''गौउड़ी गंभीर प्रकृति का राग है। विलखती आत्मा कृपा की याचना करती है और आपे की खोज करती है, इसलिए इस राग के बीच गुरु साहिब ने मन, मती, बुद्धि, आत्मा, मौत और मुक्ति आदि गंभीर विषयों के बीच गुरबाणी का उच्चारण किया है।''[1]

ध्यान देने वाली बात यह है कि इन सभी संगीत शास्त्रियों ने भी जात-पात को अपनी विषय सूची के बीच शामिल नहीं किया है, जितने भी विषयों का ज़िक्र उन्होंने किया है, वे सब प्रभ का सृजन हैं।

इसलिए उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि टिप्पणीकर्ता विद्वानों ने इस शब्द के पहली प्रस्तावना के अर्थ गलत किए हैं। इस निर्णय की पुष्टि इस शब्द की प्रस्तावना नंबर 2 से हो जाती है।

इस विचार को स्पष्ट करने के लिए हम गुरु कबीर जी के शबद का अध्ययन करते हैं –

गरभ वास महि कुलु नही जाती।।
ब्रह्म बिंदु से सब उत्पानी।।१।।
कहू रे पंडित बामन कब के होए।।
बामन कहि कहि जनमु मत खोय।।१।। रहाउ।।

1. राग नाद शबद सोहणि – पृष्ठ : ५२

जो तं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ।।
तउ आन बाट काहे नही आइआ।।२।।
तुम कत ब्राहमणु हम कत सूद।।
हम कत लोहू तुम कत दूध।।३।।
कहू कबीर जो ब्रह्मु विचारे।।
सो ब्राह्मणु कहीअतु है हमारै।।४।।[1]

गुरु कबीर जी स्पष्ट करते हैं कि माता के गर्भ में न कुल (वंश, गोत्र) होता है और न ही जाति। मनुष्य सहित सारी सृष्टि ब्रह्म की ही अंश है। इसलिए न कोई ब्राह्मण है न क्षत्रिय, वैश्य और न ही कोई शूद्र है। सब प्रभ की ही सन्तान हैं। गुरु जी ब्राह्मण को प्रश्न करते हैं कि जब से सृष्टि का सृजन हुआ है, उस समय से ही उस की सृष्टि की उत्पत्ति प्रभ से हुई है और जीव उस का अंश है, फिर हे पंडित! तू ब्राह्मण कब का हो गया है ? तू ब्राह्मण नहीं है; इसलिए अपने आपको ब्राह्मण कह कर अपने जीवन को नष्ट मत कर। (यहां भी जन्म के अर्थ जीवन ही बनते हैं) यदि तू ब्राह्मण है और ब्राह्मणी के पेट से जन्म लिया है, तब तू किसी और रास्ते से क्यों नहीं जन्म लिया ? हे पंडित ! यदि तू भी अन्य जीवों की तरह मां के पेट के उसी रास्ते से ही आया है, तो फिर तू ब्राह्मण किस प्रकार हुआ? और हम शूद्र किस प्रकार हुए। हमारे शरीर के अंदर लहू किस प्रकार है? और आप के शरीर के अंदर लहू की जगह दूध किस तरह हैं ? इस तरह गुरु कबीर जी स्पष्ट करते हैं कि ब्राह्मण और शूद्र, ब्रह्म की ही अंश हैं, दोनों के बीच किसी भी किस्म का कोई अंतर नहीं है। वह स्पष्ट करते हैं कि जो मनुष्य ब्रह्म बारे विचार करता है, हम उसको ब्राह्मण कहते हैं। इसके अनुसार ही गुरु रविदास जी ब्रह्म विचार करते हैं, इसलिए वे भी ब्राह्मण ही हैं।

अब 'जन्म कुभान्ति' के अर्थ स्पष्ट करते हैं, मेरा जीवन विकारों के कारण अपवित्र और बुरा बन गया है। एक अन्य दृष्टि से जन्म कुभांति के अर्थों पर विचार करते हैं।

यदि 'जन्म कुभाँति' के अर्थ 'नीची जाति में जन्म' मान लें, तो गुरु ग्रंथ साहिब जी की विचारधारा में बुनियादी विरोध पैदा हो जाता है और परमात्मा को जात पात का सृजनहार मानना पड़ता है, जिस प्रकार हिंदू धर्म ग्रंथ मानते हैं। इस

1. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : ३२४

प्रकार गुरु ग्रंथ साहब की विचारधारा मनुष्यता विरोधी हो जाएगी और विश्व भाईचारे के सृजन का सिद्धांत भी नष्ट हो जाएगा। इसलिए 'जन्म कुभांति' के अर्थ जात पात नहीं हो सकते हैं। इसकी पुष्टि गुरु कबीर जी का उपरोक्त शब्द भी करता है। वह स्पष्ट करते हैं कि, परमात्मा ने जात पात नहीं बनाई है। माता के पेट के बीच निवास करते समय जीव की कोई जाति नहीं होती और न ही कोई कुल होता है, क्योंकि सब जीव ब्रह्म की ही अंश हैं। इस तरह गुरु कबीर जी, गुरु रविदास जी के विचारों की पुष्टि करते हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि -

सोई मुकंदु मुकति का दाता॥
सोई मुकंदु हमरा पित माता॥१॥

अत: जन्म कुभांति के अर्थ हैं, विकारों की बुरी संगत के कारण मेरा जीवन अपवित्र और बुरा बन गया है।

अभी तक एक पक्ष पर विचार करना विशेष है। गुरु रविदास जी अपने-आप को 'कहि रविदास चमारा' लिखते हैं। ऐसा क्यों? क्या कोई बुरी मानी जाने वाली जाति पर गर्व कर सकता है? वह ऐसा क्यों लिखते हैं ? इस नुक्ते से किया गया अध्ययन 'जन्म कुभाँति' के अर्थों को और स्पष्ट कर देगा। यह बात बड़ी ही स्पष्ट है कि गुरु जी ने 'कहू रविदास चमारा' कह कर हीनभावना के प्रभाव के अन्तर्गत नहीं लिखा। यदि ऐसी भावना इन तुकों में निरूपित होती तो यह किसी भी तरह गुरु ग्रंथ साहब का शृंगार नहीं बन सकती थीं। इसलिए गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी से वाणी प्राप्त करके और गुरु अर्जुन देव जी ने उस वाणी को गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज करके स्पष्ट कर दिया है, कि तुक 'कहु रविदास चमारा' किसी भी तरह चमार जाति में हुए जन्म की निंदा नहीं करता है। इसलिए सिद्ध हो गया है कि ऐसी तुकों के बीच ज़रा भी हीन भावना अंग तक नहीं है। फिर गुरु रविदास जी का 'कहु रविदास चमारा' जैसी तुकों का सृजन करने का क्या उद्देश्य था ? गुरु जी ने 'नागर जना मेरी जाति विख्यात चमारा' का धड़ल्लेदारी के साथ ऐलान क्यों किया है?

चमार रूपी बम

1. 'चमार रूपी बम' के उपयोग से गुरु जी ने हिंदू धर्म की विचारधारा की बुनियाद- जात- पात- वर्ण व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर उड़ा दिया है। इस विस्फोट की लपेट में वेद, रामायण, महाभारत, गीता और उपनिषद आदि आये

हैं। उदाहरण के तौर पर -

क) नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही॥
बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही॥२॥[1]
(राग मारू पृष्ठ ११०६)

ख) करम अकरम बीचारीऐ संका सुनि बेद पुरान॥
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु॥३॥[2]
(गउड़ी पृष्ठ ३४६)

2. यहां पर ही बस नहीं, गुरु रविदास जी ने 'चमार रूपी बम' का विस्फोट करके हिंदू धर्म की विचारधारा को नष्ट कर के उसकी जगह एक नई वैज्ञानिक विचारधारा देकर अद्‌भुत करिश्मा किया है।* उदाहरण के लिए -

सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार॥

प्रेम भगति नही ऊपजै ता ते रविदास उदास॥८॥१॥[3] **(पन्ना 346)**
(सारा शबद परखो)

3. 'चमार-बम' के विस्फोट से गुरु रविदास जी ने हिंदुओं के महान और प्रमुख भगवानों ब्रह्मा, विष्णु और महेश को भी नष्ट कर दिया है। उदाहरण के तौर पर -

हरी जपत तेऊ जना पदम कवलासपति
तास सम तुल नहीं आन कोई।।

अत: सिद्ध यह किया है कि वह प्रभ भक्त के बराबर नहीं है। गुरु रविदास जी ने स्वीकार किया है कि प्रभ एक है।

4. 'चमार-बम' के विस्फोट से गुरु रविदास जी ने हिंदुओं के महान और प्रमुख भगवानों ब्रह्मा, विष्णु और महेश को भी नष्ट कर दिया है। उदाहरण के तौर पर -

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
तास सम तुलि नही आन कोऊ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥[4]

---

1. आदि ग्रन्थ पृष्ठ : ११०६
2-3. वही : ३४६
* यह करिश्मा इसी पुस्तक के पृष्ठ नं. ८० में पढ़े।
4. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : १२९३

5. गुरु रविदास जी का प्रयोग किया गया 'चमार' शब्द शक्तिशाली बम विस्फोट साबित हुआ है। इसके 'चमार बम' के विस्फोट से गुरु रविदास जी ने हिंदुओं के धार्मिक तीर्थ स्थानों को भी नष्ट कर दिया है –

बाहर उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिधि बिकार।।
सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार॥४॥[1]

6. ये अति महान और अद्भुत करिश्मे का ही चमत्कार था कि गुरु रविदास जी ने वेदों, रामायण, गीता आदि अनेकों अन्य हिंदू धर्म ग्रंथों को मानने वाले कट्टर ब्राह्मणों को सीधे रास्ते में चला कर दंडवत् करने के लिए मजबूर कर दिया था। यह करिश्मा और भी महत्वपूर्ण और शक्तिशाली हो कर निपटता है, जब गुरु जी ऐलान करते हैं कि हे नगर के लोगो! हे नागर ब्राह्मणो! यह बात मानी हुई है, कि मेरी जात चमार है, जिस को आप ने, अपने धर्म ग्रंथों के बीच भगवान के सृजन का ऐलान करके प्रचार किया है और सबसे घटिया तस्लीम कर के शूद्रों को प्रभ की पूजा करने से रोका है और पूजा करने के आरोष में मौत की सज़ा दी है।

(पढ़ो मेरी पुस्तक श्री गुरु रविदास जी उनका गुरु और श्री गुरु ग्रंथ साहिब)

परंतु मैं (रविदास) ने मौत की परवाह न करके प्रभ की भक्ति की है। मेरे ऐलान करने के बावजूद कि मैं चमार हूं, मेरे भाई हर रोज़ मरे हुए पशुओं को ढोते और उनका चमड़ा उतारते हैं फिर भी उस प्रभ की कृपा से हिंदू धर्म ग्रंथों की विचारधारा और कर्मकांडों के बीच परिपक्व कट्टर हिंदू धर्म के प्रमुख ब्राह्मण नेताओं सहित बहुत से ब्राह्मणों ने अपने ही धर्म ग्रंथों और भगवानों को त्याग कर, वे मेरी प्रभ के दास की दण्डवत् वन्दना करते हैं।

मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता
नितहि बानारसी आस पासा॥
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति
तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा॥३॥१॥[2]

इस प्रकार स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी का उद्देश्य चमार शब्द के

1. वही – ३४६
2. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : १२९३

प्रयोग करके उस कौम के बीच मनुष्यता की पुनर सुरजीती करके और उस कौम के बीच मान सत्कार और स्वाभिमान को पुनः स्थापित करना था। इस तरह गुरु रविदास जी की वाणी में चमार शब्द के उपयोग के साथ मनुष्यता विरोधी हिंदू धर्म की विचारधारा को नष्ट करके उसकी जगह मनुष्यता की सुरजीती के लिए सहज स्वभाव ही एक क्रांतिकारी विचारधारा का सृजन किया है।

उपरोक्त चर्चा से परिपक्व तौर पर दृढ़ हो गया है कि, 'जन्म कुभाँति' के अर्थ किसी भी तरह नीची चमार जाति के लिये नहीं हो सकते। यह चमार के अर्थ हीन भावना वाले नहीं बनते तो 'जन्म कुभाँति' के अर्थ इस हीन भावना वाले नहीं हो सकते हैं। अतः जन्म कुभाँति के स्पष्ट रूप में अर्थ बनते हैं–विकारों की बुरी संगत के कारण मेरा जीवन अपवित्र और बुरा बन गया है।

शब्द का अंतरीव (अंतर्निहित) विचार-विधान

गुरु रविदास जी ने प्रथम प्रस्तावना में माया के दूत रूपी विकारों का बड़ी गंभीरता और गहनता के साथ अध्ययन करके स्पष्ट कर दिया है कि जीव के समुचित जीवन को इन्हीं शक्तिशाली विकारों ने तबाह कर दिया है। प्रभ की कृपा के बिना इनसे छुटकारा पाना जीव के लिए अति कठिन है।

इसलिए 'रहाउ' और दूसरी प्रस्तावना में गुरु रविदास जी प्रभ के आगे वेनती करते हैं कि हे धरती के मालिक! हे मेरे जीवन दाता!! इन महाबलियों के ऊपर से महानीच विकारों का संकट आप की कृपा के बिना दूर नहीं हो सकता है, इसलिए हे प्रभ! मुझ पापी को ना विसारो। मैं तो तेरा सेवक हूं। मुझ पर कृपा करके मुझे विकारों से मुक्त करो और अपने प्रेम की बख्शिश करो, नहीं तो मैं तब तक आप के चरण नहीं छोड़ूंगा, आप के सिमरन में लगा रहूंगा, जब तक आप मुझे विकारों से मुक्त कर के दर्शन नहीं देते। ऐसा सिमरन करते हुए चाहे मेरी मौत भी क्यों न हो जाए, इसलिए गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि इस प्रकार की परिपक्व निश्चितता के बिना विकारों को काबू नहीं किया जा सकता और न ही प्रभ प्राप्ति संभव हो सकती है।

इसलिए अन्तिम प्रस्तावना में गुरु रविदास जी मन के बीच दर्द से सनी हुई पुकार के साथ तड़फ उठते हैं और प्रभ के आगे वेनती करते हैं, कि हे प्रभ! मैं तेरी शरण में आया हूं, अब तेरे दर्शनों के बिना शांति नहीं हो सकती है। इसलिए देर मत करो, जल्दी ही दर्शन दे दो जी।

शब्द अर्थ - गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मुझे हर पल, दिन-रात यही चिंता लगी रहती है, कि मेरी संगत महानीच माया के विकार रूपी दूतों के साथ है। यह मेरे स्वभाव के बीच रच गए हैं। इस कारण मेरे कर्म भी बुरे और छल कपट वाले बन गए हैं। इन महानीचों ने मेरे जीवन को अपवित्र बुरा और घटिया बना दिया है।।१।।

नोट - गुरु रविदास जी ने इस प्रस्तावना में अपने-आप अर्थात् जीव ने अपने आप को चीनिया है, स्वयं की खोज की है। 'रहाउ' के बीच विलखती जीवात्मा की धुर आंतरिक प्रभ मिलन की तड़फ की हूक है।

बिलखती तड़पती जीव आत्मा प्रभ के आगे वेनती करती है, कि हे धरती के मालिक! मेरे जीवन के सहारे प्रभ! मुझे मत विसारो, मैं आप का दास हूं, आप का सेवक हूँ।।१।। रहाउ।।

हे प्रभ! मुझ दास को विकारों की शक्तिशाली विरोधी शक्ति से मुक्त कर के अपने दर्शन देकर सौभाग्य बख्श दो। आप की बख्शिश के बिना इन नीच विकारों से बचना कठिन है, इसलिए जितनी देर तक आप की कृपा दृष्टि नहीं होती है, तब तक, हे प्रभ! आप के चरणों के बीच जुड़ कर मैं विलखता रहूंगा। आप के सिमरन में लगा रहूंगा। ऐसा करते हुए चाहे मेरा शरीर नष्ट क्यों न हो जाए।।२।।

हे प्रभ! मैं रविदास आप के दर्शनों के लिए व्याकुल हो कर विलख कर वेनती कर रहा हूँ, कि हे प्रभ! मैं असहाय आप की शरण में आया हूं। मुझ दुखी को दर्शन दो। अब बिछोड़ा (वियोग) असहनीय हो गया है। इसलिए देरी मत करो, दर्शन दे दो।।३।।

शब्द - 3

राग गौउड़ी रविदास जी के पदे

गौउड़ी गुआरेरी

ੴ ओंकार सतिनाम करता पुरख गुर प्रसादि।।

बेगमपुरा सहर को नाउ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु॥
खउफु न खता न तरसु जवालु॥१॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई॥१॥ रहाउ॥
काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
दोम न सेम एक सो आही॥
आबादानु सदा मसहूर॥
ऊहां गनी बसहि मामूर॥२॥
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै॥
महरम महल न को अटकावै॥
कहि रविदास खलास चमारा॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥३॥२॥[1] **(पृष्ठ ३४५)**

पद अर्थ - बेगमपुरा- गम से रहित, आनंद से भरपूर शहर। शहर- नगर। दरअसल शहर के अर्थ विश्व हैं। गुरु रविदास जी ने प्रथम प्रस्तावना में शब्द शहर प्रयोग किया है, रहाउ के बीच शब्द वतन प्रयोग किया है, जिसके बीच इस शब्द का केंद्रीय भाव है। फिर गुरु जी वतन की व्याख्या दूसरी प्रस्तावना की पहली तुक के बीच करते हैं। यह तुक स्पष्ट करती है कि वतन का अर्थ विश्व वतन है, **''काइम दाइम सदा पातसाही''** सो शहर का अर्थ विश्व वतन है, **'कायमु दायमु सदा पातसाहि।।'** अतः शहर का अर्थ विश्व-वतन है।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ३४५

दुख-दुख। विश्व के लोगों को दुख कैसे हैं? विश्व समाज खासकर भारतीय समाज के हिंदू धर्म और समाज के दुख हैं, जो मनुष्य को मनुष्य के साथ नफरत सिखाता है। शूद्र भक्ति नहीं कर सकता है, भक्ति करने की सजा मौत है, वेद नहीं पढ़ सकता है, इसकी सज़ा जीभ काट देना है, वेद पुराण सुनने की सजा कानों के बीच सिक्का डालना है, मंदिर में नहीं जा सकते हैं, विद्या नहीं पढ़ सकते हैं, गुरु नहीं बन सकते हैं, वह जूठा खाएगा, फटे पुराने कपड़े पहनेगा, वह भी बेघर रहेगा, उसको काम करने के बदले भुखमरी मिलती है, इसकी परछाई हिंदू को भ्रष्ट कर देती है। ये मनुष्यता के दुश्मन नियम हिंदू धर्म के पैदा किए गए दुख हैं।

यूरोपीयन जगत के बीच गोरे और काले लोगों के साथ अमानवीय व्यवहार का दुख, ईसाई धर्म के बीच प्रोटेस्टेंट और कैथोलिकों के सिर काटने के बैर का दुख, इस्लामी जगत के बीच सिया सुन्नी की नफरत और इस्लाम तथा अहमदियों की नफरत का दुख, सिख जगत के बीच अमृतधारी और सहजधारियों का विवाद, वास्तव में उपरोक्त व्याख्या गुरु रविदास जी की अटल सच्चाई की ही व्याख्या है -

'जत देखउ तत दुख की रासी॥' **(आदि ग्रन्थ - ७१०)**

विद्वान प्रश्न कर सकते हैं, कि कुछ समस्याएं तो गुरु रविदास जी के ब्रह्मलीन होने से पीछे की हैं और कुछ समस्याएं ईसाई मत की और यूरोपीयन जगत की हैं, ये किस तरह उन के विचारों से संबंधित हैं ? गुरु जी के शब्द दुख की पहुंच विश्वव्यापी है, इस कारण यह शब्द सैद्धांतिक है। इसलिए सिद्धांत का पक्ष लेकर आज तक की सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक, सदाचार, आर्थिक, राजनीतिक आदि समस्याएं इस में समा जाती हैं, चाहे आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं को सामने रखकर और मूलभूत समझ कर, गुरु जी ने शब्द 'खौफ' का विचार किया है। गुरु रविदास जी के विषय वतन के लिए सृजित सिद्धांत भी विश्वव्यापी हैं। यहां यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि जितना चिर सही अर्थों में बेगमपुरा का संकल्प लागू नहीं होता है, विश्व की हर क्षेत्र की समस्याएं इस सिद्धांत के अन्तर्गत आती रहेंगी।

अन्दोहु-चिंता, समस्याओं की चिंता। तसवीस- चिंता, घबराहट। खिराजू- महसूल, टैक्स अधीनगी कर लोगों को राज्यों का अधीनगी कर अर्थात् हार जाने पर लोगों की गुलामी, हारे हुए राजे की हालत। जीत गए राजे की अधीनगी

करना। अत: जज़िया (Jazia Protection Tax) जो अभी-अभी अफगानिस्तान तथा पाकिस्तान में मुसलमान (तालिबान) आतंकवादियों की ओर से सिखों तथा हिन्दुओं पर लगाया गया। मालु-पैतृक अथवा निजी जायदाद।

खउफ-डर, हिन्दू राजाओं के जुल्मों का ख़ौफ़, मुसलमान बादशाहों के जुल्मों का ख़ौफ़, ईसाई मत के राजाओं का ख़ौफ़, वर्तमान विश्व के ब्राह्मणवादी सोच वाली सरकारों के अत्याचारों का ख़ौफ़, विश्व में व्याप्त आतंकवाद का ख़ौफ़।

खता-पाप, वैर, दोष। ना खता-निरवैर। खउफ ना खता-निरभाऊ, निडर, निरवैर। तरस-दया, डर, अभिलाषा, इच्छा। तरस का अर्थ डर नहीं इच्छा प्रतीत होता है। इस प्रस्तावना के प्रसंग में रख कर जब हम **''न तरस जवाल का''** अर्थ करते हैं तो अर्थ बनता है, इच्छाओं पर काबू होने के कारण अवनति या घाटा नहीं होता है। जवालु-अवनति, घाटा।

खूब-उत्तम। **गह**-स्थान। **खैर सदा**-शाश्वत सुख, परम आनंद। **मेरे भाई**-हे मेरे भाई!।।१।। रहाउ।।

काईमु-स्थिर। **दाईमु**-अटल। **दोम न सेम**-दूसरा तीसरा दर्जा नहीं। **एक सों**-बराबर का दर्जा। **आही**-हैं। **आबादान सदा**-रूहानी आबादी। **काईम**-दाईम सदा पातसाही-शाश्वत विश्व की सरकार को गुरु रविदास जी ने आबादान कहा है। **गनी**-अमीर, सूझबूझ वाले, सदाचारी और आत्मिक शक्ति से भरपूर। **मामूर**-सब्र, संतोष, इच्छाओं से मुक्त।।२।।

तिऊँ तिऊँ-वैसे वैसे ही। **सैल करहि**-आनंद के साथ टहलते फिरते हैं। **जिऊँ भावै**-जिस प्रकार मन चाहता है। **महरम महल**-महल के पूर्ण भेदी। पातशाह तथा प्रजा एक दूसरे के भेदी। **खलास**-पवित्र, मुक्त, खालस। **हम सहरी**-एक देश के निवासी।।३।।२।।

गुरु रविदास की वाणी और मार्क्सवाद

गुरु रविदास जी ने इस शब्द के बीच अटल सच्चाईयां निरूपित की हैं। इनका आधार वैज्ञानिक सत्य है। यही अटल सिद्धांत है।

इस शब्द के विचारों में इतनी सरलता, इतनी स्पष्टता, इतनी गहराई, इतनी गंभीरता, इतनी विशालता और परिपक्वता निरूपित है कि इस शब्द के सृजन के बीच प्रयोग हर वाक्य (तुक) यहां तक कि हर शब्द सैद्धान्तिक गुणों का धारणी बन गया है। इसलिए शब्द की हर प्रस्तावना अपने-आप के बीच एक सिद्धांत समाकर बैठा है। इसकी पुष्टि भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों की राग निर्णायक कमेटी ने की है।

> ''गौउड़ी गंभीर प्रकृति का राग है। विलखती आत्मा कृपा की याचना करती है और अपने-आप की खोज करती है। इसलिए इस राग में गुरु जी ने मन, मति, बुद्धि, आत्मा, मौत और मुक्ति आदि गंभीर विषयों में गुरबाणी उच्चारण की हुई है।''[1]

गुरु रविदास जी महान चिंतक हैं। उनकी दूरदृष्टि, गहरी सोच, विशाल दृष्टिकोण, विश्वव्यापी ज्ञान और चमत्कारी क्रांतिकारी वैज्ञानिक पहुंच ने 'शब्द बेगमपुरा शहर को नाउ' के बीच विश्वव्यापी विचारधारा का सृजन किया है, जो आज के विश्व के महान चिंतकों की विचारधारा की अपेक्षा कहीं अधिक वैज्ञानिक तर्कयुक्त और अमल के बीच पूरी उतरने वाली है। इस की परिपक्वता करते हुए डॉ. जीत सिंह शीतल जी लिखते हैं -

> ''इस संदर्भ या प्रसंग में जब हम भक्त रविदास के ऊपरी शब्द (बेगमपुरा शहर को नाउ) को देखते हैं, तो बड़े-बड़े समाज वैज्ञानिक, बुद्धिजीवी और राजसी शास्त्री चकित रह जाते हैं। मार्क्स लेनिन आदि भी शायद ऐसे सम-देश सम-राज, सम-शहरी, सम-अधिकारी और मानव वतनगाह का संकल्प न कर सके।''[2]

---

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ५२
2. पंजाबी दुनिया-जून-जुलाई, १९७७-गुरु रविदास विशेषांक पृष्ठ : १५

इस लेख में एक अन्य जगह डॉ. शीतल जी अटल सच्चाई का भेद खोलते हुए लिखते हैं –

''किसी महान पुरुष ने देश की सीमाओं से उसके हितों से ऊपर उठकर सारे विश्व के ऊपर नज़र नहीं दीं। यही कारण है कि आज तक अंतर देशों के झगड़े खत्म नहीं हुए।''[1]

डॉ. जीत सिंह शीतल के इन कथनों से अटल सच्चाई से तो पर्दा उठाया ही गया है। उन्होंने गुरु रविदास जी को एक महानतम चिंतक के तौर पर भी तर्क के साथ दलीलें देकर सिद्ध किया है। इस संबंध में डॉ. शीतल स्वयं ही लिखते हैं कि–

''किसी भगत ने ऐसे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक या भौगोलिक अंतर्राष्ट्रीय देश की स्थापना की बात नहीं की है। आज से 600 साल पूर्व ऐसे वतन या सर्वमानवीय देश के बारे में सोचना और घोषणा करना, उसकी रूपरेखा तैयार करना गुरु रविदास जी जैसे विश्व–मानव, देवता समान पुरुष और गुरु रूप भगत के हिस्से ही आ सका है। हमारा सिर अपने आप ही उनकी महान प्रतिभा के आगे झुक जाता है।''[2]

डॉ. सुरेंद्र कुमार देवेश्वर गुरु रविदास जी की 'बेगमपुरा' की विचारधारा का ज़िक्र करते हुए, उन को रूसो और वाल्टेयर का पूर्वज बताते हैं–

''रूसो के स्वतंत्रता, बराबरी और भाईचारे के जिन संयुक्त विचारों के बारे में यह समझा जाता है कि, इस संसार के बीच एक नई विचारक क्रांति के जन्मदाता हैं। वास्तव में यह विचार तो यह भारतीय संत परंपरा के बीच चौदहवीं पन्द्रहवीं सदी के बीच प्रचार किए गए। संत रविदास की वाणी और प्रचार के ये समस्त विचार थे। यूं भगत रविदास जी वैचारिक क्रांति के बीच रूसो, वाल्टेयर के भी पूर्वज माने जाते हैं।''[3]

इस कथन से स्पष्ट है कि गुरु रविदास जी विश्व के सबसे पहले क्रांतिकारी विचारधारक और प्रचारक थे।

डाक्टर देवेश्वर बेगमपुरा की विचारधारा का अध्ययन करने के उपरांत नीचे लिखे निष्कर्ष पर पहुंचते हैं –

''इस शब्द की अंतरात्मा राजश्री तौर से लोकतंत्र, आर्थिक तौर से

1. वही – पृष्ठ : १६ 2. वही – पृष्ठ : १३
3. रविदास – अप्रैल १९९२ गुरु रविदास साहित अकादमी पंजाब (रजि.)–पृष्ठ : २६

समाजवादी राज और आत्मिक तौर से कलात्मक जगत, जिस में सत्यम, शिवम, सुंदरम का पहरा है। हर व्यक्ति के सर्वपक्षीय विकास के लिए यहां पूर्ण अवसर प्राप्त हैं।''[1]

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी विश्व के सबसे पहले क्रांतिकारी राजनीतिक और आर्थिक विकास के लिए समाजवादी लोकतंत्र के चिंतक, सामाजिक तौर से विश्व भाईचारे के सृजक और उच्च स्तर के अध्यात्मवादी हैं। इसलिए वह दुनिया के पहले महानतम चिंतक हैं –

इतनी महानता के शिखर पर पहुंच कर भी गुरु ग्रंथ साहब को मानने वाले और विचार करने वाले सिख जगत के विद्वानों को गुरु रविदास जी की विचारधारा को दुनिया में उजागर कर के प्रचार करने का विचार तक भी क्यों नहीं आया ? इसका क्या कारण है ? इसका उत्तर सरदार करतार सिंह वैद्य बड़े निर्भीक होकर देते हुए स्पष्ट करते हैं, कि गुरु रविदास जी अछूत होने के कारण गुरमत के क्षेत्र में पछाड़े गए हैं। वे लिखते हैं –

गुरु रविदास जहां उच्च कोटि के अध्यात्मवादी थे, वहां वह समाजवादी विचारधारा के नेता भी थे। कल्याणकारी राज (Welfare State) के समर्थक और इंकलाब के पुजारी थे। रविदास जी का जलाल इस कारण अधिक लोकप्रिय नहीं बन सका, जितना कि गुरमत बन सका है, क्योंकि इन की नाम लेवा सँगत आर्थिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक तौर से प्रवीण नहीं थी। जागरूक नहीं थी। पिछड़ी जातियों के गुरु पीर भी पछाड़े जाते रहे हैं, जबकि वह भी उसी स्तर तकमील की बात कहते थे, जिसकी दूसरे कहते थे।[2]

सरदार वैद्य ने गुरु रविदास जी की विचारधारा विशेषकर बेगमपुरा की अद्वितीय चमत्कारी विचारधारा का लोकप्रिय न होने के कारण बड़े स्पष्ट और निर्भय होकर बयान किए हैं –

1. पहला कारण गुरु रविदास जी के नाम लेवा लोग हर पक्ष से ही जागरूक नहीं थे, जब कि गुरमत के बीच ऊंची जातियों से संबंधित गुरुओं के नाम लेवा लोग हर पक्ष से जागरूक थे।

2. सामाजिक और सांस्कृतिक तौर से पिछड़े अछूतों के गुरुओं को पछाड़ा

1–2. डा. बाबा साहिब अंबेडकर–राइटिंग्ज़ एंड स्पीचिज़ (अंग्रेज़ी) वोल–३–पृष्ठ : ४४३
2. पंजाबी दुनिया–जुलाई–अगस्त, १९७१–गुरु रविदास विशेषांक पृष्ठ : १०२

जाता है और उच्च जाति के गुरुओं को उभारा जाता है।

3. वैद्य साहिब के उपरोक्त पैरे के बीच से यह भी विचार बनता है, कि गुरु ग्रंथ साहिब में जात पात और छुआछूत के खंडन के बावजूद भी गुरु घर के ऊंची जाति के नाम लेवा हिंदुओं की तरह ही छुआछूत का पालन करते हैं। परिणाम स्वरूप वह गुरु रविदास जी को गुरु ही नहीं मानते हैं, हालांकि उनकी वाणी के बीच में से लिए वाक्यों को भी 'गुरु वाक' ही स्वीकृत किया जाता है।

अत: उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी के शब्द बेगमपुरा की विचारधारा दुनिया की विचारधाराओं की अपेक्षा हर तरफ से उत्तम है। इस प्रकार की विचारधारा सुक्रात, प्लैटो, थामसमूर, रूसो, वाल्टेयर, मार्क्स, एंजेल्स, लेनिन आदि ने भी दी है। इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रसिद्ध और बहुचर्चित विचारधारा मार्क्स का समाजवाद है। इसको दुनिया में रूस और कई देशों ने लागू भी किया है परंतु यह विचारधारा तर्क और अमल के बीच सही नहीं उतरी। अब हम गुरु रविदास जी की बेगमपुरा की विचारधारा के साथ तुलना करके स्पष्ट करते हैं कि कौन सी विचारधारा तर्क और अमल के बीच पूरी उतर सकती है।

हम मार्क्स की विचारधारा का संक्षिप्त विवरण भारत रतन डॉक्टर भीमराव अंबेडकर की पुस्तक राइटिंग्स एंड स्पीचज बोल नंबर 3 में से लिया है। डॉ. अंबेडकर के अनुसार मार्क्स की विचारधारा के प्रमुख नुक्ते अकेले-अकेले तौर से गुरु रविदास जी की विचारधारा के साथ तुलना करके परखते हैं :-

1. ''मार्क्स की विचारधारा का उद्देश्य जगत का पुनर्निर्माण करना है। विश्व की उत्पत्ति की व्याख्या करना नहीं है।''[1]

मार्क्स से कई सौ साल पहले गुरु रविदास जी के बेगमपुरा के बीच दी हुई समाजवादी-लोकतांत्रिक विचारधारा का उद्देश्य भी जगत की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सदाचारक आदि की व्यवस्था को न्याय और बराबरी के आधार पर आत्म शक्ति अनुसार पुनर्निर्माण करना नहीं है बल्कि (नवनिर्माण) करना है, जगत की उत्पत्ति के सिद्धांतों की व्याख्या करना इस शब्द का उद्देश्य नहीं है।

2. ''मार्क्स के अनुसार वह शक्तियां जो इतिहास सृजन करती हैं, मूलभूत तौर पर आर्थिक शक्तियां हैं।''[2]

1-2. डा. बाबा साहिब अंबेडकर-राइटिंग्ज़ एंड स्पीचिज़ वोल-३-पृष्ठ : ४४३

गुरु रविदास जी ने इतिहास सृजन करने वाली शक्तियों को आर्थिक शक्तियां नहीं माना है। उन के अनुसार ऐतिहासिक सृजक शक्तियों का आधार तो सदाचारक और आत्मिक शक्तियां हैं। सदाचार और आत्म शक्तियों का आधार कुदरती नियम या सिद्धांत हैं। कुदरती नियम अटल हैं, वैज्ञानिक हैं, इनको बड़ी प्रवीणता के साथ गुरु जी ने बेगमपुरा में निरूपित किया है।

काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
दोम न सेम एक सो आही॥
आबादानु सदा मसहूर॥
ऊहां गनी बसहि मामूर॥२॥

बेगमपुरा में सदाचारक और आत्मिक शक्ति के बीच अमीर अर्थात् संतुष्ट लोग रहते हैं। वे सदा-सदा से प्रसिद्ध हैं। यह प्रबंध सदा के लिए कायम है और सभी शहरियों के हक बराबर हैं।

परन्तु इसके विपरीत मार्क्स की विचारधारा के बीच निरूपित आर्थिक शक्तियां इतिहास तो सृजन करती हैं, परंतु वे टिक नहीं पाती हैं। वे तबाह हो जाती हैं। इस कारण ऐसा सृजित इतिहास केवल इतिहास बन कर ही रह जाता है, क्योंकि इस वैज्ञानिक अर्थचारे के प्रबंध का आधार किसी सदाचारक या आत्मिक शक्ति के सिद्धांत पर नहीं टिका हुआ है। सदाचार और आत्मिक शक्तियों की कमी के कारण USSR का सृजित इतिहास छिन्न-छिन्न हो गया है।

परंतु गुरु रविदास जी की विचारधारा का आधार सदाचार और आत्मिक शक्ति है। इनके आधार पर सृजित इतिहास किसी भी तरह असफल नहीं हो सकता है। अब प्रश्न उठ सकता है कि हिंदू धर्म के बीच श्रीराम का रामराज क्यों तवाह हो गया ? अब तक की मिथ्य ऐतिहासिक और ऐतिहासिक गवाहियां जिस प्रकार श्री राम के हाथों से शूद्र महर्षि शंबूक का कत्ल,[1] यह दृढ़ करते हुए कि इस राज के तबाह होने का कारण हिंदू धर्म के बीच अगुवाई करने वाले सिद्धांत न्याय और बराबरी पर आधारित सदाचारक और आत्मिक शक्तियों वाले नहीं थे।

इसलिए गुरु रविदास जी की बेगमपुरा की विचारधारा के अनुसार सृजित

1. श्रीमद बाल्मीकि रामायण (हिन्दी भाषा) अनुवाद सहित अनुवादक चतुर्वेदी द्वारका प्रशाद शर्मा - १०.७६.४

इतिहास अर्थात् राज प्रबंध शाश्वत है, क्योंकि इसका आधार सदाचार और आत्मिक शक्तियां हैं और ये न्याय और बराबरी के सिद्धांत पर आधारित हैं।

3. मार्क्स के अनुसार ''समाज मालिक और मज़दूर दो श्रेणियों में बंटा हुआ है।''[1]

गुरु रविदास जी के बेगमपुर एक का जगत प्रबंध मालिक और मज़दूर के बीच बंटा हुआ नहीं है। यहां कोई मालिक नहीं है और न ही कोई मज़दूर है। सब बराबर हैं। यह शाश्वत पातशाह का राज प्रबंध है। यहाँ शाश्वत बादशाह के बिना कोई राजा नहीं, जो अपने भोग विलास के लिए शहरियों से अधीनगी कर वसूल करे। यहां कोई विजयी राजा नहीं, जो अपनी तानाशाही के कारण हारे हुए राजा से खिराज (जबरन कर वसूली) वसूल करे, इसका अर्थ यह है कि इस राज प्रबंध को कायम रखने के लिए सेना पुलिस या और खून खराबा करके डर पैदा करने वाली संस्था की आवश्यकता नहीं है। इस तथ्य से और भी निश्चित और स्पष्ट हो जाता है, कि यहां किसी की निजी अथवा पैतृक सम्पति नहीं।

जिस कारण कर वसूल किया जा सके। यहां कोई शहरी किसी के अधीन नहीं है। इसलिए हर शहरी आर्थिक स्वतंत्रता के कारण चिंता और घबराहट से भी स्वतंत्र है। इसी कारण हर शहरी मानसिक तौर से भी स्वतंत्र है और सदा खुशियों से भरपूर है -

बेगमपुरा सहर को नाउ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु॥
खउफु न खता न तरसु जवालु॥१॥

इसलिए इस शाश्वत राज प्रबंध के बीच निजी या पैतृक जायदाद न होने के कारण, न कोई मालिक है और न ही मज़दूर है। सभी को बराबर के अधिकार हैं। इसलिए यह राज प्रबंध हर तरफ से उत्तम और शाश्वत है।

4. मार्क्स के अनुसार, ''इन दोनों श्रेणियों में वर्ग टकराव सदा चलता रहता है।''[2]

मार्क्स का वर्ग बंटवारे का सिद्धांत भी गुरु रविदास जी के जगत शहरी के सिद्धांत के अधीन रद्द हो जाता है, वर्ग बंटबारा तो वहां होता है, जहां जायदाद

1. वही - पृष्ठ : ४४३
२. वही - पृष्ठ : ४४३

की मालिकी का झगड़ा होता है। बेगमपुरा की विचारधारा के अनुसार कोई किसी का मालिक नहीं और न ही कोई किसी के अधीन है। इस कारण कोई झगड़ा ही नहीं है और न ही कोई वर्ग बंटवारा है।

यह राज-प्रबंध समाजवादी लोकतंत्र प्रबंध है। वहां सदा ही खैर है। शाश्वत खुशियां हैं। वहां शहरियों को संपूर्ण सामाजिक स्वतंत्रता है।

अब मोहि खूब वतन गह पाई॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई॥१॥ रहाउ॥

इस प्रकार राजप्रबंध के बीच मार्क्स की तरह जगत शहरी के वर्गों के बीच नहीं बांटा हुआ है। इस कारण शहरियों के बीच आपसी टकराव भी कोई नहीं है।

5. मार्क्स के अनुसार ''मालिक मज़दूर की मेहनत से की गई अधिक कमाई का शोषण करते हैं।''[1]

गुरु रविदास जी के बेगमपुरा के संकल्प अधीन शोषण के लिए कोई भी स्थान नहीं है। यहां न कोई मज़दूर है और न ही मालिक, जहां किसी की कोई जयदाद नहीं और किसी किस्म की कोई अधीनगी नहीं है। किसी प्रकार का कोई कर नहीं देना पड़ता है, वहां कौन किसका शोषण करेगा? वहां तो शोषण का सवाल ही पैदा नहीं होता है। उस प्रबंध के अधीन सभी भाई-भाई हैं, आपसी प्यार के बीच बंधे हुए हैं। वहां सब निर्भय और निरवैर हैं और इसके अनुसार ही बादशाह और उस के शहरियों का रिश्ता है। ऐसे वातावरण में शोषण किस प्रकार हो सकता है ? शोषण कौन करेगा ? शोषण किस का करेगा? उत्तर स्पष्ट है, न कोई शोषण करने वाला है और न ही सहन करने वाला है। इसलिए इस राज प्रबंध के अधीन शोषण हो ही नहीं सकता।

नां तसवीस खिराजु न मालु॥
खउफु न खता न तरसु जवालु॥१॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई॥१॥ रहाउ॥

इस राज प्रबंध में भी शोषण नाम की कोई चीज़ नहीं है। इस वतन के शहरी सदाचारक और आत्मिक तौर से सच्चे सुच्चे हैं।

1. वही - पृष्ठ : ४४३

6. ''मार्क्स के अनुसार यह शोषण निजी जायदाद का राष्ट्रीयकरण करके बंद किया जा सकता है।''[1]

शोषण, केवल निजी जायदाद का राष्ट्रीयकरण के कारण ही खत्म नहीं किया जा सकता, यदि ऐसा हो सकता, होता तो USSR के बीच शोषण खत्म हो जाना चाहिए था, यहां राष्ट्रीयकरण के बावजूद शोषण होता आ रहा है, जिसके फलस्वरूप USSR विश्व मानचित्र से भी लुप्त हो गया है USSR के टूटने पर मूलभूत कारण निजी जयदाद का राष्ट्रीयकरण करना ही है। यह राष्ट्रीयकरण मार्क्स की विचारधारा का आधार है और प्रोलतेरियन तानाशाही की मूलभूत शक्ति।

इस तरह मार्क्स की सबसे बड़ी शक्तिशाली बुनियाद ही उसके सिद्धांत की सबसे बड़ी शक्तिशाली कमज़ोरी के रूप में प्रकट हुई है। अत: इस का परिणाम स्पष्ट है कि निजी जायदाद के राष्ट्रीयकरण के साथ शोषण खत्म नहीं हो सकता है।

गुरु रविदास जी ने मार्क्स से कई सदियां पहले बेगमपुरा में समाजवादी लोकतंत्र का सिद्धांत निरूपित किया है, जिसका आधार उनके शक्तिशाली सदाचारक आत्मिक शक्ति को बनाया है। इस कारण ही विद्वानों का विचार है कि विश्व सरकार (World Government) के संविधान का गुरु ग्रंथ साहब की विचारधारा और विशेष करके गुरु रविदास जी के विचारों के अधीन शब्द बेगमपुरा की विचारधारा आधार बनेगी। इस विचारधारा की अगुवाई के अन्तर्गत सृजित बेगमपुरा मॉडल विश्व सरकार का मॉडल होगा, जो अस्तित्व में आने पर पीछे हमेशा के लिये कायम रहेगा।

अत: राष्ट्रीयकरण की तरफ से भी मार्क्स का सिद्धांत तर्क और अमल में फेल हो गया है। इस तरह मार्क्स का सिद्धांत कम समय तक है और अस्थिरता पैदा करने वाला है।

परंतु रविदास जी का सिद्धांत शाश्वत और स्थिर है और जगत भाईचारे का सृजन करता है।

काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
----------॥
नां तसवीस खिराजु न मालु॥

1. वही - पृष्ठ : ४४३

7. मार्क्स के अनुसार, ''यह शोषण मज़दूर विरोधी कंगाली का कारण है।''[1]

परन्तु गुरु रविदास जी के राज प्रबंध के अंदर न तो शोषण के लिए कोई स्थान है और न ही कंगाली के लिए। इसलिए शाश्वत पातशाही राज प्रबंध की व्यवस्था के बीच शोषण के लिए कोई स्थान नहीं है और न ही कंगाली के लिए। इसलिए शाश्वत पातशाह के राज प्रबंध के बीच कोई दूसरे, तीसरे दर्जे का शहरी नहीं है, सब के अधिकार बराबर हैं। उसके शासन में कोई अमीर गरीब नहीं, नफरत, घृणा, छुआछात, जात पात आदि किसी भी किस्म की मनुष्यता विरोधी व्यवस्था नहीं है। इसके विपरीत उसके राज में सदाचारक और आत्मिक तौर से अमीर (गनी) सब्र-संतोष वाले मामूर संतुष्ट और कृपालु (ना खता-पाप न करने वाले, दया करने वाले दयालु) रहते हैं। ऐसे राज के बीच न ही शोषण होता है न ही कंगाली। विश्व वतन मानवीय प्रेम के साथ भरपूर प्रसिद्ध है।

काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
दोम न सेम एक सो आही॥
आबादानु सदा मसहूर॥
ऊहां गनी बसहि मामूर॥२॥

8. मार्क्स के अनुसार, ''मज़दूरों की यह बढ़ती कंगाली उनके मन में क्रांतिकारी रूह भर दी है और वर्ग टकराव, वर्ग संघर्ष का रूप धारण करती है।''[2]

भारत के लोग खास कर शूद्र पांच हज़ार साल से हिंदू धर्म के मानव विरोधी नियमों के कारण भारी गरीबी में पिस रहे हैं। उनको एक वक्त का खाना तक नहीं मिलता है, फिर भी उन के बीच न क्रांतिकारी भावना उत्पन्न हुई है और न ही वर्ग टकराव हुआ है, ऐसा क्यों है ? क्योंकि इन लोगों के बीच सदाचारक और आत्मिक शक्ति की कमी है।

परंतु गुरु रविदास जी के बेगमपुरा के राज प्रबंध के बीच कंगाली के लिए कोई जगह नहीं है, ये हम ऊपर विचार कर आए हैं। इसलिए इस राज प्रबंध के बीच संघर्ष के लिए कोई भी जगह नहीं है। वह क्रान्ति जिस को मार्क्स खून खराबे और जब्र से ओतप्रोत संघर्ष के साथ लाना चाहता है। गुरु रविदास जी की

1-2. वही - पृष्ठ : ४४३

क्रांति बिना खून-खराबे और तानाशाही के जबर से रहित सदाचारक और आत्मिक उच्चता के साथ अपने-आप ही शहरियों के बीच रूपमान हो कर समाजवादी लोकतंत्र को स्थापित करती है। इस तरह मार्क्स के सिद्धांत का यह महत्वपूर्ण नुक्ता भी अर्थहीन बन जाता है, जिसकी गुरु जी के बेगमपुरा के राज प्रबंध में बिल्कुल ही ज़रूरत नहीं।

9. मार्क्स के अनुसार 'मालिकों की अपेक्षा मज़दूरों की संख्या बहुत होने के कारण, वह हर हालत में देश जीत प्राप्त करके अपनी हुकूमत स्थापित करेंगे, जिसको मार्क्स ने प्रोलतारी की तानाशाही कहा है।'[1]

10. मार्क्स के अनुसार 'ये तथ्य अडिग हैं। इसलिए समाजवाद अटल है।'[2]

अपने संक्षिप्त निष्कर्ष के बाद डॉक्टर अंबेडकर लिखते हैं, कि 'मुझे आशा है कि मैंने मूलभूत नुक्तों को सही रूप में पेश किया है, जो मार्कशियन समाजवाद का मौलिक आधार बनते हैं।'[3]

उपरोक्त 9 और 10 दोनों तथ्यों का उत्तर डॉक्टर अंबेडकर ने ही दे दिया है। हम उस को ही पाठकों के लिए पेश कर रहे हैं -

'इस में कोई सन्देह नहीं है कि मार्क्सवादियों का यह दावा कि समाजवाद अटल है, पूरी तरह आलोचकों ने ठुकरा दिया है। समाजवाद के इलहाम उस की दास कैपिटल के प्रकाशन के लगभग सहतर वर्ष के बाद प्रोलेनरेत की तानाशाही एक देश में 1917 में स्थापित की गई, जब समाजवाद (कम्युनिज़्म) जो पुरोलेटर की तानाशाही का दूसरा नाम है और रूस में आया, तब तो यह अडिग बिना किसी मनुष्य के प्रयास से नहीं आया, रूस में क्रांति आने से पहले क्रांति के लिए जान बूझकर योजना बनानी पड़ी और इसके साथ बहुत हिंसा और खून खराबा हुआ, बाकी दुनिया अब तक प्रोलतेरियन तानाशाही का इंतज़ार कर रही है। अत: मार्क्स का यह दावा कि समाजवाद अटल है, पूरी तरह फेल हो गया है। मार्क्सवादी विचारधारा के इस बड़े झूठ के इलावा कि मार्क्सवाद अटल है, बहुत से और लिस्ट के बीच दिये गए तथ्य

1.2.3. वही - पृष्ठ : ४४३

भी दोनों पक्षों (तर्क और अमल (Experiance) से पूरा न उतरने के कारण पूरी तरह गलत साबित हो चुका है। उदाहरण : यू एस एस आर के बीच मार्क्सवाद फेल हो गया है और दुनिया मानचित्र पर यह देश मिट गया है।'[1]

हम पर चर्चा करके स्पष्ट कर चुके हैं, कि कंगाली क्रांति का कारण नहीं बन सकती। भारत जैसी कंगाली कहीं नहीं है, परन्तु यहां अब तक समाजवाद नहीं आ सका और न ही आ सकता है। गुरु रविदास जी की विचारधारा के अनुसार क्रांति आने के बारे में चर्चा हम कर चुके हैं, सो हर पक्ष से परख कर स्पष्ट हो गया है कि मार्क्सवाद विचारधारा विश्व शांति और प्यार के लिए सही और अनुकूल नहीं है।

परंतु गुरु रविदास जी की आदर्श बेगमपुरा की विचारधारा ही विश्व सरकार, विश्व शांति और प्यार भरपूर विश्व भाईचारे के लिए केवल एक ही आधार है, जिसको यू एन ए के संविधान की धारा आर्टिकल नंबर एक के बीच निरूपित कर के, इस प्रमुख और अटल सत्य को निश्चित कर दिया है।

1. वही - पृष्ठ : ४४३

विश्व सरकार (World Government) बनाम विश्व खालसा सरकार का संविधान

गुरु रविदास जी की विचारधारा का आधार सदाचार और आत्मिक शक्ति है। ये शक्तियां विकसित होकर स्वत: ही, बिना हिंसा और खून खराबे से विश्व खालसा सरकार अर्थात् विश्व सरकार (World Government) स्थापित कर सकती हैं। गुरु जी की वाणी में से यह विश्व सरकार का संकल्प केवल एक ही शब्द बेगमपुरा के बीच निरूपित किया गया है। यह शब्द गुरु ग्रंथ साहब में दर्ज है। उपरोक्त तथ्यों को गुरबाणी के महान विद्वानों बुद्धिजीवियों ने स्वीकार करते हुए अपने विचार व्यक्त किए हैं।

डॉक्टर जीत सिंह शीतल पंजाबी दुनिया के जून-जुलाई 1977 के गुरु रविदास अंक में बेगमपुरा शहर का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं -

''किसी भगत ने इस प्रकार के राजसी, सामाजिक आर्थिक या भौगोलिक, अंतर्राष्ट्रीय देश की स्थापना की बात नहीं की है। आज से 600 वर्ष पूर्व ऐसे वतन या सर्व-मानवीय देश के बारे में सोचने और घोषित उस की रूपरेखा निर्धारित करना गुरु रविदास जी जैसे विश्व मानव, देवता समान पुरुष और गुरु रूप भक्त के हिस्से ही आ सका है। अपने आप हमारा शीश उनकी महान प्रतिभा के समक्ष झुक जाता है।''[1]

डॉ. सुरेंद्र कुमार देवेश्वर बेगमपुरा शब्द का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं -

''इस शब्द की अंतरात्मा राजनीतिक तौर पर लोकतंत्र और आर्थिक तौर पर समाजवादी राज्य और आत्मिक तौर पर एक कलात्मक, जगत में सत्यम, शिवम, सुंदरम का पहरा है। हर व्यक्ति के सर्व पक्षीय विकास के लिए यहां पूर्ण अवसर प्राप्त हैं।''[2]

सरदार करतार सिंह वैद्य इस बेगमपुरा शब्द के बारे में विचार करते हुए लिखते हैं -

1. पृष्ठ : १३
2. रविदास-अप्रैल १९९२, गुरु रविदास साहित्य अकादमी पंजाब (रजि.)-पृष्ठ:२७

''गुरु रविदास जहां उच्च कोटि के आध्यात्मिक संत थे, वहां समाजवादी विचारधारा के नेता भी थे, कल्याणकारी राज्य (Welfare State) के समर्थक और क्रांति के पुजारी थे।''[1]

डॉ. जीत सिंह शीतल सिख जगत के गुरु मत के विद्वानों में शायद सबसे पहले विद्वान हैं, जिन्होंने निष्पक्ष और निर्भय होकर बेगमपुरा शब्द की खुलकर व्याख्या करते हुए विश्व सरकार के संविधान का भरपूर ज़िक्र किया है -

''गुरु रविदास पहले भक्त हुए हैं, जिन्होंने ऐसे विश्व मनुष्य, विश्व शहरी, विश्व समाज और राज का अर्थ प्रस्तुत किया है। जो समय से स्थान की सीमाओं से परे है, जहां ऊंच-नीच, अमीर-गरीब, रंग-नस्ल के अंतर और भौगोलिक और शारीरिक भेदभाव कोई अर्थ नहीं रखते। वह गुरु साहिब जी से पहले ऐसी सदा सदा रहनी, कायम दायम और सच्ची पातशाही स्थापित करना चाहते थे, जिसको कभी जवाल नहीं, जहां कोई पहले, दूसरे या तीसरे दर्जे के मनुष्यों का कोई वर्गीकरण नहीं है।''[2]

उपरोक्त चर्चा से निम्नलिखित परिणाम प्राप्त होते हैं :-

1. बेगमपुरा शब्द में विश्व सरकार का संविधान निरूपित है। इस शब्द के बीच विश्व के संविधान की हर पक्ष से ज़रूरत पूरी करने की संपूर्ण समर्था है।

2. विश्व सरकार का पातशाह, सच्चा पातशाह प्रभ होगा।

3. विश्व सरकार के संविधान का सृजन पंजाब के सिख गुरु साहिबानों से पहले हो चुका था।

पहले हम नंबर 3 के नुक्ते पर विचार करते हैं। गुरु नानक देव जी के आगमन के समय गुरु रविदास जी की उम्र लगभग 93 साल थी, उस समय तक रविदास जी की वाणी पंजाब में प्रचलित हो चुकी थी। इसके संबंध में प्रोफैसर प्रकाश सिंह लिखते हैं-

'----------क्या गुरु नानक देव जी भगत रविदास से मिले थे ? इस बारे में निश्चित तौर से कुछ नहीं कहा जा सकता, परन्तु नीचे दिए कुछ विवरणों से प्रकट होता है, कि गुरु नानक देव जी के समय भगत रविदास जी (और अन्य भगतों) की वाणी पंजाब में प्रचलित हो चुकी थी।'

मर्दाना रविदास पदे गांवदा सी।।

1. पंजाबी दुनिया, जुलाई-अगस्त-१९७१, गुरु रविदास अंक - पृष्ठ : १०२
2. पंजाबी दुनिया-जून-जुलाई-१९७७ गुरु रविदास विशेषांक - पृष्ठ : 12

''मर्दाना-तलवंडी राय भोई की रहदा, रबाब वजाईदा नाम कबीर, त्रिलोचन, रविदास, धंने, बेनी के पदे गांवदा। गुरु नानक के आगे पदे गावदा।''[1]

अत: स्पष्ट है कि बेगमपुरा संकलन का सृजन पूर्व नानक काल में ही हो चुका था।

अब हम नंबर 2 वाले नुक्ते पर विचार करते हैं। गुरु रविदास जी की विचारधारा का आधार सदाचार और आत्मिक शक्ति भावार्थ आध्यात्मिक शक्ति है। ये शक्तियां विकसित होकर अपने-आप ही विश्व सरकार या विश्व खालसा राज स्थापित कर सकती हैं, जिसकी रूपरेखा बेगमपुरा शब्द में निरूपित की गई है।

इस सरकार का बादशाह सदाचारक और आत्मिक शक्ति के साथ भरपूर महापुरुष बन सकता है। हर ब्रह्म ज्ञानी ही ऐसा पुरुष बन सकता है। ऐसे महापुरुष को गुरबाणी में परमेश्वर कहा गया है -

ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर।।
नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर।।६।।[2]

गुरु रविदास जी ब्रह्म ज्ञानी होने के कारण परमेश्वर रूप हैं। उन में विश्व सरकार या विश्व खालसा राज का पातशाह बनने की सामर्थ्य है। इसी कारण बेगमपुरा शब्द में निरूपित विश्व खालसा राज अमली रूप से स्थापित हो सकता है, क्योंकि इसमें दर्ज समाजवादी लोकतंत्र विचारधारा भी हर पक्ष से संपूर्ण है।

यही कारण है कि विश्व की संस्था UNICEF ने गुरु ग्रंथ साहब की विचारधारा को विश्व सरकार के संविधान का आधार माना है, विशेषकर गुरु रविदास जी के शब्द 'बेगमपुरा शहर को नाउ' पर आधारित विचारधारा को। इसकी पुष्टि (U N) के संविधान में दर्ज आर्टिकल नंबर 1 (Articale No.1) से ही स्पष्ट हो जाती है कि यह आर्टिकल गुरु जी के शब्द बेगमपुर को सामने रख कर सृजित किया गया है। आर्टिकल नंबर 1 इस तरह है -

'All human beings are born free and in equal dignity and right.They are reason and conscience and should act towards

1. पंजाबी दुनिया : जुलाई-अगस्त, १९८१, गुरु रविदास अंक - पृष्ठ : १५
2. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : २७२-२७३

one another in a spirit of brotherhood.'

अब गुरु रविदास जी का शब्द बेगमपुरा पर विचार किया जाए, जिसका अंतरीव भाव लेकर यू एन के आर्टिकल नंबर 1 का निर्माण किया गया है-

बेगमपुरा सहर को नाउ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु॥
खउफु न खता न तरसु जवालु॥१॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई॥१॥ रहाउ॥
काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
दोम न सेम एक सो आही॥
आबादानु सदा मसहूर॥
ऊहां गनी बसहि मामूर॥२॥
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै॥
महरम महल न को अटकावै॥
कहि रविदास खलास चमारा॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥३॥२॥

(पृष्ठ ३४५)

अब हम दोनों की तुलना करते हैं। इस आर्टिकल के तीन भाग बनते हैं।

1. All human beings are born free and equal dignity and rights.

2. They are endowed with reason and conscience.

3. Should act towards one another in a spirit of brotherhood.

दोनों की तुलना करते हुए स्पष्ट हो जाता है कि दोनों के बीच समरूपता है। जिस प्रकार इस चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि विश्व भाईचारे के सृजन के लिए विश्व-सरकार का संविधान गुरु जी के शब्द बेगमपुरा में निरूपित है।

यू.एन. का आर्टिकल	**बेगमपुरा का आर्टिकल**
1. Equal dignity and rights बराबर का सम्मान और अधिकार।	**1. दोम न सेम एक सो आही॥** **(हर तरफ से सभी बराबर हैं।)**
2. Reason and conscience.	**2. ऊहां गनी बसहि मामूर॥२॥**

(सूझ बूझ तथा आत्मिक शक्ति)

[(आत्मिक शक्ति और सूझ बूझ (गनी) कर के संतुष्ट (मामूर) है।]

3. Act towards one another in a spirit of brotherhood.

3. जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥३ ॥२ ॥

(एक-दूसरे के साथ आत्मिक प्यार पर आधारित भाईचारे से ओतप्रोत।)

भाईचारे को एक-दूसरे से मिलकर चढ़दी कला की ओर विकसित करना।

1. नंबर 1 का अनुवाद-

'सभी मनुष्य स्वतंत्र ही पैदा हुये हैं और उन के सम्मान और अधिकार भी बराबर हैं।'

काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥
दोम न सेम एक सो आही ॥

वह पातशाही सदा सदा के लिए स्थिर रहने वाली है। उसके शहरियों का दर्जा-ऊंचा नीचा नहीं है, अर्थात् किसी का भी दूसरा, तीसरा या पहला दर्जा नहीं है। इसलिए सम्मान और अधिकार सब के बराबर हैं। जहां दर्जेबंदी है, अधिकार तो वहां ही कम, अधिक, ऊंच-नीच वाले होंगे। इसलिए गुरु रविदास जी ने विश्व शहरियों के अधिकारों की खुलकर वकालत की है, जबकि आर्टिकल के बीच इसका ही सार तत्व दिया गया है।

इसलिए दोनों ही अर्थों में अंतर नहीं है। दोनों की मूलभूत भावना एक ही है।

2. नंबर 2 का अनुवाद-

'वह समझ-बूझ (reason) और आत्मिक शक्ति (conscience) के साथ वरसोऐ (Endowed) हुए हैं।'

इसमें न्याय और आत्मिक शक्ति का पूर्ण रूप में ज़िक्र है।

आबादानु सदा मसहूर ॥
ऊहां गनी बसहि मामूर ॥२ ॥

रूहानी वतन (आबादान) हमेशा से प्रसिद्ध है, जिसके शहरी आत्मिक शक्ति (गनी) के साथ भरपूर हैं। आत्मिक विकास का आधार कुदरती नियमों

की सूझबूझ है। इस सूझबूझ के कारण ही वहां का शहरी हर पक्ष से संतुष्ट (मामूर) है।

इन दोनों का अर्थ और भावना एक सी ही है। गुरु रविदास जी के उपरोक्त दूसरे बन्द की दूसरी तुक के अक्षर का अनुवाद है। इतनी समरूपता (समानता) इतफाकिया (Incidental) नहीं हो सकती, इसलिए यह परिणाम स्वाभाविक ही है कि, यूएन के इस आर्टिकल बनाते समय गुरु जी का यह शब्द इस आर्टिकल के रचेताओं के सामने था।

3. नंबर 3 का अनुवाद

'उन्हें एक दूसरे के साथ मिलकर भाईचारे को चढ़दी कला विकसित करनी चाहिए।'

इसमें भाइचारे को चढ़दी कला की ओर विकसित करने का केवल सुझाव ही दिया गया है।

कहि रविदास खलास चमारा ॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥३ ॥२ ॥

गुरु रविदास जी आप खालसा हैं, अर्थात् पवित्र हैं। दूसरे शब्दों में वह सदाचारी और आत्मिक शक्ति से भरपूर हैं। इसलिए वह फरमाते हैं कि जिस विश्व वतन का मैं शहरी हूं, उस का शहरी ही मेरा मित्र बन सकता है। वह स्पष्ट करते हैं कि वहां के सारे शहरी एक दूसरे के मित्र हैं और आत्मिक प्यार पर आधारित भाईचारे से ओतप्रोत हैं। यह भाईचारा टूट नहीं सकता और यह शाश्वत है। ऐसे भाईचारे के बिना सत्कार और बराबर के अधिकार आत्मिक शक्ति होने के कारण विकारों पर काबू करके मानसिक संतुष्टि और मनुष्य के समूचे वातावरण की चढ़दी कला को विकसित नहीं किया जा सकता।

उपरोक्त चर्चा से यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि इतिहास साक्षी है कि गुरु रविदास जी ने विश्व के सबसे पहले विश्व मानव अधिकार संस्था (World Human Rights Organisation) का सृजन किया और सबसे पहले ही इसको वास्तविक रूप में लागू करके बेगमपुरा नामक विश्व वतन का सृजन करके विश्व भाईचारे का सृजन किया है।

ऐसे विश्व भाईचारे का सृजन करके गुरु रविदास जी ने विश्व समाज में तथा विशेषकर भारतीय समाज में हो रहे मानव विरोधी धार्मिक ग्रंथों, सामाजिक नियमों, राजनीतिक, कानूनी व पक्षपाती विचारधारा के स्थान पर एक नई विश्व

विचारधारा का निर्माण किया, जो आज हर विश्व की संस्था का आधार बन गई है, चाहे वह U.N. हो या UNICEF हो या W.H.O. हो, वह World reace cancer हो या Security Council आदि में विश्व बेगमपुरा का संकल्प ही है।

इस नुक्ते में भी आर्टिकल नंबर 1 की बेग़मपुरा के विचारों के साथ सम्पूर्ण समरूपता (Simillarity) है। इस आर्टिकल में भाईचारे की चढ़दी कला के सृजन की भी बात की गई है। गुरु रविदास जी ने केवल बात ही नहीं की, केवल सुझाव ही नहीं दिया, उन्होंने तो चढ़दी कला वाले विश्व भाईचारे का सृजन करके वास्तविक रूप में विकसित किया है। 'ऊहाँ गनी वसहि मामूर।।' यही तो पहली विश्व सरकार या विश्व खालसा राज की स्थापना का प्रमाण है।

उपरोक्त तुलनात्मक अध्ययन से यह परिपक्व तौर से निश्चित हो गया है, कि यूएन (UN) के आर्टिकल नंबर 1 (Articel No.1) की गुरु रविदास जी के बेगमपुरा के विचारों के साथ अक्षर अक्षर समरूपता है। यहां तक कि आर्टिकल यह आए शब्द की बेगमपुरा के बीच आए शब्दों के साथ समरूप हैं।

यह सुना था, परन्तु अब इस में कोई सन्देह नहीं रहा कि, टोरंटो में हुई बैठक में घोषित किया गया निर्णय कि विश्व सरकार के संविधान का आधार गुरु ग्रंथ साहिब होगा और उसका प्रिंबल प्रस्तावना गुरु रविदास जी के शब्द बेगमपुरा के आधार पर होगा। यूएन के संविधान के रचयिताओं की ओर से यह निर्णय गुरु ग्रंथ साहिब विशेषकर गुरु रविदास जी के 'बेगमपुरा' शब्द के गहन अध्ययन के बाद ही संभव हो सका है।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास का पुनर सुरजीत किया गया आदि धर्म का नाम विश्व धर्म, यू.एन. की हर संस्था का आधार है। दूसरे शब्दों में यू.एन. (UN) ने गुरु रविदास जी के आदि धर्म को स्वीकार कर लिया है, उन्होंने ऐलान किया है।

इसलिए विश्व सरकार को वास्तविक अर्थों में विश्व खालसा सरकार कहना अधिक उचित है, क्योंकि यह सिद्ध हो चुका है कि आर्टिकल नंबर 1 के सृजन का आधार भी सदाचार और आत्मिक विचारधारा ही है।

इस प्रकार गुरु रविदास जी की वाणी के आधार पर, यूएन की विचारधारा का सृजन तो हुआ ही है, गुरु जी ने आज से 600 वर्ष पूर्व विश्व सरकार या विश्व खालसा सरकार का संविधान सृजित कर के उसके अनुसार विश्व भाईचारे के

सृजन को अमली रूप भी प्रदान करके खालसा राज स्थापित किया है।

प्रभ के परम सेवक और ब्रह्म ज्ञानी होने के कारण गुरु रविदास जी विश्व खालसा राज के प्रथम बादशाह बन गए हैं।

अब हम महला नं. 1 पर विचार करते हैं। भारतीय संविधान के निर्माता भारत रत्न डॉक्टर बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर ने भी भारतीय संविधान की मूलभूत प्रस्तावना और संविधान की रूपरेखा का सृजन भी इस शब्द के आधार पर ही किया है, जिस प्रकार बेगमपुरा शब्द विश्व के मनुष्यों के लिए संबोधन करके सृजित किया गया है, उसी तरह प्रस्तावना (Preamble) और संविधान की रूपरेखा का सृजन भी बेगमपुरा शब्द के आधार पर विश्व संविधान अनुवाद ही किया है। जिस प्रकार बेगमपुरा शब्द विश्व के लोगों को संबोधन करके सृजित किया गया है, उसी तरह प्रस्तावना भी भारत के लोगों को संबोधित करके लिखी गई है। यह तथ्य नीचे लिखे समर्पण को पढ़कर स्पष्ट हो जाता है,, कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना डॉक्टर अंबेडकर ने गुरु रविदास जी की वाणी विशेषकर बेगमपुरा शब्द का गहन अध्ययन करने के बाद ही लिखी है।

> '(कुर्बानियों के)' कर्ज़ का कुछ भाग चुकाने हेतु
> नंदनार
> रविदास
> चोखामेला
> तीन प्रसिद्ध सन्तों की याद में जिन का जन्म अछूतों के बीच हुआ था और जिन्होंने अपनी पवित्रता और शक्ति के साथ सब से सम्मान और सत्कार प्राप्त किया है।'[1]

डॉक्टर अंबेडकर गहरे प्यार से सने हुए भावों के साथ नमन करते हुए श्रद्धा के फूल भेंट करते हैं और स्पष्ट करते हैं कि वह उनकी कुर्बानियों का कुछ ही भाग चुकाने में सक्षम हैं।

यह स्पष्ट करने के बाद कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना का आधार भी बेगमपुरा शब्द इस अध्ययन से स्पष्ट हो जायेगा कि विश्व संविधान में हर पक्ष से ही है, अब हम दोनों का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं।

---

1. डा. बाबा साहिब अंबेडकर-राइटिंग्ज़ एंड स्पीचिज़ वोल-७-पृष्ठ : २३५ (नोट - पर पृष्ठ नं. निरंतर अंकित नहीं है।)

प्रस्तावना (Preamble)

'1. न्याय – सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तौर से,

2. स्वतंत्रता – विचार, कथन, ईमान, धर्म और पूजा की,

3. बराबरी – पदवी और अवसर की और इसको सबके बीच विकसित करने की।

4. भाईचारा – व्यक्तिगत सम्मान और राष्ट्र की एकता और पूर्णता परिपक्व करें।'

भारतीय संविधान की प्रस्तावना, यूएन के आर्टिकल नंबर 1 का ही विकसित रूप है। अब हम प्रस्तावना और बेगमपुरा शब्द पर विचार करते हैं।

1. न्याय – सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक देश के शहरियों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक तौर से न्याय मिलता है। न्याय की नज़रों में सारे शहरी बराबर हैं। यह निश्चित करना सरकार का कार्य है। इस के प्रति गुरु रविदास जी फरमाते हैं –

बेगमपुरा सहर को नाउ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु॥
खउफु न खता न तरसु जवालु॥१॥

बेगमपुरा खुशियों से भरपूर वतन है, इस वतन के समाज के बीच सुख ही सुख हैं। आर्थिक तौर से कोई अमीर नहीं है, कोई गरीब नहीं है और राजनीतिक तौर से भी किसी राजा को कोई कर (खिराज) नहीं देना पड़ता है, न ही कोई हारा हुआ राजा है, जो जीते हुए राजा को खिराज (कर) देता है। बात यहीं खत्म होती है, कि उस शाश्वत बादशाह के बिना कोई शासक नहीं है। यहां पर हर तरफ से हर किसी को हर किस्म की पूरी छूट है। इस तरह प्रस्तावना और बेगमपुरा के न्याय के संकल्प के बीच समरूपता है। यह न्याय युक्त आज़ादी के बीच बढ़ौतरी यह है कि ये शहरियों के सदाचारक और आत्मिक शक्तियों के बीच जन्म लेती है, जबकि प्रस्तावना के बीच न्याय लागू करना सरकार का कार्य है, इसलिए बेगमपुरा का न्याय का संकल्प हर तरफ से उत्तम और शाश्वत है। डाक्टर दर्शन सिंह जी इस शब्द में राज्य की व्याख्या इस प्रकार करते हैं –

''अमीर और गरीब का भेद, जात पात का भेद, एक दूसरे का भेद, इस राज्य में नहीं है। इस तरह हर किस्म की बराबरी इस राज्य के वासियों

का जन्मसिद्ध अधिकार है।''[1]

2. स्वतंत्रता – भारत में विचार व्यक्त करना, कहना, ईमान, धर्म और पूजा की पूर्ण रूप से स्वतंत्रता है। देश के सभी शहरों को हर किस्म की आज़ादी है। यह आजादी न्याय और समानता के विधान के आधार पर होने के कारण सबके लिए आनंद प्रदान करती है।

गुरु रविदास जी का फरमान है –

अब मोहि खूब वतन गह पाई॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई॥१॥ रहाउ॥

इस शब्द की विचारधारा ने स्वतंत्रता को मुख्य आधार बनाया है। 'रहाउ' शब्द का आंतरीव भाव होता है और सारे शब्द का निष्कर्ष होता है। अब मैं अच्छे देश का शहरी बन गया हूं, जहां, हे मेरे भाई! शाश्वत सुख शांति और आनंद है। शाश्वत सुख शांति वाले वतन के बीच हर शहरी को हर किस्म की स्वतंत्रता उपलब्ध है, चाहे वह विचारों की हो, चाहे विचारों के प्रचार की हो, चाहे वह धर्म या पूजा की हो, इस तरह गुरु रविदास जी का सुख शांति का संकल्प भारतीय संविधान की स्वतंत्रता के संकल्प के समरूप ही है और इसके साथ परिपक्व और दृढ़ भी है, क्योंकि बेगमपुरा के संकल्प का आधार शहरियों की सदाचारक और आत्मिक शक्ति है, जबकि संविधान की प्रस्तावना के बीच ऐसे संकल्प का कोई ज़िक्र नहीं है।

3. समानता – पदवी और अवसर की ओर से इन को सब के बीच विकसित करने की। सब शहरियों के लिए पदवी और अवसर बराबर और एक जैसे विकसित करना सरकार के लिए ज़रूरी है।

इस संबंध में गुरु रविदास जी का फरमान है –

तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै॥
महरम महल न को अटकावै॥

गुरु जी फरमाते हैं कि इस वतन के शहरियों की पदवी एक जैसी है और हर एक को हर जगह जाने और विकसित होने के अवसर बराबर हैं। बादशाह के मिलने के लिए कोई रोक नहीं सकता, इसलिए इस वतन के शहरी को न्याय और बराबरी के आधार पर हर तरफ से हर काम करने की पूरी आज़ादी है। इस

1. रविदास – अप्रैल १९९२, गुरु रविदास साहित्य अकादमी, पंजाब (रजि.) – पृष्ठ : ९

तरह दोनों संकल्पों के बीच समरूपता है, परंतु प्रस्तावना के बीच ऐसी समानता निश्चित करना सरकार का कार्य है, जबकि बेगमपुरा में शहरी के आचरण के बीच समानता स्वयं ही विकसित होती है। यह हर हालत में प्रस्तावना की अपेक्षा उत्तम है।

4. भाईचारा – व्यक्तिगत सम्मान और राष्ट्र की एकता और संपूर्णता परिपक्व करने का भावार्थ है। सरकार अपने शहरियों के सम्मान, देश की एकता और संपूर्णता के लिए वचनबद्ध है। गुरु रविदास जी का फरमान है –

कहि रविदास खलास चमारा॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥३॥२॥

भाईचारे के बीच व्यक्तिगत सम्मान और देश की एकता और संपूर्णता को डॉक्टर दर्शन सिंह जी ने बड़े अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है –

'दोस्ती और प्रेम प्यार ही एकमात्र सूत्र है, जो शहरियों को एक सूत्र में बांधता है। इस प्रकार संत जी ने एक शहरी और दूसरे शहरी के रिश्ते का आधार परस्पर प्यार को माना है और शहरी तथा राजा के परस्पर रिश्ते का आधार निर्भय होने को माना है। इस तरह की स्थिति के बीच किसी किस्म की कमज़ोरी और बुराई को पनपने का मौका नहीं मिलता है। ऐसी हालत में द्वेष की भावना का नाश हो जाता है।'[1]

इसलिए दोनों संकल्पों के बीच समरूपता है।

बेगमपुरा के शहरी में यह प्रेम भावना उसकी सदाचारी और आत्मिक शक्ति के बीच जन्म लेती है। ऐसी भावना के अधीन विकसित हुआ भाईचारा कभी टूट नहीं सकता।

परंतु प्रस्तावना में दर्ज भाईचारे के सृजन का कार्य सरकार ने करना है, जो किसी भी हालत में गुरु रविदास जी की वाणी के अनुसार सृजत भाईचारे की अपेक्षा उत्तम नहीं हो सकता है।

उपरोक्त गंभीर और गहन चर्चा के बाद यह स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी के बेगमपुरा के बीच निरूपित विश्व सरकार या विषय खालसा राज का संकल्प वास्तविकता है। गुरु रविदास जी ने इसके विश्व संविधान को सृजित कर के अमली रूप में विश्व खालसा राज की स्थापना की है, जिस के

1. रविदास – अप्रैल १९९२, गुरु रविदास साहित्य अकादमी, पंजाब (रजि.) – पृष्ठ : ९

वह प्रथम बादशाह हैं। इस तरह उन्होंने संविधान को वास्तविक रूप में लागू भी किया है, यह जिसकी पुष्टि गुरु रामदास जी करते हैं –

रविदासु चमारु उसतति करे,
हरि कीरति निमख इक गाइ।।
पतित जाति उतमु भइआ,
चारि वरन पए पगि आइ।।२।।

(आदि ग्रँथ पृष्ठ ७३३)

बेगमपुरा में निरूपित संविधान को वास्तविक रूप में लागू करने में आ रही रुकावटों को गुरु रविदास जी ने खालस सेना तैयार की। इसकी पुष्टि गुरु रविदास जी के 'मारू राग' में उच्चारित शब्द 'ऐसी लाल' तथा 'सुख सागर' से स्पष्ट हो जाती है।

इस के बाद गुरु गोविंद सिंह जी ने सताहरवीं सदी के अंत और अठाहरवीं सदी के आरम्भ में शिखर तक पहुँचाया। प्रिंसीपल सतबीर सिंह इस संबंध में और आगे जा कर एक चमत्कारी तथ्य को प्रकट कर के उपरोक्त बेग़मपुरे के संकल्प की प्रौढ़ता करते हुए लिखते हैं –

'जिस बात की ओर संकेत गुरु रविदास जी ने अपनी वाणी में यह कहकर किया था कि–

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै॥
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा
माथै छत्रु धरै॥१॥ रहाउ॥
जा की छोति जगत कउ लागै
ता पर तुहीं ढरै॥
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु
काहू ते न डरै॥१॥ **(११०६)**

राग के दिशा निर्देश अनुसार गुरु रविदास जी युद्ध जीत कर चक्रवर्ती राजा बने। इस शबद की रचना 'मारू राग' के दिशा निर्देश में हुई।

''गुरु गोबिंद सिंह जी ने यह कर दिखाया है, कि सब ऊंच-नीच, राजा रंक हर वर्ण और आश्रम के व्यक्ति को एक स्थान पर पंक्ति में बैठाकर प्रसाद खिलाया है। एक ही संगत को एक जैसा उपदेश दिया और सबसे बड़ी बात यह है, कि एक ही बाटे (पाहुल) में सभी को अमृत पान

करवाया है और फिर अमृत की दात बांट कर स्वयं उनसे अलग नहीं रहे, बल्कि उनके आगे हाथ जोड़कर कहा कि मैं भी आपके बीच में से ही हूं, मुझे भी अमृत की दात दो। गुरु शिष्य का भेद मिटा दिया। हर किसी को गुलामी से स्वतंत्र कर दिया।''[1]

इस की परिपक्वता नीचे दी गई ग्वाहियों से और भी पुष्टि हो जाती है।

जिस बुनियाद पर गुरु रविदास जी ने बेगमपुरा शब्द के बीच खालस सरकार का संविधान निरूपित कर के खालसा सरकार का सृजन किया है, उसी बुनियाद को आधार बना कर गुरु गोबिंद सिंह जी ने उपरोक्त मिशन को आगे बढ़ाया है। दोनों के बीच संपूर्ण समरूपता है।

गुरु रविदास जी ने –

कहि रविदास खलास चमारा॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥३॥२॥

(उ) खालसा मेरो मित्र सखाई।।
खालसा मेरो मात पित सुखदाई।।

(अ) खालसा मेरो रूप है खास।।

अत: गुरु रविदास जी का खालसा 'हम शहरी सु मीत हमारा' और गुरु गोबिंद सिंह का खालसा 'मेरो मित सखाई' के बीच सौ प्रतिशत समरूपता है। गुरु गोबिंद सिंह ने समय की ज़रूरत के अनुसार शास्त्रों को भी शामिल कर लिया परंतु यह खालसा बनने के लिए मूलभूत ज़रूरत नहीं है।

गुरु गोबिंद सिंह जी ने अपने समय की जरूरतों के अनुसार और समय की सरकार के अत्याचार के विरुद्ध खालसा सेना तैयार की थी, जिस की बुनियादी विचारधारा गुरु ग्रंथ साहिब की ही विचारधारा थी। फिर भी गुरु गोबिंद सिंह जी ने गुरु तेग बहादुर जी की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज करते समय अमृत पान की रीत को गुरु ग्रंथ साहिब की विचारधारा का भाग नहीं बनाया। ऐसा करके गुरु जी ने गुरु ग्रंथ साहिब में निरूपित विश्व धर्म की विचारधारा की बुनियाद 'बेगमपुरा सहर को नांऊँ' का संकल्प –

कहि रविदास खलास चमारा॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥३॥२॥

1. सिख थाट – पृष्ठ : ७, लेख – जग-बन्धु, गुरु गोबिन्द सिंह

और 'आसा की बार' का संकल्प –

नाइ मनिए पति ऊपजै सालाही सचु सूतु।।
दरगाह अंदरि पाईऐ तग ना तूटसि पूत।।

(आदि ग्रंथ पृष्ठ ४८१)

को खंडित होने से बचा लिया।

इसलिए उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी ने विश्व खालसा सरकार के संविधान का सृजन कर के उसको लागू भी किया है। इस चर्चा से एक अति महत्वपूर्ण महान सिद्धांत का सृजन भी हुआ है। बेगमपुरा की समूची विचारधारा के बीच कुदरती न्याय Natural Justice निरूपित हैं। Natural Justice कुदरती न्याय का अर्थ शाश्वत नियमित निष्पक्षता है। इसलिए इस शब्द के बीच निरूपित विचारधारा शाश्वत नियमबद्ध निष्पक्षता भाव नियमित निष्पक्षता के सिद्धांत पर सृजित की गई है। ग़ज़ब की बात यह है कि आज की विश्व की विचारधारा भी इसी सिद्धांत सृजित की गई है। गुरु रविदास जी ने आज से 600 वर्ष पूर्व सचेत होकर जानबूझकर अपने विश्व वतन के लिए विश्व सरकार के संविधान का सृजन किया है। इसकी ग्वाही यूएन के आर्टिकल नंबर 1 में निरूपित है।

परिणाम स्वरूप गुरु रविदास जी की विश्वव्यापी सर्वपक्षय महान और अद्‌भुत प्रतिभा के आगे मान और श्रद्धा के साथ स्वत: ही सिर झुक जाता है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द में सभी धर्मों, विशेष कर हिंदू धर्म की और सभी राजनीतिक प्रबंधों की पुरानी संस्थाओं को रद्द किया गया है। ये संस्थाएं अतीत में विचर रही हैं। इन संस्थाओं की जगह पर नए प्रबंध स्थापित किए गए हैं। इन के स्थापित होने से ही अतीत में भी चल रही पुरानी संस्थाएं स्वयं ही रद्द हो गई हैं।

अत: बन्द नबर 1 की पहली दो तुकों में सामाजिक, धार्मिक, सदाचारक, विद्यक आदि से संबंधित दुख की मुक्ति का ज़िक्र है। इस बन्द की पिछली दो तुकों में आर्थिक, राजनीतिक और अन्य इच्छाओं की मुक्ति का ज़िक्र है। इस बन्द के अतीत में विचर रहे धर्मों के जुल्मों का अंत है। इस बन्द में मनुष्य मानसिक तौर से स्वतंत्र है। सामंतशाही का अंत कर के पैतृक और निजी जायदाद का अधिकार खत्म कर के समाजवादी लोकतंत्र स्थापित किया है। इसी कारण इस विश्व वतन का शहरी निर्भय और निरवैर है। आर्थिक और राजनीतिक तौर से स्वतंत्र है। इसी कारण हर तरफ से धर्म परमआनंद भरपूर है। यह नया संविधान है, विश्व सरकार का।

गुरु रविदास जी 'रहाउ' में यह परिपक्व करते हुए परिपक्वता करते हैं, कि मैं इस उत्तम वतन का शहरी हूं। इस तरह वह उपरोक्त विश्व रतन की हकीकत को स्पष्ट करते हैं। विश्व मानववादी वतन के बादशाह का रिश्ता शाश्वत प्यार वाला है।

बन्द नंबर 1 में सृजित किया गया है कि विश्व सरकार का संविधान गुरु रविदास जी के विश्व वतन का है, जहां वह रहते हैं।

बन्द नंबर 2 में इस अलौकिक, स्थिर, अटल, असीम और शाश्वत बादशाही के शहरियों के बारे में फरमाते हैं, कि उनके वतन के शहरी रूहानी वतन के निवासी हैं। वे आत्मिक तौर से भरपूर और पदार्थक तौर से सब्र-संतोष और संतुष्ट हैं। सो रूहानी वतन के शहरी भी सभ्यचारक और आत्मिक शक्तियों से भरपूर हैं।

बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी शाश्वत पातशाही और उनके शहरियों के

संबंधों के बारे में चर्चा करते हैं कि हर शहरी को हर समय अपने बादशाह को बिना रोक-टोक से मिलने की स्वतंत्रता है, वतन के हर कोने में जाने की स्वतंत्रता है (Freedom of Movement), बादशाह के महलों के बीच हर जगह जाने की स्वतंत्रता है। यह बादशाह और शहरियों की बहुत ही करीबी साझ का प्रतीक है। यह साझ सच्चे सुच्चे प्यार पर टिकी हुई है। इसी तरह ही शहरियों में एक दूसरे के साथ प्यार की सांझ के कारण प्यार से ओतप्रोत भाईचारे का स्वत: ही सृजन हो जाता है। इस तरह विश्व भाईचारे का रिश्ता परस्पर प्यार पर टिका हुआ है। यही प्यार है, जिसने गुरु रविदास जी को चमार होते हुए भी पवित्र खालसा बना दिया है। इस तरह गुरु रविदास जी का मित्र वही हो सकता है, जो इस विश्व खालसा वतन का शहरी हो।

अत: गुरु रविदास जी ने परमआनंद भरपूर बेगमपुरा वतन की समाजवादी, लोकतांत्रिक विचारधारा का सृजन करते हुए, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सदाचारक आदि सिद्धांतों का आधार अध्यात्मबाद को बनाया है। अध्यात्मबाद का मूलभूत आधार सदाचारक और आत्मिक श्रेष्ठता है, जिस के मूलभूत स्तंभ हैं, नियम (दोम ना सेम एक सो आही), सब्र संतोष (मामूर) सति (सदा पातशाही), दया (ना खता कृपा)। इस तरह विश्व वतन का शहरी हर तरफ से संपूर्ण पुरुष है, जिस का विकास समाजवादी लोकतांत्रिक विचारधारा के अनुसार होता है।

यह शब्द गौउड़ी राग में सृजित किए गए शब्दों में से सबसे सिरमौर शब्द है। यह राग की प्रकृति को बहुत ही गंभीरता से सृजन करने में सफल रहा है। इसी कारण यह शब्द इस राग का उत्तम उदाहरण है। इस शब्द का विषय अति गहन व गंभीर है और भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों के अनुसार भी गौउड़ी गंभीर प्रकृति का राग है।

अत: बेगमपुरा शब्द दुनिया में सृजित शब्दों में से हर तरफ से उत्तम और सर्वोपरि है।

शब्द अर्थ - विश्व-वतन जिस का नाम बेगमपुरा है, परम आनंद से परिपूर्ण है। इस वतन का मनुष्य सामाजिक, सभ्याचारक, विद्यक, धार्मिक आदि हर प्रकार के दु:ख से मुक्त है तथा साथ ही चिंता व घबराहट से मुक्त है। विश्व का मनुष्य मानसिक तौर पर स्वतंत्र है। मनुष्य को कर देने की घबराहट नहीं तथा न ही कोई राजा दूसरे राजा को अधीनगी कर (खिराज) देने की चिंता में है। अर्थात् इस पातशाही में (शाश्वत पातशाह के बिना) कोई राजा ही नहीं है। यह सामंती-युग का अन्त है। इस कारण किसी की कोई पैतृक या निजी सम्पत्ति नहीं है। यहां का शहरी आर्थिक तौर पर स्वतंत्र है। यह समाजवादी लोकतंत्र युग है। अत: राजाओं के अत्याचारों का डर नहीं है, वैर-विरोध नहीं है। इस वतन का शहरी निरभऊ तथा निरवैर है, यहां तक कि इच्छाओं पर काबू होने के कारण किसी भी प्रकार की अवनति का डर नहीं है। इस प्रकार यहां का शहरी राजनीतिक तौर पर स्वतंत्र है। परिणामस्वरूप विश्व वतन हर पक्ष से परम आनंद से परिपूर्ण है।।२।।

हे मेरे भाई! अब मैं ऐसे उत्तम वतन का शहरी हूँ, जहां हर प्रकार का, हर पक्ष से उत्तम सुख है, शाश्वत परम आनंद है। अत: यह विश्व मानववादी वतन है, जहां पातशाह तथा प्रजा का रिश्ता शाश्वत सुख, आनंद तथा प्यार वाला है।।२।। रहाउ।।

यह स्थिर, अटल तथा सीमा-रहित शाश्वत पातशाही है। यह रूहानी विश्व-वतन सदा से ही प्रसिद्ध है। इसके शहरी दूसरे, तीसरे दर्जे के नहीं हैं, उनके हर पक्ष से हर क्षेत्र में समानता वाले अधिकार हैं। वह सदाचारक तथा आत्मिक शक्ति में परिपूर्ण, मूलभूत तथा सब्र-संतोष वाले, हर पक्ष से संतुष्ट हैं। इस प्रकार यहां तानाशाही नहीं है। यहां विश्व सरकार (World Government) न्याय, समानता तथा प्यार में पैदा हुई है, जिसका भाईचारा सूझ-बूझ, सब्र-संतोष, निरभऊ, निरवैर, सदाचारक तथा आत्मिक शक्ति सम्पन्न है।।२।।

बेगमपुरा के रहने वाले जैसे भी वह चाहे आनंद से हर स्थान पर टहलते फिरते हैं। घूमने-फिरने की स्वतंत्रता है (Freedom of Movement)। महलों के पूर्ण भेदी भी उन्हें नहीं रोकते अर्थात् प्रजा, पातशाह के हर रहस्य से परिचित है। पातशाह तथा प्रजा के परस्पर सम्बन्ध गहरे विश्वास तथा प्रेम पर टिके हुये

हैं। इस वतन के रहने वाले चमार रविदास ''खालसा'' फरमाते हैं कि जो भी इस विश्व-वतन का शहरी है, वही हमारा मित्र है, अर्थात् समूचा विश्व समाज मित्रता में बंधा हुआ है, विश्व भाईचारे का आधार केवल तथा केवल आपसी प्यार ही है।।३।।

यह ही विश्व सरकार या विश्व-खालसा राज का आधार है तथा यह ही ''बेगमपुरा'' है।

शब्द - 4

राग गौउड़ी बैरागण रविदास जीउ।।

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

घट अवघट डूगर घणा इक निरगुणु बैलु हमार॥
रमईए सिउ एक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि॥१॥
को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे॥१॥ रहाउ॥
हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु॥
मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि॥२॥
उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु॥
मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल॥३॥
जैसा रंगु कसुंभ का तैसा इहु संसारु॥
मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार॥४॥१॥[1]

(पृष्ठ ३४५)

शब्दार्थ - **घट**-घाटी, शरीर, मन। **अबघट**-गहरा मार्ग, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के कारण बना खतरनाक रास्ता। **डूगर**-पहाड़ी। **घणा**-सघन, बहुत ही घना। **निर्गुण**-गुणों के बिंना, कमज़ोर, बलहीन। **रमईया**-ईश्वर, परमात्मा। **पूंजी**-ब्रह्म ज्ञान की पूंजी। **मुरारि**-परमेश्वर।।१।।

को-कोई। बनजारो-व्यापारी। **को**-का। **टांडा**-सामान ढोने का छकड़ा, गाड़ी, रेल। **रे**-हे भाई।।१।। रहाउ।।

हउ-मैं। **बनजारो**-बेचने वाला व्यापारी। **सहज**-ब्रह्मज्ञान। **करउ**-करता हूँ। **बिखु**-विष, ज़हर, उरवार पार-आर तथा पार का किनारा। **दानिया**-लोक-परलोक की जानने वाले चित्र गुप्त। **आल-पतालु**=ऊल लूल। **तजीले**=त्याग दिये हैं, छोड़ दिये हैं। **जंजाल**=संसार के बंधन, **कसुंभ**=कच्चा, अस्थिर।।३।। **मजीठ**=पक्का, शाश्वत, स्थिर।।४।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ३४५-३४६

ब्रह्म ज्ञान के केवल और केवल अकेले मालिक और विक्रेता गुरु रविदास जी

(संसार के धर्मों और लोगों के पास केवल और केवल विष रूपी विकार ही हैं।)

समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में केवल गुरु रविदास जी ने ही यह चुनौती दी है, कि वही केवल और केवल अकेले ही ब्रह्म ज्ञान के मालिक और विक्रेता हैं। गुरु रविदास जी खुद ही स्पष्ट करते हैं, कि सारी दुनिया में और कोई भी ब्रह्म ज्ञान का विक्रेता नहीं है। इस कारण गुरु रविदास जी ने इस शब्द में बहुत ही गहराई से सोच विचार करने के बाद जान बूझ कर एक ही शब्द के बीच नियमबद्ध ढंग से पहले सैद्धांतिक तत्व पर आधारित ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के बारे में विचार दिया है और फिर ब्रह्म ज्ञान के खरीददारों अर्थात् प्रभ प्राप्ति के साधकों को ब्रह्म ज्ञान खरीदने का आह्वान किया है। साथ ही साथ इस शब्द में गुरु जी ने यह भी स्पष्ट कर दिया है, कि उन्होंने (गुरु रविदास जी) के बिना और किसी के पास भी ब्रह्म ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता है, क्योंकि समूची दुनिया के धर्म और लोग केवल ज़हर अर्थात् विकार ही बेचते हैं।

केवल यहीं बस नहीं, गुरु रविदास जी खरीददार अर्थात् साधक के मन में दृढ़ विश्वास पैदा करने के लिए अपने-आप का ही सबूत देते हैं और फरमाते हैं, कि मैंने ब्रह्म ज्ञान प्राप्त कर लिया है, इस कारण यमदूत मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।

इस तरह गुरु रविदास जी इस शब्द में सैद्धांतिक तत्व पर आधारित दो चुनौतियां (Challenges) देते हैं -

1. गुरु रविदास जी केवल और केवल अकेले आप ही ब्रह्म ज्ञान के मालिक व विक्रेता हैं, बाकी दुनिया के लोग और सारे धर्म विष अर्थात् विकारों के विक्रेता हैं।

2. गुरु रविदास जी चित्रगुप्त को भी चुनौती देते हैं कि वह जो मर्जी ऊल जलूल लिख लें, मुझे यमदूत दंड नहीं लगा सकता है, क्योंकि मैंने संसार के सारे

जंजाल अर्थात् विकार त्याग दिए हैं।

इस कारण गुरु रविदास जी सरेआम घोषणा करते हैं कि केवल और केवल वही (गुरु जी) ही संसार के लोगों को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करके और समझा कर उन लोगों को विकारों से मुक्त कराने में समर्थ हैं। इसलिए ये संसार के लोगो! आओ, और मुझ से ब्रह्मज्ञान खरीदो, अर्थात् विकारों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करके उसके अनुसार वास्तविक जीवन जीने का ढंग भी मुझ से समझ लो ताकि प्रभ प्राप्ति संभव हो सके।

गुरु रविदास जी ने केवल यही नहीं फरमाया कि वह केवल और केवल अकेले ही ब्रह्म ज्ञान के मालिक व विक्रेता हैं। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि दुनिया के लोग और धर्म केवल और केवल विश्व विकार ही पैदा करते हैं। यह गुरु रविदास जी की दुनिया के धर्मों और लोगों को पहली चुनौती हैं। यह गुरु रविदास जी के अपने शब्दों में दर्ज है -

हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥
मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥२ ॥

संसार को परिपक्व करने के पीछे कि वे, (गुरु रविदास जी) अकेले ही ब्रह्म ज्ञान के विक्रेता हैं। अब वह संसार के लोगों को आह्वान कर रहे हैं कि है कोई! जो ब्रह्म ज्ञान खरीदना चाहता है? मेरा ब्रह्म ज्ञान के साथ भरा गया गड्ढा (बैल गाड़ियों) का काफिला गुज़र रहा है।

को बनजारो राम को
मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥१ ॥ रहाउ ॥

गुरु रविदास जी ब्रह्म ज्ञान खरीदने वाले को बड़ी स्पष्टता के साथ स्पष्ट करते हैं, कि हे भाई! ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति से मेरा चित्रगुप्त भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता है अर्थात् उन को यमदूत दंड नहीं लगा सकता है। गुरु रविदास जी चित्रगुप्त को चुनौती देते हैं, कि वह जो मर्जी चाहे ऊल-जलूल लिखे, परंतु मुझे यमदूत दंड नहीं लगा सकता है क्योंकि मैंने ब्रह्म ज्ञान प्राप्त कर के दुनिया के सारे जंजालों को त्याग दिया है अर्थात् मैंने विकारों पर काबू पा लिया है और प्रभ प्राप्ति हो गई है।

गुरु रविदास जी की यह दूसरी चुनौती है, जो खरीददार अर्थात् साधक के मन में प्रभ प्राप्ति के लिए विश्वास परिपक्व करती है, जिस कारण साधक ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति अर्थात् प्रभ प्राप्ति के लिए दृढ़ इरादे के साथ जुट जाता है, दूसरी

इस चुनौती के साथ साधक के मन में यह भी स्पष्ट हो जाता है कि जब साधक विकारों पर काबू पा लेता है, तब चित्रगुप्त साधक के विरुद्ध कुछ भी लिखने में असमर्थ हो जाता है। इस तरह साधक के इरादे और दृढ़ विश्वास के साथ प्रभ प्राप्ति में जुट जाता है।

उरवार पार के दानिया लिखि लेहु आल पातालु ।।
मोहि जम दंड न लागई तजीले सरब जंजाल ।।३ ।। (३४५)

उपरोक्त दोनों चुनौतियों के ऊपर की गई चर्चा से नीचे लिखे परिणाम निकलते हैं।

1. गुरु रविदास जी भक्ति लहर के सबसे पहले सैद्धांतिक तत्व पर आधारित ब्रह्म ज्ञान के मालिक और विक्रेता हैं।

2. गुरु रविदास जी के समय में विचरण कर रहे दुनिया के धर्म और लोग केवल विष अर्थात् विकार ही बेचते हैं।

3. गुरु रविदास जी परिपक्वता के साथ स्पष्ट करते हैं कि साधक ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के साथ विकारों से मुक्त होकर प्रभ को प्राप्त होता है।

4. गुरु रविदास जी यह भी स्पष्ट करते हैं कि साधक प्रभ प्राप्ति के साथ हर हालत में यमदंड से मुक्त हो जाता है।

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है, कि गुरु रविदास जी के बिना दुनिया के सभी धर्म और लोग ब्रह्म ज्ञान प्रदान करने में समर्थ नहीं हैं, जो तत्व उनकी वाणी के अध्ययन से बड़े तर्कयुक्त ढंग से साबित हो जाता है। गुरु रविदास जी 'सतयुग सतु तेता जगी' वाले शब्द में हिंदू धर्म की विचारधारा को रद्द करते हैं। 'हरि जपत तेऊ जना' वाले शब्द में हिंदू धर्म के अवतारों, इस्लाम धर्म और इसाई धर्म की विचारधारा को रद्द करते हैं और 'बिनु देखे उपजे नहीं आसा' वाले शब्द में बुध धर्म की विचारधारा के बीच संशोधन करते हैं। इस तरह गुरु रविदास जी की नीचे लिखी चुनौती अटल सच्चाई सिद्ध होती है कि वह अकेले ही ब्रह्म ज्ञान के विक्रेता हैं और दुनिया के सारे धर्म और लोग विष रूपी विकार बेचते हैं।

हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥
मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥२ ॥३४५ ।।

उपरोक्त चर्चा से साबित हो गया है, कि केवल और केवल गुरु रविदास जी ही ब्रह्म ज्ञान के मालिक और विक्रेता हैं और खरीदारों की खोज में हैं। इस

कारण वह ब्रह्म गुरु भी सिद्ध होते हैं और उन की वाणी के अध्ययन से यह भी परिपक्व हो जाता है कि वे शिरोमणि ब्रह्मज्ञानी चिंतक भी हैं।

इसलिए यह स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी गहर गंभीर, गहरी सूझ बूझ और विशाल दृष्टि के मालिक हैं। ये गुण उन के शब्द 'घट अबघट डूगर घणा' में निरूपित महान विचारधारा से ओतप्रोत हैं, जिस कारण ब्रह्म ज्ञान के मालिक व विक्रेता और शिरोमणि ब्रह्मज्ञानी सिद्ध होते हैं। इस शब्द का सृजन राग गौउड़ी के निर्देशन में हुआ है।

इस शब्द का सृजन गाउड़ी राग के निर्देशन में होने के कारण भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों की राग निर्णायक कमेटी इस तथ्य को स्पष्ट करती है-

> ''गाउड़ी गंभीर प्रकृति का राग है। बिलखती आत्मा कृपा की याचना करती है और स्वयं की खोज करती है, इसलिए इस राग में गुरु साहिबान, मन मति, बुद्धि, आत्मा, मौत, मुक्ति आदि गंभीर विषयों में गुरबाणी उच्चारण की है।''[1]

इस तरह गुरु रविदास जी के सृजित उपरोक्त शब्द में निरूपित विचारधारा और राग गौड़ी के स्वभाव दोनों से सिद्ध हो जाता है कि गुरु रविदास जी शिरोमणि ब्रह्मज्ञानी चिंतक हैं। इस तथ्य से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वे केवल और केवल अकेले ही ब्रह्म ज्ञान के विक्रेता हैं और ब्रह्म ज्ञान के खरीददारों की खोज में है। उपरोक्त तथ्य कि ब्रह्मज्ञान केवल गुरु रविदास जी के पास ही है। इसकी पुष्टि गुरु ग्रंथ साहेब में गुरु रविदास जी की वाणी से ही हो जाती है।

गुरु रविदास जी प्रभ के साथ गोष्टी करते हुए फरमाते हैं कि हे प्रभ! तेरे मेरे बीच किसी तरह का कोई अंतर नहीं है, जैसे सोने और सोने से बने आभूषणों में और पानी और पानी से उत्पन्न लहरों में कोई अंतर नहीं है। इसलिए गुरु रविदास जी प्रभ को निहोरा देते हैं कि हे प्रभ तेरी महत्ता भी मेरे कारण ही बनी हुई है, क्योंकि यदि मैं पाप न करता तो आपको भी किसी ने पाप हर्ता और मुक्ति दाता नहीं कहना था।

प्रभ को ऐसा निहोरा देना एक महान घटना है, क्योंकि ऐसा बहुत नज़दीक के गहरे प्रेम संबंध के कारण ही संभव हो सकता है। ऐसे जैसे गहरे प्रेम संबंध

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ५२

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति का साधन बनते हैं।

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा॥
कनक कटिक जल तरंग जैसा॥१॥
जउ पै हम न पाप करंता अहे अनंता॥
पतित पावन नामु कैसे हुंता॥१॥ रहाउ॥

यहां पर ही बस नहीं, गुरु रविदास जी ने प्रभ को कैद कर रखा है और प्रभ को चुनौती भी दी है कि यदि प्रभ जी तेरे बीच हिम्मत है तो वह मेरी कैद में से स्वतंत्र होकर दिखाएं। यह प्रभ के साथ प्रेम की इंतहा है। इस गहरे और अति घनिष्ठ प्रेम की इंतहा को दृढ़ करने के लिए गुरु रविदास जी मछली का उदाहरण देते हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं, कि उनका प्रभ के साथ प्रेम अनंत और अनुमान रहित है, जिस प्रकार मछली का पानी के साथ है। मछली की अनेकों खंड खंड कर के उस के बारीक बारीक टुकड़े कर के अनेकों ढंगों से पकाया जाता है और खाते समय मछली को चबा-चबा कर बारीक कर के खाया जाता है। इस अवस्था तक पहुंच कर भी मछली अपना पानी के साथ प्रेम नहीं तोड़ती है। मछली खाने वाला मनुष्य बार-बार पानी की मांग करता है और मछली के प्रेम की पूर्ति के लिए बार-बार पानी पीता है। इतने गहरे और अनंत प्यार के कारण ही गुरु रविदास जी ने प्रभ को कैद कर रखा है और प्रभ ऐसे महान प्रेम को छोड़कर जाने में समर्थ नहीं हैं।

जउ हम बांधे मोह फास
हम प्रेम बधनि तुम बाधे॥
अपने छूटन को जतनु करहु
हम छूटे तुम आराधे॥१॥
माधवे जानत हहु जैसी तैसी॥
अब कहा करहुगे ऐसी॥१॥ रहाउ॥
मीनु पकरि फांकिओ
अरु काटिओ रांधि कीओ बहुबानी॥
खंड खंड करि भोजनु कीनो
तऊ न बिसरिओ पानी॥२॥

इस गहरे और अनंत प्रेम की पुष्टि सतारहवीं शताब्दी की रचना ''पुरातन गोष्टी संग्रह'' के करता सोढी मेहरबान ने बड़े ही शक्तिशाली ढंग से की है।

सोढी मेहरबान गुरु अर्जुन देव जी के समकालीन थे। सोढी मेहरबान ने गुरु अर्जुन देव जी के बसंत राग के बीच नीचे दिए गये बन्द की ही इस साखी द्वारा व्याख्या की हुई है।

रविदास धियाये प्रभ अनूप।।
गुरु नानक देव गोबिन्द रूप।।२।।

आदि ग्रन्थ पृष्ठ : 1192

इस बन्द की व्याख्या

''हे नानक! रविदास ने सुन्दर प्रभ की आराधना की तो वह ब्रह्म-रूप बन कर ब्रह्म-गुरु के पद को प्राप्त हुये।

इसलिए गुरु रविदास जी प्रभ के साथ गहरे अनंत प्रेम के कारण ही प्रभ रूप बन गए हैं। इस कारण ही ब्रह्म गुरु बने हैं गुरु रविदास जी के सैद्धांतिक वाक्य ''संत अनतहि अंतरु नाही'' और गुरु अर्जन देव जी के सैद्धांतिक वाक्य ''नानक ब्रह्मज्ञानी आप परमेश्वर'' ने गुरु रविदास जी की सब के साथ बिना खिली अभेद्यता को परिपक्व तौर से दृढ़ किया है। इसी तथ्य को ही सोढी मेहरबान बड़े शक्तिशाली ढंग से पेश करते हैं, वे लिखते हैं -

''गोसट लागे करने कबीर नामे धन्ने त्रिलोचन इनहुं के जी थी जि हमि रविदास कउ ठाकुर के महल कीआ बाता सुनावहिगे।। रविदास सुनेगा खुशी होइगा हम उपरि।। होर भी निहालु होवहिगे।। जदि उइ देखहि भगत साध जन ता जि किछु ठाकुर की झझरी गगरी पानी की थी सु उही है।। जे ठाकुर की त्रिसावली पानी पीने की थी, उही त्रिसावली उही सिहजा ठाकर की है।। उही पउऐ ठाकर के।। उही धोतीआ है।। जितनी ठाकुर की आरभट्टी बैकुंठ के बिखे देखी थी उह भी रविदास पहि है।। उई भगत हैरान होइ गए।। उई न पुछि सकहि जु ऐ वस्त्र ठाकर के हैं।। ऐ वस्त्र ठाकर के महल के बैकुंठ बिखे हमि छोडे थे।। ऐहकोइ लै आईआ है? के रविदास आणे है के रविदास कउ ठाकर पचाए है।। कि उनहि जैसे इनहु करए है।। कि इहा ठाकर करता है कि हमि भूले है कि ऐ वस्त्र श्री ठाकर के हैं। धोतिया अंगउछे ते लै करि सि ऐहु किया होता है।। जे रविदास कहै जि इसु सिहजा उपरि बैठहु जी तउ एहि कहै हां जी ना जी एहु तउ सिहजा ठाकुर जी की है।। हमारे बुते नाही बैठा जाता।। जे रविदास कहै जि जी पैर धुवई आहि तउ ऐह कहहि ना जी ऐह तउ ताबाहड़ा ठाकुर चरन पखालन का है।।

जे वस्त्र ऊन कंऊ उपरि राखीऐ।। सोइ कहै जि ऐ बस्त्र ऐ पराए जितना किछु सभु ठाकर का है।। हमारे बुते छुईआ नाही जाता।। जब ते ठाकर के महल महि थी सभ उई बाता रविदास के देखीया।। भगतहु कहा जि हम किया रविदास सिऊँ बाता करहि ठाकर इहा ही बसते है।। ऐह आरभटी सभ ठाकर की है।''[1]

अत: ऐसे महान और अटूट प्रभ प्रेम के कारण ही गुरु रविदास जी केवल और केवल गुरु रविदास जी को ही ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हुई है, बाकी दुनिया के धर्मों और लोगों को यह दात प्राप्त नहीं हुई है। इस कारण दुनिया के धर्म और लोग केवल विष ही बेचते हैं और केवल और केवल गुरु रविदास जी ही ब्रह्मज्ञान के मालिक व विक्रेता हैं।

उपरोक्त चर्चा से निम्नलिखित अटल सच्चाइयां प्रकट होती हैं।

1. गुरु अर्जुन देव जी के कथन, ''गुरु रविदास जी गोबिन्द रूप भी हैं तथा ब्रह्म गुरु भी'' के अटल सत्य को सोढी मेहरवान भी उपरोक्त गोष्ठ ने साकार रूप में प्रकट कर दिया है।

2. गुरु ग्रन्थ साहिब में अंकित गुरु रविदास जी के कथन ''केवल गुरु रविदास जी ही ब्रह्मज्ञानी हैं शेष विश्व के धर्म तथा लोग विष अर्थात् विकार बेचते हैं'' के अटल सत्य को प्रकट करके गुरु अर्जुन देव जी ने स्वीकार करके मान्यता प्रदान की है।

3. ब्रह्म ज्ञान बेचने का अर्थ है ब्रह्म गुरु द्वारा अपने सेवक का ब्रह्म ज्ञान प्रदान करना। अत: ब्रह्म गुरु रविदास जी अपने समय में अपने सेवकों को ब्रह्मज्ञान प्रदान करते थे। इस अटल सत्य को गुरु अर्जुन देव जी ने स्पष्ट किया है। (प्रमाण के लिये देखें गुरु ग्रन्थ साहिब-1192)।

1. भगत स्रोत पुस्तक - पृष्ठ : ५७ संपादक : डा. जसबीर सिंह साबर

गुरु रविदास जी और गुरु नानक देव जी का सच्चा सौदा

गुरु नानक देव जी अपने बचपन से ही गुरु रविदास जी की वाणी पढ़ते और सुनते थे। इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है, कि गुरु नानक देव जी के अंकुरित कोमल मन को गुरु रविदास जी की वाणी ने प्रभावित किया है। इस कारण गुरु नानक देव जी ने, अपने जीवन का और प्रभ प्राप्ति का आधार ही गुरु रविदास जी की वाणी को बना लिया था। इस तरह गुरु रविदास जी की वाणी शबद गुरु के रूप में गुरु नानक देव जी की प्राप्ति के लिए अगवाई करने का साधन बना है। सोढी मेहरबान की लिखित 'पोथी सचखंड जन्म साखी गुरु नानक देव।' पृष्ठ 73 पर दर्ज है।

'मर्दाना तलवंडी राई भो ऐ की रहदा, रबाब बजाइदा, नाम (नामदेव) कबीर, त्रिलोचन, रविदास, धन्ना, बेणी दे पदे गावता। गुरु बाबे नानक के आगे पदे गावता।'

गुरु नानक देव जी गुरु रविदास जी की वाणी से क्यों प्रभावित हुए? गुरु नामदेव जी और गुरु कबीर जी की वाणी से क्यों नहीं? पहली बात गुरु त्रिलोचन, गुरु धन्ना और गुरु बेणी किसी की भी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में चार शब्दों से अधिक दर्ज नहीं हैं, इस कारण इनकी वाणी गुरु नानक देव जी के मन को बहुत प्रभावित नहीं कर सकी।

दूसरे अब यह स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी से उम्र में बड़े थे।

तीसरी बात, गुरु रविदास जी ने अपनी नई विश्वव्यापी विचारधारा को स्थापित करने के लिए, उन्होंने वैज्ञानिक योजनाबंदी करके सैद्धांतिक तौर से गुरु रविदास जी से पहले विचरण करते चार धर्मों हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म की विचारधारा का एक-एक शब्द में खंडन किया है और साथ ही साथ उसी ही शब्द के बीच रद्द की गई विचारधारा की जगह से अपनी विचारधारा को स्थापित करके एक नए विश्वव्यापी धर्म का सृजन भी किया है।

'सतयुग सत तेता जगी----' वाले शब्द में धर्म की विचारधारा और कर्मकांड को रद्द कर के इस की जगह अपनी विचारधारा निरूपित की है। 'हरि जपत तेऊ जना----' वाले शब्द में पहले सैद्धांतिक तौर पर आधारित अपनी विचारधारा का सृजन कर के इस सिद्धांत अनुसार हिंदू धर्म के अवतारों, इस्लाम और ईसाई धर्म की विचारधारा और कर्मकांड को रद्द किया है। 'बिनु देखे उपजै नहीं आसा' में पहले अपनी विचारधारा दी है और फिर बुद्ध धर्म की विचारधारा को अपनी विचारधारा के अनुकूल संशोधित करके एक नई विचारधारा का सृजन किया है।

चाहे गुरु नामदेव जी और गुरु कबीर जी की विचारधारा बुनियादी तौर से एक जैसी ही है परंतु जिस ढंग से गुरु रविदास जी ने एक-एक शब्द के बीच सैद्धान्तिक तत्व पर आधारित विचारधारा का सृजन किया है और उन्हीं सैद्धांतिक तत्वों के विरोध करने बाले दूसरे धर्मों की विचारधाराओं को रद्द किया है। इस तरह संगठित, संकुचित, स्पष्ट और सैद्धांतिक पक्ष से गुरु नानक देव जी और गुरु कबीर जी ने दूसरे धर्मों की विचारधाराओं को रद्द नहीं किया है। यही एक मूलभूत और वैज्ञानिक तथ्य है, जिस से यह सिद्ध हो जाता है, कि गुरु नानक देव जी बचपन से ही मूलभूत और सैद्धांतिक तत्व के आधार पर सृजित विचारधारा के कायल थे। इस कारण इस विचारधारा के अनुसार ही उन्होंने कोमल मन के अंदर ब्रह्म विचार ब्रह्मज्ञान विकसित किया है।

गुरु रविदास जी स्वयं गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज अपनी वाणी में भी बड़ी दृढ़ता के साथ स्पष्ट करते हैं, कि मेरे बिना संसार में कोई भी ब्रह्मज्ञान का विक्रेता नहीं है, केवल और केवल मैं ही ब्रह्मज्ञान बेच रहा हूँ, बाकी सारी दुनिया विष (ज़हर) बेचती है अर्थात् विकारों को बेचने का ही धंधा करती है।

गुरु रविदास जी केवल ब्रह्मज्ञान ही नहीं देते हैं बल्कि वे ब्रह्मज्ञान के खरीददारों को भी आवाज़ देकर भाल भी करते हैं, यह तथ्य उन के अपने मुखारविंद से उच्चारे शब्द में दर्ज है।

को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ॥१॥ रहाउ ॥
हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥
मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥२॥

(पृष्ठ ३४५-३४६ गौड़ी)

यहीं पर बस नहीं गुरु नानक देव जी गुरु रविदास जी की वाणी द्वारा

परमात्मा की प्राप्ति के लिए गुरु रविदास जी की वाणी गा-गा कर लोगों को उपदेश देते थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गुरु नानक देव जी गुरु रविदास जी के ब्रह्म ज्ञान के साथ लोगों को मुक्त करते थे और इसके बीच भी कोई सन्देह नहीं कि उस समय गुरु रविदास जी गुरु रूप होते थे। एक बार लोगों ने गुरु नानक देव जी से प्रभ सिमरन के बारे में पूछा, तब उन्होंने परमेश्वर के सिमरन के लिए गुरु रविदास जी की वाणी को अपनाने की और इस बाणी के बीच निरूपित ब्रह्म ज्ञान की अगवाई के तहत असली जीवन जीने की प्रेरणा दी थी, लोगों ने पूछा-

'बाबा जी, सि कवणु सिमरनु जि कीजिऐ? कहै पुरखा सिमरणु उही जि भगती जस कीआ है परमेसर का सोइ तुम गावहु। बेद (गिआन) की चालि चलहु परमेसर दा सिमरण करहु। तब श्री नामे, कबीर रविदास दे पदे बाबा जी की वाणी लागे गावणे प्रेम करि करि।'

(सोढी मेहरबान, पोथी सचखंड, पृष्ठ १३८)

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु नानक देव जी ने बचपन से ही गुरु रविदास जी की वाणी खुद गाई और गाकर लोगों को सुनाई है। इस तरह गुरु नानक देव जी ने स्वयं भी गुरु रविदास जी के शब्द गुरु के रूप में अगवाई के लिए और लोगों को भी गुरु रविदास जी से मुक्ति के लिए शब्द गुरु रूप में बीच अगवाई लेने के लिए प्रेरित किया है।

अत: इस से स्पष्ट है कि गुरु नानक देव जी ने शब्द गुरु के रूप में प्रदान करके गुरु रविदास जी की वाणी को उच्चतम सत्कार दिया है। गुरु जी की उच्चारी हुई वाणी ही शब्द गुरु बन सकती है।

गुरु रूप के बीच गुरु रविदास जी की अगुवाई देने की सामर्थ्य को डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'युग प्रवर्तक संत गुरु रविदास' (हिंदी) के पृष्ठ नंबर 48 पर स्पष्ट करके लिखते हैं कि स्वर्गीय आचार्य क्षितिमोहन सेन ने संतों में प्रचलित एक अनुश्रुति का हवाला देते हुए बताया था कि संभवत: वह गुरु रविदास जी कबीर से आयु में बड़े थे। कहते हैं कि जब किसी ने कबीर जी से पूछा कि भगवत भक्ति का मार्ग बताइए? तो उन्होंने कहा था कि भाई मैं तो मां की गोद में बैठा गंतव्य स्थान पर पहुंच गया हूं। मैं क्या जानूं कि रास्ता क्या होता है? रास्ता पूछना है, तो गुरु रविदास जी से पूछो, जिनके सिर के ऊपर मां ने एक गठड़ी भी रख दी थी,

'मैं तो आया मां की गोद में, क्या जानूं मार्ग क्या होए?
राह पूछो रविदास से, जिन गठरी लाइ ढोए।'

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी शब्द गुरु के रूप में भी अगुवाई करते थे और यह उपदेश गुरु वन साधक का मार्गदर्शन भी करते हैं। इस तरह भी ब्रहम ज्ञान के विक्रेता और धार्मिक गुरु स्पष्ट हो जाते हैं। गुरु कबीर जी के उपरोक्त तथ्यों से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि गुरु रविदास जी से ब्रह्म ज्ञान खरीदने वाले अर्थात् ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने वाले अनेकों साधक थे। इन ब्रहम ज्ञान के खरीददारों के बीच एक महत्वपूर्ण खरीददार पंजाब के गुरु नानक देव जी भी थे।

चूहड़खाने में एकत्रित हुए महापुरुषों, संतों के बीच गुरु रविदास जी की गहर, गंभीर, सोच विचार और दूरदृष्टि वाले ब्रह्मज्ञानी चिंतक और ब्रह्मज्ञान विक्रेता थे। संतों के बीचो बीच सब से अधिक उम्र के सियाणे बुजुर्ग थे। इस कारण गुरु रविदास जी चूहड़खाने के संत सम्मेलन में प्रमुख (अध्यक्ष) भी थे। इस संत सम्मेलन में गुरु रविदास जी के प्रवचन सुनकर गुरु नानक देव जी बहुत ही प्रभावित हुए थे। चूहड़खाने (ननकाना साहिब) के बीच गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी के साथ ब्रह्म ज्ञान के बारे में गोष्टी करके आत्मिक आनंद प्राप्त किया था और गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी से ब्रह्म ज्ञान का सच्चा सौदा खरीदा था। इस तरह गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी का उपदेश गुरु स्वीकार किया था। गुरु रविदास जी ने गुरु नानक देव जी को ब्रह्म ज्ञान की दात प्रदान करके आशीर्वाद दिया था। गुरु नानक देव जी उपरोक्त तथ्य की पुष्टि करते हुए फरमाते हैं -

हरि हरि नामु वखरु लै चलहु।।
दरसनु पावहु सहिज महलहु।।
गुरमुखि खोजि लहहि जन पूरे।।
इउ समदरसी चीना हे।।१३।। **पन्ना १०२७**

(मारू राग म १)

इस तथ्य की तस्दीक डॉक्टर लेखराज परवाना अपने थीसिज 'गुरु रविदास जीवन और किरतां' में करते हैं -

''उस समय गुरु नानक साहिब की संत रविदास जी के साथ तीन मुलाकातें हुई बताई जाती हैं। पहली गोष्ठी चूहड़खाने (ननकाना साहिब) में

उस समय हुई थी, जब गुरु नानक साहिब अभी किशोरावस्था में थे। पांच संत कबीर, त्रिलोचन, रविदास, सेन और धन्ना धर्म प्रचार के लिए पंजाब आए थे। गुरु नानक देव जी ने जो बीस रुपए अपने पिता कालू दास जी से व्यापार के लिए प्राप्त किए थे, वे इन संतों की सेवा में ही लगा कर सच्चा सौदा किया था और संतों का आशीर्वाद प्राप्त किया था। बाबा जी अन्तर्यामी थे। उन्होंने संतों के अंदर ज़रूर कोई सात्विक और आध्यात्मिक शक्ति देखी होगी, जिस से प्रभावित होकर उन्होंने संतों की सेवा की थी। पिता कालू दास जी को जब पता चला कि इन संतों में नीच जाति से संबंध रखने वाले भी हैं, तो लोक लाज के मारे उन्होंने बाबे के मुंह पर थप्पड़ मारे थे और उन को झिड़कियां भी, कि रविदास, कबीर नीच जाति के हैं। तुम ने उन के साथ क्यों शिष्टाचार बढ़ाया है? बाबा जी ने अपने पिताजी को निर्भीक हो कर स्पष्ट उत्तर दिया था और जाति पाति का खंडन करते हुए निडर होकर कहा था,

'नीचा अंदर नीच जाति नीची हूं अति नीचु।
नानकु तिस के संगि साथि बडिआ सिउ किया रीस।'[1]

डॉ. दर्शन सिंह प्रोफैसर और चेयरमैन गुरु नानक सिख स्टडीज विभाग पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ भी गुरु रविदास जी के साथ हुई गुरु नानक देव जी की पहली गोष्टी की पुष्टि करते हुए डॉक्टर लेखराज परवाना के थीसिस 'श्री गुरु रविदास जीवन तथा कृतां'-1993 के पृष्ठ नंबर 3 पर विचार देते हुए और भी पुष्टि प्रदान करते हैं। वे लिखते हैं :-

''इस ग्रंथ के पाठ से यह भलीभांति सिद्ध हो जाएगा कि यह ग्रंथ सिर्फ आकार में ही बड़ा नहीं है, गुणों में भी बड़ा है। संत जी के जीवन और रचनाओं के बारे में प्राप्त धारणाओं के चारों ओर धुंधलेपन को जिस ढंग से डॉक्टर परवाना ने स्पष्ट किया है, मेरे ख्याल में यह एक विलक्षण देन है, वैसे भी यह गुण और प्रकार दोनों तरफ से एक महत्वपूर्ण रचना है।''

स्पष्ट है, कि डॉ दर्शन सिंह जी ने पूरे ध्यान के साथ डॉक्टर परवाना की पुस्तक (ग्रंथ) का अध्ययन करके ही उपरोक्त पैरा लिखा है, जिस से साबित होता है कि पृष्ठ 116-117 पर दी गई गुरु रविदास जी के साथ गुरु नानक देव जी की हुई पहली गोष्टी में किए गए विचारों से आप पूरी तरह सहमत हैं। इस तरह गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी से सच्चा सौदा कर के गुरु रविदास

जी को उपदेश गुरु स्वीकृत करने के उपरांत आशीर्वाद प्राप्त किया था। श्री के.एस. मुन्शी का नीचे दिया गया कथन भी दृढ़ता के साथ साबित हो गया है।

"Guru Nanak was discifole of Guru Ravidass" [1]

इस खुशी में गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी के सत्कार में संतों और हज़ारों की संख्या में संतों को 20 * रुपये के साथ ब्रह्मभोज किया था। डॉक्टर दर्शन सिंह जी ने इस तथ्य की पुष्टि को परिपक्वता के साथ स्पष्ट किया है। अब हम एक अन्य पक्ष से सच्चे सौदे के बारे में विचार करते हैं। जन्म साखी के अनुसार गुरु नानक देव जी ने भूखे साधुओं को भोजन करवा कर सच्चा सौदा किया परन्तु प्रश्न उठता है कि क्या तरस खाकर, दया करके भूखे साधुओं को भोजन खिलाना सच्चा सौदा है? नहीं! गुरु नानक देव जी ने साखी के अनुसार भूखे साधुओं को तरस करके, दया करके बीस रुपये से उन की भूख मिटाई, परन्तु गुरु नानक देव जी जपुजी में फरमाते हैं :-

तीरथु तपु दया दत दानु।। जे को पावे तिल का मानु।।
(पाउड़ी-21)

गुरु नानक देव जी परिपक्वता के साथ स्पष्ट करते हैं कि दया करने से कुछ प्राप्त नहीं होता, यदि होता भी है तो केवल तिल के बराबर ज़रा सा मान-इज्ज़त ही प्राप्त होता है। क्या तिल भर मान-सत्कार, इज्ज़त को सच्चा सौदा कहा जा सकता है? कदाचित नहीं। सच्चे सौदे के बारे में गुरु नानक देव जी स्वयं फरमाते हैं :

प्रेम पदारथु लहे अमोलो।। कब ही न घाटसि पूरा तोलो।।
सच्चे दा बापारी होवै सच्चो सौदा पाइदा।।
(पृष्ठ-1036)

जिस ब्रह्मज्ञान के गुरु रविदास जी, मालिक व विक्रेता हैं, उसे ही ब्रह्म ज्ञानी की प्राप्ति को गुरु नानक देव जी सच्चा सौदा कहते हुये किसी को भी सच्चा भोजन, सच्चा प्यार तथा इसी को सच्चे नाम का आधार फरमाते हैं तथा स्पष्ट करते हैं कि प्रभ के नाम का व्यापार ही सच्चा सौदा है।

सच्चा बपारु नाम है, सच्चा बापार
लाह नामु संसारि है, गुरुमति विचारा

1. उस समय 20 रुपये में हज़ारों लोगों का भोजन तैयार किया जा सकता था।
2. Gujrat and its- 1967-पेज-164.

दूजे भाई कार कमावनी नित तोटा संसार।।४।।

साचि संगति धानु सच्चु सच्चे घर-बारा
सच्चा भोजन भाउ सचु-सचु नामु आकारा
सच्ची वाणी से तोखया सच्चा शब्दु विचारा।।६।।

(पृष्ठ नं. 1009)

गुरु नानक देव जी स्पष्ट करते हैं कि नाम व्यापार सदा लाभदायक है, कभी हानिकारक नहीं होता। सच्ची संगति वाला स्थान उस प्रभ का स्थान बन जाता है। जैसे गुरु रविदास जी आदि महापुरुषों की संगति उस संगत में भोजन भी सच्चा सौदा है। यहां पर ही सच्ची वाणी पर विचार करते हुये सत्य का संतोष प्राप्त होता है। इस प्रकार प्रभ के नाम का ही सच्चा सौदा हैं अन्य कोई सच्चा सौदा हो ही नहीं सकता।

सच्च बखरु नाम है, सच्चा बापारा।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी खरीददारों की तलाश करने में सफल रहे हैं। इस तथ्य से यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि वह ब्रह्म ज्ञान के विक्रेता हैं। उपरोक्त समूची चर्चा का निष्कर्ष यह है -

1. केवल और केवल गुरु रविदास जी ही ब्रह्म ज्ञान के विक्रेता हैं।
2. गुरु रविदास जी बुजुर्ग ब्रह्मज्ञानी चिंतक हैं, गुरु रविदास जी चूहड़खाने के संत सम्मेलन के मुख्य संचालक हैं।
3. गुरु कबीर जी स्वीकार करते हैं कि केवल गुरु रविदास जी ही प्रभ सिमरन के मार्गदर्शन करने के योग्य हैं और समर्थ हैं
4. गुरु नानक देव जी किशोरावस्था में ही गुरु रविदास जी के शब्द गुरु के रूप में मान्यता दे चुके हैं
5. गुरु नानक देव जी ने चूहड़खाने में गुरु रविदास जी के प्रवचन सुने और उस के बाद गोष्टी करके ब्रह्म ज्ञान का सच्चा सौदा किया।
6. गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी को उपदेश गुरु स्वीकृत किया था।
7. सच्चा सौदा करने की और गुरु रविदास जी को उपदेश गुरु स्वीकृत करने की खुशी में गुरु नानक देव जी ने गुरु रविदास जी, संतों और संगतों को ब्रह्मभोज दिया था।

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

इस शब्द का सृजन गुरु रविदास जी ने बड़े वैराग्य में बड़ा गहन गंभीर हो कर किया है। इस के साथ ही इस में प्रभ प्रेम में विह्वल हो कर आत्मा की आवाज़ भी है कि हे प्रभ! मेरी महंगी पूंजी ब्रह्म ज्ञान को इन विकार रूपी डाकुओं से अपनी कृपा करके बचा कर रखना। इसलिए गुरु जी ने प्रथम बन्द में ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति और उसकी रक्षा की बात की है, वे इस को घर-घर पहुंचाने के लिए तत्पर हैं।

'रहाउ' में गुरु रविदास जी विश्व को परम आनंद के साथ भरपूर करने के लिए ब्रह्म ज्ञान के खरीददरों को आवाज़ देकर अर्थात् प्रचार के साथ ब्रह्म ज्ञान खरीदने के लिए प्रेरित करते हैं। इसी लिए गुरु जी ब्रह्मज्ञान के खरीदारों की तलाश में हैं अर्थात् लोगों को प्रभ के साथ जोड़ने के लिए तत्पर हैं।

बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि मैं राम नाम बेचने का केवल और केवल अकेला ही व्यापारी हूं और इसका व्यापार करता हूं। वह यह भी स्पष्ट करते हैं कि ब्रह्म ज्ञान केवल मेरे पास ही है, बाकी दुनिया ज़हर का व्यापार करती है अर्थात् विकारों का व्यापार करती है, इसलिए गुरु जी विकारों से बचा कर जीवों को परम आनंद की प्राप्ति के लिए, नाम प्राप्ति के लिए प्रेरित करते हैं।

बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी जीवों को विश्वास से परिपक्व करने के लिए सबूत देते हैं कि उनके पास ब्रह्म ज्ञान है, इस कारण ही वे धड़ल्लेदारी के साथ, डंके की चोट पर चित्रगुप्त को ललकारते (Challenge) हैं, कि वह जो कुछ मर्जी लिख ले मुझे यमदूतों की सजा नहीं मिल सकती है, क्योंकि मैं संसार के सब विषय विकारों का त्याग कर चुका हूं।

बन्द नंबर 4 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि संसार कुसुंभड़े के कच्चे रंग की तरह अस्थिर है, क्षणिक है, परंतु प्रभ का रंग कुसुंभड़े की तरह कच्चा नहीं है, वह स्थिर है, वह तो सदा सलामत है। उस का अस्तित्व शाश्वत है। उस का रंग मजीठ की तरह पक्का है अर्थात् स्थिर है।

इस ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के साथ जीव दुखों के चक्कर से सदा सदा के लिए मुक्त हो जाता है, प्रभ रूप हो जाता है।

शब्दार्थ – गुरु रविदास जी ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने के बाद प्रभ के आगे अरदास करते हैं कि हे प्रभ जी! कृपा कर के मेरी ब्रह्म ज्ञान की पूंजी की आप ही रक्षा करो, क्योंकि मेरे बैल रूपी अति कमज़ोर मन के ऊपर तेरी बख्शीश के साथ प्राप्त की गई ब्रह्म ज्ञान की भरी हुई पूंजी लेकर खतरनाक और कठिन पहाड़ी रास्तों अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार इन खतरनाक डाकुओं से भरे रास्तों को पार करना बड़ा कठिन है। इसलिए हे प्रभ! मेरी इस महंगी पूंजी को इन डाकुओं से बचा कर रखना।।१ ।।

हे भाई! है कोई ब्रह्म ज्ञान खरीदने वाला व्यापारी, राम नाम की प्राप्ति का अभिलाषी, मेरा राम नाम की पूंजी के साथ भरा काफिला गुज़रता हुआ जा रहा है, भावार्थ समय बीतता जा रहा है, तो गुरु रविदास जी विश्व के दुखों को काटने के लिए ब्रह्मज्ञान का प्रवाह घर-घर चलाने के लिए तत्पर हैं।।१ ।। रहाउ।।

गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि मैं ही राम नाम का व्यापारी हूं और केवल ब्रह्म ज्ञान ही बेचता हूं। इस कारण वे डंके की चोट पर कहते हैं कि केवल मेरे पास ही ब्रह्म ज्ञान का धन है बाकी सारा संसार तो ज़हर लादकर फिरता है और विकारों के बीच फंस कर संसार को दुखों के बीच फंसा रहा है। गुरु जी मनुष्य को विकारों से मुक्त करने के लिए ही राम नाम धन बेचते हैं।।२ ।।

गुरु रविदास जी अपने पास ब्रह्म ज्ञान के कारण मुक्ति का सबूत देते हुए खरीदार को दृढ़ता से परिपक्व करने के लिए लोक परलोक को जानने वाले चित्रगुप्त को चुनौती देते हैं और कहते हैं कि वह मेरे लेख में जो मर्जी वह लिख ले, परंतु उस को (रविदास) को यमराज से दंड नहीं मिल सकता है। कारण : क्योंकि रविदास जी ने माया को काबू कर के सारे जंजाल त्याग दिए हैं। इसलिए गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति से ही हर हालत में मुक्ति प्राप्त हो जाती है।।३ ।। इसलिए गुरु रविदास जी संसार की अस्थिरता की और प्रभ की शाश्वत स्थिरता का प्रवचन करते हुए फरमाते हैं कि यह संसार तो कुसुंभड़े के रंग की तरह कच्चा है, अस्थिर है, परंतु मेरे प्रभ का रंग मजीठ की तरह पक्का है और शाश्वत है।।४ ।।

शब्द - 5

गौड़ी पूरबी रविदास जीऊ

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

कूपु भरिओ जैसे दादिरा
कछु देसु बिदेसु न बूझ॥
ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ
कछु आरा पारु न सूझ॥१॥
सगल भवन के नाइका
इकु छिनु दरसु दिखाइ जी॥१॥ रहाउ॥
मलिन भई मति माधवा
तेरी गति लखी न जाइ॥
करहु क्रिपा भ्रमु चूकई
मै सुमति देहु समझाइ॥२॥
जोगीसर पावहि नही
तुअ गुण कथनु अपार॥
प्रेम भगति कै कारणै
कहु रविदास चमार॥३॥१॥[1]

(पृष्ठ ३४६)

पद अर्थ – **कूप**-कुआं। **दादिरा**-मेंढक। **देशु-विदेसु**=लोक-परलोक। **बूझ**-बोध, समझ। **बिखिया**-विष रूपी माया। **बिमोहिया**-अच्छी तरह वश में किया हुआ, अच्छी तरह मोहित किया हुआ। **आर**-नदी का पहला छोर, किनारा, तट। **आरा पारु**-इधर उधर का किनारा। **सूझ**-समझ, ज्ञान।

सगल-सर्व, सब। **भवन**-श्रृष्टि। **नाईक**-नेतृत्व करने वाला मालिक अर्थात् ब्रह्म गुरु। रहाउ।।१ ।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ३४६

मलिन-विकारों के कारण अपवित्र, पतित। **मति**-विचार, ज्ञान। **गति**-ज्ञान, स्थिर, टिकाऊ। **लखी**-जानी, पहचानी। **भ्रम**-भटकना। **चुकई**-खत्म हो जाए। **सुमति**-उत्तम मत, ब्रह्म ज्ञान। **देह समझाई**=देकर समझा दो। **मैं.....समझाई**=मुझे अपना ब्रह्म ज्ञान (उत्तम मत) देकर समझा भी दो।।२।।

जोगीसर-सभी योगियों का मुख्य-शिव, बड़े-बड़े योगी। **पावहि नहीं**=थाह नहीं पा सके, अंत नहीं पा सके। **अपार**=बेअंत, अथाह। **कै कारण**-के कारण, की खातिर। **कहु**=कहना। **गुण कहु**=गुणों का बयान करना, **सिफत**-सलाह कर।।३।।१।।

ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति का सिद्धांत

गुरु रविदास जी इस शब्द में ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति का सिद्धांत प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट करते हैं कि पारब्रह्म ही ब्रह्म गुरु है और ब्रह्म गुरु के रूप में साधक को ब्रह्म ज्ञान प्रदान करता है। दूसरे ब्रह्म गुरु, ब्रहम ज्ञान प्रदान करके नायक बन कर साधक की प्रभ प्राप्ति के लिए अगवाई भी करता है।

गुरु जी को संसारिक धर्मों का ज्ञान हो गया है कि वह प्रभ के साथ मिलने में समर्थ नहीं हैं और न ही उनके बीच कोई ऐसा संत है, जो उस प्रभ के साथ मिलाने की सामर्थ्य रखता हो। इसलिए गुरु जी ने प्रभ से ब्रह्म ज्ञान के दान की अरदास की है। वह प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभ मेरे विचार विकारों के कारण पतित हो गए हैं। मैं ज्ञान से वंचित हूं, इस कारण मुझे आपके बारे में कोई समझ नहीं है और न ही गुणगान करने में सक्षम हूं, हे प्रभ! मेरी प्रार्थना है कि मुझ पर कृपा करके मुझे विकारों से मुक्त करो और ब्रह्म ज्ञान देकर समझा भी दो। अत: वह स्पष्ट रूप में प्रभ (ब्रह्म गुरु) को अपना गुरु स्वीकार करते हुए ब्रह्म ज्ञान और गुरु (प्रभ) के दर्शन के लिए प्रार्थना करते हैं, कि वह ब्रह्म ज्ञान की बारीकियां समझा कर अगवाई भी करें। इन विचारों का सृजन गाउड़ी राग की प्रकृति अर्थात् सुभाव अनुसार हुई है।

अत: उपरोक्त सिद्धांत का अर्थ तत्व सार इस प्रकार है -

1. पारब्रह्म ही ब्रह्म गुरु है।
2. ब्रह्म गुरु ज्ञान प्रदान करता है।
3. साधक तुच्छ बनकर ब्रह्म गुरु से ब्रह्म ज्ञान के दान की बख्शीश के लिए प्रार्थना करता है।
4. उस की कृपा के बिना ब्रह्म ज्ञान प्राप्त नहीं होता है।
5. ब्रह्म गुरु ब्रह्म ज्ञान प्रदान करके समझाता है और नायक (ब्रह्म गुरु) बनकर प्रभ प्राप्ति के लिए अगवाई भी करता है।

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में विचारों को सूत्रबद्ध, (नियमबद्ध) निर्माण किया है। पहले बन्द में अज्ञानता का बोध कराया गया है, फिर रहाउ में दर्शनों के लिए तड़प दर्शाई गई है। दर्शन की इच्छा की पूर्ति के लिए ब्रह्म गुरु प्रभ से ब्रह्म ज्ञान के साथ-साथ प्रेम भक्ति के लिए अगवाई करने की भी प्रार्थना की गई है।

गुरु जी बन्द नंबर 1 में अपनी अज्ञानता के बारे में स्पष्ट करते हैं, वे फरमाते हैं कि कुएं के मेंढक की तरह मैं अज्ञानी हूं। मेरा मन विषय विकारों ने मोह लिया है, इस कारण मुझे ज़रा भी समझ बूझ नहीं है।

'रहाउ' के बीच वे सृष्टि के मालिक अगुवाई करने वाले प्रभ गुरु (ब्रह्म गुरु) को तड़फते हुए, मिन्नतें करते हुए अर्ज गुज़ारते हैं, कि हे प्रभ! मुझे एक पल के लिए भी दर्शन दे दो जी।

राग गौड़ी की बुनियादी प्रकृति के बारे में भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्री लिखते हैं, कि 'बिलखती आत्मा कृपा की याचना करती है और आपे की खोज करती है'। इस शब्द में बिलखती आत्मा की आवाज़ भी है और ब्रह्म गुरु की अगवाई में आपे की पड़ताल भी की है। इसलिए यह शब्द राग की प्रकृति पर पूरा उतरता है।

बन्द नंबर दो में गुरु जी प्रभ के आगे प्रार्थना करते हुए स्वीकार करते हैं कि मेरा मन पापों से भरा हुआ है। मैं अज्ञानी होने के कारण आप की पहचान करने में असमर्थ हूं। इस कारण मैं आप के ब्रह्म ज्ञान को जानने में असमर्थ हूं। अत: प्रभ जी मेहर करो। बख्शिश करो और मुझे सुमति अर्थात् अपना ब्रह्म ज्ञान दे कर के समझा भी दो, ताकि मेरे सारे भ्रम दूर हो जाएं और आपके दर्शन भी हो जाएं। इस प्रस्तावना में गुरु रविदास जी स्पष्ट तौर से प्रभ ब्रह्म गुरु को अपना गुरु स्वीकार करते हैं। ब्रह्म ज्ञान और दर्शन के लिए अगवाई के लिए प्रार्थना करते हैं।

अन्तिम बन्द नंबर 3 में गुरु जी प्रभ की ओर से प्रेम भक्ति की दात के लिए प्रार्थना करते हैं। इस उद्देश्य के लिए वह स्पष्ट करते हैं, कि वह प्रेम भक्ति के लिए आपके गुणों की सिफत सलाह में मग्न हूं।

शब्द अर्थ - जिस प्रकार कुएं के मेंढक को कुएं से बाहर लोक परलोक का कोई बोध नहीं होता है, कोई समझ नहीं होती है, उसी तरह मेरा मन माया के विकारों में इतनी बुरी तरह वश में हो गया है, कि मुझे माया के चक्कर से बाहर आर व पार के किनारे अर्थात् इधर-उधर लोक परलोक की कोई समझ नहीं है। मैं अज्ञानी हूं।

अज्ञानता के कारण गुरु रविदास जी कुर्ला उठते हैं। अंदर से मिलने की तीव्र इच्छा उठती है और तड़पते हुए मिन्नतें करते हैं, कि हे सारी सृष्टि के मालिक! अगुवाई करने वाले ब्रह्म गुरु मुझे अगवाई देकर एक पल के लिए ही दर्शन दे दो जी।।१।। रहाउ।।

गुरु रविदास जी को स्पष्ट हो जाता है कि अज्ञानता के कारण प्रभ के दर्शन नहीं हो सकते, इसलिए वह प्रभ के आगे अरदास करते हैं, कि हे प्रभ गुरु (ब्रह्म गुरु) मेरे विचार, विकारों के कारण पतित हो गए हैं। मैं अज्ञानी हूं, इस कारण आपके स्थाई और टिकाऊ स्वरूप को नहीं पहचान सकता हूं। अत: मेरे पर कृपा करके अपना ब्रह्म ज्ञान दे कर समझा भी दो, जिस कारण पल भर के लिए दर्शन हो जाएं।।२।।

हे प्रभ! आपके बेअंत गुणों का तो बड़े-बड़े योगी भी अंत नहीं पा सके परंतु मैं रविदास चमार आप की ही प्रेम भक्ति प्राप्त करने के लिए आप की सिफ्त सलाह में मग्न हूं।।३।।१।।

शब्द - 6

गौड़ी बैरागण रविदास जीऊ

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार॥
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार॥१॥
पारु कैसे पाइबो रे॥
मो सउ कोऊ न कहै समझाइ॥
जा ते आवा गवनु बिलाइ॥१॥ रहाउ॥
बहु बिधि धरम निरुपीए करता दीसै सभ लोइ॥
कवन करम ते छूटीऐ जिह साधे सभ सिधि होइ॥२॥
करम अकरम बीचारीऐ संका सुनि बेद पुरान॥
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु॥३॥
बाहरु उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिधि बिकार।
सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार॥४॥
रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार॥
पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार॥५॥
परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट।।
उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट॥६॥
भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार॥
सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार॥७॥
अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास॥
प्रेम भगति नही ऊपजै ता ते रविदास उदास॥८॥१॥[1]

(पृष्ठ ३४६)

पद अर्थ - **सतु**-दान। नोट - **सतु**=सं: **सतु**=दान।[2] **पूजाचार**=पूजा आचार, देवताओं की पूजा का शास्त्र के अनुसार धर्म कर्म। **दृढ़े**=परिपक्व कर रहे हैं, ज़ोर

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ३४६ 2. महान कोश - ११२

दे रहे हैं। **नाम**=श्री राम, श्री कृष्ण अवतार, भावार्थ मूर्ति पूजा।।१।।

पारू=विकारों से मुक्ति। **पाईबो**=होंगे। **आवागमन**=जन्म-मरण का चक्कर, चौरासी लाख योनियों का चक्कर। **बिलाई**=चक्र से मुक्ति।।१।। रहाउ।।

बहु विधि=बहुत विधियों के साथ, बहुत ढंगों से। **धरम**=धर्म कर्म। शास्त्रों के अनुसार हर युग में अलग-अलग धर्म कर्म और फिर हर एक वर्ण आश्रम (जात पात) के अलग-अलग धर्म-कर्म। **निरूपीए**=स्पष्ट किए गए हैं, कल्पित किए गए हैं। **लोई**=सारा संसार। जिह **साधे**=जिस धार्मिक कर्म के साथ दृढ़ करने के साथ। **सिद्धि**=मुक्त, सफलता।।२।।

करम=हिंदू धर्म शास्त्रों के अनुसार जाति के आधार पर निश्चित किए गए धार्मिक कर्म, रस्में। **अकरम**=हिंदू शास्त्रों के अनुसार जाति के आधार पर वर्जित किए गए कर्म रस्में। **संसा**=शक, संदेह, भ्रम। **हिरै**=मुक्त करे, दूर करें।।३।।

उदकि=पानी के साथ। **पखारिए**=धो लेना, स्नान करना। **घट**=शरीर। **विविध**=अनेक प्रकार के। **कुंचर**=हाथी। **विधि**=जिस प्रकार। **बिऊहार**=बर्ताव, व्यवहार।।४।।

पारस=गुरु।।५।।

परम परस=पारसों का पारस। **परम परस गुरु**=गुरुओं का गुरु अर्थात् ब्रह्म गुरु। **भेटीए**=प्राप्त हो जावे, मिल जाए। **पूरब लिखत**=जन्म लेने से पहले किए गए कर्मों के कारण। **लिलाट**=किस्मत, भाग्य। **उनमन**=उत्तम मन, ऊंचा मन। **छूटकत**=खुल जाते हैं। **बजर**=सख्त, पक्के। **कपाट**=दरवाज़े के ताक।।६।।

जुगति=विधि, साधन, तर्क, दलील। **मति**=विचार, दृढ़ करना, सूझ बूझ। **सोई**=प्रभ। **बसि**=विराजमान होता है। **रसि**=आनंद में। **गुन**= माया के तीन गुण सतो, तमो, रजो। **निर्गुण**=माया के तीन गुणों से रहित।।७।।

निग्रह=रोकना, शास्त्र के अनुसार कर्म इंद्रे रोकना अर्थात् हठ के साथ रुकना। **फास**=फांसी, फंदा। **उदास**=धर्म कर्म से उपराम।।८।।१।।

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

हिंदू धर्म की विचारधारा का खंडन और नई विश्व धर्म की विचारधारा की उत्पत्ति।।

इस शब्द में पारब्रह्म को किसी भी नाम के साथ संबोधित नहीं किया गया है। किसी भी अवतारी नाम का उपयोग नहीं किया गया है। इसी लिए इस शब्द की विचारधारा निष्पक्ष रूप में अंतर्राष्ट्रीय भावना का बोध करवाती है, साथ ही साथ यह बोध भी हो जाता है कि इस शब्द के बीच निरूपित विचारधारा सही अर्थों में विश्व धर्म की विचारधारा है। इस कारण विश्व का कोई भी व्यक्ति इस सर्वोत्तम वैज्ञानिक और निष्पक्ष विचारधारा के अनुसार प्रभ प्राप्ति कर सकता है।

किसी भी शब्द के विचार विधान के क्रम को तोड़ा नहीं जा सकता। इस शब्द का विचार विधान खास ध्यान की मांग करता है, इसलिए इस शब्द के पहले बन्द नंबर 1 की व्याख्या के लिए तीन बातों का ध्यान रखे बिना संभव नहीं है। पहली बात हर शब्द के विचारों का केंद्र बिंदु 'रहाउ' होता है। 'रहाउ' में आमतौर पर बुनियादी विचार या सिद्धांत दिया जाता है, इसलिए व्याख्या करते समय 'रहाउ' का दृष्टिगोचर होना बहुत ज़रूरी है। बन्द नंबर 1 की व्याख्या के लिए समूचे शब्द का, खास कर के 'रहाउ' का प्रसंग के बीच में रखे बिना इस बंद के अर्थ स्पष्ट नहीं हो सकते। अधिकतर संभावना अर्थ के गलत होने की ही है। दूसरी बात गुरबाणी में शब्दों के बीच दिए विचार विधान के क्रम को तोड़कर व्याख्या के साथ भी अर्थ गलत हो सकते हैं। इस शब्द में बन्द का क्रम विचारों के क्रम को सामने रखकर की गई है। दूसरे अर्थों में विचारों को किसी खास विचार विधान में रखकर सृजित किया गया है। इस विचार विधान के अनुसार हर बन्द का विचार एक कड़ी में बंधा हुआ है। इस लिये कड़ी के टूटने से व्याख्या करते समय भुलेखा पड़ सकता है और अर्थ गलत हो सकते हैं। तीसरी बात जो उपरोक्त दोनों बातों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है, वह है राग। हर शब्द की व्याख्या उस राग के सिद्धांत या मूलभूत विचार के निर्देशन

(Direction) के अनुसार होनी ज़रूरी है। ऐसा न करने से हर हालत में अर्थ करते समय भुलेखा लगेगा, क्योंकि राग का स्वभाव और सिद्धांत शब्द के बीच आए विचारों को समझने के लिए हमें सैद्धांतिक दिशा देता है। राग के सुभाव और सिद्धांत को छोड़ कर की गईं व्याख्या हर हालत में गलत होगी, अस्पष्ट होगी। अब हम इस के अनुसार विचार विधान पर चर्चा करते हैं।

गुरु रविदास जी की वाणी और समूचे गुरु ग्रंथ साहब में न तो युगों को मान्यता दी गई है और न ही इस से संबधित विचारधारा को। इसलिए गुरु जी शब्द की बन्द नंबर 1 में ही हिंदू धर्म की आदि से लेकर अंत तक की चारों युगों की विचारधारा को रद्द कर देते हैं। इस प्रस्तावना की विचारधारा वेदों की विचारधारा है, इसलिए वेदों के अनुसार सतु का अर्थ है ज्ञान। ज्ञान माया के तीनों गुणों में से एक है और वह सतोगुण है। इस ज्ञान को प्राप्त करने का अधिकार केवल ब्राह्मण को ही है। इस ज्ञान प्राप्ति के अधिकार अनुसार उसके कर्म हैं, विद्या पढ़ना और पढ़ाना, दान लेना और देना, यज्ञ करना और कराना। इसलिए ब्राह्मण का ज्ञान प्राप्त करने का उद्देश्य अपने उपरोक्त कर्मों को निभाना है। अपने भगवान की प्राप्ति उसका उद्देश्य नहीं है। यह तथ्य भगवत गीता से स्पष्ट हो जाता है। भगवत गीता वेदों को ईश्वर प्राप्ति का साधन नहीं मानती। दूसरे अध्याय में श्री कृष्ण अर्जुन को समझा रहे हैं -

> ''हे अर्जुन! मूर्ख आदमी झूठी प्रशंसा के लिए वाणी बोलते हुए वेद वाद के बीच खुश रहते हैं। यह कहते हुए कि इसके बिना और कोई ठीक नहीं है।।४२।।''
>
> कामना रखने वाले और स्वर्ग को ही परम श्रेष्ठ मानने वाले, जन्म, कर्म, फल, भोग और ऐश्वर्य देने वाली कई प्रकार की 'वैदिक' क्रियाएं बताते हैं।।४३।।
>
> उपरोक्त वाणी द्वारा हारे हुए चित वाले और भोग ऐश्वर्य में मग्न हुए पुरुष के मन में स्थित बुद्धि नहीं होती है।।४४।।
>
> हे अर्जुन! वेद तीन गुणों के विषयों में ही प्रयोग होते हैं। तू तीन गुणों से परे सुख-दुख आदि झगड़ों से रहित, सत्य में सदा स्थित योग 'क्षेम' को न चाहने वाला और 'आत्मवान' है ।।४५।।

*** तीन गुण-सतो, रजो, तमो।**

*** अप्राप्ति की प्राप्ति का नाम योग है।**

*** प्राप्त वस्तु की रक्षा का नाम क्षेम है।**

*** आतमवान आत्मा से भरपूर।''[1]**

इसलिए गीता के उपरोक्त सलोकों से स्पष्ट हो जाता है कि, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपने पदार्थक उद्देश्य को सामने रखकर पूजा करते हैं, क्योंकि वे प्रकृति के तीन गुणों सतो, तमो, रजो के बीच ही विचरण करते हैं। भगवत गीता के तीसरे अध्याय के अनुसार -

'प्रकृति के गुणों'* से मोहित हुए आदमी गुणों और कर्मों में संलिप्त होते हैं। इन साधारण आदमियों को ज्ञानी पुरुष भ्रम में न डालें।।29।।

आत्मा में मन लगा कर सब कर्म मेरे अर्पण कर, वासना और ममता को त्याग कर शोक से रहित होकर युद्ध कर।।३०।।

'प्रकृति के गुण=सतो, रजो और तमो'[2]

उपरोक्त दोनों सलोकों से स्पष्ट हो गया है कि-

1. वेदों के अनुसार धर्म कर्म करने वाले साधारण होते हैं।

2. प्रकृति के गुण और कर्म मनुष्य को साधारण बनाते हैं।

3. वेदों के अनुसार धर्म कर्म करने वाले आत्मा में मन लगाकर धर्म-कर्म नहीं करते।

4. इस कारण वेदों के अनुसार धर्म-कर्म करने से मनुष्य ब्रह्म ज्ञानी नहीं बन सकता है। इस कारण प्रभ प्राप्ति नहीं हो सकती।

5. आत्मा के बीच मन लगाकर धर्म कर्म करने वाला वासना, ममता आदि गुणों को त्याग देता है परंतु वेदों के अनुसार नहीं।

उपरोक्त निर्णयों से स्पष्ट है कि वेदों के अनुसार पूजा करने से प्रभ प्राप्ति नहीं हो सकती, परंतु माया के गुणों के अनुसार उद्देश्य प्राप्ति ज़रूर होती है।

इसलिए सतयुग में ध्यान पदार्थक उद्देश्य प्राप्ति पर दिया जाता है। इस युग में पूजा पाठ के ध्यान का केंद्र, खास करके दान देना और लेना, यज्ञ करना और कराना, विद्या पढ़ना और पढ़ाना है। वेदों का अर्थ दान ही है। सतियुग में भगवान दान से प्रसन्न होते हैं। इस युग के भगवान ब्रह्मा, विष्णु और महेश देहधारी हैं। गीता, इस के बारे में अठाहरवें अध्याय में स्पष्ट करती है -

'इस लोक में स्वर्ग के बीच या देवताओं के बीच कोई भी जीव नहीं

1. श्रीमद् भगवत गीता (पंजाबी) भाषा विभाग पंजाब - ११
2. वही - १७

है, जो इस प्रकृति के बीच उत्पन्न हुए, तीनों गुणों से रहित हो'।।४०।।[1]

इसलिए ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदि देवता भगवान देहधारी मनुष्य ही हैं और प्रकृति के तीनों गुणों में संलिप्त हैं। इस कारण यह दान आदि से ही खुश होते हैं परंतु त्रेता युग में देवता दान से खुश नहीं होते हैं, अब वे यज्ञ और पशु बलि से खुश होते हैं। त्रेता युग के अवतार भगवान राम हैं, वह विष्णु भगवान के अवतार हैं। भगवान विष्णु पशुओं का मांस खा कर खुश होते हैं। यज्ञ में पशु बलि का अर्थ ही देवताओं को पशुओं का मांस भेंट करना है। यह रीति आज कल भी हिन्दू देवी-देवताओं को पशुओं का मांस भेंट करने के रूप में प्रचलित है। डॉक्टर बी.आर. अंबेडकर ऋग्वेद का हवाला देकर स्पष्ट करते हैं, कि हर एक देवता की पशु के मास खाने की उनकी अपनी पसंद अलग-अलग थी, जिसका यज्ञ में बलि देते समय ध्यान रखा जाता था। इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि, पशु बलि यज्ञ का ज़रूरी अंग है -

'तैतरीय ब्राह्मण ग्रंथ में जितना कामेष्टि यज्ञ का ज़िक्र आता है।' विष्णु को बलि देनी हो तो बौना (अति छोटे कद) बैल चुनना चाहिए था। विरतर के नाशक इंद्र को बलि चढ़ानी हो तो ऐसा बैल चुनना चाहिए, जिस के सींग लटकते हों और जिस के माथे पर टीका लगा हो।''[2]

यही कारण है कि गुरु रविदास जी ने त्रेतायुग में यज्ञ को और इस से संबंधित कर्म-कांड को बड़े शक्तिशाली ढंग से रद्द किया है। इस से जीव हत्या भी बंद हो गई है -

परंतु द्वापर युग में यज्ञ और पशु बलि का महत्व कम हो गया, श्री कृष्ण चाहे विष्णु के अवतार थे परंतु वह वेदों को नहीं मानते थे। वेदों से ही यज्ञ और पशु बलि जुड़ी हुई है, इस कारण द्वापर युग में यज्ञ और पशु बलि खत्म हो गई। अब केवल देवताओं की पूजा ही होती है।

'कलि केवल नाम आधार' तुक के अर्थ के बारे में विद्वानों में मतभेद है। अधिकतर विद्वान इसका अर्थ कलियुग में केवल प्रभ के नाम सिमरन से मुक्ति मिल सकती है, कहते हैं। इन अर्थों को मानने से कई रुकावटें उत्पन्न हो जाती हैं।

यदि यह अर्थ स्वीकार कर लिए जाएं तो 'रहाउ' के बीच निरूपित 'मो सउ

1. वही - ८३
2. अछूत कौन तथा कैसे - डा. बी.आर. अंबेडकर - १२५-२६

कउ न कहै समझाई' तुक बेअर्थ बन जाती है, क्योंकि प्रथम बन्द की दूसरी तुक के दूसरे अर्ध में यह बात समझा दी गई है, कि इस कलियुग में नाम सिमरन से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। इस तरह बन्द नंबर 1 और 'रहाउ' के अर्थों में विरोधता पैदा हो गई है। इस विरोधता के पैदा होने से प्रथम बन्द के अर्थ करते समय 'रहाउ' के बीच दिए बुनियादी अर्थों को ध्यान में नहीं रखा गया और न ही शब्द के बीच दी गई विचार कड़ी को ध्यान में रखा गया है। यदि विचार विधान के अनुसार सृजित विचारों की कड़ी को ध्यान में रखा जाता तो इस शब्द के दूसरी और तीसरे बन्द के अर्थ ही प्रथम बन्द की दूसरी तुक के दूसरे अर्थ के अर्थों में की जा रही गलती को ठीक किया जा सकता था, क्योंकि बन्द नंबर दो और तीन प्रथम बन्द की ही खोल कर व्याख्या करते हैं। इस तरह बन्द नंबर 1 से 4 तक हिंदू धर्म के चार युगों में अलग-अलग धर्म कर्म के बारे में ही विचार किया जा रहा है, फिर प्रथम बन्द की केवल आधी तुक, श्री गुरु रविदास जी का विचार किस प्रकार हो सकता है? इस तरह प्रथम 4 बन्द में हिंदू धर्म के धर्म कर्मो की ही चर्चा हो रही है। इस कारण गुरु रविदास जी की विचारधारा इन बन्द में नहीं आ सकती। इसलिए जिन विद्वानों ने पहली बन्द की दूसरी तुक के दूसरे अर्ध का अर्थ 'कलियुग बिच' केवल प्रभ सिमरन से ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है, किया है, उसके साथ प्रथम चार बन्द की विचारधारा के बीच विरोध पैदा हो जाता है।

इस चर्चा से यही परिणाम निकलता है कि बन्द नंबर 1 की दूसरी तुक के दूसरे अर्ध का अर्थ हिंदू धर्म की विचारधारा से ही संबंधित है। इस को हम हिंदू धर्म ग्रंथों में आए चार युगों के विचारों से तुलनात्मक अध्ययन करके स्पष्ट करेंगे।

गुरु रविदास जी युगों के बंटवारे के विरुद्ध हैं, उन्होंने युग बंटबारा नहीं किया है। युगों का बंटबारा हिंदू धर्म के अनेकों ग्रंथों में दर्ज है। कमाल की बात तो यह है कि लोगों की जो तरतीब हिंदू धर्म ग्रंथों में उपलब्ध है, ऐसे वैसे ही क्रम गुरु रविदास जी के बन्द नंबर 1 में निरूपित है, यहां तक कि इस बन्द का अक्षर अक्षर हिंदू धर्म ग्रंथों के सलोकों से मिलता है। इस से परिपक्व हो जाता है कि 'कलि केवल नाम आधार' वाली तुक में गुरु रविदास जी की विचारधारा नहीं है। यह हिंदू धर्म के कलियुग की विचारधारा ही है।

दूसरे विचारधाराक दृष्टिकोण से परख करके भी यही साबित होता है कि

इस तुक में दी गई विचारधारा हिंदू धर्म की ही विचारधारा है। बन्द नंबर 1 में गुरु रविदास जी हिंदू धर्म ग्रंथों में दर्ज युगों की विचारधारा और धर्म कर्म बारे विचार कर रहे हैं। पहले तीन युग सतियुग, त्रेता युग और द्वापर युग की विचारधारा और इससे संबंधित धर्म-कर्म तो दिए ही हैं परंतु किस प्रकार मान लिया जाए कि कलियुग की विचारधारा और धर्म-कर्म हिंदू धर्म ग्रंथों में निरूपित ही नहीं है, परंतु हिंदू धर्म ग्रंथों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है, कि उनके बीच चारों ही युगों की विचारधारा और धर्म कर्म एक ही हैं। एक ही सलोक के बीच दर्ज किए गए हैं, इसी तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि 'कलि केवल नाम अधार' में हिंदू धर्म की विचारधारा और धर्म कर्म का ही उल्लेख है।

मनुस्मृति और पराशर स्मृति में युगों की विचारधारा और धर्म कर्म एक जैसे ही हैं, परंतु उनकी विचारधारा और धर्म कर्म का क्रम पुराण और महाभारत के युगों की विचारधारा के प्रति क्रम की अपेक्षा अलग है। भाई काहन सिंह नाभा, मनुस्मृति, पराशर स्मृति और विष्णु पुराण के सलोक देकर उनका अनुवाद भी देते हैं -

'1. तप पर कृत्तयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते।
द्वापरे यज्ञमेवाहुदारनमेकं कलौ युगे।
(मनु आ 1 स 86 और परासर स्मृतियां 1 स 23 और 24)

2. ध्यायनन्कृते यजन्यज्ञैस्त्रैयां द्वापरेचर्यन।
यदाप्रोति क्लौ श्री राम कीर्तिनात।
(विष्णु पुराण अंश-6-आ 2)

इस का अनुवाद -

1. मनुस्मृति व पदार्थ स्मृति के अनुसार चारों युगों के यथा क्रम तप, ज्ञान, यज्ञ और दान।

विष्णु पुराण का अनुवाद -

2. चारों युगों के अलग-अलग धर्म, पुराणों के अनुसार सतियुग में ध्यान, त्रेता के बीच यज्ञ, द्वापर के बीच पूजा और कलियुग के बीच हरि नाम कीर्तन।'[1]

गुरु रविदास जी का बन्द नंबर 1 विष्णु पुराण के सलोक से अक्षर अक्षर मिलता है। इससे स्पष्ट हो जाता है, कि गुरु रविदास जी संस्कृत के जाने-माने

1. महान कोश - पृष्ठ : ७५६

विद्वान थे। विष्णु पुराण के सलोक से बन्द नंबर 2 का मिलना इत्तफाक ही नहीं है बल्कि यह बात सुनिश्चित है कि जब गुरु जी ने प्रथम बन्द की रचना की थी, उस समय उन्होंने हिंदू धर्म के संस्कृत ग्रंथों का गहन अध्ययन किया था और बन्द नंबर 1 का सृजन करने के लिए उन्होंने विष्णु पुराण के उपरोक्त सलोक को ही चुना था। इससे स्पष्ट है कि बन्द नंबर 1 का सृजन करते समय विष्णु पुराण का उपरोक्त सलोक उन्होंने अपने सामने रखा हुआ था, फर्क केवल बन्द नंबर 1 के सतु की जगह पर पुराण में ध्यान शब्द दर्ज है। ध्यान का अर्थ ख्याल, चिंतन भी है, अर्थात् ज्ञान प्राप्ति है। ध्यान के बारे में ऊपर चर्चा की जा चुकी है, जिसके अनुसार सतु के अर्थ दान प्राप्त होते हैं। इसलिए ध्यान का उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति ही है और ज्ञान प्राप्ति ब्राह्मण के दान आदि छः कर्मों को निभाने के लिए ज़रूरी है। इस तरह गुरु जी का बन्द नंबर 1 और विष्णु पुराण का सलोक एक ही हैं–

पहली तुक

क)	ध्यायनकृते	(क)	सतियुग
ख)	यजन्यज्ञौस्त्रैयां	(ख)	तेता युग
ग)	द्वापरेडर्चयन।	(ग)	द्वापर पूजा चार

दूसरी तुक

क)	यदाप्रोति तदाप्रोति।	(क)	तीनों युग तीनो दिड़े
ख)	कलौ श्री राम कीर्तनात	(ख)	कलि केवल नाम आधार।।

सिद्ध हो गया है कि विष्णु पुराण का सलोक और गुरु रविदास जी की बन्द नंबर 1 के संपूर्ण रूप में हर पक्ष में समरूपता है। इस परिणाम से यह भी स्पष्ट हो गया है, कि '**कलि केवल नाम आधार**' हिंदू धर्म ग्रंथों की विचारधारा से संबंधित है और इसका अर्थ है कलयुग में ईष्ट प्राप्ति केवल श्री राम और श्री कृष्ण अर्थात् अवतार पूजा अर्थात मूर्ति पूजा से ही संभव है।

इस तरह विष्णु पुराण की सहायता से यह स्पष्ट हो गया है, कि बन्द नंबर 1 में हिंदू धर्म के चार युगों की विचारधारा और धर्म कर्म पर ही विचार किया गया है।

इसलिए जो विद्वान 'कलि केवल नाम अधार' का अर्थ केवल नाम का ही 'आसरा है या कलियुग के बीच परमेश्वर प्राप्ति का मुख्य साधन नाम है' करते हैं, उनके यह अर्थ गलत हैं और दो रुकावटों को उत्पन्न करते हैं –

1. यह अर्थ मानने से हिंदू धर्म का दर्शन अधूरा रह जाता है।

2. 'रहाउ' की बन्द नंबर 1 के अर्थों से टकराब पैदा हो जाता है। इसलिए इन विद्वानों के अर्थ सही नहीं है।

डॉक्टर साहब सिंह इस तुक के अर्थों को एक और दृष्टिकोण से गुरु ग्रंथ साहब का उदाहरण देकर स्पष्ट करते हैं –

इसी तरह गुरु रविदास जी 'कलि केवल नाम अधार' में अपना मत नहीं बता रहे। वे तो यह बात कह कर आगे साथ ही कहते हैं कि–

पारु कैसे पाइबो रे॥
मो सउ कोऊ न कहै समझाइ॥
जा ते आवा गवनु बिलाइ॥१॥ रहाउ॥

तब तो रविदास जी के विचार अनुसार यह 'नाम आधार' ऐसा नहीं है 'जा ते आवागमन बिलाई।।'

तो फिर जिन लोगों ने युगों का बंटवारा करके 'कलि केवल नाम आधार' कहा है, उन्होंने यहां नाम को क्या समझा था? और गुरु रविदास जी क्यों इसकी निन्दा करते हैं?

इस प्रश्न का सही उत्तर ढूंढने के लिए भैरव राग में कबीर जी के एक शब्द से सहायता मिलती है, शब्द नंबर 1 में कबीर जी मुल्लां, काजी, सुलतान जोगी और हिंदू का ज़िक्र करते हुए अन्तिम बन्द में लिखते हैं–

जोगी गोरखु गोरखु करै।।
हिंदू राम नामु उचरै।।
मुसलमान का एकु खुदाइ।।
कबीर का सुआमी रिहआ समाइ।।४।।३।।११।।

यहां कबीर जी जोगी, हिंदू और मुसलमान के कल्पित किए हुए ईष्ट परमात्मा की निन्दा करते हैं और अपने स्वामी के बारे में कहते हैं, कि वह 'रहिआ समाई' 'रहाउ' में भी अपने स्वामी के बारे में लिखते हैं कि–

'है हजूरि कत दूरि बतावहु।।
दुंदर बाधहु सुंदर पावहु।।'

(**नोट** – इस शब्द की 'घुंडी' को विस्तार पूर्वक समझने के लिए भैरव राग के बीच इस शब्द से लिखा मेरा नोट पढ़ो।)

कबीर जी हिंदुओं के जिस राम नाम की निन्दा कर रहे हैं, उसी नाम आधार

के सन्दर्भ में रविदास जी कहते हैं –

'पारु कैसे पाइबो रे ॥'

इसलिए राम नाम कौन सा है? यह है, 'अवतारी राम का नाम', यह है अवतार भक्ति। शास्त्रों के बंटवारे के अनुसार दान आदि सतयुग का धर्म, यज्ञ त्रेता का धर्म, देवताओं की पूजा द्वापर का धर्म तथा अवतार भगति 'मूर्ति पूजा' कलयुग का धर्म है, परंतु गुरु रविदास जी लिखते हैं कि यह चारों ही धर्म कमाने से –

प्रेम भगति नही ऊपजै
ता ते रविदास उदास ॥८ ॥१ ॥[1]

इसलिए यह दृढ़ हो गया है कि 'कलि केवल नाम आधार' के सही अर्थ हैं, कलियुग में केवल श्री राम, श्री कृष्ण की पूजा अर्थात् अवतार पूजा अर्थात् मूर्ति पूजा है।

उपरोक्त चर्चा से भलीभांति स्पष्ट हो गया है कि,

1. गुरु रविदास जी ने बड़ी गहराई से वेद आदि शास्त्रों का अध्ययन किया है और बड़ी सरलता से हिंदू धर्म के युगों के सार तत्वों को इस शब्द के बन्द नंबर 1 में गागर में सागर भर कर स्पष्ट किया है इस से यह भी सिद्ध हो गया है, कि वे संस्कृत के जाने-माने विद्वान हुए हैं।

2. यह करिश्मा गुरु रविदास जी के गहन ज्ञान महान प्रतिभा और अद्भुत शैली का ही कमाल है कि उन्होंने एक ही बन्द में आदि से लेकर अंत तक हिंदू धर्म की विचारधारा को रद्द कर दिया है।

बन्द नंबर 1 के उपरोक्त अर्थ करने से 'रहाउ' के बीच के अर्थों का विरोध भी खत्म हो गया है। चारों युगों की विचारधारा भी संपूर्ण हो गई है और यह भी स्पष्ट हो गया है कि हिंदू धर्म के चार युगों की विचारधारा और धर्म कर्म के साथ प्रभ प्राप्ति नहीं हो सकती है। इस कारण गुरु रविदास जी निराशा व्यक्त करते हुए 'रहाउ' के बीच फरमाते हैं कि, हे दुनिया के लोगो! आप मुक्ति प्राप्त किस प्रकार करोगे, आप तो चौरासी के चक्कर में से किस प्रकार निकलोगे? इस बारे कोई समझा कर नहीं बताता है।

बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि, हिंदू धर्म के शास्त्रों के

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण – पृष्ठ १०२४-१०२५

अनुसार हर युग के अलग-अलग धर्म कर्म हैं। 'वहु विधि धर्म निरूपये' के बारे में, गुरु रविदास जी का कथन है, कि जिसको प्रथम बन्द में व्याख्या सहित विचार किया गया है, कि इस बन्द नंबर 2 की पहली तुक के बीच और स्पष्ट कर दिया गया है कि, इस धर्म कर्म को सारी दुनिया करती नज़र आ रही है परंतु गुरु रविदास जी प्रश्न करते हैं कि, अनेकों कर्मों के बीच कौन कर्म किया जाए, जिस के साथ प्रभ प्राप्ति हो सकती है? गुरु जी समझाते हैं, कि हिंदू धर्म के अनुसार धर्म कर्म कर के प्रभ नहीं मिल सकता, क्योंकि इन अनगिनत कर्मों से स्पष्ट नहीं होता है कि, कौन से कर्म करने से मुक्ति मिल सकती है? इसी कारण गुरु जी ने चारों युगों की विचारधारा और धर्म कर्म को रद्द किया है।

बन्द नंबर 1 और 2 में पूर्ण तौर से आदि से ले कर अंत तक कि हिंदू धर्म की विचारधारा और धर्म कर्म को रद्द किया गया है। बन्द नंबर 3 और 4 में उपरोक्त हिंदू धर्म की रद्द की गई विचारधारा और धर्म कर्म में से गुरु रविदास जी ने सबसे अधिक मानव विरोधी विचारधारा और धर्म कर्म की निन्दा करके उसका उल्लेख किया है और अलग तौर से इसका खंडन भी किया है।

इसलिए बन्द नंबर 3 में वर्णाश्रम अर्थात् जात पात और छुआछूत पर गुरु रविदास जी ने शक्तिशाली हमला करके इस को जड़ से उखाड़ दिया है। उन्होंने हिंदू धर्म के ग्रंथों का गहन अध्ययन करके वर्णाश्रम को हिंदू धर्म का मूलभूत स्तंभ माना है। इसलिए वर्णाश्रम आधारित हिंदू धर्म की विचारधारा मनुष्य के लिए सबसे अधिक घातक और घिनौनी विचारधारा है। किसी एक ईष्ट को पूजने के लिए ब्राह्मण के लिए और धर्म कर्म हैं, क्षत्रिय के लिए और, और वैश्य के लिए और धर्म कर्म हैं, परंतु शूद्र को ईष्ट पूजने के लिए कोई भी धर्म कर्म निश्चित नहीं किया गया है।

कारण – हिंदू धर्म ग्रंथों के अनुसार शूद्र ईष्ट की पूजा ही नहीं कर सकता, फिर धर्म-कर्म निश्चित करने की ज़रूरत ही नहीं थी? वह केवल सेवा करे – ईष्ट की नहीं, ऊपर के तीनों वर्गों की। इससे बड़ा खतरनाक मानव विरोधी जुल्म दुनिया के किसी अन्य धर्म में नहीं मिलता है।

यह मानव विरोधी हमला और भी भयानक और अत्याचारी हो जाता है, जब हिंदू धर्म 'अकर्म' अर्थात् वर्जित कर्मों की बात करता है। शूद्र के लिए वर्जित धर्म-कर्म इस प्रकार हैं – वह प्रभ प्राप्ति के लिए भक्ति नहीं कर सकता, भक्ति करने की सजा मौत है। महर्षि शंभूक के कत्ल का उदाहरण ही इस सजा

को प्रभावित करने के लिए काफी है, वेद नहीं पढ़ सकता है, इस की कोताही करने पर जीभ काटी जाती है, वेद नहीं सुन सकता, जिस की कोताही करने के कारण कानों में सिक्का ढाल कर डाल दिया जाता है। वह विद्या नहीं पढ़ सकता है, मंदिर नहीं जा सकता है और तो और हज़ारों ऐसे दिल दहला देने वाले जुल्म हिंदू धर्म में दर्ज हैं। इस कारण गुरु रविदास जी ने ऐसे घिनौने खतरनाक और मानव विरोधी जुल्मों का अन्त करने के लिए वेद और पुराणों के सारे धर्मों कर्मों को रद्द कर दिया है अर्थात् हिंदू धर्म की खतरनाक मानव विरोधी विचारधारा को सिरे से ही रद्द कर दिया है और स्पष्ट किया है कि वेदों और पुराणों से पूर्ण तौर से विचार करने के बाद परिणाम निकलता है, कि वेदों और पुराणों को सुन कर और इन के अनुसार कर्म अकर्म पर विचार कर, धर्म-कर्म करने से प्रभ प्राप्ति की जगह गिरावट ही पल्ले पड़ती है। शक, संशय और भ्रम ही उत्पन्न होते हैं। वेदों, पुराणों की विचारधारा अहंकार को मिटाने में समर्थ नहीं है बल्कि इसका पालन करने से अहंकार और जुल्म करने की भावना बढ़ती और तीव्र होती है। इसलिए गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि, वेदों और पुराणों की विचारधारा शुरू से ही मानव विरोधी और जुल्म पैदा करने वाली है। इसीलिए वे शक्तिशाली दलीलें दे कर इस विचारधारा का खंडन करते हैं और प्रश्न करते हैं, कि हिंदू धर्म की विचारधारा तो प्रभ मिलाप की समर्थक नहीं है और न ही अहंकार को काबू करने का साधन बन सकती है, फिर अहंकार को किस प्रकार काबू किया जाए?

गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 4 में स्पष्ट किया है कि, तीर्थों का स्नान हाथी के स्नान की तरह है, जिस स्नान के बाद हाथी अपने सिर पर मिट्टी डाल लेता है, इसी तरह जीव स्नान करने के बाद तुरंत पूरे ज़ोर-शोर से बुरे कर्मकांड करने में जुट जाता है। कारण- स्नान करने से मन तो पवित्र नहीं होता है, विकार ज्यों के त्यों मन में कायम रहते हैं। विकार स्नान करने के बाद बल्कि पहले से अधिक पैदा होते हैं क्योंकि स्नान करने से हिन्दू को पवित्रता का Certificate मिल जाता है और जीव इस की आड़ में और अधिक से अधिक ज़ोर लगा कर बड़े जोश से बुरे कर्मों द्वारा पापों को फैलाना आरंभ कर देता है। गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि फिर ऐसे दिखावे वाले स्नान आदि कर्म से शुद्ध किस प्रकार हुआ जा सकता है?

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट होता है कि, गुरु रविदास जी ने हिंदू धर्म की मानव विरोधी विचारधारा का आदि से लेकर अंत तक हर तरफ से खंडन किया है। इस की जगह वे बन्द नंबर 5 से 8 तक अपनी वैज्ञानिक सर्व प्रमाणित और सब के भले के लिए एक नई विश्वव्यापी विचारधारा का सृजन कर के नए विश्व धर्म का सृजन करते हैं।

बन्द नंबर 5 में गुरु रविदास जी अपनी विचारधारा देते हुए स्पष्ट करते हैं कि प्रभ प्राप्ति के लिए गुरु की आवश्यकता है मगर वह गुरु ब्रह्मज्ञान से भरपूर हो कर साधक को प्रभ से मिलाने का काम करे। इस तथ्य को गुरु जी स्पष्ट करते हैं, कि जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश घनी अंधेरी रात को आंख के झपकने मात्र से ही प्रकाशमान कर देता है, जिस तरह पारस के साथ छूते ही तांबे को सोने में बदलने में देर नहीं लगती है, उसी तरह परम श्रेष्ठ गुरु अर्थात् ब्रह्म गुरु के आगे तन और मन अर्पण करते ही मनुष्य, ब्रह्मप्रकाश, ब्रह्मज्ञान से प्रकाशमान हो कर, ब्रह्म की तरह ही हो जाता है, इस अटल सच्चाई को सारी दुनिया जानती है।

यह गुरु रविदास जी की विचारधारा का पहला सिद्धांत है। प्रभ प्राप्ति के लिए गुरु की ज़रूरत है और गुरु भी ऐसा हो जिसके आगे तन-मन अर्पण करते ही, जिस के छूने मात्र से ही अर्थात् जिस की अगुवाई से प्रभ प्राप्ति के द्वार खुल जाते हैं। सूर्य के प्रकाश की तरह गुरु का ज्ञान भी विश्वव्यापी सरबत के भले वाला और माया के सारे विकारों का सर्वनाश करने वाला है।

अगली बन्द नंबर 6 में स्पष्ट करते हैं कि, परम पारस गुरु अर्थात् ब्रह्म गुरु तो प्राप्त ही तब होता है, यदि मनुष्य अपने इसी जन्म के बीच गुरु को मिलने के लिए क्रियाशील है और इस उद्देश्य के लिए प्रयास कर रहा हो। 'पूर्व लिखित लिलाट' का अर्थ हरगिज पिछले जन्म के कर्मों की किस्मत नहीं है। यह गुरु की प्राप्ति पिछले जन्म के कर्मों के आधार पर आधारित है, तो मनुष्य के लिए प्रभ को मिलने के लिए कोशिश करने का कोई अर्थ ही नहीं रहता है।

दूसरे, यदि पिछले जन्म के अनुसार मनुष्य ने कर्म करने हैं तो फिर एक बार किए बुरे कर्म कभी भी धोये नहीं जा सकेंगे, क्योंकि किसी भी जन्म में पूर्व जन्म के कर्म उसका पीछा नहीं छोड़ेंगे, फिर गुरुवाणी या गुरु की क्या ज़रूरत है? जब चौरासी का चक्कर समाप्त ही नहीं होगा, इसलिए 'पूर्व लिखित लिलाट' का अर्थ है- इसी जन्म के बीच किये गए कार्य, जन्म से लेकर आज तक के

कर्मों के कारण बनी किस्मत। इन अर्थों का समर्थन गुरु रविदास जी के कई शब्दों में हो जाता है। वह तो मनुष्य जन्म को बिल्कुल पवित्र और पुण्य फल अर्थात् पुण्य के कर्मों के परिणाम स्वरूप स्पष्ट करते हैं। वह तो मनुष्य जन्म को 'मनुखा अबतार दुर्लभ' मनुष्य का अवतार दुलभ कहते हैं अर्थात् मनुष्य का जन्म अवतार अर्थात् पवित्र है। इस कारण इस पवित्र मनुष्य जन्म चौरासी लाख योनियों के बीच दुलभ है अर्थात् यह बड़ी मुश्किल से प्राप्त होता है। इस चर्चा से दृढ़ हो जाता है, कि मनुष्य के जन्म से ही पूर्व कर्म नहीं जुड़े हुए होते हैं बल्कि जन्म के समय मनुष्य बिल्कुल पवित्र और साफ मन होता है। इसलिए जन्म के पीछे जो भी कर्म करता है, वही उस की किस्मत बनती है।

इसीलिए गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि उस जन्म के शुरू से अब तक के किए गए कर्म अर्थात् इस जन्म के पूर्व कर्म जो मस्तक पर लिखे जाएं अर्थात् स्वीकार हो जाएं तो ब्रह्म गुरु की प्राप्ति अर्थात् गुरु की ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति होती है और फिर गुरु की कृपा से मन संसार की ओर निर-संकल्प होकर अर्थात् माया से मुक्त होकर वापस आंतरिक मन के साथ आ जुड़ता है, तो मन के द्वार खुल जाते हैं अर्थात् प्रभ प्राप्त हो जाता है।

इससे अगले बन्द नंबर 7 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि इस ढंग से ब्रह्म गुरु के ब्रहम ज्ञान 'युक्ति' को क्रियात्मक (Practical) रूप में उपासना 'भक्ति' से स्पष्ट कर के भ्रम शास्त्रों के बंधन और माया के सब प्रकार के विकार नष्ट हो जाते हैं और निरंतर अंत:करण (मन) के विचार (मति) पवित्र (सति) हो गए हैं। इस कारण प्रभ का अमृतमय आनंद मन के बीच बस गया हैं। अब इस को एकमात्र प्रभ का ब्रहम ज्ञान मन में रह गया है।

यह दूसरा सिद्धांत है, जिस विधि के साथ प्रभ प्राप्त किया जा सकता है। ज्ञान की उपासना द्वारा अमली रूप में प्रतिदिन के कामों में इसका प्रयोग ज़रूरी है।

इसलिए बन्द नंबर 6 में प्रभ प्राप्ति के लिए सिद्धांत बताया गया है और सातवें में बन्द में इस सिद्धांत को अमल क्रियात्मक रूप में लाकर प्रभ प्राप्ति की विधि द्वारा प्रभ प्राप्ति स्पष्ट की गई है।

गुरु रविदास जी अंत में बन्द नंबर 8 में और स्पष्ट करते हैं कि उपरोक्त विधि के बिना प्रभ प्राप्ति संभव नहीं है। वह स्पष्ट करते हैं, कि मैं ब्रह्म गुरु के ब्रह्म ज्ञान के बिना और हिंदू धर्म शास्त्रों के अनुसार हट कर मन को ब्रह्म बंधनों और

विकारों से रोकने के अनेक प्रयत्न किए परंतु मन इन से मुक्त नहीं हो सका। इन हिंदू धर्म के ग्रंथों से पूर्व प्राप्ति के लिए प्रभ के साथ प्रेम की उत्पत्ति नहीं होती है, इसी कारण मैं (रविदास) उदास हूं।

इस तरह गुरु रविदास जी नये विश्व धर्म की नई विश्वव्यापी विचारधारा की उत्पत्ति हुई है, जिस में एक प्रभ की उपासना है। गुरु के ज्ञान से उपासना करके प्रभ प्राप्ति की जा सकती है। हिंदू धर्म ग्रँथ और शास्त्रों से प्रभ प्राप्ति बिल्कुल नहीं हो सकती है।

शब्दार्थ-गुरु रविदास जी फरमाते हैं, कि हिंदू धर्म ग्रंथों और शास्त्रों के अनुसार सतयुग में ईष्ट को खुश करने के लिए दान, त्रेता युग में यज्ञ और पशु बलि, द्वापर युग में देवताओं की पूजा और कलियुग में केवल श्री राम, श्री कृष्ण आदि अवतारों की अर्थात् मूर्ति पूजा आदि हर एक युग के लिए अलग-अलग धर्म कर्म ज़रूरी है।

इस कारण गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि उपरोक्त हिंदू धर्म के धर्म कर्मों से प्रभ प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसी कारण हिंदू धर्म की विचारधारा और धर्म कर्म को रद्द करके प्रश्न करते हैं, कि मैं इस भवसागर से पार किस प्रकार हो सकता हूं? मुझे कोई भी यह समझा कर स्पष्ट नहीं कर रहा है कि चौरासी लाख योनियों के चक्कर में से मेरा पार उतारा किस प्रकार होगा।।१।। रहाउ।।

हिंदू धर्म ग्रंथों और शास्त्रों के अनुसार अनेकों विधियों द्वारा हर युग के लिए अलग-अलग धर्म कर्म निश्चित किए गए हैं, जिन को संसार के लोग करते आ रहे हैं, परंतु गुरु रविदास जी प्रश्न करते हैं, कि ऐसे कौन से कर्म को साधा जाये अर्थात् कौन से कर्मों के अनुसार भक्ति की जाए? जिस से मुक्ति प्राप्त हो सके?।।२।।

गुरु रविदास जी फरमाते हैं, कि यहां ही बस नहीं, हिंदू धर्म ग्रंथ और शास्त्र हर युग का अलग-अलग धर्म कर्म तो निश्चित करते ही हैं, वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के लिए भी धर्म कर्म निश्चित करते हैं, जिन के बीचो-बीच पुराण कुछ कर्म करने की अनुमति देते हैं और कुछ कर्म करने को वर्जित करते हैं, जिस कारण वेदों-पुराणों आदि को सुन कर शंका और भी बढ़ जाती है और भ्रम और विकार मन में और गहरे हो जाते हैं। इसी कारण गुरु जी प्रश्न करते हैं, कि वेदों पुराणों को सुन कर तो भ्रम और विकार मन में सदा के लिए टिक जाते हैं। अब इन से पैदा हुए अहंकार और अभिमान को मन से किस प्रकार दूर किया जा सकता है।।३।।

हिंदू धर्म के कर्मकांडों को रद्द करने के पीछे गुरु जी तीर्थों के स्नान को रद्द करते हुए फरमाते हैं, कि तीर्थों का स्नान तो हाथी के स्नान की तरह ही है, जो स्नान के बाद सिर के ऊपर मिट्टी डाल लेता है। इसी तरह मनुष्य स्नान के बाद झटपट ही पूरे ज़ोर-शोर से विकारी कर्मों में जुट जाता है। कारण - स्नान करने

से मन तो पवित्र हुआ नहीं, मन में तो उसी तरह ही विकार विकसित हो रहे हैं। इस कारण गुरु जी प्रश्न करते हैं, कि फिर ऐसे दिखावे के स्नान आदि कर्मों से पवित्र किस प्रकार हुआ जा सकता है।।४।।

अब गुरु रविदास जी अपना मत आरंभ करते हैं और फरमाते हैं कि, सारी दुनिया जानती है कि जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश घनी अंधेरी रात को आंख के झपकते मात्र ही प्रकाशमान कर देता है, जिस प्रकार पारस के साथ छूते ही तांबा सोना बनने में ज़रा भी ढील नहीं करता है, उसी तरह परम गुरु अर्थात् ब्रह्म गुरु के आगे तन और मन अर्पण करते ही मनुष्य उस के ज्ञान प्रकाश से प्रकाशमान हो जाता है। इस अटल सच्चाई को सारी दुनिया जानती है।।५।।

गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि परम पारस गुरु अर्थात् ब्रह्म गुरु तो प्राप्त ही तब होता है, यदि मनुष्य अपने इसी जन्म में ही गुरु को प्राप्त करने के लिए क्रियाशील हो और इस उद्देश्य के लिए प्रयास भी करता हो, इसी जीवन में पूर्व के कर्म जो माथे के ऊपर लिखे जाएं और स्वीकार हो जाएं, तो गुरु की प्राप्ति के साथ मन संसार से निर-संकल्प होकर अर्थात् माया से मुक्त हो कर फिर आंतरिक मन के साथ आ जुड़ता है, तब मन के द्वार खुल जाते हैं अर्थात् प्रभ प्राप्ति हो जाती है।।६।।

इस तरह ब्रह्म गुरु की ब्रह्म ज्ञान 'युक्ति' को उपासना (भक्ति) के साथ स्पष्ट करके भ्रम शास्त्रों के बंधन और माया के विकार सब नष्ट हो जाते हैं और प्रभ का अमृतमय आनंद मन में बस गया है। अब केवल एक प्रभ का ब्रह्म ज्ञान मन में रह गया है।।७।।

परन्तु हिंदू धर्म के ग्रंथों-शास्त्रों के अनुसार हट कर मन को विकारों से रोकने के अनेक प्रयास किए गए परंतु मन ब्रह्म शास्त्रों के बंधनों और माया के विकारों से मुक्त न हो सका और न ही प्रभ प्राप्ति के लिए प्रेम भक्ति की उत्पत्ति हो सकी। इसी कारण ही मैं (रविदास) उदास हूं, परंतु मैं ब्रह्म गुरु के ब्रह्म ज्ञान के साथ प्रभ प्राप्त कर लिया है।।८।।

''ੴ सतिनामु करता पुरख निरभउ निरवैर
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि।।
राग आसा बाणी भगतां की
कबीर जीउ नामदेव जीउ रविदास जीउ।।''[1]

शब्द - 7

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की

ੴ सतिगुर प्रसादि

म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर
एक दोख बिनास॥
पंच दोख असाध जा महि
ता की केतक आस॥१॥
माधो अबिदिआ हित कीन॥
बिबेक दीप मलीन॥१॥ रहाउ॥
त्रिगद जोनि अचेत
संभव पुंन पाप असोच॥
मानुखा अवतार दुलभ
तिही संगति पोच॥२॥
जीअ जंत जहा जहा लगु
करम के बसि जाइ॥
काल फास अबध लागे
कछु न चलै उपाइ॥३॥
रविदास दास उदास तजु भ्रमु
तपन तपु गुर गिआन॥
भगत जन भै हरन
परमानंद करहु निदान॥४॥१॥[2] **(पृष्ठ ४८६)**

1. आदि ग्रन्थ -पृष्ठ : ४७५ 2. वही - पृष्ठ : ४८६

पद अर्थ = **मृग**=हिरण। **मीन**=मछली। **भृग**=भौरा। **पतंग**=भंबट। **कुंचर**=हाथी।

1. हिरण को घंडे हेड़े का नाद सुनने का रस, कान रस।
2. मछली को जीभ का स्वाद, जीव रस।
3. भौंरे को फूल सूंघने का रस।
4. भंबट का दीए के ऊपर जल मरना, आंखों से देखने का रस, रूप रस, आंख रस।
5. हाथी को कामवासना का रस।

असाध=काबू न आने वाला।।१।।

माधो=प्रभ। **अबिदीया**=अज्ञानता। **विवेक**=वस्तु का ठीक-ठीक स्वरूप निश्चित करना, विचार। **मलिन**=मंद।।१।। रहाउ।।

त्रिगद=पशु, पक्षी, बेलें, वृक्ष आदि और अंडज से पैदा होने वाले जीव, मनुष्य को छोड़कर बाकी सब जीव जंतु त्रिगद जून हैं। **अचेत**=जड़मति, मोटी अकल। **असोच**=सोचनहीन, विचार हीन। **अवतार**=मनुष्य का जन्म सर्वगुण संपन्न है। **दुलभ**=अमूल्य (इस शब्द का प्रयोग मन के सर्वगुण संपन्न होने की गवाही है) **नीच**=पांच विकार।।२।।

करम=किए गए काम। **जाई**-जन्म लेकर। **काल फास**=शारीरिक मौत, आत्मिक मौत। **अवध**=काटी न जाने वाली, जो नाश न हो सके।।३।।

उदास=विकारों से उपराम। **निदान**=अंत, बेसमझ।।४।।१।।

गुरु रविदास जी तथा मूल मंत्र

राग आसा में 'भगतां की वाणी' आरंभ होने से पहले पूरा मूल मंत्र दर्ज है, जिस के साथ तीन ब्रह्मज्ञानी चिंतकों के नाम दर्ज हैं।

"ੴ सतनाम कर्ता पुरख निरभउ निरवैर अकाल मूरति
अजूनी सैभं गुरु प्रसादि।। राग आसा वाणी भगतां की
कबीर जीऊ, नामदेव जीऊ, रविदास जीऊ।।
आसा श्री कबीर जीउ।।'"[1]

राग आसा के बीच इस मूल मंत्र के सृजन ने समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित मूल मंत्र की रिवायत को पूरी तरह तोड़ दिया है। गुरु ग्रंथ साहिब की रिवायत गौड़ी और आसा राग में नीचे लिखे अनुसार है।

राग गौड़ी :

1. पहले पूरा मूल मंत्र दर्ज है, फिर
2. राग गौड़ी गुआरेरी महला १ दिया है।[2]

राग आसा :

(उ) 1. पहले पूरा मूलमंत्र दर्ज है, फिर
2. 'राग आसा महला १' दिया है।[3]

(अ) 1. पहले पूरा मूल मंत्र दर्ज है, फिर
2. 'आसा महला' १ दिया है।[4]

उपरोक्त राग गौड़ी और राग आसा के बीच परम्परा इस तरह स्पष्ट हुई है, कि पहले पूरा मूल मंत्र आता है, फिर राग का नाम और फिर सृजनहार का नाम दर्ज किया है। गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज सारे रागों के बीच मूल मंत्र की इस तरह की ही परम्परा है।

परन्तु राग आसा के बीच पृष्ठ नंबर 475 'भगतां की वाणी' के आरंभ में अंकित मूल मंत्र की परम्परा उपरोक्त परम्परा से बिल्कुल ही भिन्न है।

1. पहले मूल मंत्र दर्ज है, फिर

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४७५ 2. वही - १५१ 3. वही - ३४७ 4. वही - ४६२

2. 'राग आसा वाणी भगतां की' दर्ज है, फिर

3. तीन नाम दर्ज हैं - कबीर जीऊ, नामदेव जीऊ, और गुरु रविदास जीऊ, और फिर

4. ''आसा श्री कबीर जीउ'' दर्ज है।

उपरोक्त दिए गए राग गौड़ी का एक मूल मंत्र पृष्ठ 151 और राग आसा के पन्ना 367 और 462 पर अंकित दो मूल मंत्रों की रिवायत नंबर 1 और 2 के साथ पृष्ठ नंबर 475 पर भगतां की वाणी के आरंभ में आसा राग के बीच दर्ज मूल मंत्र की उपरोक्त रिवायत नंबर 1 और नंबर 4 में कोई अन्तर नहीं है, परन्तु पृष्ठ नंबर 475 के मूलमंत्र में दो और महत्वपूर्ण नुक्ते नंबर 2 और नंबर 3 उजागर होते हैं। इस समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित मूलमंत्रों की परम्परा से भिन्न है। इस से परिपक्वता के साथ स्पष्ट हो गया है, कि नुक्ता नंबर 2 और 3 की तरह गुरु नानक देव जी या किसी अन्य महापुरुष का नाम मूलमंत्र के साथ अंकित नहीं है।

फिर 'भगतां की वाणी' के आरंभ में गुरु ग्रंथ साहब का पृष्ठ नंबर 475 वाला मूल मंत्र क्यों अलग है? जब कि गुरु नानक देव जी या किसी अन्य महापुरुष का नाम इस तरह मूल मंत्र के साथ अंकित नहीं है, फिर गुरु कबीर जी, गुरु नामदेव जी और गुरु रविदास जी का नाम मूल मंत्र के साथ क्यों अंकित है? क्योंकि

1. गुरु अर्जन देव जी ने गुरु कबीर जी, गुरु नामदेव जी और गुरु रविदास जी को ब्रह्मज्ञानी चिंतक प्रदान किया है,

2. गुरु अर्जन देव जी ने इन महापुरुषों का मूल मंत्र के साथ गहरा संबंध निश्चित किया है।

3. इस तथ्य से संयुक्त वार्ता और गुरुभाई, भाईचारे का संकल्प स्पष्ट होता है।

विद्वान खोजियों के लिए खोज का अति महत्वपूर्ण तथ्य यह है, कि जिस विलक्षणता के साथ इन-तीन ब्रह्मज्ञानी चिंतकों का नाम पृष्ठ नंबर 475 वाले मूलमंत्र में अंकित है समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में इस ढंग से किसी भी अन्य ब्रह्मज्ञानी चिंतकों का नाम मूलमंत्र के साथ अंकित नहीं किया गया है, ऐसा क्यों? यह विचार उभर कर स्पष्ट परिपक्व हो गया है, कि गुरु अर्जन देव जी ने 'भगतां की वाणी' के, वाणीकारों में से केवल इन तीनों को ब्रह्मज्ञानी चिंतकों

का दर्जा दिया है, चाहे गुरु अंगद देव जी और गुरु अमर दास जी की वाणी के साथ समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में पूरा मूल मंत्र अंकित नहीं किया गया है परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह ब्रह्मज्ञानी नहीं हैं। वे हर हालत में ब्रह्मज्ञानी हैं। 'भगतां की वाणी' में से ब्रह्मज्ञानी चिंतकों के तौर पर मान्यता इस कारण विलक्षण है, क्योंकि पंजाब के गुरु साहिबान के बिना और गुरु कबीर जी, गुरु नामदेव जी और गुरु रविदास जी के बिना अन्य कोई ब्रह्मज्ञानी चिंतक नहीं है। हां बाकी सारे ब्रह्मज्ञानी ज़रूर हैं।

दूसरे, गुरु नानक देव जी से गुरु तेग बहादुर जी तक इन सभी महापुरुषों ने अपनी वाणी नानक के तहत सृजित की है, इस का अर्थ है कि गुरु नानक देव जी की ज्योति ही गुरु तेग बहादुर जी तक विचरण करती है। इसलिए परिणाम स्पष्ट है कि गुरु नानक देव जी के ब्रह्म ज्ञानी चिंतक होने से गुरु तेग बहादुर जी तक सभी गुरु साहिबान ब्रह्मज्ञानी चिंतक हैं परंतु यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि यह 'भगतां की वाणी' के चयनकर्ताओं पर लागू नहीं होता है। सभी ने अपने-अपने नाम के तहत वाणी का सृजन किया है। इस कारण यह गुरु अर्जन देव जी, गुरु कबीर जी, गुरु नामदेव जी और गुरु रविदास जी को ब्रह्म ज्ञानी चिंतक स्वीकार करते हैं, तो इस का हर हालत में यह अर्थ नहीं कि गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान शेष भगतां की वाणी के सृजनहार भी ब्रह्म ज्ञानी चिंतक ही हैं, वे निश्चय ही ब्रह्मज्ञानी चिंतक नहीं हैं बल्कि केवल ब्रह्मज्ञानी हैं। यह तथ्य एक और नुक्ते से ही साबित हो जाता है कि सतगुरु कबीर जी, सतगुरु नामदेव जी और सतगुरु रविदास जी के बिना बाकी सभी ब्रह्मज्ञानी जिनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में 'भगतां की वाणी' के सुरलेख के तहत दर्ज है। चार से अधिक शब्द किसी के भी दर्ज नहीं हैं। इन के साथ मूलमंत्र के बीच सृजित ब्रह्म के स्वरूप को पूर्ण रूप में नहीं सृजित किया जा सकता है। इसी कारण इन का नाम मूल मंत्र के साथ अंकित नहीं किया गया है।

इस तरह गुरु अर्जन देव जी ने तीन महान ब्रह्मज्ञानी चिंतकों के नाम मूलमंत्र के साथ अंकित करके ब्रह्म के स्वरूप के सृजन को सांझी रंगत देकर गुरु भाई, भाईचारे को साहस और स्पष्टता प्रदान की है।

इसलिए हम राग आसा के गुरु रविदास जी के पहले शब्द के आरंभ में पूरा मूलमंत्र दे रहे हैं, क्योंकि पूरे मंत्र के साथ गुरु रविदास जी का नाम अंकित है।

शब्द में सिद्धांतों का सृजन

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में अटल सच्चाईयों को निरूपित किया है, इन का वैज्ञानिक आधार होने के कारण ये अटल सिद्धांत ही हैं।

1. त्रिगद जूनों में केवल एक एक विकार है। इस एक के साथ ही उन का नाश हो जाता है, परंतु मनुष्य में तो यह असाध्य पांचों विकार हैं, जिन से बचना संभव नहीं है।
2. मनुष्य के विकारों में फंसने का कारण मनुष्य की मंदबुद्धि के कारण सोच विचार से काम न लेना है, जिस कारण वह अपने-आप ही जान बूझकर अज्ञानता के बीच जा फंसता है।
3. मनुष्य जन्म के समय ही वह सारे गुण धारण करके संसार में आता है, जो ब्रह्मज्ञानियों के बीच होते हैं। शब्द अवतार का प्रयोग इस तथ्य का प्रमाण है। जन्म का अमूल्य (दुर्लभ) होना ब्रह्मज्ञानी के अस्तित्व की गवाही है परंतु मूर्ख मनुष्य ने जन्म में नीच विकारों का साथ कर के इन गुणों का नाश कर दिया है।
4. मनुष्य विचारों के सहयोग के कारण अपनी जूनें स्वयं तय करता है। यदि वह बुरे कर्म करता है तो बुरी जून में जन्म लेता है। यदि यह मनुष्य अच्छे कर्म करता है तो जूनों से मुक्ति प्राप्त करके प्रभ का सत दरबारी बन जाता है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

शब्द की बन्द नंबर 1 में पांच त्रिगद जूनों का उल्लेख किया गया है; इन त्रिगद जूनों में मनुष्य जीव शामिल नहीं है। शेष सभी योनियाँ शामिल हैं। त्रिगद जूनों में केवल एक-एक विकार है- जिस प्रकार हिरन में कान रस का, मछली में जीवरस का, भ्रमरों में फूल सूंघने का नाक रस, भंवरे का आंखों से देखकर जल मरने का रूप रस और हाथी में काम तृष्णा है। गुरु रविदास जी अटल सच्चाई को प्रकट करते हुए कहते हैं, कि इन त्रिगद जूनों में एक-एक विकार से ही उनका नाश हो जाता है, परंतु मनुष्य के बीच ये पांचों विकार हैं और ये असाध्य हैं, इन के ऊपर काबू पाना बहुत कठिन है।

इसलिए गुरु जी ने अमली रूप में घट रही घटनाओं की गवाही देकर मनुष्य को शक्तिशाली ढंग से सावधान किया है कि इन असाध्य विकारों से उन के लिए बचना अति मुश्किल और दुश्वार है।

'रहाउ' में गुरु रविदास ने मनुष्य को पांचों विकारों में फंसने के कारण बताए हैं। यदि बीमारी के कारण का पता लग जाए तो आधा इलाज उसी समय हो जाता है और बाकी इलाज उस का दवा दारू करने से हो जाता है।

मनुष्य का विकारों में फंसने का कारण मनुष्य का सोच विचार से काम न ले कर मंदबुद्धि का विकसित होना है, जिस कारण मनुष्य अज्ञानी बन जाता है और विकारों में जानबूझ कर फंस जाता है।

यहीं बस नहीं, गुरु जी ने बन्द नंबर 2 में त्रिगद जूनों को तो तर्क से यह कहकर बरी कर दिया है कि यह जूनें तो जड़मति अर्थात् मोटी अक्ल के कारण समझ बूझ से खाली हैं। संभवत: विचारहीन होने के कारण इन को पुण्य और पाप अर्थात् क्या अच्छा है और क्या बुरा है इस का ज्ञान ही नहीं है, परंतु मनुष्य के पास तो सब कुछ है।

इस प्रसंग में गुरु जी ने शब्द अवतार का प्रयोग किया है। अबतार का अर्थ इस प्रसंग के बीच केवल जन्म ही नहीं है, वे तो स्पष्ट करते हैं कि, जन्म के समय मनुष्य सारे गुण धारण कर के इस संसार में आता है, जो केवल ब्रह्मज्ञानी

के बीच ही होते हैं। जन्म का अमूल्य (दुर्लभ) होना ब्रह्मज्ञान के अस्तित्व का बोध और प्रमाण है।

इस तरह शब्द 'अवतार' और 'दुर्लभ के प्रयोग से गुरु जी ने मनुष्य को उस की मौलिक शक्तियों का बोध करवा कर उसको परिपक्व कर रहे हैं कि तेरा जन्म दुर्लभ है, तू ही संसार के बीच जो चाहे वह कर सकता है, परन्तु अफसोस कि तू अपनी संगत घटिया मक्कार और अति नीच विकारों से कर ली है।

इस से बड़ी दुर्घटना (Accident) मनुष्य के साथ और क्या हो सकती है? कि वह महान होता हुआ भी अपने-आप ही जान बूझ कर इस शक्तिशाली दुर्घटना का शिकार हो गया है, जिस से बचना मनुष्य के लिए अति कठिन है।

बन्द नंबर 3 में गुरु जी ने इन विकारों के कारण मनुष्य के जीवन के बीच आए घातक प्रभावों का ज़िक्र किया है। वे स्पष्ट करते हैं कि इन विकारों के कारण मनुष्य की आत्मिक तौर से मौत हो जाती है। यह अटल है, इस को कोई नहीं रोक सकता, इसलिए संसार के जीव बिना मुक्ति प्राप्त किए इस जन्म में अपने किए कर्मों के अनुसार ही इस दुनिया से कूच कर जाते हैं और इन किए गए कर्मों के अनुसार ही जूनों में प्रवेश करते हैं।

इसलिए मनुष्य अपनी जून स्वयं तय करता है - यदि वह बुरे कर्म करता है, तो बुरी जून में जाता है और यदि वह अच्छे कर्म करता है तो मुक्ति प्राप्त करके प्रभ का दरबारी बन जाता है।

बन्द नंबर 4 में प्रभ का दरबारी कैसे बन सकता है? गुरु रविदास जी मनुष्य को इस बारे में सूचित करते हुए फरमाते हैं कि मनुष्य विकारों से मुक्त होकर भटकना छोड़ कर और गुरु के उत्तम ज्ञान को प्राप्त करता हुआ प्रभ की बख्शिश प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करे, तब उसको परमानंद की बख्शिश होती है।

शब्दार्थ – हे प्रभ! इन त्रिगद योनियों से जिस प्रकार हिरन, मछली, भ्रमर, पतंगा और हाथी एक-एक विकार हैं, जिस कारण इन का नाश हो जाता है, फिर मनुष्य तो इन पांचों असाध्य विकार है, उस के बचने की आस कितनी देर तक की जा सकती हैं? इन विकारों से मनुष्य के लिए बचना बहुत कठिन है।।१।।

हे प्रभ! मनुष्य के विकारों के बीच फंसने से मनुष्य का सोच विचार से काम न लेने के कारण बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। जिस कारण मनुष्य अज्ञानी बन जाता है और विकारों में फंस जाता है।।२।। रहाउ।।

त्रिगद योनियों को तो गुरु जी यह कहकर बरी कर देते हैं कि यह जड़मति (मोटी अकल) होने के कारण समझ बूझ से वंचित हैं। संभवत: विचार हीन होने के कारण इनको पुण्य-पाप अर्थात् अच्छा और बुरा क्या है? इस का ज्ञान नहीं है।

परंतु मनुष्य तो जन्म के समय सर्वगुण संपन्न होता है और दुर्लभ (दुलभ) अर्थात् अमूल्य होना इस के सर्वगुण संपन्न होने की गवाही है, परंतु हैरानी की बात यह है कि मनुष्य ने अपनी संगत घटिया मक्कार और अति नीच विकारों के साथ कर ली है। मनुष्य ने इस दुर्लभ बुद्धि के साथ भी कुछ समझा सोचा नहीं है।।२।।

ऐसे जीव-जंतु अपने कर्मों के अनुसार आत्मिक मौत पर मर जाते हैं, इस को कोई रोक नहीं सकता है। इस तरह इन कर्मों के अनुसार और जूनो के बीच जा प्रवेश करते हैं।।३।।

गुरु रविदास जी प्रभ को संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि हे प्रभ! तेरा दास रविदास इन तपों के तप अर्थात् उत्तम गुरु के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए तत्पर है। हे प्रभ! आप अपने भक्तों को विकारों के डर से मुक्त करते हैं। मुझ बेसमझ को भी इन से मुक्त करके परमानंद की बख्शीश करो जी।।४।।१।।

शब्द - 8

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

संत तुझी तनु संगति प्रान॥
सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव॥१॥
संत ची संगति संत कथा रसु॥
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव॥१॥ रहाउ॥
संत आचरण संत चो मारगु
संत च ओल्हग ओल्हगणी॥ २॥
अउर इक मागउ भगति चिंतामणि॥
जणी लखावहु असंत पापी सणि॥३॥
रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु॥
संत अनंतहि अंतरु नाही॥४॥२॥[1] **(पृष्ठ ४८६)**

पद अर्थ- **तुझी**- तेरा। **तनु**- शरीर। **सतिगुर**- ब्रह्मगुरु, परिपूर्ण गुरु। **जानै**- समझना, पहचान लेना। **देवादेव**- देवताओं का देवता, आदपुरष।

ची- की। **रसु**- आनंद। **माझै**- मुझे। **दीजै**- दे दो।

आचरण- व्यवहार, चाल चलन, बर्ताव। **चों**- में से, का के की। **मारगु**- रास्ता, राह। **उलंग उलनगणि**- संतों की जूठन साफ करना, विनम्रता सहित शरणागत होना। भाई जोध सिंह के अनुसार यह शब्द मराठी भाषा का है।

अउर- और, अन्य। **चिंतामणि**- हिंदुओं की कल्पित कथानुसार चिंतामणि ऐसी मणि है, जो मनवाँछित फल देती है। **जणी**- कभी भी नहीं। **लखावहु**- दिखाई देना। **सणी**- साथ मिली हुई।

भणै- वर्णन करना, कहना। **जाणै**- समझे। **जाँणु**- परिचित, पहचानना। **अनंतहि**- बेअंत, आदपुरष, ईश्वर। **अंतरु**- भेद, फर्क।।४।।२।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४८६

शब्द में सिद्धांतों का सृजन

इस शब्द के बीच गुरु रविदास जी ने ब्रह्म ज्ञान का स्रोत, संतों की महानता और महत्व के बारे में और संत संगत/ साध संगत/ सति संगत की महानता और महत्व के बारे में विचार प्रकट किए हैं। इस में अनेकों परिभाषाओं और सिद्धांतों का सृजन भी किया गया है। इस से पहले ब्रह्मज्ञान के स्रोत के बारे में स्पष्ट किया गया है।

1. ब्रह्म ज्ञान का स्रोत-

ब्रह्म ज्ञान का स्रोत केवल और केवल ब्रह्मगुरु (पारब्रह्म) आप ही है।

सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव ॥१ ॥

इस सिद्धांत की व्याख्या और स्पष्टता 'कूप भरिउ जैसे दादिरा' शब्द में की गई है। इस शब्द के बीच पारब्रह्म से ब्रह्म ज्ञान की मांग की गई है -

करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥२ ॥

2. संत की परिभाषा

''सन्त वह जिसने ब्रह्म गुरु (सतगुरु) से ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है और प्रभ उसके मन में प्रवेश कर गया है। इस तरह संत प्रभ का शरीर हो जाता है।

3. प्रभ के सर्गुण स्वरूप के प्रकट होने का सिद्धांत -

जब जीव ब्रह्मज्ञानी संत बनता है, उस समय प्रभ शरीर धारण करता है और जब ऐसे संत सामूहिक रूप में एक स्वर होकर संगत का रूप धारण करते हैं, उस समय प्रभ के प्राण संगत में धड़क उठते हैं और प्रभ सर्गुण रूप में प्रकट हो जाता है।

(उ) संत अनंतहि अंतरु नाही ॥४ ॥२ ॥

(अ) संत तुझी तनु संगति प्रान ॥

सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव ॥१ ॥

4. इस शब्द में अगला सिद्धांत साध संगत का है -

सतिसंगत या साध संगत, उन संतों का समूह है, जिन्होंने ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है। ऐसे संत प्रभ का शरीर बन जाते हैं और संतों की संगत में प्रभ के प्राण विद्यमान होते हैं। ये संगत प्रभ रूप बन जाती है।

संत तुझी तनु संगति प्रान ॥

सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव ॥१ ॥

इस तरह संत प्रभ का शरीर है और साध-संगत समूह के बीच प्रभ के प्राण हैं।

5. असंत की परिभाषा या सिद्धांत -

असंत वह है, जिस का किरदार संतों के किरदार से हर तरफ से उलट है और वह हर पक्ष से पापी है।

जणी लखावहु असंत पापी सणि ॥३ ॥

संत और साध संगत का महत्व भी असीम और विशाल है-

1. संत का महत्व-

'संत पारब्रह्म का शरीर है। इस कारण सँत का महत्व उतना ही असीम और विशाल है, जितना पारब्रह्म आप है।'

2. साध संगत का महत्व -

साध-संगत में पारब्रह्म के प्राण हैं, सो साध-संगत का महत्व भी उतना ही असीम और विशाल है, जितना पारब्रह्म स्वयं है।

सँगत की परिभाषा और सिख विद्वान

डॉक्टर बलकार सिंह श्री गुरु ग्रंथ साहिब धर्म अध्ययन विभाग पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला में प्रोफैसर हैं, जिन्होंने पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला द्वारा संगत विशेष अंक संपादित किया है, वह संगत की परिभाषा को संगत विशेष अंक में शामिल करना विश्वसनीय नहीं बना सके, दूसरी हैरानी की बात यह है कि गुरु ग्रंथ साहब के बीच न तो इस अंक के संपादक डॉक्टर बलकार सिंह को सँगत की परिभाषा उपलब्ध हुई और न ही इस अंक में शामिल 19 अन्य विद्वानों को। स्पष्ट है कि डॉक्टर बलकार सिंह और बाकी विद्वानों ने संगत की परिभाषा या सिद्धांत देने की कोशिश ही नहीं की और परिभाषा देना ज़रूरी भी नहीं समझा। इन विद्वानों ने इस संकल्प को तो स्पष्ट किया है, कि संगत में जाने का महत्व क्या है? परंतु संगत की रचना में कौन-कौन तत्व शामिल हैं, उन की चर्चा किसी भी विद्वान ने नहीं की है।

इस चर्चा से स्पष्ट हो जाता है, कि इन विद्वानों को गुरु ग्रंथ साहिब के बीच संगत की परिभाषा ही उपलब्ध नहीं हुई। क्या सचमुच ही गुरु ग्रंथ साहब में संगत की परिभाषा उपलब्ध नहीं है? गुरु ग्रंथ साहिब में परिभाषा तो है, पर उस का सृजन पंजाब के गुरु साहिबान ने नहीं किया। यही कारण है कि संगत विशेष अंक के किसी भी विद्वान ने, संगत की परिभाषा की प्राप्ति के लिए गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी आदि ब्रह्मज्ञानी चिंतकों की वाणी में से संगत की परिभाषा खोजने की कोशिश नहीं की। ऐसी भावना केवल संगत के सिद्धांत खोजने तक ही सीमित नहीं है। यह भेदभाव खोज कर हर क्षेत्र में सिख विद्वानों द्वारा किया जाता है (और जानकारी के लिए पढ़ो मेरी श्री गुरु रविदास जी उनका गुरु और गुरु ग्रंथ साहिब) उदाहरण के तौर पर एक अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि के विद्वान ने मार्क्स की विचारधारा को गुरु ग्रंथ साहब में ढूंढने लगे। उन्होंने पंजाब के गुरु साहिबान के बिना अन्य गुरुओं की वाणी में ढूंढने की कोशिश भी नहीं की, जब कि गुरु रविदास जी के अकेले एक-एक शब्द में ही मार्क्स की विचारधारा उपलब्ध करवाई है। कारण बड़े स्पष्ट हैं।

1. पंजाब के 99% विद्वान जात पात के कारण पंजाब के गुरुओं के बिना, बाकी को फालतू समझकर महत्व नहीं देते हैं।
2. यह विद्वान नहीं चाहते हैं, कि गुरु रविदास जी तथा गुरु कबीर जी आदि महान ब्रह्म ज्ञानी चिंतकों का सिर ऊंचा हो।

यही कारण है कि डॉक्टर बलकार सिंह संगत के संकल्प के लिए गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी आदि की वाणी में से अगवाई करने के लिए कुछ नहीं ले सके, क्योंकि शिक्षा तो केवल गुरु से ही ली जा सकती है। डॉक्टर बलकार सिंह उपरोक्त महापुरुषों को गुरु नहीं मानते, भक्त मानते हैं। उन्होंने 'अज्ज दी अवाज़' में पांच लेख लिख कर गुरु रविदास जी को गुरु कहने से एतराज किया है, इन में से तीन लेख मेरी मेज पर मेरे सामने पड़े हैं। यह लेख 22, 23 और 24 मई 1997 के हैं। एक लेख 15 मई 1997 का प्रोफैसर बलविंदर पाल सिंह का लिखा हुआ है, जिस में उन्होंने डॉक्टर बलकार सिंह के लिए इस का खंडन करके स्पष्ट किया है कि हर व्यक्ति को अपने महापुरुषों को गुरु कहने का अधिकार प्राप्त है। इस लेख को रद्द करने के लिए डॉक्टर बलकार सिंह ने उपरोक्त 3 लेखों में तर्कहीन दलीलें देकर यह साबित करने की कोशिश की है कि गुरु रविदास जी के लिए गुरु शब्द प्रयोग करना गलत है और भगत ही सही है। इन लेखों को डॉक्टर अवतार सिंह लुधियाना ने शक्तिशाली दलीलें दे कर रद्द किया है और 'अज्ज दी अवाज़' को छापने के लिए भेजा है, पर दुख की बात है, कि 'अज्ज दी अवाज़' में यह लेख आज तक नहीं छापा, यदि यह लेख छप जाता तो इसने तीन महत्वपूर्ण कार्य करने थे-(1) डॉक्टर बलकार सिंह को दलित विरोधी, गुरु ग्रंथ साहिब की विचारधारा का विरोधी, गुरु गोविंद सिंह जी का विरोधी, घोषित किया जाना था। (2) बलकार सिंह के 'भगतां की वाणी' संबंधी थोथी विद्वता का राज खुल जाना था। (3) डॉक्टर बलकार सिंह को डॉक्टर अवतार सिंह का लेख पढ़कर सुहृदय सिख की तरह गुरु रविदास जी को गुरु कहना पड़ना था, जिस प्रकार (मेरे प्रो. लाल सिंह) के साथ बातचीत करने के बाद सरदार इंद्रजीत सिंह सेखों खालसा सीनियर वकील फरीदकोट और पूर्व महासचिव संयुक्त अकाली दल ने गुरु रविदास जी के जन्म दिवस पर गुरु रविदास जी के गुरु ग्रंथ साहिब, गुरु गोविंद सिंह जी और दलित समाज को सम्मानित किया है। (पढ़ें प्रोफैसर लाल सिंह की पुस्तक श्री गुरु रविदास जी उनका गुरु और श्री गुरु ग्रंथ साहिब)

संगत की परिभाषा, गुरु रविदास जी के शब्द, 'संत तुझी तनु' के बीच उपलब्ध है। परन्तु डाक्टर दीवान सिंह ने, भाई गुरदास की 'कच्ची वाणी' की परिभाषा तो गवाही के बिना ही कबूल कर ली है परंतु उन्होंने गुरु रविदास जी की प्रमाणित और पवित्र 'धुर की वाणी' की परिभाषा को स्वीकार नहीं किया। गुरु रविदास जी संगत की परिभाषा का सृजन करते हुए फरमाते हैं –

संत तुझी तनु संगति प्रान॥
सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव॥१॥
संत ची संगति संत कथा रसु॥
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव॥१॥ रहाउ॥

उपरोक्त शब्द से संगत की परिभाषा का सृजन होता है।

''सति संगत या साध संगत उन संतों का समूह है, जिन्होंने ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है। ऐसे संत प्रभ का तन हैं और ऐसे संतों की संगत के बीच प्रभ के प्राण हैं। ये संगत प्रभ का रूप बन जाती है।''

इस तरह ब्रह्मज्ञानी संत प्रभ का तन है और इन संतों की संगत समूह के बीच प्रभ के प्राण हैं। ऐसी संगत की बख्शीश के लिए गुरु रविदास जी प्रभ के आगे अरदास करते हैं।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 1 में संत, संतों की संगत और ब्रह्म ज्ञान को निरूपित करके तीनों की अभेद्यता को स्पष्ट किया है। यह प्रस्तावना समूचे शब्द का आधार है और आखिरी बन्द की आखिरी तुक में इस बन्द का अंतरीव भाव निरूपित किया है।

रहाउ के बीच गुरु जी ने प्रभ के आगे प्रार्थना की है कि हे प्रभ! मुझे इस प्रकार के संतों की ही संगत, उन के ज्ञान से भरपूर प्रवचनों का आनंद और उनके प्यार की बख्शिश करो जी।

फिर बन्द नंबर 2 में गुरु जी प्रभ से मांग करते हैं कि मुझे संतों की रहनी-बहनी, चाल- चलन, उन का सच्चा सुच्चा मार्ग और संतों के दासों की सेवा अर्थात् संतों वाली नम्रता प्रदान करो जी।

बन्द नंबर 3 में गुरु जी मांग करते हैं, कि मुझे पारब्रह्म की भक्ति के दान की कृपा करो और पापियों से हमेशा दूर ही रखो।

इस बन्द में असंत की परिभाषा भी दर्ज की गई है।

अन्तिम बन्द नंबर 4 में गुरु जी ने स्पष्ट किया है, कि संत और प्रभ के बीच कोई अंतर नहीं है। यह संत की महिमा और महानता का शिखर है। इस अटल सच्चाई को गुरु अर्जन देव जी ने भी सुखमणि साहिब में प्रकट किया है।

साध की सोभा साध बनी आई।
नानक साध प्रभ भेदु न भाई।।७।।७।।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी प्रभ को संबोधित करते हुए प्रार्थना करते हैं, कि हे देवताओं के देवता प्रभ! हे ब्रह्मगुरु! आप के ब्रह्मज्ञान को संतों ने पहचान कर प्राप्त कर लिया है। इस कारण संत तेरा ही तन मन है और उनकी संगत आप की जिन्द जान है।

इस कारण हे देवताओं के देवता प्रभ! मुझे ऐसे संतों की संगत, उन के सत्संग और ज्ञान से भरपूर प्रवचनों का आनंद और उनकी प्रेम की दात की बख्शीश करो जी।।१।। रहाउ।।

गुरु रविदास जी प्रभ से संतों का सदाचार, उनका सच्चा-सुच्चा रास्ता और संतों की जूठन मंजन की सेवा, अर्थात् अति नम्रता प्रदान करने की मांग करते हैं।।२।।

गुरु रविदास जी बड़ी विनम्रता के साथ एक अनेय दात प्रभ भक्ति प्रदान करने की बेनती करते हैं, जिस की प्राप्ति के साथ ही सभी दातें प्राप्त हो जाती हैं। इस के साथ वे ये भी बेनती करते हैं, कि मुझे कभी असंत अर्थात् विकारियों और पापियों का मुंह तक न दिखाई दे।।३।।

गुरु रविदास जी कहते हैं, कि जो भी प्रभ को जान जाता है, पहचान जाता है, वही स्पष्ट तौर से जानता है, कि संत और प्रभ के बीच कोई अंतर नहीं है, दोनों एक ही हैं।।४।।२।।

शब्द - 9

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

तुम चंदन हम इरंड बापुरे
संगि तुमारे बासा॥
नीच रूख ते ऊच भए है
गंध सुगंध निवासा॥१॥
माधउ सतसंगति सरनि तुम्हारी॥
हम अउगन तुम्ह उपकारी॥१॥ रहाउ॥
तुम मखतूल सुपेद सपीअल
हम बपुरे जस कीरा॥
सतसंगति मिलि रहीऐ माधउ
जैसे मधुप मखीरा॥२॥
जाती ओछा पाती ओछा
ओछा जनमु हमारा॥
राजा राम की सेव न कीन्ही
कहि रविदास चमारा॥३॥३॥[1] **(पृष्ठ ४८६)**

पद अर्थ - **चंदन**-सुगंध भावार्थ गुणों के कारण चित्त को प्रसन्न करता है। **इरंड**- दुर्गन्ध भावार्थ अवगुणों वाला और कुरूप होने के कारण नीच है। **नीच**-विकारों के कारण अवगुणों वाला नीच, अवगुणों के कारण निकम्मा।।१।।

माधउ-प्रभ। **उपकारी**-मेहर करने वाला।।१।। रहाउ।।

मख़्तूल=रेशम। **सुपेद**-सफेद। **सपीअल**-पीला। **बपरे**-करूप। **जस**-जैसे। **कीरा**-कीड़ा। **मधुप**-शहद की मक्खी। **मखीरा**-शहद का छत्ता।।२।।

गुरु रविदास जी की वाणी को समझने तथा व्याख्या करते समय वाणी में

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४८६

प्रयुक्त की गई बिम्बों, अलंकारों को खोलकर उनके मूलभूत, अंतरीव तथा सूक्ष्म तथा महत्वपूर्ण अर्थों को जानबूझ कर या अनजाने में दृष्टिविगत किया गया है, जिस कारण गुरु रविदास जी की वाणी का सही अर्थों में महत्वपूर्ण तथा महत्व दबा दिये गये। संसार में उनकी महानता की चढ़त को नष्ट कर दिया गया, अर्थहीन बना दिया गया जैसे –

।। मधुप मखीरा का अर्थ ।।

दृष्टांत अलंकार मधुप मखीरा का अर्थ – शहद की मक्खियों का कुदरती स्वभाव प्रभ के सेवक का स्वभाव होना चाहिए।

1. रानी मक्खी के हुक्म का पूर्ण सत्कार और हूबहू पालन करती हैं।
2. सच्चे और सुच्चे मन से अपनी ड्यूटी करने में कोई ढील नहीं करती है।
3. अनुशासन में परिपक्व रह कर नियमों का पालन करती हैं।
4. अपने हकों के लिए पूरी तरह जागरूक हैं।
5. मधुमक्खियां उनके हकों को छीनने वालों को माफ नहीं करती हैं, दुश्मन चाहे जहां मर्जी छुप जाए, उस का पीछा करके मार तक देती हैं। परिणाम– वे निर्भय हैं, ऐसा करके मधुमक्खियां कुदरत के नियमों का ही पालन करती हैं। दरअसल अधिकार छीनने के लिए हमला विकारों का ही हमला है। इसलिए मक्खियां बड़ी दृढ़ता और परिपक्वता से विकारों का मुकाबला करके दुश्मन को खत्म कर देती हैं। इस तरह सत्संग में जाने वाले सेवकों को भी विकारों से बचना है। जिस प्रकार मक्खियां कुदरत के दिए हथियार से ही दुश्मन का मुकाबला करती हैं, उसी तरह मनुष्य अपनी आत्मिक शक्ति से दुश्मन रूपी विकारों का मुकाबला कर सकता है।
6. परंतु यदि शहद की मक्खियों का जत्था अपनी मर्जी से एक स्थान को छोड़ कर दूसरे स्थान पर जा कर ठिकाना बनाना चाहता है या बना रहा हो तो उनके रास्ते में आए मनुष्य के ऊपर हमला नहीं करती हैं, बशर्ते वह मुर्दा बन ज़मीन पर लेट जाए। मक्खियां उस को दुश्मन नहीं समझती हैं, इसलिए ये मक्खियां अकारण ही हमला नहीं करती हैं। इस तरह वह कुदरत के नियमों और 'जीयो और जीने दो' के सिद्धांत को पूरे अमल में लाती हैं, परिणाम स्वरूप वे निरवैर हैं।
7. उपरोक्त गुणों के इलावा सब से महान गुण यह हैं कि वे मिठास 'शहद' पैदा करती हैं। इस शब्द में जितनी भी वस्तुएं या जीव आए हैं, उनका अपनी

मेहनत के साथ पैदा किया हुआ कुछ नहीं है, जिस प्रकार चंदन है, इस में सुगंधि देने का गुण कुदरती है, उस की अपनी कोई देन नहीं है। इरंड के बीच भी कुदरती गुण हैं, इरंड निकम्मा और गुण रहित है। रेशम के बीच महा गुण भी कुदरत की देन है। कीड़ा कुरूप और गुण रहित है, यह भी कुदरती गुण ही है।

मधुमक्खियों के बीच चाहे शहद पैदा करने का गुण कुदरत की देन है, परंतु शहद पैदा उन की मेहनत और हिम्मत के कारण ही है। यह अति ज़रूरी कारण है कि जिस कारण गुरु जी मधुमक्खियों की तरह प्रभ के साथ घुलमिल जाने का आदेश देते हैं। मधुमक्खियों की तरह शहद के छत्ते के साथ हिम्मत और मेहनत के बिना नहीं मिलता है और न ही बोलने में मिठास पैदा हो सकती है। इसलिए गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मधुमक्खियों की तरह सेवक के लिए उपरोक्त गुणों के साथ-साथ हिम्मत और मेहनत भी प्रभ प्राप्ति के लिए अति ज़रूरी गुण है। ऐसा करने से मधुमक्खियों की तरह सेवक के लिए उपरोक्त गुणों के साथ-साथ हिम्मत और मेहनत भी प्रभ प्राप्ति के लिए अति ज़रूरी गुण है। ऐसा करने से मधुमक्खी की तरह सेवक भी स्वयं ही महान गुणों का धारक बन जाएगा।

यह ब्रह्म ज्ञानी का बुनियादी गुण है। प्रभ की सतसंगत के लिए सेवक के पास सबसे महत्वपूर्ण और बहुत ही ज़रूरी गुण अपने मन के अंदर मीठे विचार पैदा करके मीठा बोलना है। थोड़े शब्दों में मधुमक्खियां हाकम के हुक्म का पालन, अनुशासन की पाबंद, सच्चे और सुच्चे मन से हिम्मत और मेहनत के साथ ड्यूटी करती हैं, इस से स्पष्ट होता है कि, मिठास पैदा करने वाली मधुमक्खियों की तरह ही सेवक के बीच गुण होने चाहिएं, तभी वह प्रभ को प्राप्त कर सकता है।

अन्तिम और महत्वपूर्ण बात यह है, कि यह अपने अनाज 'शहद' की राखी के लिए मर मिट जाती हैं। मधुक्खियां अपना हक छीनने वालों को नहीं छोड़ती तथा डंक मार-मार कर मार देती हैं। कुदरत के विधान के अनुसार जो अन्न जिस जीव 'जून' के लिए बनाया है, यदि किसी और जून का अनाज कोई और जून खाती है तो यह कुदरत के नियम का उल्लंघन है। ऐसा करने से सतसंगत का स्वभाव प्राप्त नहीं होगा। प्रभ प्राप्ति नहीं होगी। बेगमपुरा का शहरी नहीं बन सकेगा।

जाति – सुभा, हर जून अर्थात् जाति का स्वभाव अपना स्वभाव होता है,

जिस प्रकार हिरण का स्वभाव कान रस का है, मछली का स्वभाव जीभ रस का है, भँवरे का स्वभाव रूप रस रखता है, इसी तरह मनुष्य का स्वभाव विकारों के इन 5 रसों का बना हुआ, विकारी स्वभाव है। ''जाति-9 देखो सुभावोकि की।''[1]

सुभावोकि - एक शब्दालंकार (सहज धर्म का कथन) किसी वस्तु के जाति स्वभाव का वर्णन स्वभावोक्ति अलंकार है। इसका नाम जाति भी है।

उदाहरण -

लउकी अठसठि तीरथ न्हाई।।

कउरापन तउ न जाई। (सोर-कबीर)[2*]

पाती - स्वभाव का स्रोत, कुल, वंश मनुष्य के विकारी स्वभाव का स्रोत माया (पांचों विकार माया के दूत हैं) जनमु-जीवन। देखें मेरी संगत पोच वाले शब्द की बन्द नंबर 1 की अर्थ समस्या।।३।।३।।

1. महान कोश - पृष्ठ : ३८८ 2. वही - १८९

* और जानकारी हेतु देखे, इस पुस्तक का पृष्ठ : २१८

शब्द का अंतरीव विचार विधान

(अपने हकों की सुरक्षा के लिए महाबली क्रांतिकारी सूरमे तथा सेना का सृजन)

गुरु रविदास जी इस शब्द में संगत के सिद्धांत का सृजन करते हैं। 'सन्त तुझी तनु' वाले शब्द में यह स्पष्ट किया गया है, कि संगत के गुण आदि तत्व कौन-कौन से हैं? अर्थात् संगत के बीच कौन-कौन सी बातें होनी ज़रूरी हैं? इस शब्द 'तुम चंदन' के बीच स्पष्ट किया गया है, कि प्रभ की संगत के बीच जाने वाले मनुष्य के बीच कौन-कौन से गुण होने ज़रूरी हैं? इन गुणों को बता कर यह भी स्पष्ट किया गया है, कि सतसंगत में विचरण कर रहे सेवक इन गुणों को अमली रूप में प्रयोग करके सत्संग के उद्देश्य को पूरा करें, जिस प्रकार मधुमक्खियां शहद के छत्ते की सतसंगत करके अपना उद्देश्य पूरा करती हैं। इन्हीं गुणों को और इस मंत्र को बन्द नंबर दो में निरूपित किया गया है। इस शब्द में एक महत्वपूर्ण मूलभूत सिद्धांत निरूपित किया गया है। सेवक अपने हकों की रक्षा के लिए हक छीनने वाले को पूरी शक्ति के से मिटा दें अर्थात् विकारों को मिटा दें परंतु ऐसा करते समय वह न्याय का पल्ला न छोड़े और न ही कड़बा बोले, मीठा बोलना सेवक का मूलभूत गुण है। गुरु रविदास जी ने स्वयं इस सिद्धांत पर अमल किया है। इस तरह वे क्रांतिकारी महाबली शूरवीर और ब्रह्मज्ञानी अर्थात् संत सिपाही बन जाते हैं।

बन्द नं. 1 में, यह स्पष्ट किया गया है, कि प्रभ सब को प्रभावित करता है, परंतु प्रभ को कोई भी प्रभावित नहीं कर सकता। जैसे चंदन के चारों ओर वृक्ष आदि चंदन की सुगंधि का प्रभाव स्वीकार कर लेते हैं, किसी भी सीमा तक चंदन की सुगंधि वाला गुण धारण कर लेते हैं और स्वयं को बड़ा मानने लग पड़ते हैं, जिस प्रकार इरंड चंदन की सुगंधि ग्रहण कर के, स्वयं को बड़ा समझता है, परंतु चंदन किसी के प्रभाव में नहीं आता है।

सेना की सृजना

अलंकार के गुण प्राकृतिक गुणों को प्रकट करते हैं, जैसे ''**तुम चन्दन..... संग तुम्हारे वासा।।**'' चन्दन तथा इरंड अलंकार हैं चन्दन का प्राकृतिक गुण

सुगन्ध है तथा इरंड जिसको ग्रहण करता है, इसी प्रकार मधुमक्खियां का कुदरती गुण अनुसार मनुष्य को अमल करने का आदेश है। मुख्य कुदरती गुण है अपने अधिकारों की सुरक्षा अर्थात् प्राप्ति के लिये मर-मिटना तथा साथ ही मिठास पैदा करना है। यह गुण विश्व को अधिकार छीनने वाले अत्याचारियों से बचाता है तथा निरंतर बचाने का हुक्म है।

'रहाउ' में उपकार करने का आदेश है, मनुष्यता के प्रति उपकार करने का हुक्म है। उपकार करने के लिये यदि हथियारबंद क्रांति भी करनी पड़े तो गुरु रविदास जी कुदरती गुणों, सिद्धांतों के अनुसार इसके उपयोग का परिपक्वता के साथ ''दृढ़ता से आदेश देते हैं। यह हुक्म बन्द नं. 2 में दर्ज है।''

इसी हुक्म पर अमल करने के लिये बन्द नं. 3 में स्पष्ट किया गया है कि प्रभ राजा बन कर अपनी प्रजा को अत्याचारों से बचाने के लिये हथियारबन्द क्रांति करता है।

'रहाउ' में मनुष्य की अल्पज्ञता और प्रभ की सर्वज्ञता को दृढ़ किया गया है। गुरु रविदास जी प्रभ के आगे निवेदन करते हैं कि, हे प्रभ! हमें अपनी सच्ची सुच्ची संगत का सौभाग्य बख्शो। हम तो अब गुणों के साथ भरे हुए हैं। आप पापियों को तार कर उनके ऊपर उपकार करने वाले हो। हम पापियों पर कृपा करें जी।

बन्द नंबर 2 में प्रभ को सर्वगुण संपन्न पूरा सफेद, पीला दाग रहित एक दम पवित्र रेशम दर्शाया गया है, दूसरे शब्दों में गुरु रविदास जी शांति के समय सन्त सूरमे की सृजना के समय बुरे समय के लिये सेना तैयार की। परंतु जीव को कुरूप नीच से नीचा और अवगुणों से भरा हुआ, निकम्मा और अपवित्र निम्न दर्शाया गया है। ऐसी स्थिति में जीव प्रभ की सतसंगत में किस प्रकार जाए? इस बन्द की अगली तुक में स्पष्ट किया गया है, कि प्रभ की सतसंगति के लिए ऐसे गुण पैदा करो। जैसे शहद की मक्खी में होते हैं। मधुमक्खियों के बीच मूलभूत गुण हैं-हाकम (रानी मक्खी) के हुक्म की हुबहू पालना करना, अनुशासन में रहना, अपनी ड्यूटी की पाबंद, हिम्मत और मेहनत में परिपक्व, हकों की रक्षा के लिए मर मिटना, हक छीनने वाले को मिटा देना अर्थात् विकारों को मिटा देना और मिठास पैदा करना, इसलिए हे मनुष्य! मधुमक्खियों के गुण धारण कर प्रभ की सत्संगत में घुल जा तथा सन्त सूरमा बन जा। दूसरे अर्थों में गुरु रविदास जी शांति के समय संत सूरमे की सृजना करके बूरे वक्त के लिये फौज तैयार की।

बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी बताते हैं कि हमें प्रभ प्राप्ति क्यों नहीं हुई? वे स्पष्ट करते हैं, कि मेरा मन विकारों से भरा हुआ है। मेरा स्वभाव विकारी बन गया है। विकारी स्वभाव के कारण मेरे कर्म भी विकार भरपूर बन गए हैं। जिस की कुल, स्रोत या वंश माया है। इन विकारों के कारण समूचा जीवन ही घटिया निर्विकार भरपूर बन गया है। हे रविदास! कहि यह हालत इस करके हुई है, कि मैंने सोहने प्रभ की सत्संगति में जाकर दृढ़ता में उसकी सेवा नहीं की है? भक्ति नहीं की है। हे सोहणे प्रभ! मुझे आप अपनी सत्संगति से शरण देखकर सेवा का मौका प्रदान करो जी।

उपरोक्त चर्चा के बाद, यह विचार करना ज़रूरी हो गया है, कि क्या इस शब्द में आए विचार राग आसा की भावना के विरुद्ध हैं।

मारू राग के दोनों शब्द, 'ऐसी लाल तुझ बिन कउन करै' और 'सुख सागरु सुरतरी चिंतामणि' राग आसा के बीच दर्ज शब्द 'तुम चंदन हम इरंड' के 'सतिसँगति मिलि रहिये माधो जैसे मधुप मखीरा' के सिद्धांत की परिपक्वता करते हैं, निर्गुण राग आसा का कोई विषय नहीं है। कोई सुभा नहीं है और न ही गमी, शादी युद्ध आदि अवसरों पर गाने का आदेश है। इसलिए राग आसा के बीच लगभग हर विषय को निभाया जा सकता है। इस कारण इस शब्द में आए विचार राग आसा की भावना (Spirit) के विरुद्ध नहीं है।

हां, राग आसा मन को मुग्ध अर्थात् कोमल जरूर बनाता है, परंतु इस का अर्थ यह नहीं है, कि कोमलता, का रूप धारण कर ले। साथ ही गुरु रविदास जी को तो हिंदू धर्म के शक्तिशाली और अहंकारी ब्राह्मणों के साथ लोहा लेना पड़ा है। उन के साथ आज से छः सौ साल पहले तथाकथित कही जाने वाली नीची जाति के गुरु रविदास जी को तथाकथित कही जाने वाले ऊंची जाति के अहंकारी ब्राह्मणों के साथ लोहा लेना, हकूमत के साथ टक्कर लेना ही, अपनी मौत को बुलावा देना था। ऐसी भयानक स्थिति का सामना गुरु ग्रंथ साहिब के बीच विराजमान किसी भी महापुरुष को नहीं करना पड़ा, इस कारण ऐसे हालात में गुरु जी कायर नहीं बन सके। वे तो शक्तिशाली, महाबली, अजय योद्धा की तरह जात पात को मिटा सके। वे हिंदू धर्म की मानवता विरोधी विचारधारा को सदा सदा के लिए मिटा देते हैं। इसलिए गुरु जी ने कोमल चित्त रह कर भी महाबली योद्धा बन कर न्याय पूर्ण क्रांति मचाई है और सेवकों को भी ऐसा ही करने का आदेश दिया है। इस हुकुम का आधार भाईचारा, समानता, मानवता के

लिए न्याय, सामाजिक, राजनीतिक, और आर्थिक बराबरी। यह आदेश सारी गुरवाणी में उपलब्ध है, खास करके गुरु रविदास जी के शब्द 'बेगमपुरा शहर' के बीच।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है, कि गुरु रविदास जी ने विचारों के अधीन शब्द का सृजन करके राग आसा की भावना को प्राप्त करने के लिए निर्भय होकर विचरने का आदेश दिया है।

समूची चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी ब्रह्मज्ञानी होने के साथ-साथ क्रांतिकारी महाबली सूरमे भी हैं अर्थात् वे महान् संत और सिपाही हैं। साथ ही साथ अपने हकों की रक्षा के लिए मर मिटने वाले महाबली क्रांतिकारी सूरमाओं का सृजन भी करते हैं।

शब्दार्थ – हे प्रभ! आप चित्त को प्रसन्न करने वाले चंदन हैं और मैं कुरूप अवगुणों से भरा हुआ निकम्मा इरंड हूँ। आप की बख्शीश से मुझे, आप की संगत में स्थान मिल गया है। इस संगत के कारण आप की सुगंधि अर्थात् अच्छे गुण मेरे मन में बस गए हैं। इसलिए अवगुण खत्म हो जाने के कारण मैं निकम्मे से अच्छा बन गया हूं।।१।।

हे प्रभ – मुझे अपनी सच्ची-सुच्ची संगत की ओट प्रदान करो। मैं तो अवगुणों से भरा हुआ पापी हूं। आप पापियों को तार कर उन का परोपकार करने वाले हैं, हे प्रभ! मुझे अपनी शरण मैं लेकर मुझ पापी पर कृपा का दान बख्शो।।१।। रहाउ।।

हे प्रभ! आप सफेद, पीला बेदाग रेशम हैं, मैं अवगुणों से भरा हुआ कीड़ा हूँ। मुझ पर कृपा करो कि मैं आपकी सतसंगत में ऐसे घुल मिल जाऊं, जिस प्रकार शहद की मक्खी शहद के छत्ते के साथ घुलमिल जाती है। मधुमक्खी अपने हाकम के हुक्म की पाबंद हैं। अनुशासन की पक्की हैं। ड्यूटी की पाबंद है। हिम्मत और मेहनत करने में भी परिपक्व हैं। हकों की सुरक्षा के लिए मर मिट जाती हैं। हक छीनने वाले को मिटा देती हैं अर्थात् विकारों को मिटा देती हैं और मिठास पैदा करती हैं, अतः सेवकों को आदेश है, कि हकों की रक्षा के लिए मर मिट आओ और हक छीनने वाले को मिटा दें। अतः हे प्रभ! मुझ पर बख्शीश कर के ऐसे गुणों की दात दो, जिस कारण मैं भी आप की संगत का शाश्वत आनंद मान सकूं।।२।।

हे प्रभ! चमार रविदास यह स्वीकार करता है, कि मैंने आपकी शरण में आ कर के आप की भक्ति नहीं की। आपकी सेवा नहीं की, क्योंकि मेरे मन का स्वभाव विकारों के कारण पापियों वाला बन गया है। इन विकारों का स्रोत भी माया ही है 'पांचों विकार माया के दूत है। इस कारण मेरा समूचा जीवन पापों से भरा हुआ है, हे प्रभ मुझ पर कृपा कर के और मुझे अपने सत्संग की दात प्रदान करके सेवा करने का बल प्रदान करें।।३।।३।।

शब्दार्थ : (1) ''मख़्तूल-साफ किया तथा बंटा हुआ रेशम।'' (महान=939) (2) ''सपीयल-दूध जो सन्धि (घी) के धारने वाला है।'' (महान=155) अर्थात् जिस वस्तु के अन्दर अन्य महान गुणों वाली वस्तु (सपीयल) विराजमान है। (3) ''बपूरे-विचारा।'' (4) ''महान-839 बेचार-सहायता रहित (महान=886)। (4) ''कीरा-2. नीच।''

3. कीरान-काला पत्थर (महान=333), काला-सिरहा-उन्माद-2 खुमारी (महान=11)।।२।।

''तुम मख़्तूल सुपेद सपीयल हम बपूरे जस कीरा।।''

अर्थ : प्रभ मख़्तूल की ओर से पवित्र (साफ किया) तथा अमल में लाकर सृजी अहम वस्त, जिसके अन्दर अन्य महान गुणों वाली वस्तु (स्पीयल) विराजमान है, जिस प्रकार दूध में घी उसी प्रकार सहायता रहित (बपूरे) जीव (कीड़ा) अन्दर खुमारी भर कर, जोश भर कर अपने लक्ष्य को जीतने में तत्पर अर्थात् अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सम्पूर्ण करने हुते सिर-धड़ की बाज़ी लगाने वाला (कीड़ा काला पत्थर-परिपक्व कुमारी) गुरु रविदास जी का नीचो-अछूतों (कीड़ा) में सृजा गया सन्त सूरमा है सर्व शक्तिमान परमात्मा की कृपा तथा गुरु रविदास जी के सेवक उनकी अगुवाई में दिशा निर्देशों के अन्तर्गत बलिदानी योद्धे (मधुमक्खी) बन कर अपनी बेगमपुरा खालसा सेना का सन्त सूरमा बन जाते हैं।।२।।

शब्द - 10

आसा बाणी श्री रविदास जीउ की।।

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु॥
प्रेमु जाइ तउ डरपै तेरो जनु॥१॥
तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु॥
पान करत पाइओ पाइओ रामईआ धनु॥१॥ रहाउ॥
संपति बिपति पटल माइआ धनु॥
ता महि मगन होत न तेरो जनु॥२॥
प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन॥
कहि रविदास छूटिबो कवन गुन॥३॥४॥[1]

(पृष्ठ ४८६)

पद अर्थ - कहा भइउ-क्या हुआ। **छिनु छिनु**-टुकड़े-टुकड़े।।१।।

तुझहि-तेरे। **अरविंद**-कमल। **भवन**-रहने की लिए जगह। **पान**-रस मानना। **पाईउ पाईउ**-प्राप्त कर लिया है। **रामईया धन**-प्रभ प्यारे।।१।। रहाउ।।

सम्पत्ति-भोग विलास, जायदाद। **बिपति**-मुसीबत। **पटल**-पर्दा। **माईया**-कपट, छल, विकार। **ता महि**-इन में से।।२।।

जेवरी-रस्सी। **छूटबो**-मुक्ति। **कवन गुण**-किस कारण।।३।।४।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ - ४८६-८७

शब्द का अंतरीव विचार विधान

प्रभ प्राप्ति के पीछे बन्द नंबर 1 के में गुरु रविदास जी प्रभ प्राप्ति के तीक्ष्ण प्यार का प्रदर्शन कर के फरमाते हैं, कि क्या फर्क पड़ता है। यदि मेरा शरीर टुकड़े-टुकड़े हो जाए? मुझे इस से भय नहीं लगता। मेरा मन तो तब ही भयभीत होगा, जब आपका प्यार मन से दूर होगा। गुरु जी, प्रभ प्यार के बदले अपनी जान देने के लिए तैयार है, परंतु प्यार को किसी भी कीमत पर गंवाना नहीं चाहते हैं। प्रभ प्यार के लिये यह उत्तम कुर्बानी का उदाहरण है।

'गुरु रविदास जी रहाउ' में परिपक्व करते हुए कहते हैं, कि मुझे प्रभ चरणों में रहने के लिए ठिकाना मिल गया है। वह ज़ोर-ज़ोर से हौका देकर स्पष्ट करते हैं, कि प्रभ सिमरन से मुझे प्रभ प्राप्ति हो गई है।

बन्द नंबर 2 में विकारों का ज़िक्र किया गया है, जो प्रभ प्यार की प्राप्ति के रास्ते में रुकावट बनते हैं और इन्हीं कारणों से ही मनुष्य प्रभ से बिछुड़ा हुआ है। इस कारण गुरु जी दृढ़ता से फरमाते हैं, कि अब मेरा मन मुश्किलें पैदा करने वाले भोग-विलास और धन माया के विकारों में भी नहीं फंसता है।

अन्तिम बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी प्रभ प्राप्ति के बारे में स्पष्ट करते हैं, कि हे प्रभ! आपके सेवक ने आपके प्यार की पक्की डोर से अपने आप को बांध लिया है, अब मैं किसी भी तरह इस प्यार बंधन से छुटकारा नहीं पाऊंगा।

इसलिए इस शब्द में पहले प्रभ प्राप्ति के पीछे प्रभ प्यार की महत्ता को स्पष्ट किया गया है फिर प्रभ के चरणों में धन प्राप्ति की बात बताई गई हैं। इस के पश्चात् उन विकारों से तौबा किया गया है, जो प्रभ प्यार के लिए रुकावट बनते हैं। अंत में प्रभ के साथ अपने पक्के प्यार संबंध को प्राप्त किया गया है। यह विचार का निरंतर विकास है।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी प्रभ को संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि हे प्रभ! यदि आपके सेवक के टुकड़े-टुकड़े हो जाएं, तो भी मुझे कोई परवाह नहीं, मुझे इस से डर नहीं लगता है, डर तो तब लगेगा, जब आपका प्यार मन से दूर होगा। यह सहने योग्य नहीं है। मुझे इस से ही डर आएगा।।१।।

हे प्रभ! आप की बख्शिश से मुझे आप के चरण कमलों में रहने के लिए ठिकाना मिल गया है। यह ठिकाना मुझे प्रभ सिमरन से मिल सका है अर्थात् प्रभ प्राप्ति हो गई है।

हे प्रभ! आपके सेवक का मन अब उनके बीच मग्न नहीं होता, जो भोग-विलास धन आदि माया के विकार आपके प्रेम के बीच रुकावट पैदा करते हैं। इन से सदा-सदा के लिए मुक्त हो गया हूं।।२।।

गुरु जी दृढ़ता के साथ फरमाते हैं, कि हे प्रभ! आपके सेवक ने आपके प्यार की डोर के साथ अपने-आप को स्थाई तौर पर बांध लिया है। अब मैं किसी भी तरह इस बंधन से मुक्त नहीं होऊंगा।।३।।४।।

शब्द - 11

आसा वाणी रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे॥
हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे॥१॥ रहाउ॥
हरि के नाम कबीर उजागर॥
जनम जनम के काटे कागर॥१॥
निमत नामदेउ दूधु पीआइआ॥
तउ जग जनम संकट नही आइआ॥२॥
जन रविदास राम रंगि राता॥
इउ गुर परसादि नरक नही जाता॥३॥५॥[1] **(पृष्ठ ४८७)**

पद अर्थ - **हरि....हरे**=बार बार, श्वास स्वास। **हरि**[2]=प्रभ, **हरे**=क्रि वि सहज, धीरे। **निसतरि**=भवसागर पार कर गए।।१।रहाउ।।

उजागर-प्रगट, प्रसिद्ध। **जनम जनम**=चौरासी का चक्कर। **कागर**-कागज़। **जनम जनम.... कागर**=चौरासी का चक्कर काटा गया, जन्म जन्मांतरों के कर्मों का हिसाब रखने वाला कागज़ फाड़ दिया गया।।२।।

निमत-कारण, हरि सिमरन कर के। **जग जनम संकट नहीं**=जग में पुनर जन्म नहीं।।।। **रंगि राता**=रंगा गया। **प्रसादि**=कृपा, मेहर।।३।।४।।

राग आसा की प्रकृत्ति अर्थात् सुभा अनुसार जीव प्रभ प्राप्ति में आनंदित हो। प्रभ प्यार में मुग्ध हो जाता है। इसलिये यह शब्द राग आसा के सुभा अनुसार सृजित किया गया है। यही कारण है कि गुरु रविदास जी साधक को 'हरि' का सिमरन करने का आदेश देते हैं। 'हरि' के सिमरन से ही प्रभ प्राप्ति हो सकती है तथा जन्म-जन्म के संकट दूर हुये हैं।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४८७
2. ''नोट : शब्द 'हरि' संस्कृत कोशों में विष्णु, इन्द्र, शिव, ब्रह्मा तथा यमराज के लिये प्रयुक्त किया गया है।''
भक्त बाणी सटीक भाग द्वितीय, करता प्रो. साहिब सिंह - पृष्ठ : ५२

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द में गुरु रविदास जी ने हरि को सिमरन की शक्ति और उसके महत्व को मूर्तिमान किया है। 'रहाउ' में हरि सात बार आया है। समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में एक शब्द की किसी एक बन्द में किसी एक शब्द को इतनी बार नहीं दोहराया गया है। इस का अर्थ है कि जितना महत्व गुरु जी ने हरि सिमरन को दिया है और किसी संकल्प को नहीं दिया है। ज़ाहिर है कि सिमरन की शक्ति और महत्व को पूरे शक्तिशाली ढंग से निरूपित किया गया है। इस प्रकार समूचे गुरु ग्रंथ साहिब में हरि सिमरन का महत्व सबसे बड़ा स्पष्ट किया गया है। इस कारण इस शब्द की रचना राग आसा के सुभा अनुसार की गई है। राग आसा का सुभा है, ''इस राग की मधुर सुरावलीयां ''बलिहारी कुदरति वसिया'' की कीर्ति का गायन करती हैं।''[1]

गुरु जी ने बन्द नंबर 1 और 2 में हरि सिमरन का महत्व बताकर ही बस नहीं की है। उसका असली रूप देकर स्पष्ट करते हैं, कि हरि का सिमरन इतना शक्तिशाली है कि गुरु रविदास, गुरु नामदेव हरि का ही रूप बन गए हैं। यहीं तक बस नहीं, सिमरन की शक्ति ने हरि को निहाल कर के उस को दूध भी पिलाया है। इस से दो तथ्य स्पष्ट हो जाते हैं, कि- (1) प्रभ का अस्तित्व है, (2)- सिमरन से निहाल करके उस को खिलाया-पिलाया जा सकता है। तीसरा तथ्य भी इन दोनों बन्दों में उपलब्ध है। (3) हरि सिमरन से मनुष्य चौरासी के चक्कर से मुक्त हो जाता है।

अन्तिम बन्द नंबर 3 में गुरु जी फरमाते हैं, कि रविदास भी इसी तरह हरि के रंग में रंग गए थे, हरि अब उनके अंग संग है। इसलिए गुरु की बख्शिश के साथ, नरकों से अर्थात् जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त हो गया हूँ।

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ५४

शब्दार्थ - हरि शब्द का सात बार उपयोग करके गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि प्रभ सिमरन की शक्ति असीम है। जितना प्रभ के सेवकों ने प्रभ का सिमरन किया है, वह दुनिया के भवसागर को पार कर मुक्त हो गए हैं। उन का प्रभ मिलाप हो गया है।।१।। रहाउ।।

हरि का सिमरन करके ही गुरु कबीर जी संसार में प्रसिद्ध हुए, सिमरन की शक्ति से ही अपने कर्मों के हिसाब से मुक्त हो गए हैं। प्रभ मिलाप हो गया है।।१।।

इस प्रकार गुरु नामदेव जी ने हरि का सिमरन किया। उन्होंने सिमरन के अद्‌भुत चमत्कार कर के सिमरन के साथ प्रभ को निहाल कर के उन्होंने प्रभ को दूध पिलाया है और प्रभ-प्रेम प्राप्त किया है।।२।।

प्रभ के सेवक गुरु रविदास जी ने हरि का सिमरन किया है, तो वह प्रभ के प्रेम में रंग गए और प्रभ मिलन हुआ। अब वह गुरु की कृपा से नरक नहीं जाएंगे, सिमरन की शक्ति के कारण और हरि इक-मिक्क हो गए हैं।।३।।५।।

शब्द - 12

आसा वाणी श्री रविदास जी की

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

माटी को पुतरा कैसे नचतु है॥
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है॥१॥ रहाउ॥
जब कछु पावै तब गरबु करतु है॥
माइआ गई तब रोवनु लगतु है॥१॥
मन बच क्रम रस कसहि लुभाना॥
बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना॥२॥
कहि रविदास बाजी जगु भाई॥
बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई॥ ३॥६॥[1]

(पृष्ठ ४८७)

पद अर्थ - **पुतरा**-पुतला, मनुष्य।।१।। रहाउ।।

गरबु-घमंड। **माइआ गई**-धन दौलत का नुकसान।।१।।

बच-बचन, विचार। **करम**-कर्म। **रस कसहि**-स्वादों में। **लुभाना**-लुभावना। **बिनसि गिया**-मृत्यु आ गई। **कहूँ**-गन्दी जगह।

बाजी जगु-सृष्टि का सृजन। **बाजीगर**-सृजनहार। **बनिआई**-पड़ गई।।३।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४८७

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

कमाल की बात है कि गुरु रविदास जी महाराज ने विकारों को मनुष्य के मुख्य बैरी बताने के लिए अनेकों ढंगों से और अनेकों नाम दे कर निरूपित किया है। 'रहाउ' के बीच पांच विकारों को मनुष्य के पांच प्रमुख भावनाओं के रूप में उजागर किया है। जैसे खुशी में नाचना, देखना, सुनना, बोलना, भागना। इस प्रकार मनुष्य का सारा शरीर ही विकारों की पकड़ में जकड़ा हुआ है। गुरु जी ने देखने की प्रक्रिया को ज़ोरदार महत्व दिया है। 'देखै देखै' दो बार आया है। यदि मनुष्य विकारों को देख कर परखने की जगह प्रभ को देख कर उसके अद्भुत दर्शनों से आनंदित हो जाए तो जीवन सफल हो जाता है। यह विचार अगली तीन बंदों बन्द में खोलकर स्पष्ट किया गया है।

बन्द नंबर 1 में मनुष्य की अजीबो-गरीब दयनीय और दुखदाई हालत को दर्शाया गया है। मनुष्य को जब कुछ धन या जयदाद आदि मिल जाती है, तो अहंकार से भर कर अपने-आप में नहीं समाता है। जब धन संपत्ति का नुकसान हो जाता है, तो पिट उठता है। मनुष्य को दोनों तरफ से ही मार पड़ती है। सामंती का अहंकार किसी न किसी दुख को तैयार करता है और धन संपत्ति का नुकसान पूर्ण करने के लिए दूसरों के साथ धोखे करता है। इस प्रकार अमल के बीच मनुष्य विकारों के हाथों बंदर की तरह नाचता-फिरता है।

बन्द नंबर 1 में तो धन दौलत संबंधी विचार आधारित कर्म है। बन्द नंबर 2 में स्पष्ट किया गया है कि यह धन दौलत का आधार दरअसल बुनियादी तौर से, मानवीय मन में विकार, मन के विकारों के कारण विचारों के बीच विचार तथा दोनों के विकारों के कारण कर्म के बीच भी विकार ही हैं। अत: मनुष्य इन विकारी स्वादों में फंसा हुआ है और पता नहीं मौत किस समय, किस बुरे स्थान पर जा टिकेगी।

अन्तिम बन्द नंबर तीन में गुरु जी विश्व के सभी मनुष्यों को संबोधित करते हुए फरमाते हैं, कि ये भाई! यह सृष्टि, इस के सृजनहार की ही खेल है। मेरी प्रीत तो इस सृष्टि के सृजनहार के साथ हो गई है। इसलिए मैं इन विकारों के भयानक दुखों से मुक्त हो गया हूं।

शब्दार्थ - यह मिट्टी से बना हुआ मिट्टी का पुतला मानवीय विकारों के जाल में फंसा हुआ, किस प्रकार नाच रहा है? दुनिया के काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार में इतना ग्रसित हो गया है, कि देख-देख कर अंधा हो रहा है। सुन कर बहरा और बातचीत में अज्ञानी बन कर पागल हुआ फिरता है। परिणाम स्वरूप मनुष्य हर तरफ से माया के जाल में पूरी तरह जकड़ा हुआ है।।१।। रहाउ।।

ऐसी पागलपन की अवस्था में मनुष्य को जब कुछ धन प्राप्त होता है तो अहंकारी बन जाता है और जब नुकसान होता है तो पिट उठता है, दुखी होकर तड़पता है।।१।।

इस सब कुछ का आधार हैं मन, विचार और इन के अनुसार मनुष्य के कर्म। मनुष्य के मन पर विकारों का कठिन शक्तिशाली कब्ज़ा है। इस कारण विचार भी विकारों के साथ ही ओतप्रोत हैं। इन विचारों के अनुसार ही मनुष्य कर्म करके विकारों के विवादों में बुरी तरह लोभायमान हुआ फिरता है। फिर जब मौत आती है, तो पता नहीं कौन सा बुरा स्थान और ठिकाना मिलता है? बुरे कर्मों के कारण तो बुरा स्थान ही ठिकाना मिलता है।।२।।

गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं कि हे भाई! इस सारी सृष्टि के खेल की सृजनहार ही कर्ता है। मेरी प्रीत तो उस सृजनहार से हो गई है। प्रभ की कृपा से मैं माया के शिकंजे से मुक्त हो गया हूं।।३।।६।।

शब्द - 13

गुजरी श्री रविदास जी के पदे घर ३

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ॥
फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ॥१॥
माई गोबिंद पूजा कहा लै चरावउ॥
अवरु न फूलु अनूपु न पावउ॥१॥ रहाउ॥
मैलागर बेर्हे है भुइअंगा॥
बिखु अंम्रितु बसहि इक संगा॥२॥
धूप दीप नईबेदहि बासा॥
कैसे पूज करहि तेरी दासा॥३॥
तनु मनु अरपउ पूज चरावउ॥
गुर परसादि निरंजनु पावउ॥४॥
पूजा अरचा आहि न तोरी॥
कहि रविदास कवन गति मोरी॥५॥१॥[1] **(पृष्ठ ५२५)**

पद अर्थ - **बछरै**-बछड़ा, गाय का बच्चा। **थनहुं**-थनो से। **बिटारिउ**-बिगाड़ना, अपवित्र करना। **मीनि**-मछली ने।।१।।

माई-हे माता, जननी। **कहा लै**-कहां से। **चरावहु**-चढ़ाना, भेंट करना, अर्पित करना। **अबरू**-अन्य, दूसरा। **अनूप**-अनूठा, अद्वितीय, सुंदर, निराला, अनुपम।।१।। रहाउ।।

मैलागर-चंदन के पेड़ों से भरपूर पहाड़। **बेरहे**-लिपटना। **भुईअंगा**-अजगर, सांप। **विखु**-ज़हर। **इक संगा**-एक साथ, इकठ्ठे।।२।।

निवेदहि-नैवेद्य करना, चढ़ाना। **बासा**-सुगंध, चंदन की खुश्बू।।३।। **अरपउ**-सपुर्द करां। **गुरु प्रसादि**-गुरु रूपी प्रसाद अर्थात् गुरु की कृपा से। **निरंजनु**-प्रभ।

अर्चा-आदर, सतिकार। **कबन**-कैसे, किस प्रकार। **गति**-चाल, अवस्था।।५।।१।।

---

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ५२५

पूजा सामग्री का नया सिद्धांत

इस शब्द में हिंदू धर्म के अनुसार मूर्ति या देवताओं की पूजा के लिए प्रयोग की जाने वाली पूजा सामग्री को रद्द किया गया है, क्योंकि जहां दूध देने वाला जीव है, वही उसका बच्चा उसको पीकर जूठा कर देता है जहां फूल हैं वहां भंवरा भी उसके रस को पीने के लिए मौजूद है और जहां पानी है, वहां पर ही पानी के अंदर जीव पैदा हो जाते हैं। इसलिए यह संबंध कुदरती है अटूट है इस कारण सामग्री के बीच प्रयोग की जाने वाली अन्य वस्तुएं भी किसी न किसी तरह अपवित्र और जूठी हैं।

इसलिए इसकी जगह पर नई नकोर अचंभित कर देने वाली पूजा सामग्री का ज़िक्र किया गया है उनकी पूजा सामग्री है तन और मन। इनकी एकाग्रता के बिना प्रभ प्राप्ति संभव नहीं है दूसरे इस हिंदू धर्म की सामग्री को न प्रयोग करने का कारण सामग्री का जूठा और अपवित्र होना है। यह दलील तर्क पर भी पूरी उतरती है और है भी वैज्ञानिक सत्य। गुरु रविदास जी के इस वैज्ञानिक सत्य को झुठला नहीं जा सकता है। इसलिए गुरु जी ने हिंदू धर्म की पूजा सामग्री को तर्क और वैज्ञानिक आधार पर रद्द किया है, क्योंकि यह केवल कर्मकांड है। इसकी पूजा सामग्री के लिए बिल्कुल ही ज़रूरत नहीं है, इसकी जगह पर जो सामग्री प्रभ पूजा के लिए रविदास जी ने ज़रूरी करार दी है वह तर्क युक्त है और वैज्ञानिक आधार पर भी पूरी उतरती है। इसके बिना न तो पूजा हो सकती है और न ही प्रभ प्राप्ति। इसलिए गुरु रविदास जी ने हजारों सालों से चली आ रही हिंदू धर्म की कर्मकांडी पूजा सामग्री को रद्द कर दिया है, जिसकी प्रभ प्राप्ति के लिए बिल्कुल ही ज़रूरत नहीं है। इसकी जगह पर एक नई नवीनी तर्क युक्त और वैज्ञानिक सत्य की धारण करने योग्य पूजा सामग्री पवित्र तन और मन प्रदान की है। इसके बिना प्रभ प्राप्ति हो ही नहीं सकती है। यह प्रभ प्राप्ति के लिए अटल सिद्धांत है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में केवल पूजा सामग्री के बारे में ही अपने विचार व्यक्त किए हैं। उन के परंपरावादी हिंदू धर्म की पूजा सामग्री दूध और पानी फूल आदि को रद्द किया है। इस बन्द नंबर 1 में दी गई सामग्री का जीवों के साथ कुदरती और अटूट संबंध है। जिस कारण बछड़े, मछली, हाथी और भंवरे ने कुदरती ही इन वस्तुओं को अपवित्र और जूठा कर दिया है। इस कारण ये वस्तुएं प्रभ के आगे भेंट करने के योग्य नहीं हैं।

इसी कारण रहाउ के बीच वे प्रश्न करते हैं, कि हे माई! मैं प्रभ पूजा के लिए, पूजा सामग्री कहां से लाकर भेंट करूं अर्थात् पवित्र फूल कहां से प्राप्त करूं? कहां से मिल सकते हैं? पवित्र पूजा सामग्री की अनुपलब्धता के कारण वह दुखी हो कर तड़पते हैं और अधीर हो कर बड़ी करुणामय हालत में पूछते हैं कि अब मैं सुंदर प्रभ की प्राप्ति नहीं कर सकूंगा।

यहां पर ही बस नहीं है, बन्द नंबर दो में ऐसी हिंदू धर्म की पूजा सामग्री की बात करते हैं, जो बुरी सँगत के कारण अपवित्र बन गई है। वह स्पष्ट करते हैं, कि चंदन के वृक्षों के साथ हर पल विषैले अजगर लपेटे मार कर लटके हुए हैं अर्थात् लिपटे रहते हैं। उन्होंने विष उगल-उगल कर चंदन को गंदा और जूठा कर के ज़हरीला कर दिया है। इस तरह समुंद्र के पानी में भी विष और अमृत एक स्थान पर निवास करते हैं। इसलिए वह भी अब अपवित्र है और प्रभ पूजा के लिए चढ़ाने योग्य नहीं है।

बन्द नंबर 3 में धूप, चिराग और अनेकों खाने वाली वस्तुओं से बनाया गया, मूर्तियों और देवताओं के आगे चढ़ाने वाला प्रसाद मनुष्य की उपज है। इन वस्तुओं की तैयारी के समय यह धूप, चिराग और प्रसाद अपवित्र हो जाते हैं, क्योंकि तैयारी करने वाला ही इन वस्तुओं की सुगंधि ले लेता है। दूसरे इस पूजा सामग्री को भेंट करने वाला कुदरती ही भेंट चढ़ाने से पहले ही इनकी सुगंधि लेकर इन को अपवित्र कर देता है, फिर हे प्रभ! यह आप का दास आप की पूजा किस प्रकार करे?

बन्द नंबर 4 में उपरोक्त सारी सामग्री रद्द कर के वह अपनी नई नकोर और पूजा सामग्री का ज़िक्र करते हैं, जिसके बिना प्रभ पूजा हो ही नहीं सकती। गुरु जी प्रभ को संबोधित करते हुए फरमाते हैं, कि हे प्रभ! आप की पूजा सामग्री अपना तन और मन अर्पण करता हूं। यह सामग्री गुरु की कृपा से स्वीकार होने के बाद ही प्रभ प्राप्ति संभव हो सकती है।

अन्तिम बन्द नंबर 5 में फिर हिंदू धर्म की जूठी और अपवित्र सामग्री के बारे में स्पष्ट करते हैं, कि यह आप के भेंट करने के योग्य नहीं है, परंतु आप को भेंट करने के लिए, हे प्रभ! पवित्र सामग्री उपलब्ध नहीं हो सकती है. यह संभव ही नहीं है। यदि ऐसी सामग्री से ही प्रभ की पूजा हो सकती है, तो ऐसी स्थिति के बीच मेरा क्या हाल होगा? क्या ऐसी स्थिति में, मैं प्रभु प्राप्ति नहीं कर सकता हूं? इस कारण गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि उपरोक्त हिंदू धर्म की पूजा सामग्री प्रभु को स्वीकार अर्थात् स्वीकार्य नहीं है। उन का अपना कथन है-

पूजा अरचा आहि न तोरी॥

इसलिए वह बड़ी परिपक्वता के साथ हिंदू धर्म की पूजा सामग्री को रद्द करते हैं और इसकी जगह नई नकोर पूजा सामग्री मन और तन को प्रदान करते हैं, जिस से प्रभ प्राप्ति की जा सकती है।

शब्दार्थ- गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि हिंदू धर्म की पूजा सामग्री दूध, फल-फूल, पानी आदि जूठे होने के कारण, प्रभु पूजा में भेंट करने योग्य नहीं है। बछड़े, भंवरे, मछली और हाथी का इन के साथ कुदरती और अटूट संबंध होने से कुदरत ने ही सभी वस्तुओं को जूठा कर दिया है। इसलिए ये वस्तुएं मूलभूत तौर से अपवित्र और झूठी हैं। इस के साथ प्रभ प्राप्ति नहीं हो सकती है।।१ ।।

इस कारण गुरु रविदास जी अधीर होकर करुणा के बीच भरपूर तड़फ उठते हैं और फरमाते हैं, कि हे माई! मैं पूजा के लिए पूजा सामग्री कहां से ले कर आऊं? यह सब कुछ तो अपवित्र है अर्थात् पवित्र फूल मिल नहीं सकते। क्या मैं इस पूजा सामग्री के बिना प्रभु प्राप्ति नहीं कर सकूंगा।।१ ।। रहाउ ।।

यहीं पर बस नहीं है, उपरोक्त पूजा सामग्री में चंदन और अमृत को शामिल किया गया है। हे प्रभ! चंदन और अमृत तो बुरी संगत कर के अपवित्र और जूठे हैं। चंदन के साथ लिपटे विषैले सांपों ने अपने विष से चंदन को जूठा और अपवित्र कर दिया है। पानी जीवों को मारने वाली हाइड्रोजन और जीवन दात्री ऑक्सीजन के सहयोग से बना हुआ है अर्थात् विष और अमृत एक स्थान पर रहते हैं। इस के साथ भी आपकी पूजा नहीं हो सकती है।

धूप, चिराग और नैवेद्य (अर्पित करने योग्य) मनुष्य की अपनी उपज है। इस की तैयारी के समय ही ये अपवित्र हो जाते हैं, दूसरे पूजा पर चढ़ाने वाला मनुष्य ही, प्रभ को यह सामग्री अर्पण करने से पहले ही इस की सुगंधि लेकर, इस को अपवित्र कर देता है। इस कारण हे प्रभ! ये वस्तुएं आप को भेंट करने के योग्य नहीं हैं।।२ ।।

हर किस्म की सामग्री को रद्द करने के पीछे गुरु रविदास जी प्रभ से पूछते हैं, कि हे प्रभ! आप का दास आप की पूजा किस प्रकार करे? अब मैं आप को किस प्रकार प्राप्त करूंगा।।३ ।।

अब रविदास जी महाराज अपनी पूजा सामग्री प्रभ को भेंट करते हुए फरमाते हैं कि, हे प्रभ! आप का दास आपकी पूजा के लिए अपना तन और मन अर्पण करता है। गुरु की कृपा से जब यह चढ़ावा प्रभ को स्वीकार हो जाएगा, उस समय ही मैं प्रभ को प्राप्त कर सकूंगा।।४ ।।

इसलिए, हे प्रभ! दूध, फल, जल, चंदन, अमृत, धूप, चिराग और नैवेद्य

(अर्पित करने योग्य) आदि जूठे और अपवित्र होने के कारण, आपकी पूजा के लिए चढ़ाने योग्य नहीं हैं। यह आपकी पूजा के लिए वैसे ही ज़रूरी नहीं हैं:

पूजा अरचा आहि न तोरी॥

यदि यही वस्तुएं आप की पूजा के लिए ज़रूरी होतीं तो इन अपवित्र वस्तुओं की उपलब्धि न होने के कारण आप की पूजा ही नहीं हो सकती थी। ऐसी स्थिति में मेरा क्या हाल होता? इसलिए मैं इन वस्तुओं की जगह अपना तन और मन पूजा के लिए चढ़ाऊंगा और प्रभ प्राप्ति की बख्शीश के लिए आराधना करता हूं।।५ ।।१ ।।

शब्द - 14

राग सोरठ वाणी गुरु रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही॥
अनल अगम जैसे लहरि मइ ओदधि
जल केवल जल मांही॥१॥
माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा॥
जैसा मानीऐ होइ न तैसा॥१॥ रहाउ॥
नरपति एकु सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी॥
अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी॥ २॥
राज भुइअंग प्रसंग जैसे हहि अब कछु मरमु जनाइआ॥
अनिक कटक जैसे भूलि परे अब कहते कहनु न आइआ॥३॥
सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई॥
कहि रविदास हाथ पै नेरै सहजे होइ सु होई॥४॥१॥[1]

(पृष्ठ ६५७)

पद अर्थ - **अनल**-हवा, पवन। **अगम**-बेअंत, बहुत ज्यादा। **अनल अगम**-तूफानी आंधी। **मइ**-बीच। **उदधि**-समुद्र।।१।।

अछत-होते हुए। **बिछुरत**-बिछुड़ कर।।२।।

राज-रस्सी। **भुईअंग**-सांप। **प्रसंग**-कथा, कहानी। **मरमु**-भेद। **जनाइया**-ज्ञान में लाया। **अनिक**-सं, संज्ञा, सोना। **कटक**-कड़ा।।३।।

घट-मन, शरीर। भोगवै-(भ को दो लगां हैं, इस के दो शब्द बनते हैं, भुगवै और भोगवै। भोगवे=इंद्रियों के कारण ग्रहण करे, पदार्थ से उपजा आनंद। **भुगवै**=भोगता है 'कोटि आनंद राजसुख भुगवै हरि सिमरत बिनसै सभ दुखु।।'[2] आत्मिक सुख भोगना। **पै**- से। **नेरै**-नज़दीक। **सहजे**-स्वाभाविक।।४।।१।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५७-५८ 2. वही - पृष्ठ : ७१७

गुरु रविदास जी और विज्ञान

प्रो. त्रिलोचन सिंह फिजिक्स विभाग खालसा कॉलेज पटियाला पुस्तक के सबसे पहले स्टार लगे हुए, हरे रंग के पृष्ठ (पृष्ठ नंबर नहीं है) के ऊपर लिखते हैं -

भौतिक विज्ञान (Physics)

सफेद रोशनी को जब प्रिज़्म के बीचो बीच गुज़ारा जाता है तो यह सात रंगों में विलीन हो जाती है। इससे सिद्ध होता है कि सफेद रंग की रोशनी असल में सफेद न होकर सात रंगों का मिश्रण है। इसलिए जिस प्रकार हम चीज़ों को देखते हैं, वे असल में वैसी नहीं होती हैं। 'जैसा मानीऐ होइ ना तैसा।।'[1]

यह तुक गुरु रविदास जी के सोरठ राग के शब्द रहाउ 'जब हम होते तब तूँ नाही' में अंकित है। पूरा बंद इस तरह है-

माधवे किआ कहिए भ्रम ऐसा।।
जैसा मानीऐ होई ना तैसा।।२।। रहाउ।। पृष्ठ नंबर ६५७

गुरबाणी में रहाउ के बीच शब्द का मुख्य विचार होता है और बाकी शब्द उस के मुख्य विचार की व्याख्या होती है। गुरु रविदास जी इस रहाउ की व्याख्या इस शब्द के बन्द नंबर 4 में करते हैं -

सरबे एकु अनेकै सुआमी
सभ घट भोगवै सोई॥

गुरु रविदास जी 'रहाउ' की व्याख्या करते हुए स्पष्ट करते हैं कि प्रभ केवल और केवल एक हैं परंतु वह जीव, फूल, फल, पौधे, धरती और आसमान आदि अनेकों रूप धारण कर के विचरण कर रहा है और आप ही वह हर पदार्थ का अनंत भोग रहा है। पदार्थों का रस भोग रहा है, इसलिए यह तथ्य स्पष्ट हो गया है कि, जिस प्रकार सफेद रोशनी के सात रंग बन जाते हैं, वैसे ही एक ही प्रभ अनगिनत रूप धारण करता है। यह सृष्टि सृजन की अटल सच्चाई है। इस तरह

1. गुरबाणी तथा विज्ञान, प्रो. तरलोचन सिंह
पुस्तक का मुख्य पृष्ठ हरे रंग का स्टार वाला पृष्ठ।

गुरु रविदास जी भौतिक विज्ञान के सिद्धांत का सृजन कर के उस की व्याख्या भी करते हैं। रहाउ के बीच मुख्य बन्द नंबर 4 में दी गई व्याख्या स्पष्ट करती है, कि भौतिक विज्ञान के सिद्धांत का सृजन सचेत हो कर जान बूझकर किया गया है।

।। दुत विज्ञान।। (Biology)

गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 4 में केवल भौतिक विज्ञान का सिद्धांत ही नहीं दिया, उन्होंने इस बन्द की पहली तुक की दूसरी अर्ध के बीच दुत विज्ञान के सिद्धांत का भी सृजन किया है। प्रोफैसर तरलोचन सिंह दुत Biology विज्ञान की चर्चा करते हुए लिखते हैं -

> ''फूलों का भोग आकाश में उड़ रहे, छोटे छोटे जीव जंतुओं द्वारा होता है। फूलों का रस भी प्रभु आप और जीव-जंतुओं की जान भी वही परमात्मा है। 'रसि रसि भोग करे प्रभ मेरा।''[1]

उपरोक्त कथन में दी गई गवाही रसि रसि भोग करे प्रभ मेरा, को गुरु रविदास जी की गवाही और स्पष्टता प्रदान करती है। इस गवाही से यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि प्रभ आत्मिक और आर्थिक दोनों प्रकार का आनंद आप ही लेता है। इस तरह गुरु रविदास जी ने नीचे दिए तो खुद विज्ञान के सिद्धांत को परिपक्वत तौर से स्पष्ट करती है।

सरबे एकु अनेकै सुआमी
सभ घट भुोगवै सोई॥

अत: ब्रह्मण्ड के ज़र्रे-ज़र्रे में प्रभ आप ही विराजमान हैं। दूसरे अर्थों में ब्रह्मण्ड का ज़र्रा-ज़र्रा जीवित है। इस तथ्य को सर जगदीश चंद्र बोस भी स्पष्ट करते हैं, कि हर कण-कण में जीवन है।

अब हम इसी सिद्धांत पर और गहराई में जा कर विचार करते हैं।

गुरु रविदास जी महाराज, परिपक्वता से स्पष्ट करते हैं कि पारब्रह्म हर घट में अर्थात् सृष्टि के कण-कण में आप ही विचर रहा है अर्थात् मिट्टी, पौधे, जानवर, पानी, हवा, खला और मनुष्य आदि में वही पारब्रह्म ही विराजमान हैं। चारों खाणीया अंडज, जेरज, सेतज और उत्तभुज के द्वारा सृजित की जा रही सृजना में वही विराजमान है। उस के बिना जीव एक पल भी जीवित नहीं रह

1. वही - पृष्ठ दर्ज नहीं है, स्टार लगा हरे रंग का पृष्ठ)

सकता है। इस का अर्थ यह हुआ कि मनुष्य, पौधे, जानवर, मिट्टी, धातुएं, हवा, खला सभी में उस प्रभ, परमात्मा की ज्योति/आत्मा विराजमान है। इसी तथ्य को गुरु रविदास जी अपनी वाणी में निरूपित करते हैं-

एक ही एक अनेक होई बिस्थारिउ
आन रे आन भरपूरि सोउ। रहाउ।। पृष्ठ १२९३

अत: यह तथ्य स्पष्ट हो गया है, कि प्रभ परमात्मा ही सृष्टि के कण-कण में विराजमान है।

यहीं बस नहीं, गुरु रविदास जी यह भी स्पष्ट करते हैं कि, मिट्टी, धातुएं पौधे, जानवर आदि में विराजमान प्रभ परमात्मा स्वयं ही सब कुछ भोग रहा है अर्थात् पौधे, जीव, मनुष्य आदि दुख सुख भोगते अर्थात् जीते हैं। यहां तक कि वे रुकावट भी महसूस करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पौधे भी दिल रखते हैं क्योंकि दिल के बिना महसूस नहीं किया जा सकता। जहां दिल है, वहां दिमाग भी है, क्योंकि दुख सुख का अहसास दिमाग के द्वारा ही होता है। स्पष्ट है कि मनुष्य, पौधे धातुएं आदि का दिल भी हैं, उन का दिल भी है और दिमाग भी रखते हैं और किसी अजनबी को अपनी ओर आते देख कर अनुभव भी करते हैं। यदि मनुष्य, पौधे, धातुएं आदि का दिल भी है तथा दिमाग़ भी। इस कारण वे महसूस करते हैं तथा भांपते भी हैं तो निश्चय ही उनकी अपनी-अपनी भाषा भी है। सारे भौतिक शरीर बोलते भी हैं। यह विचार गुरु रविदास की वाणी में दर्ज है -

सर्वे एक अनेकै सुआमी।
सभ घटु भुोगवै सोई।। पृष्ठ ६५७

उपरोक्त चर्चा से सिद्ध हो गया है कि, जानवर, जीव, पौधों आदि सब में प्रभ परमात्मा आप ही विराजमान है और सब के बीच बैठा हुआ है। वह सब कुछ आप ही आनंद भोगता और महसूस करता है। इस की पुष्टि करते हुए भाई काहन सिंह नाभा महान कोश के पृष्ठ नंबर 693 में भोग के अर्थ करते हैं, '2 दो सं. (भुज) धा-झुकना, आनंद लेना, भोगना (खाना) सुख दुख का अनुभव करना।'

इन तथ्यों को वैज्ञानिक सिद्धांत ने भी स्पष्ट कर दिया है और इस तर्कसंगत सिद्धांत को उपकरण (Machine) जिस का नाम क्रैसकोग्राफ (Crescograph) है, द्वारा भी सिद्ध कर दिया है। सर जगदीश चंद्र बोस ने

वैज्ञानिक खोज करके सिद्ध कर दिया है, कि पौधों का दिल है, वे महसूस करते हैं, देखते भी हैं और अपनी ओर आने वाले अजनबी की समझ भी रखते हैं। वैज्ञानिक इस मशीन द्वारा अद्भुत तथ्यों की जानकारी देते हैं –

'The crescograph proved that Bose had not been wrong. It showed that plants have hearts and are capable of feeling. The crescograph indicates that plants have a keen sight and react to rays of light and wireless waves. The machines proved that plants have a special sense which tells them of the approach of a stranger'[1]

अर्थ – क्रेसकोग्राफ ने साबित कर दिया है कि बोस गलत नहीं थे। इस मशीन ने स्पष्ट किया है कि, पौधों के भी दिल होते हैं और वे महसूस करने में समर्थ हैं। क्रेस्कोग्राफ ने स्पष्ट किया है कि, पौधों की नज़र तेज़ है और प्रकाश की किरणों और वायरलैस की तरंगों से पौधे प्रतिक्रिया प्राप्त करते हैं। इस मशीन ने यह स्पष्ट साबित किया है कि पौधे खास किस्म का ज्ञान रखते हैं, जो उनको अजनबी के नजदीक आने के बारे में सूचित करता है।''

बोस ने केवल पौधों के जीवित होने के बारे में ही नहीं बताया है। उसने यह भी साबित किया है कि धातुएं भी जीवित हैं। विज्ञानक उन की प्राप्तियों के बारे में बताते हुए लिखते हैं –

"He said that plants and metals had a life their own and could become "tired", "depressed" or "happy".[2]

अर्थ : उस ने (सर जगदीश चंद्र बोस) कहा है, कि पौधे और धातुओं की अपनी किस्म की ज़िंदगी है, वे थकते भी हैं, दुखी या खुश भी होते हैं।

अब तो विज्ञान ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि पौधों की अपनी भाषा है तथा ये अपने दुख-सुख बोलते और बताते हैं।

जब गुरु रविदास जी महाराज सब 'सभ घटु भोगवै सोइ' के तथ्यों को प्रकट करते हैं तो वह इस अटल सच्चाई को प्रकट करते हैं, कि पौधे धातुएं

1-2. Language through Literature - 1. English Reader for Class IX, Page-58

अर्थात् हर किस्म के पदार्थ जीवित हैं और हर किस्म का आनंद, दुख भोगते हैं, यहां तक कि पौधे और धातुएं पदार्थ थकावट भी महसूस करते हैं। भोगवै शब्द हर किस्म के दुख सुख खुशी आदि की प्रक्रिया को प्रकट करता है। जिस को सर जगदीश चंद्र बोस ने बीसवीं शताब्दी में मशीन की सहायता से साबित कर दिया है, जो भेद गुरु रविदास जी ने पौधों, धातुओं और पदार्थों का आज से 625 साल पूर्व खोला था, उस को वैज्ञानियों ने मशीन की सहायता से साबित कर दिया है। गुरु रविदास जी के कथन अनुसार –

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा॥
जैसा मानीऐ होइ न तैसा॥१॥ रहाउ॥

इसमें निरूपित अटल सच्चाई को प्रकट कर के भ्रम अर्थात् रहस्य को खोल दिया है। गुप्त को प्रकट कर दिया है। अरूप को रूप प्रदान कर दिया है। विज्ञान ने बीसवीं शताब्दी में पूर्ण रूप में इस की पुष्टि की है। दरअसल अटल सच्चाई के रहस्य को गुरु रविदास जी ने इस 'रहाउ' वाले शब्द के बन्द नंबर 4 में ही खोल कर स्पष्ट कर दिया था जिस की व्याख्या ऊपर दी जा चुकी है।

इस प्रकार गुरु रविदास जी महाराज, एक ही शब्द में भौतिक विज्ञान (Physics) और दुत विज्ञान (Biology) के सिद्धांत का सृजन कर के महान वैज्ञानिक के तौर पर प्रकट होते हैं।

अत: उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो गया है कि संसार के जाने-माने वैज्ञानिक सर जगदीश चंद्र बोस ने गुरु रविदास जी की अटल सच्चाई की पुष्टि करके साबित कर दिया है, कि गुरु रविदास जी उच्च कोटि के महान वैज्ञानिक हैं।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द में गुरु रविदास जी ने मनुष्य के मन में बहम, भ्रमों का ज़िक्र कर के और गहरे और तीक्ष्ण दुख को प्रकट कर के उस की मनोदशा को प्रकट किया है। फिर वहम, भ्रमों को मनुष्य के मन से दूर कर के, प्रभ के साथ मिलाप का ज़िक्र भी किया है। यही राग सोरठ की बुनियाद की ज़रूरत है। ''सोरठि सदा सुहागणी जे सच्चा मनि होये।।''

बन्द नंबर 1 में स्पष्ट किया गया है कि जब तक मनुष्य के मन में विकार रहेंगे, प्रभ मिलाप नहीं हो सकता। जब मनुष्य विकारों, वहमों, भ्रमों पर काबू पा लेता है, तब मनुष्य और प्रभ के बीच भी भेद मिट जाता है। गुरु जी इस स्थिति को उदाहरण देकर समझाते हैं, कि जब मन रूपी समुद्र में विकार भ्रम रूपी तूफानी हवा थी, तब मन समुद्र के बीच उठ रही लहरें समद्र से अलग ही दिखाई देती हैं। इसी तरह मनुष्य के मन की भी विकारों, भ्रमों के कारण प्रभ के साथ उत्पन्न विष के कारण जीव समझता है, कि प्रभ उससे अलग है। यही भ्रम है, संदेह है, जिस को गुरु जी जीव के मन में से निकाल कर स्पष्ट कर देना चाहते हैं, कि जीव और प्रभ के बीच कोई अन्तर नहीं है। फर्क भ्रमों और विकारों के कारण है। जब विकार रूपी तूफानी आंधी रुक जाती है, तब मन रूपी समुद्र के बीच उठी लहरें शांत हो कर समुद्र में ही समा जाती हैं। समुद्र की लहरों का भेद मिट जाता है, इसी तरह जब मन के बीच विकार मिट जाते हैं, तो मनुष्य और प्रभ का भेद मिट जाता है। यह भ्रम दूर हो जाता है कि प्रभ मनुष्य से अलग है। प्रभ तो मन मंदिर के अंदर ही है। विकारों और भ्रमों के मिटने के साथ प्रभ और जीव का मिलाप हो जाता है।

'रहाउ' में गुरुजी स्पष्ट करते हुए फरमाते हैं कि, हे प्रभ! हम भ्रमों, संदेहों के बारे क्या कह सकते हैं? जैसा माना जाता है, समझा जाता है, होता बिल्कुल उस के विपरीत है। यह भ्रम और संदेह हैं, जिस कारण हम वास्तविकता से दूर हो जाते हैं।

प्रस्तावना नंबर 2 में इन भ्रमों, संदेहों को गुरु जी उदाहरण द्वारा और स्पष्ट

करते हैं, कि एक राजा अपने तख्त पर सोया हुआ था। सपने में भिखारी बन जाता है। राज के होते हुए भी राज के बिछोड़े के कारण बहुत दुखी हो जाता है। इसी तरह गुरु जी फरमाते हैं कि मनुष्य, प्रभ बिछोड़े में तड़प रहा है, बहम, भ्रमों ने मनुष्य को प्रभ से विछोड़ दिया है।

इस प्रकार के भ्रमों और संदेहों को निकालने के लिए, गुरु रविदास जी बन्द नंबर 3 में रस्सी और सांप, सोना और सोने से बने हुए कड़ों (कंगनों) के उदाहरण दे कर मनुष्य के मन में पड़ी भ्रमों की गांठ को खोलते हैं। रस्सी और सांप की कथा प्रसिद्ध है, कि मनुष्य रस्सी को देखकर सांप का भ्रम खा जाता है। भ्रम में पड़ जाता है, परंतु है यह असलीयत से भिन्न। इसी तरह सोना और सोने से बने कड़े का भ्रम पड़ जाता है, कि सोने का कड़ा सोने से भिन्न है, अलग है, परंतु असलीयत इस से बिल्कुल भिन्न है। जब मनुष्य को असलीयत का ज्ञान हो जाता है, तो वह भ्रमों, संदेहों में से निकल जाता है। जिस तरह सोना और इस से बना सोने का कड़ा एक ही है, कोई अंतर नहीं है। इसी तरह प्रभ और प्रभ द्वारा सृजित दोनों एक ही हैं, कोई अंतर नहीं है। इस तरह प्रभ और मनुष्य भी एक ही हैं।

इसी कारण बन्द नंबर 4 में प्रभ मिलन के बाद रविदास जी डंके की चोट पर कहते हैं, कि प्रभ केवल और केवल एक ही है। उस एक प्रभ से ही मनुष्य का सृजन हुआ है। वहीं हर घट के बीच और सृष्टि के कण-कण में विचर रहा है और वही हर घट अर्थात् शरीर, मन के बीच आत्मिक और पदार्थक आनंद भोग रहा है। वह तो हाथ से भी नज़दीक है, उस की जैसी मर्जी होती है, जैसा स्वाभाविक होता है, वैसा ही रहता है।

इस तरह मनुष्य को भ्रमों, संदेहों में से निकाल कर प्रभ की असलीयत का बोध कराया गया है, कि प्रभ और मनुष्य एक ही हैं। प्रभ मनुष्य से दूर नहीं है, मन में ही है । विकारों को मन में से निकालकर अर्थात् अपने आपको मिटा कर प्रभ प्राप्ति हो जाती है।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी प्रभ को संबोधित करते हुए स्पष्ट करते हैं, कि हे प्रभ! जब मैं भ्रमों-वहमों और विकारों के कारण अहंकारी था, उस समय आप मेरी नज़रों से दूर थे। अब जब मैं विकारों से मुक्त हो गया हूं, मेरी मैं मर गई है। आप ने दर्शन दे दिए हैं, जैसे तेज़ तूफान के कारण समुद्र के बीच लहरें उठती हैं, तब भ्रम पैदा होता है, कि समुद्र से लहरें अलग-अलग हैं परंतु जब आंधी रुक जाती है, तूफान रुक जाता है, तब समुद्र और लहरें पुनः एक हो जाती हैं, एक ही रूप बन जाते हैं। उसी तरह अब तेरे और मेरे बीच कोई अंतर नहीं रहा है।।१।।

इस कारण हे प्रभ! हमें भुलेखे के कारण, भ्रम के कारण पता नहीं लगता है, कि असलीयत क्या है? जैसा हम मानते हैं, समझते हैं होता बिल्कुल इसके विपरीत है। इस कारण यह भ्रम, संदेह है, जिस कारण हम असलीयत को समझने में असमर्थ हैं।।१।। रहाउ।।

ऐसे भ्रमों और संदेहों के कारण ही तख्त के ऊपर सोए हुए राजा को स्वप्न में भिखारी बन कर, राज के होते हुए, राज बिछोड़े के कारण अति दुख भोगना पड़ता है। इस कारण हे प्रभ! भ्रमों संदेशों में पड़ने के कारण आप से बिछुड़ कर मेरी भी यही हालत हो गई है।।२।।

इन भ्रमों और संदेहों में से निकालने के लिए गुरु जी रस्सी, सांप का प्रसंग और सोने, सोने से बने कंगनों का उदाहरण दे कर मनुष्य को असलीयत का बोध करवाते हैं।

प्रभ की मेहर से जब यह स्पष्ट हो जाता है कि, रस्सी साँप नहीं है और न ही सोने के बने कड़े सोने से भिन्न हैं, तो भ्रम, संदेह दूर हो जाते हैं। तब यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि प्रभ और मनुष्य तो एक ही है।।३।।

प्रभ मिलाप के बाद गुरु जी सिद्ध करके परिपक्व करते हैं, कि हे रविदास! कह दो कि प्रभ केवल और केवल एक ही है। वही सारी सृष्टि के बीच अनेकों रूप धारण कर के कण-कण में प्रसारित है अर्थात् जीव मनुष्य और प्रभ एक ही हैं। इस कारण वही हर जीव के बीच आत्मिक और पदार्थक आनंद भोग रहा है। वह हाथ से भी नज़दीक है। उस की जैसी मर्जी होती है, स्वभाविक ही होता रहता है।।४।।१।।

शब्द - 15

राग सोरठ वाणी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जउ हम बांधे मोह फास
हम प्रेम बधनि तुम बाधे॥
अपने छूटन को जतनु करहु
हम छूटे तुम आराधे॥१॥
माधवे जानत हहु जैसी तैसी॥
अब कहा करहुगे ऐसी॥१॥ रहाउ॥
मीनु पकरि फांकिओ
अरु काटिओ रांधि कीओ बहुबानी॥
खंड खंड करि भोजनु कीनो
तऊ न बिसरिओ पानी॥२॥
आपन बापै नाही किसी को
भावन को हरि राजा॥
मोह पटल सभु जगतु बिआपिओ
भगत नही संतापा॥३॥
कहि रविदास भगति इक बाढी
अब इह का सिउ कहीऐ॥
जा कारनि हम तुम आराधे
सो दुखु अजहू सहीऐ॥४॥२॥[1] **(पृष्ठ ६५८)**

पद अर्थ - **फास**-फाही। **आराध्य**-भक्ति करके।।२।।

फांकिओ-टुकड़े-टुकड़े करना। **राधि**-पका कर। **बहु बानी**-कई ढंगों से।।२।। **भावन**-प्रेम। **पटल**-विकारों का पर्दा।। **वियापयो**-पसारा हुआ है। **सन्ताप**-दुख।।३।। **बाढी**-विकसित, स्वीकार। **अजहु**-अब तक।।४।।२।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५८

सरबत सब के भले का सिद्धांत

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में प्रभ प्राप्ति के साथ मनुष्य की मुक्ति से आरम्भ करके समूची मानवता के मोह-माया, दु:खों तथा सर्व रोगों (शारीरिक रोगों) से छुटकारे का सिद्धांत निरूपित किया है। गुरु जी व्यक्तिगत रूप में तो प्रभ के साथ बड़े ही पक्के प्रेम में बंध चुके हैं। उन्हें अब अपनी चिन्ता नहीं है, वह मोह माया, दु:खों तथा सर्व रोगों से स्वयं को मुक्त कर चुके हैं। अब तो उन्हें समूची मानवता की चिन्ता है।

इस कारण गुरु जी बन्द नं. 4 तथा 'घट अवघट' शब्द के बन्द नं. 2 में सरबत के भले के लिये प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभ! तेरे ब्रह्म ज्ञान ने ही तो मुझे स्पष्ट किया है कि एक तेरे (रविदास) पास ही ब्रह्म ज्ञान है, शेष विश्व की जनता के लोग, विशेषकर हिन्दू धर्म तथा इसके कर्ता-धर्ता ब्रह्मण लोग तो विषैले अज्ञान का प्रचार कर रहे हैं।

''मैं राम-नाम धन लादिया
बिखु लादी संसार।।२।।''

हे मेरे दाता! यह हिन्दू धर्म तथा इसके कर्ता-धर्ता तो तेरा नाम लेकर कहते हैं कि प्रभ ने ही जात-पात, छुआ-छूत पैदा की है (ऋग्वेद-10, 90, 11/12) तथा उसने (प्रभ ने) ही शूद्रों को प्रभ की भक्ति करने की सज़ा मृत्यु निश्चित की है, (वाल्मीक-रामायण-शम्भूक)। वह तो तेरा नाम लेकर ही ऐसे पाप व अत्याचार करते हैं, जिस कारण मानवता करहा उठती है। शूद्र यदि तेरा नाम सुनता है तो कानों में सिक्का ढाल कर या उबलता तेल डाल दिया जाता है। यदि शूद्र तेरा नाम लेते हैं तो जीभ काट दी जाती है। यदि वह तेरा नाम लेकर तेरी ही प्राप्ति के लिये तेरी भक्ति करता है तो उसे मृत्यु दंड दिया जाता है तथा तेरा नाम लेकर अनेकों अन्य इससे भी अधिक घिनौने अपराध किये जाते हैं।

इस कारण गुरु जी उपालंभ देते हुये, प्रार्थन करते हैं कि हे सर्व शक्तिमान प्रभ! मैं तो तेरी प्राप्ति के बाद भी वही दु:ख सह रहा हूं, जो तेरी आराधना से पूर्व सहन करता था। उनके कहने का तात्पर्य यह है कि मानवता विशेषकर शूद्र लोग अन-क्यासे (बिना अनुमान) अत्याचारों का शिकार हो रहे हैं। इसलिये

रोष प्रकट करते हुये गुरु रविदास जी तड़प उठते हैं।

इस प्रकार गुरु जी को अपना दु:ख नहीं है, उन्हें तो दु:खों में पिस रही जनता का दुख है। अब तो वह प्रभु को सरबत (सब के) के भले के लिये विशेष कर शूद्र/अछूतों के भले के लिये समूची मानवता को दुखों से मुक्त करने के लिये प्रार्थना करते हैं।

गुरु रविदास जी उपरोक्त समस्या का समाधान दो प्रकार से करते हैं, जिससे सब का भला हो सके।

(1) प्रभ एक है तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र में वह ही बसता है। वह ही एक से अनेक बनाता है, इस दुनिया में न कोई ब्राह्मण है तथा न ही शूद्र। मनुष्य केवल मनुष्य ही है।

(2) मनुष्य दु:खों से छुटकारा तभी पा सकता है यदि वह सत्संगत में मिल-बैठकर अपने अधिकारों की साहस तथा मेहनत से सुरक्षा करे, यदि आवश्यकता पड़े तो मधु-मक्खियों की तरह अपने नेता (रानी मक्खी अपने अधिकारों का प्रभ के हुक्म का हू-ब-हू पालन करे तथा अनुशासन में परिपक्व, ड्यूटी का पाबंद रह कर साथ में मधुर स्वभाव का सृजन भी करे।

सब के (सरबत) भले के लिये उपरोक्त गुणों से सम्पन्न होकर मनुष्य अपने प्रकृति की ओर से मिले अधिकारों, अपनी मर्जी से पूजा करना, अपनी इच्छा से काम का चयन करना, बिन रोक टोक के विचार प्रकट करना, हर क्षेत्र में समानता के अधिकार प्राप्त करना आदि की सुरक्षा करने में सक्षम हो जाता है। यदि कोई अधिकारों पर हमला होता है तो मधु-मक्खियों की तरह मनुष्य अपने अधिकार को बचाने के लिये अधिकार छीनने वाले को बख्शता नहीं, उसका मुकाबला करके सही सज़ा देता है। ऐसा करके वह प्रकृति के नियमों का भी पालन करता हो। दरअसल अधिकार छीनने के लिये हमला, विकारों का ही हमला है। इसलिये मधु मक्खियां (मधुप-मखीरा) की तरह सत्संगत के प्रभाव के कारण मनुष्य बड़ी दृढ़ता तथा परिपक्वता के साथ इन विकार युक्त हमलों का मुंह तोड़ उत्तर देता है, यह मुंह तोड़ उत्तर, दरअसल प्रभ के हुक्म का ही पालन है। (शूद्र का बुरा हाल इस कारण ही हुआ है कि वह अत्याचार सहने का आदी बन गया है तथा अधिकार प्राप्ति से मुंह मोड़ बैठा है। गुरु रविदास जी मनुष्य को विशेष कर शूद्र को अपने अधिकारों के लिये मर-मिटने का आदेश देते हैं) मधु-मक्खियां कुदरत द्वारा दिये गये हथियार से ही शत्रु का मुकाबला

करती हैं। उसी प्रकार मनुष्य भी आत्मिक शक्ति से विकारों तथा पापियों का मुकाबला करता है। इसलिये सरबत के भले के लिये सत्संगत अति ज़रूरी है।

''सति संगत मिलि रहीये माधव
जैसे मधुप मखीरा।।२।।''

इसलिये हे विश्व के लोगो, विशेषकर शूद्रो, अछूतो आओ, उठो तथा सन्त सूरमे बन कर गुरु रविदास जी के इस सच्चे-सुच्चे स्वप्न को साकार करके बेगमपुरा वतन का निर्माण करो। इसके बिना सरबत का भला सम्भव नहीं है।

इस प्रकार गुरु जी को अपना दु:ख नहीं है, उन्हें तो दु:खों में पिस रही मानवता का दुख है। अब तो वह प्रभ को सरबत के भले के लिये और समूची मानवता को दुखों से मुक्त करने के लिये प्रार्थना करते हैं।

इसलिए जितनी भी वाणी गुरु रविदास जी ने रची है, विश्व मानवता के भले के लिये ही रची है।

शब्द का अंतरीव (आन्तरिक) विचार-विधान

बन्द नं. 1 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि हे प्रभ! जब मुझे मोह ने फंसाया हुआ था, विकारों ने जकड़ा हुआ था, मैं तुझ से दूर था परन्तु मैंने तेरी आराधना करके, तेरी कृपा से इन विकारों को काबू कर लिया है। इस से छुटकारा पा लिया है तथा तेरा प्रेम प्राप्त कर लिया है। गुरु जी का यह प्रेम इतना गहरा, तीव्र ओर पक्का है कि वह प्रभ को चुनौति (Challange) दे देते हैं कि हे प्रभ! हम तो तेरी आराधना करके विकारों की कैद में से स्वतंत्र हो गये हैं, परन्तु अब तुझे हमने प्रेम के बंधन में इस प्रकार बांध लिया है कि तू इस प्रेम बंधन की कैद में से निकलने में समर्थ नहीं है, चाहे जितनी मर्जी प्रयास करके देख लो, आप इस प्रेम बंधन से स्वतंत्र नहीं हो सकते।

इस कारण 'रहाउ' में गुरु जी फरमाते हैं कि हे प्रभ! जिस प्रकार तेरी और मेरी प्रीत है, उसे आप भली-भांति जानते हैं। ऐसी स्थिति में आप क्या करेंगे? अब इस परिपक्व, तीक्ष्ण तथा अथाह प्रीत से आप छुटकारा नहीं पा सकते हैं।

ऐसे अटूट प्रेम को और स्पष्ट करने के लिये बन्द नं. 2 में गुरु जी मछली के पानी के साथ अटूट प्रेम का उदाहरण देते हैं। जिस प्रकार मछली को चीर कर उस के टुकड़े किये जाते हैं तथा फिर उसको छोटा-छोटा करके अनेक ढंगों से पकाया जाता है। फिर उसे दांतों से चबा-चबाकर बारीक करके खाया जाता है परन्तु ऐसी स्थिति में पहुंच कर भी अपने वजूद का नामो-निशान मिट जाने के बाद भी मछली पानी से अपना प्यार नहीं तोड़ती, वह तब भी पानी मांगती है। खाने वाले को विवश होकर मछली की इच्छा को पूरा करने के लिये पानी पीना पड़ता है। इसी प्रकार हे प्रभ! मेरा तथा तेरा प्रेम भी इतना ही अटूट तथा दृढ़ है, आप इस बंधन में से स्वयं को स्वतंत्र करने में समर्थ नहीं हैं।

इसी प्रेम के आधार पर बन्द नं. 3 में गुरु जी हिन्दू धर्म ग्रन्थों पर शक्तिशाली प्रहार करते हैं क्योंकि यह ग्रन्थ विश्व मानवता को नोच-नोच कर, तिल-तिल काट करके, तड़पा-तड़पा कर कत्ल करते हैं, विश्व व्यापी प्रभ को भी छिन्न-छिन्न, ज़र्रा-ज़र्रा कर बड़ी बेदर्दी से कत्ल करते हैं। इन ग्रन्थों के अनुसार ब्राह्मण स्वयं भगवान बन प्रभ भक्ति के दोष में शूद्र महर्षि शंभूक का 'भगवान

राम' से कत्ल करवाते हैं यही कारण है कि-

हिन्दू धर्म के ठेकेदारों, ब्राह्मणों आदि को स्पष्ट करते हैं कि प्रभ किसी के बाप की सम्पति नहीं है कि अन्य कोई अर्थात् शूद्र उसकी पूजा ही नहीं कर सकता। प्रभ तो उसका ही है, जिसका प्रेम उसको स्वीकृत हो जाता है। इस कारण चाहे सारी दुनिया मोह-माया के पर्दे में फंसी हुई इसका सन्ताप भोग रही है, परन्तु प्रभ के भक्त इस जाल में से निकल जाते हैं। अत: इस सन्ताप को नहीं भोगते। अत: प्रभ के घर कोई जात-पात, छुआ-छूत नहीं है, वह किसी के बाप की जागीर नहीं है। प्रभ को तो जो भी प्रेम करता है, वह ही उसका भक्त है।

इस कारण गुरु जी बन्द नं. 4 में प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभ! मेरी भक्ति, मेरा प्रेम तेरे साथ इतना बढ़ गया है कि यह दु:ख मैं अब तेरे सिवाय किस से कहूँ? मैं तो आज भी वही कष्ट सहन कर रहा हूँ, जिस कारण मैंने तेरी आराधना की है। वह दुख है बेआसरों का प्रताड़ित किये हुये लोगों का, शूद्रों का जिन्हें हे प्रभ! तेरी भक्ति करने से भी यातनाएं देकर, असली रूप में कत्ल करके, तेरी पूजा करने से भी रोका है। इस कारण हे प्रभ! जिस प्रकार तू महाशक्ति प्रदान करके मुझे अपनी शक्ति तथा स्वाभिमान प्राप्त करने की सामर्थ्य बख्शिश की है, समूची विश्वव्यापी मानवता, विशेषकर शूद्र/अछूत वर्ग को स्वाभिमान प्राप्त करने की सामर्थ्य बख्शिश कर!!! तेरे बिना इस का समाधान करने की सामर्थ्य किसी अन्य के पास नहीं है।

शब्द-अर्थ : हे प्रभ! जब मैं मोह और, विकारों की मजबूत जकड़ में था, तो मैंने तेरी आराधना करके इन पर काबू पा लिया है तथा इन से मुक्त हो गया हूं। अब मैंने तुझे अपने गहरे, तीक्षण और पक्के प्रेम बंधन में बांध लिया है। ऐसी स्थिति में गुरु रविदास जी प्रभ को चुनौती (Challenge) देते हैं कि हे प्रभ! अब हमने तुझे प्रेम की इतनी कड़ी कैद में डाल लिया है कि तेरी इस कैद में से निकलने की सामर्थ्य नहीं है, चाहे जितना मर्जी प्रयास करके देख लो। ऐसी चुनौती (Challenge) गुरु जी ने शब्द ''घट-अवघट डूगर घणा' में भी दी है। शब्द 'तोही मोही, मोही तोही' में गुरु जी प्रभ पर अहसान करते हैं कि यदि मैं पाप न करता, तो हे प्रभ! तुझे पवित्र पावन किसी ने नहीं कहना था।१।।

हे प्रभ! इस स्थिति में तेरे व तेरे प्रेम को आप अच्छी प्रकार से जानते हैं। ऐसी स्थिति में आप क्या करेंगे? अर्थात् अब आप मेरे इस परिपक्व, तीक्ष्ण तथा अथाह प्रेम से छुटकारा नहीं पा सकते हैं।।१।। रहाउ।।

उदाहरण स्वरूप गुरु जी मछली का उदाहरण देते हुये फरमाते हैं कि जिस प्रकार मछली को पकड़कर, उसके टुकड़े करके, छोटा-छोटा काट लिया जाता है तथा अनेकों प्रकार से उस को पका लिया जाता है, तत्पश्चात् दांतों से चबा-चबा कर उसे बारीक कर के खाते हैं। यह प्रेम की शक्ति का ही कमाल है कि मछली बारीक टुकड़ा-टुकड़ा होकर अपना बजूद गंवा कर भी पानी के प्रेम से अलग नहीं होती, अर्थात्, अपनी प्रेम शक्ति के बल से, मछली खाने वाले को पानी पीने के लिये विवश कर देती है। उसी प्रकार का प्रेम मेरा प्रभ के साथ है। अत: प्रभ भी बेवस है, इस प्रकार वह भी मेरी प्रेम कैद में से नहीं निकल सकता।।२।।

प्रभ के साथ प्रेम परिपक्वता प्रमाणित करने के पश्चात वह हिन्दू धर्म तथा उसके ठेकेदारों की इज़ारेदारी का गढ़ तहस-नहस करते हुये फरमाते हैं कि प्रभ किसी के बाप की पैतृक सम्पत्ति नहीं है, वह तो सभी का है। प्रभ तो उस का ही है, जो उसका प्रेम प्राप्त कर लेता है। इस कारण मोह-माया के जाल में फंसी समस्त दुनिया सन्ताप भोग रही है। दु:खों में पिस रही है। परन्तु प्रभ का भक्त, इस सन्ताप से मुक्त हो गया है।।३।।

इस प्रकार गुरु जी दुनिया के विशेषकर शूद्र लोगों के अन-क्यासे (अनुमान

के बिना) दुखों से तड़प उठते हैं तथा प्रभ के आगे उलाहमा देते हुये प्रार्थना करते हुये स्वयं को संबोधित करते है कि रविदास कह दो हे प्रभ! तेरा तथा मेरा प्रेम इतना बढ़ गया है कि अब मैं अपने दुख किसी ओर के आगे कह ही नहीं सकता और न ही किसी अन्य में इन दु:खों को काटने की क्षमता है। हे प्रभ! मैं तेरी प्राप्ति के बाद भी वही दु:ख सह रहा हूँ, जो इस प्राप्ति से पूर्व सह रहा था। हे मेहरबान! जनता (दुनिया) के विशेष कर शूद्रों के दु:ख काट कर सब का (सरबत) का भला करो जी।।४।।

शब्द - 16

राग सोरठ वाणी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ
बिरथा जात अबिबेकै॥
राजे इंद्र समसरि ग्रिह आसन
बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै॥१॥
न वीचारिओ राजा राम को रसु॥
जिह रस अनरस बीसरि जाही॥१॥ रहाउ॥
जानि अजान भए हम बावर
सोच असोच दिवस जाही।
इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि
परमारथ परवेस नही॥२॥
कहीअत आन अचरीअत अन कछु
समझ न परै अपर माइआ॥
कहि रविदास उदास दास मति
परहरि कोपु करहु जीअ दइआ॥३॥३॥[1] **(पृष्ठ ६५८)**

पद अर्थ - **जात**-जा रहा है। **अबिबेक**-अज्ञान। **समसरि**-बराबर। **किह लेखै**-किस काम?।।१।। **रसु**-आनंद। **अन**-और।।२।। रहाउ।।

जानि अजान-जानबूझ कर तथा अनजाने। **बावर**-मूर्ख, पागल। **सोच-असोच**-सोच-विचार कर तथा बिना सोचे-समझे। **इन्द्री**-ज्ञान इन्द्रियां तथा कर्म इन्द्रियां। **सबल**-शक्तिशाली, बलवान। **निबल**-कमज़ोर, निर्बल। **बिबेक**-ज्ञान, विचार। **परमार्थ**-परम अर्थ, आध्यात्मिक विचार।।२।।

अचरीयत-करता है। **अपर**-शक्तिशाली। **परहरि**-त्याग कर, छोड़कर। **कोपु**-क्रोध।।३।।३।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५८

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

इस शब्द के बन्द नं. 1 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि चौरासी लाख योनियों का चक्कर भुगतने के पश्चात् जीव बड़ी मुश्किल से पापों को त्याग कर पुण्य कमाता है। इस पुण्य के फल से ही जीव को मनुष्य का दुर्लभ जीवन प्राप्त होता है। इसका अर्थ यह है कि मनुष्य जन्म लेते समय पापों से भरा होता है। पिछले जन्म के पापों या बुरे कर्मों का प्रभाव मनुष्य के जन्म लेने से पहले ही समाप्त हो गया होता है तथा मानवीय जन्म केवल पुण्य के फल का ही परिणाम है, इस कारण दुर्लभ है।

इस चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि मनुष्य पवित्र मन से इस दुनिया में अवतार लेता है, अर्थात् सर्व गुण सम्पन्न जन्म लेता है। इसकी गवाही देते हुये गुरु रविदास जी परिपक्वता से स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य का जन्म हर पक्ष से पवित्र तथा हर दोष से मुक्त है, इस कारण मनुष्य को अवतार कहा गया है परन्तु दुख तो इस बात का है कि जन्म लेते ही विकारों के साथ भरपूर मानवीय समाज की अपवित्र तथा घटिया संगत मनुष्य को अपने चंगुल में फंसा लेती है -''मनुखा अवतार दुलभ तिही संगत पोच।।'' इस कारण अज्ञानता के कारण मनुष्य का जीवन ऐसे ही व्यतीत हो रहा है। मनुष्य अपने रहने के लिये देवताओं के राजा इन्द्र, जैसे महलों का निर्माण करता जा रहा है, परन्तु प्रभ भक्ति के बिना तेरा जीवन बर्बाद हो रहा है। फिर इन महलों का क्या लाभ? अर्थात् प्रभ भक्ति के बिना यह सब कुछ व्यर्थ है।

इस कारण 'रहाउ' में स्पष्ट किया गया है, कि प्रभ प्राप्ति के पश्चात् मनुष्य हर पक्ष से मुक्त हो जाता है तथा परम आनंद प्राप्त होता है तथा इस परम आनंद में विश्व के सभी चस्के (इच्छाएं) समाप्त हो जाते हैं।

इस लिये बन्द नं. 2 में जीव को सचेत करते हुये स्पष्ट किया गया है कि मनुष्य विकारों के चस्कों (इच्छाओं) का गुलाम बना हुआ है तथा हर प्रकार के चस्कों में गलतान (डूबा) है। जानबूझ कर भी मनुष्य दुविधा और उधेड़-बुन में जीवन बर्बाद कर रहा है। यह सब कुछ इस कारण हो रहा है कि पांचों ही ज्ञान इन्द्रियां तथा पांचों कर्म इन्द्रियां विकारों के कारण भरी जवानी की तरह

बलवान हैं, जिस कारण बुद्धि इतनी निर्बल बन चुकी है कि कोई भी धार्मिक निर्णय लेने में असमर्थ है। यही कारण है कि अन्तहकरण में किसी भी प्रकार के आध्यात्मिक विचार प्रविष्ट नहीं हो सकते।

इस कारण बन्द नं. 3 में मनुष्य को समझाते हुये गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि हे जीव! तू ब्रह्म विचार से दूर होने के कारण आचरणहीन हो गया है तथा विकारों की पूर्ति के लिये अपनी जुबान पर कायम नहीं रहता है। परिणाम स्वरूप तू कहता कुछ और है और करता कुछ और है-पूरा धोखेबाज बन गया है। मूर्ख जीव! तू माया के इन शक्तिशाली चस्कों (आदतों) के प्रभाव को समझने में असमर्थ है।

परन्तु गुरु जी फरमाते हैं कि हे प्रभ! तेरा दास रविदास, माया के इन विकारों चस्कों (आदतों) से उपराम (त्याग दिया है) हो गया है। इसलिये मुझे अपने क्रोध से मुक्त करके दया की बख्शिश करो जी।

शब्द अर्थ - चौरासी लाख यौनियों की कठिन तपस्या के पश्चात् जीव ने जो पुण्य कमाया है तथा पापों का त्याग किया है, उनके फलस्वरूप यह दुर्लभ जन्म प्राप्त हुआ है। परन्तु हमारी अज्ञानता के कारण यह व्यर्थ में व्यतीत होता जा रहा है। हमने काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों के प्रभाव अधीन देवताओं के राजा इन्द्र जैसे महल खड़े कर लिये हैं, परन्तु इनका प्रभ-भक्ति के बिना जीवन में क्या लाभ है? अर्थात् प्रभ भक्ति के बिना यह सब कुछ व्यर्थ है।।२।।

इस कारण हे जीव! तूने प्रभ के परम आनंद का कभी विचार तक नहीं किया, जिस आनंद की प्राप्ति से शेष सारे चस्के खत्म हो जाते हैं। जीवन पांचों विकारों से मुक्त हो जाता है।।२।। रहाउ।।

इस प्रकार जीव को सचेत करते हुये गुरु रविदास जी समझाते हैं कि हम जाने-पहचाने, सोचों, शिकवों में पड़े मूर्ख बने हुये हैं तथा समूचा जीवन इसी प्रकार व्यतीत होता जा रहा है। दसों इन्द्रियां विकारों के कारण शक्तिशाली बन गई हैं, इस कारण धार्मिक निर्णय लेने में बुद्धि कमज़ोर हो गई है। परिणामस्वरूप अन्त में आध्यात्मिक विचार प्रविष्ठ नहीं हो सकते हैं।।२।।

आध्यात्मिक विचार न होने के कारण, हम शक्तिशाली माया को समझने में असमर्थ है तथा इसके प्रभाव के कारण ही हम कहते कुछ हैं तथा करते कुछ हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं माया के प्रभाव से उपराम हो गया हूं। अत: हे प्रभ। मुझे मेरे क्रोध से मुक्त करके दया की बख्शिश करो जी।।३।।३।।

शब्द - 17

राग सोरठ वाणी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

सुख सागरु सुरतर चिंतामनि
कामधेनु बसि जा के॥
चारि पदारथ असट दसा सिधि
नव निधि कर तल ता के॥१॥
हरि हरि हरि न जपहि रसना॥
अवर सभ तिआगि बचन रचना॥१॥ रहाउ॥
नाना खिआन पुरान बेद बिधि
चउतीस अखर मांही॥
बिआस बिचारि कहिओ परमारथु
राम नाम सरि नाही॥२॥
सहज समाधि उपाधि रहत फुनि
बडै भागि लिव लागी॥
कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम
मरन भै भागी॥३॥४॥[1] **(पृष्ठ ६५८)**

पद अर्थ - **सुरतरु**-स्वर्ग के तरु, कल्प वृक्ष, कल्पित वृक्ष जो बाधाओं को मिटाता है। **चिंतामणि**-चिंताओं को दूर करने वाली हिंदुओं की कल्पित मणि/पत्थर। **कामधेनु**-स्वर्ग में रहने वाली हिंदुओं की कल्पित गाय। **चारि पदार्थ**-जीवन में प्रयोग होने वाले चारों पदार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। **असट दसा**-अठारह। **नव निद्धि**-नौ खजाने। **करतल**-हथेलियां।

जपहि-जपता है। **रसना**-रस लेने वाली अर्थात् जिह्वा। **वचन**-कथन, विचार। **रचना**-लिखित, लेख।

नाना-अनेकों। **खियान**-प्रसंग, कथा। **बिधि**-विधाता। **चउतीस**-देवनागरी

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५८

लिपि के चौतीस वर्ण स्वर अ इ उ मिलाकर चौतीस अक्षर बनते हैं। यह लगभग प्रक्रिया की वर्णमाला है। **बियास**–व्यास महर्षि। भागवद् पुराण के अनुसार जब व्यास जी वेद तथा पुराण आदि का अध्ययन अच्छी प्रकार से कर बैठे तो मन को शान्ति नहीं मिली। तब नारद के उपदेश से चित्त शान्त हुआ। **परमार्थ**–परोपकार, दूसरों का भला।

सहज–सरल, स्वाभाविक। **समाधि**–एकाग्रता से आदपुरष का ध्यान लगाना। **उपाधि**–दुख, क्लेश। **फुनि**–दुबारा, पुनः। **रिदै धरि**–मन में धारण करना।

सिंधु घाटी के मूल निवासी और संसार की लिपियां

गुरु रविदास जी महाराज ने चौतीस अक्षरों वाली लिपि के बीच साहित्य रचे जाने के तथ्यों को साबित करके चौतीस अक्षरों वाली लिपि के सत्य को प्रकट किया है। यह चौतीस अक्षरों वाली लिपि देवनागरी लिपि ही है, जिस में वेदों, रामायण आदि ग्रंथों की रचना हुई है। इस लिपि के बाबन अक्षर हैं, परंतु गुरु रविदास जी ने साबित किया है, कि देवनागरी के केवल चौतीस अक्षर ही हैं। चौतीस अक्षरों वाली इस लिपि की पुष्टि आज भाषा वैज्ञानिकों ने भी कर दी है। (इस नुक्ते पर किए गए विचार 'गुरु रविदास जी की भाषा वैज्ञानिक' लेख के बीच पढ़ो।) चौतीस अक्षरों वाली इस देवनागरी लिपि की पुष्टि ब्राह्मी लिपि से विकसित हुई शारदा, गुरमुखी, प्राकृत, अपभ्रंश आदि लिपियों से भी हो जाती है। इन लिपियों के अक्षरों की गिनती चौतीस है। ('ड़' गुरमुखि लिपि के बीच पीछे से शामिल हुआ है।

इन लिपियों का सृजन भारत के मूलनिवासी अछूत/ शूद्रों ने किया है, क्योंकि इन सारी लिपियों का मूलभूत स्रोत सिंधु घाटी की विकसित लिपि है, जिस से ब्राह्मी लिपि का जन्म हुआ है। इन सभी लिपियों का जन्म और विकास तो भारत के मूल निवासी अछूतों/ शूद्रों ने किया ही है। संसार की सभी लिपियों के जन्म के विकास में कुछ थोड़े मोटे फर्क के साथ, इन की ही सृजित सिंधु घाटी की विकसित लिपि से हुआ है। इस तथ्य की परिपकवता को स्पष्ट करके श्री एस.आर. राव अपनी पुस्तक डीसिफरमैंट आफ इंडस सक्रिप्ट में लिखते हैं।

".....That the Indus script was gradually evoladed into an alphababie system of writing and that the language of Indus seals is India-European."

इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए इस के ऊपर गहरी खोजबीन के साथ चर्चा करने की नितांत आवश्यकता है।

हम यह विचार कर आए हैं कि, गुरमुखी और देवनागरी लिपि की उत्पत्ति ब्राह्मी लिपि से हुई है परंतु डॉक्टर काला सिंह बेदी गुरुमुखी लिपि को गुरु अंगद देव जी द्वारा देवनागरी का सुधार करके बनाई गई बताते हैं, परंतु बेदी

साहब का यह तर्क ठीक नहीं है। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार गुरमुखी लिपि का जन्म और विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है।

डाक्टर काला सिंह बेदी के विचारों को तर्क के साथ रद्द करते हुए और हमारे उपरोक्त विचारों की पुष्टि करते हुए अपनी पुस्तक 'गुरुमुखी लिपि का जन्म और विकास' में जी.बी. सिंह लिखते हैं -

''गुरमुखी का एक अक्षर भी एक लग, मात्रा तक भी गुरु अंगद देव जी या किसी अन्य एक का बनाया हुआ नहीं है, न ही किसी ने उन की वर्णमाला की पुरानी तरतीब के बीच फर्क डाला है और न गिनती ही कम या अधिक की है। पंजाबी बोली के लिखने के लिए गुरमुखी वर्णमाला की योग्यता, अक्षरों की सरलता और उस के पढ़ने की, भूलने की कम संभावना, जब इस वर्णमाला की खूबियां हैं, तो उन का श्रेय पुराने पढ़े लिखे हिंदुओं हो जाता है, जिन्होंने सिखी के जन्म से सदियों पहले यह अक्षर बनाए हैं। इन के बीच ही हिंदू अपनी धर्म पुस्तकों में साहित्य रचना के साथ कविता लिखते थे। इन की ही बटी हुई सकल व्यापारियों के बही खातों के बीच मात्राओं और लगों के बिना प्रयोग की जाती थी। यही अक्षर पाधे बालकों को सिखाते थे और किताबों के लेखक ब्राह्मण या दूसरे लिखते थे। गुरबाणी की पोथियाँ और साखियां भी इन्हीं लेखकों ने पहले पहल इन अक्षरों के बीच लिखी थीं, जिन को सौ के लगभग साल पहले गुरमुखी नाम दिया गया है-

यह भी कहा गया है, कि गुरुमुखी अक्षर नागरी से नहीं बनाए गए हैं, बल्कि गुरमुखी अक्षरों की शक्लें प्रचलित नागरी अक्षरों की शक्लों की अपेक्षा पुरानी है। पंजाबी वर्णमाला प्राचीन अशोक के समय की ब्राह्मी लिपि से उसी तरह पंजाब के मैदानों के बीच पैदा हुई है, जिस तरह नागरी समेत हिंद की और वर्णमाला अन्य प्रांतों के बीच बनी है।''[1]

उपरोक्त पैरे में सरदार जी.बी. सिंह स्पष्ट करते हैं कि, गुरमुखी अक्षर पंजाब, कश्मीर जम्मू और अन्य पहाड़ी इलाकों के हिंदुओं ने ही बनाए हैं। उस समय हिंदू नहीं होते थे, उस समय केवल आर्य लोग ही थे, फिर यह हिंदू कौन हैं? सरदार जी बी सिंह ने हिंदू उन व्यापारियों को कहा है, जिन्होंने फिनीकी देश से फिनिशियन लिपि के अक्षर लाए हैं और एक नई लिपि का सृजन किया है। ये

1. पृष्ठ : १२-१३

हिंदू किसी भी हालत में आर्य लोग नहीं थे। आर्य लोग तो विदेशी हैं परंतु सरदार जी बी सिंह दृढ़ता से परिपक्व करते हैं, कि नई लिपि के सृजनहार भारत के मूल निवासी थे। जिन को आज शूद्र और अछूत कहा जाता है। इस तथ्य को सरदार जीबी सिंह स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-

''अन्य लिपियों की तरह गुरमुखी भी धीरे-धीरे ब्राह्मी लिपि से ही बनी है। किसी व्यक्ति ने या व्यक्तियों ने मिल कर एक ही समय में एक ही जगह पर बैठकर नहीं बनाई थी।

पंजाब की अन्य लिपियां, टांकरी और सराफी के साथ, विशेष कर टांकरी के साथ यह देवनागरी की अपेक्षा अधिक गहरी सांझ रखती है। शारदा कश्मीर में प्रयोग की जाती है और टांकरी जैसे कि इस देश के शिला लेखों से पता चलता है कि उस सारे पहाड़ी देश में प्रयोग की जाती है, जो जम्मू से लेकर कालका के पास पिंजौर तक फैला हुआ है। आर्यों के आने से पूर्व पंजाब में तक्ष या नाग कौम के लोग रहते थे। कश्मीर में करकोटक नाम के राज घराने ने तीन सौ वर्षों से ऊपर राज किया है। ये नाग कौम के थे और ये बड़ी मुश्किल से हज़ार वर्ष पहले हुए हैं। पंजाब के पहाड़ी इलाकों के बीच चंबा के समीप के देश और मेन दुआबा के बीच नाग कहलाने वाले लाखों लोग इस बात का सबूत हैं। प्रकृति के बीच ''तक्ष'' से वट के नाग 'तका' से 'टका' बने हैं। आर्यों के आने से ये लोग मैदानों में से निकाले गए थे और दलदली पहाड़ों की ओर धकेले गए थे, वहां उन की सामाजिक हालत दिनो दिन गिरती गई और कई स्थानों पर शूद्र वर्ण छोड़ कर अछूत बन गए, परंतु अपने समय में ये लोग देश के राजा, क्षत्रिय और व्यापारी थे। उत्तरी सीमाओं के ये व्यापारी दक्षिण द्रावड़ी व्यापारियों की तरह पश्चिम के बीच तोड़ बबरू देश तक जाते थे और यही लोग फिनीकी अक्षर वहां से लाए थे। जिन अक्षरों का रिवाज़ इन टका लोगों के बीच रहा, यही टांकरी अक्षर हैं। व्यापारी अक्षरों को टांकरे कहने का सबब ही यही है।

उत्तरी बंगाल और अन्य कई देशों के बीच इन का राज था, परंतु हमारा उन के साथ वस्ता नहीं है।

छींबे, दर्जी, जुलाहे, सुनार आदि इन्हीं 'टका' लोगों के वंशों में से हैं। 'टका' शब्द को न समझते हुए अब ये लोग अपने-आप को टांग क्षत्रिय

लिखते हैं और जब पूछें टांक क्या होता है? तब उत्तर देते हैं, टांके लाने वाले। इन का व्यापार बबरु देश के साथ आर्यों के आने से पहले का था। जेहलम दरिया से उत्तर के इलाके का नाम 'टका देश' के समय तक चला आया है।'[1]

उपरोक्त चर्चा से निम्नलिखित तत्व सिद्धांत दृढ़ होते हैं :-

1. आर्यों के आने से पूर्व भारत के बीच मूल निवासियों का राज था।

2. मूल निवासियों को आर्यों ने शूद्र वर्ण छुड़वा कर अछूत बना दिया।

3. यही शूद्र/अछूत आर्यों के आने से पहले राजे महाराजे थे।

4. उत्तरी हिन्द के यह अछूत व्यापारी दक्षिण के द्रावड़ी व्यापारियों की तरह बबरू, फिनिकी आदि देशों के बीच व्यापार करने जाते थे।

5. ये अछूत व्यापारी फिनिकी अक्षर लाये।

6. हिंदू कोई और नहीं है यही शूद्र अछूत ही थे। इसलिए अछूतों को ही हिंदू कहा गया है।

यह अछूत मूलनिवासी केवल व्यापार ही करने नहीं जाते थे, यह मूल निवासी हैं, फिनिकी में जा कर बस गए थे। इस तथ्य की पुष्टि अनेकों ही विद्वानों ने की है। यूनान के प्राचीन इतिहासकार भी इस तथ्य मूलक सिद्धांत की पुष्टि करते हैं। यहां तक कि ऋग्वेद के प्रमाण भी, इस सिद्धांत को परिपक्वता के साथ दृढ़ करते हैं। डॉक्टर काला सिंह बेदी उपरोक्त सिद्धांत का परिणाम निकालते हुए स्पष्ट करते हैं, कि फिनीकी लिपि भारत के मूलनिवासी थे, और यही मूल निवासी लोग फिनीसी लिपि लोग के सृजनहार हैं। वे लिखते हैं -

(उ) फोनेसी-उत्पत्ति-बेनफे, वेबर, जेनसन और वूलर आदि विद्वानों बे ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति फोनेसी लिपि से मानी है। जीबी सिंह ने पंजाबी लिपि गुरमुखी लिपि के विकास के बारे में विचार करते हुए ब्राह्मी लिपि का निकास फोनेशियन लिपि को माना है। इस सिद्धांत के समर्थन (पुष्टि) के बीच प्रधान तत्व यह है, कि लगभग एक तिहाई फोनेसी वर्णों की समानता उस ध्वनि के पुरानी ब्राह्मी प्रतीकों के साथ मिलती जुलती है। इस के इलावा एक तिहाई ब्राह्मी से फोनेसी वर्णों के बीच बहुत समानता है, और बाकी वर्णों की समानता भी ब्राह्मी वर्णों के साथ जैसे तैसे सिद्ध हो

1. गुरमुखी लिपि का जन्म और विकास - पृष्ठ : ६०-६१

जाती है। इस सिद्धांत के स्वीकार करने के बीच सब से बड़ी मुश्किल यह है, कि जिस काल के बीच ब्राह्मी लिपि विकसित हुई है, उस युग में फोनेसिया और भारत का आवाजाई संबंध कायम नहीं हुआ था। इस संबंध में अपना विचार व्यक्त करते हुए डॉक्टर राजबली पांडे अपनी पुस्तक में लिखते हैं, कि मैं नहीं मानता जी 1500 ई. पूर्व से 400 ई. पूर्व के बीच भारत के भूमध्य सागर के पूर्वी किनारे के बीच आवाजाही का संबंध नहीं था। इस में कोई शक नहीं कि फोनेसी और ब्राह्मी के बीच समानता है। यूनान के प्राचीन इतिहासकारों के अनुसार फोनेसी लोग पूर्व की ओर समुद्र के रास्ते भूमध्य सागर के पूर्वी किनारे के ऊपर गए थे। ऋग्वेद के प्रमाण से पता चलता है कि फोनेसी लोग भारत के निवासी थे। फोनेसी और पश्चिम एशिया की सामी लिपियों के बीच समानता का अभाव भी यह संकेत करता है, कि फोनेसी लोग कहां से कैसे बाहर से आए थे। इससे यही प्रतीत होता है कि भारत से ही फोनेसी लिपि भूमध्य सागर के तट के ऊपर गए थे। जी बी सिंह लिखते हैं,कि फोनेसी लोग व्यापारी थे। उन्हें साहित्य के साथ कोई प्रेम नहीं था, परंतु हिसाब किताब रखने के लिए उन्होंने मिस्री चित्र लिपि से अपनी लिपि बनाई है और हिंदुओं के साथ उनके व्यापारिक संबंध जुड़े हुए थे। हिंदुओं ने फोनेसी लिपि से ब्राह्मी लिपि की खोज कर के, फिर बाकी आर्यन भारतीय लिपियां, ब्राह्मी लिपि से विकसित हो गई है परंतु यह एक बहुत ही अनोखी बात है, कि आर्य लोग जो साहित्य प्रेमी होते हुए व्यापारी थे और उनका विशाल साहित्य भी रचा जा चुका था और उन्होंने फोनेसी लोगों से पहले कोई लिपि इजाद करने का यत्न ही नहीं किया था, यह विचार निर्मूल जैसा ही लगता है।'[1]

उपरोक्त गद्यांश से निम्नलिखित नुक्ते स्पष्ट होते हैं -

1. बेनफे, वेबर, जेनसन, बूलर आदि विद्वानों के अनुसार ब्राह्मी लिपि की उत्पति फोनेशी लिपि से हुई है।

2. यूनान के प्राचीन इतिहासकारों से ऋग्वेद से तथा फोनेसी व पश्चिमी एशिया की शामी लिपियों में समानता का न होने के कारण यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो जाता है कि (1) भूमध्य सागर के तट पर लोग कहीं बाहर से

1. पंजाबी भाषा विज्ञान - पृष्ठ : ४९४-९५

आये थे।

(2) ये बाहर से आये लोग भारत के मूलनिवासी थे।

(3) इस फोनेशियन लिपि को ही आर्यों ने ब्राह्मी लिपि का नाम दिया।

(4) आर्य लोगों ने जब भारत में प्रवेश किया तो वे बिल्कुल अनपढ़ तथा जंगली थे। इस कारण वे उस समय न तो साहित्यकार थे और न ही उन्होंने साहित्य की रचना की थी।

डा. राजबलि पांडे के निम्नलिखित कथन से हमारे उपरोक्त नुक्तों की हर पक्ष से पुष्टि हो जाती है। वह लिखते हैं :

> ''डा. राजबली पांडे के अनुसार फोनेशी तथा ब्राह्मी लिपि में जो समानता है, उसका कारण है कि फोनेशी लोगों का मूल-निवास स्थान भारत ही था तथा वे लोग यहां की लिपि को अपने साथ ले गये थे। इन शामी जातियों में रहने के कारण इस लिपि में अन्तर आ गया था, उनकी लिपि ने उनकी शामी अथवा आरमेटिक लिपि को प्रभावित किया। वास्तव में इस आरमेटिक लिपि ने दक्षिणी शामी तथा मिस्र की लिपियों को छोड़ कर पश्चिमी एशिया की दूसरी लिपियों को अवश्य प्रभावित किया। इस प्रकार ब्राह्मी की उत्पति फोनेशी तथा आरमेटिक से नहीं हुई, अपितु इन दोनों लिपियों की उत्पति प्राचीन ब्राह्मी लिपि से हुई।''[1]

भारत के मूल निवासियों का आर्यों के देवता ब्रह्मा के साथ वैसे ही कोई संबंध नहीं है। मूल निवासियों के देवता तो मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के देवता हैं। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की संस्कृति और धर्म के बीच ब्रह्मा का वैसे ही ज़िक्र नहीं है। इस कारण भारत के मूल निवासियों की लिपि का नाम कदाचित भी ब्राह्मी लिपि नहीं हो सकता। ब्राह्मी लिपि का नाम तो आर्यों ने उस लिपि को दिया है, जिस को मूल निवासियों ने सृजित किया है। मूल निवासियों ने अपनी लिपि का नाम ब्राह्मी लिपि नहीं रखा था, इसलिए उपरोक्त दोनों लिपियों फोनेसी और आरमेइक लिपियों की उत्पत्ति प्राचीन ब्राह्मी लिपि से नहीं हुई है, बल्कि भारत की प्राचीनतम सिंधुघाटी की लिपि से हुई है। इसलिए फिनिकी वंश के सिंधुघाटी के मूल निवासियों ने फिनीकी लिपियों का प्रभाव कबूल कर के सिंधुघाटी की लिपि को वैज्ञानिक आधार दे कर विकसित किया है। इस के

1. पंजाबी भाषा विज्ञान डॉ. काला सिंह बेदी - पृष्ठ : ४९९

साथ फिनीशियनों की लिपियों को सिंधु घाटी की विकसित लिपि ने प्रभावित किया है। यह प्रभाव इतना शक्तिशाली था कि फिनीकी और आरमेईक लिपियों का पूर्ण रूप में कायाकल्प हो गया है। इस से यह निष्कर्ष निकलता है, कि फिनीकी और आरमेइक लिपि की उत्पत्ति सिंधु घाटी की विकसित लिपि से हुई है। इसकी पुष्टि करते हुए डॉक्टर काला सिंह बेदी लिखते हैं।

> ''भारत की पुरानी से पुरानी लिपि सिंधु घाटी की लिपि है, परंतु यह शुद्ध चित्र लिपि नहीं है। यह लिपि अपितु, ध्वनि-आत्मिक लिपि लगती है, इसलिए यह तर्क ठीक लागू नहीं होता है, कि ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति सिंधु लिपि से नहीं हो सकती।''[1]

इस गद्यांश से हमारी पिछली चर्चा के दो नुक्ते स्पष्ट हो जाते हैं।

1. सिंधु घाटी की लिपि चित्र लिपि के साथ-साथ ध्वनि-आत्मिक लिपि लगती है।

2. पुरानी ब्राह्मी लिपि दरअसल प्राचीनतम सिंधु घाटी की लिपि ही है।

दोनों नुक्तों पर विचार -

यदि सिंधु घाटी की लिपि को ध्वन्यात्मक लिपि मान लिया जाए, तो यह आज 21वीं सदी की आधुनिक लिपियों की कतार में खड़ी होती है और वैज्ञानिक लिपि सिद्ध हो जाती है। यह सिंधुघाटी के मूल निवासी लोगों की वैज्ञानिक पहुंच और सूझबूझ का प्रमाण है, जिस कारण यह लिपि 21वीं सदी की वैज्ञानिक कसौटी पर पूरी उतरती है। डॉक्टर काला सिंह बेदी ध्वन्यात्मक लिपि का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं -

> ''लिपि के इतिहास के बीच ध्वन्यात्मक लिपि की जगह सबसे ऊंची है। वास्तव में आज ध्वन्यात्मक लिपि ही भाषा की प्रतिपूरक है और इस लिखित प्रणाली के बीच हर एक तत्व भाषा की विशेषताएं ध्वनि का प्रतिनिधित्व करती हैं।''[2]

इस गद्यांश से परिपक्वता के साथ स्पष्ट हो गया है सिंधु घाटी की लिपि वैज्ञानिक है।

दूसरे नुक्ते को भी और स्पष्ट करना ज़रूरी है। आर्यों ने, जिस प्रकार मूल निवासियों के साहित्य और अन्य तथ्यों को तबाह किया है, उसी तरह सिंधु घाटी

1. वही - पृष्ठ : ४९९ 2. वही - पृष्ठ : ४८४

की लिपि के उस समय के नाम को भी उजागर नहीं किया है, बल्कि इन मूल निवासियों की सृजित परंतु फिनिकी अक्षरों से प्रभावित हो कर विकसित हुई मूल निवासियों द्वारा ही भारत पहुंची सिंधु घाटी की विकसित लिपि का नाम आर्यों ने अपने देवता ब्रह्मा के साथ जोड़कर ब्राह्मी लिपि बना दिया है। दरअसल आर्यों लोगों ने किसी भी लिपि का सृजन नहीं किया है। शारदा, टांकरी, सराफी और नागरी आदि लिपियों का सृजन भी भारत के मूल निवासियों ने ही किया है, यह हम ऊपर विचार कर आए हैं। सिंधुघाटी में विकसित हुई लिपि का नाम ब्राह्मी लिपि नहीं हो सकता है क्योंकि संस्कृत के व्याकरणाचार्यों ने सिंधु घाटी की विकसित लिपि को बढ़ा कर ब्राह्मी लिपि बनाया है। अत: ब्राह्मी लिपि हूबहू सिंधु घाटी की विकसित लिपि नहीं है। इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है, कि ब्राह्मी लिपि से पूर्व विचर रही सिंधु घाटी की विकसित लिपि का कोई न कोई नाम ज़रूर होगा, जिस का कहीं कोई ज़िक्र नहीं मिलता है। यह सिंधुघाटी की विकसित लिपि वही है, जिस को फोनिशियन लिपि का सृजन भारत के सिंधु घाटी के मूल निवासियों ने फोनेसी के पक्के शहरी होकर की है। जिस को चीन और जापान के बिना सारी दुनिया ने अपनाया है। जी बी सिंह भी, हमारे इस विचार की पुष्टि करते हैं। ऊपर साबित हो चुका है कि जो फोनेशियनों ने लिपि बनाई है, वह दरअसल भारत के सिंधुघाटी के ही मूलनिवासी थे। वे लिखते हैं –

''फिनिशियन की सभ्यता काफी उच्च प्रकृति की थी..... परन्तु सब से बड़ा काम जो इन्होंने (फिनिशियनों) किया है, वह यह है कि पुराने नाम और तस्वीरों आदि से सही अर्थों में एक 22 अक्षरों की शब्द मूलक लिपि बनाई और इस को अपने साथ व्यापार करने वाले सभी देशों ने व्यापारियों के बीच लाया है। उन की बनाई लिपि ही रूप बटा कर सारी दुनिया में प्रयोग की जाती है सिवाय चीन और जापान के। जहां संकेत लिपि का रिवाज़ है, बाकी दुनिया की तरह हमारा देश भी लिखने की कला के हुनर और एक शब्द मूलक लिपि के लिए इन फिनिशियन लोगों का अहसानमंद है और दूसरे दर्जे पुर, द्रावड़ी और उन के उत्तराधिकारियों के व्यापारियों का जो फिनिशियन लिपि के सोलह के लगभग अक्षर जिन की उन को कार बिहार में ज़रूरत पड़ती थी। भारत के विद्वानों को परिपक्व किया है कि आर्यों ने अपने वेद लेखों में लिखा है कि वे 2500 बी.सी. से 1500 बी.सी.

के बीच आये हैं। इस से दृढ़ता के साथ साबित हो गया है कि आर्यों ने आदि वासियों की लिपि को अपनाकर उसका नाम ब्राह्मी लिपि रखा तथा ऋग्वेद आदि ग्रन्थों को लिखित रूप दिया। जिन को अपने देश में लाए हुए 2700 वर्ष हुए हैं। इन सोलह अक्षरों को आगे संस्कृत के व्याकरणाचार्यों ने बढ़ा-सँवार कर ब्राह्मी लिपि बनाई है, जो सारी देसी लिपियों की बड़ी 'अम्मा' है।''[1]

जीबी सिंह फिनिशियन लोगों के बारे में लिखते हैं कि, अन्य विद्वानों के विचारानुसार समानता रखते हैं, कि फिनिशियन लोग सिंधुघाटी के मूलनिवासी ही हैं। वे लिखते हैं –

'ये (फिनिशियन) हमारे बनजारियों और लुहानियों के बुजुर्ग हैं।'[2]

उपरोक्त दोनों गद्यांशों पर विचार करने पर निम्नलिखित दो महत्वपूर्ण तथ्य उभर कर सामने आते हैं –

1. यह पूरी तरह प्रोढ़ता के साथ परिपक्व हो गया है कि फिनिशियन लोग सिंधु घाटी के मूल निवासी ही हैं। जिन को आज शूद्र/अछूत कहा जाता है तो उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो जाता है, कि भारत के शूद्र/अछूत ही सारी दुनिया की लिपियों के सही अर्थों में सृजनहार हैं।

2. उपरोक्त चर्चा से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मूलनिवासी अछूतों ने जो लिपि बनाई है, उस को ही बढ़ाया गया है और उसी को सँवार कर ब्राह्मी लिपि का नाम दिया गया है, फिर जिन अछूतों की लिपि को बढ़ाया संवारा गया है, उस लिपि का नाम था क्या? तथ्य स्पष्ट करते हैं कि उस लिपि का नाम ब्राह्मी लिपि नहीं हो सकता था, क्योंकि उन की सभ्यता, संस्कृति या धर्म के बीच ब्रह्मा नाम का कोई देवता नहीं था, यह ब्राह्मण देवता तो आर्यों का देवता है, फिर मूलनिवासी अछूतों की सृजित लिपि का नाम क्या था? हमारी जांच पड़तालें उस लिपि का नाम सिंधुघाटी की विकसित लिपि बताती हैं। यही नाम अच्छा लगता है और है भी सही।

फिर वे कौन हालात थे, जिन के कारण आर्यों को मजबूरन सिंधु घाटी की विकसित लिपि से ही ब्राह्मी लिपि बनानी पड़ी।

आर्यों की न तो अपनी कोई लिपि थी और न ही उन्होंने भारत में दाखिल

1. गुरमुखी लिपि का जन्म और विकास – पृष्ठ : ३० 2. वही – पृष्ठ : ३१

होते समय कोई साहित्य रचना की थी, क्योंकि आर्य लोग उस समय कोरे अनपढ़ और जंगली थे। इसी कारण उन की अपनी भाषा ही नहीं थी, परंतु इस भाषा को अक्षरों के बीच लिखने के लिए इन के पास कोई अपनी लिपि नहीं थी।

जब आर्य लोग भारत के मूल निवासियों से सूझ बूझ प्राप्त कर के कुछ पढ़ लिख गए, तो उन्होंने अपने विचार व्यक्त करने के लिए लिपि की ज़रूरत समझी। आर्यों ने यह ज़रूरत मूलनिवासी अछूतों की सिंधुघाटी की विकसित लिपि को स्वीकार कर के उसको बढ़ाया और सँवार कर सिंधुघाटी की विकसित लिपि को ही ब्राह्मी लिपि का नाम दिया। मूलनिवासी अछूतों की इस ब्राह्मी लिपि से उस समय अपने अपने इलाकों के बीच अपनी अपनी ज़रूरतों के मुताबिक अनेकों लिपियां विकसित हो रही थीं। इसी कारण ही जीबी सिंह ने ब्राह्मी लिपि को सभी देसी लिपियों की 'अम्मा' कहा है। अत: सही अर्थों में भारत की सभी लिपियों की 'अम्मा' भारत के मूलनिवासी अछूतों की सिंधुघाटी की विकसित लिपि ही है। इन लिपियों में उत्तर में शारदा, टांकरी, सराफी, गुरमुखी, नागरी आदि लिपियां विकसित हो रही थीं।

आर्यों ने बाहर से आ कर के भारत में अपना निवास स्थान बनाया और वह भी विशेष कर उत्तर भारत के पंजाब में, इसलिए उत्तर दिशा में विकसित हो रही नागरी लिपि को आर्यों ने स्वीकार कर लिया परंतु ध्यान देने वाली बात यह है कि नागरी लिपि केवल आर्यों की ही किसी खास इलाके में विकसित नहीं हुई थी, बल्कि नागरी लिपि मूल निवासियों की बहु संख्या वाले परंतु आर्यों के अधिकार के अधीन इलाकों में विकसित हुई थी। आर्यों की इन निश्चित इलाकों में गिनती कम थी परंतु राज भाग आर्यों के हाथ में होने के कारण, इन इलाकों की लिपि को आर्य लोगों ने ब्राह्मी लिपि की तरह ही अपने देवताओं के साथ जोड़ लिया और नागरिक लिपि को देवनागरी लिपि का नाम दे दिया। आर्यों ने इस देवनागरी लिपि के अक्षरों द्वारा अपने साहित्य की रचना की है। उस के बाद आर्यों के व्याकरणाचार्यों ने, इस साहित्यिक भाषा को संशोधित कर नया नाम संस्कृत रखा है। इस भाषा को आर्यों ने केवल अपने तक ही, अपने बंधनों के बीच बांध कर, सीमित कर दिया। परिणाम स्वरूप संस्कृत भाषा केवल आर्यों की भाषा ही बन कर रह गई परंतु किसी खास इलाके की भाषा नहीं बन सकी। कारण –

1. भारत में आर्यों की बहुत ही कम संख्या थी। यह संख्या भी किसी खास

प्रतिबंधित इलाके के बीच न हो कर भारत के उत्तरी इलाकों के बीच फैली हुई थी। इसी कारण संस्कृत भाषा का कोई खास इलाका विकसित न हो सका, जिस कारण संस्कृत भाषा किसी खास इलाके की भाषा न बन सकी।

2. आर्यों ने अपने राज भाग को कायम रखने के लिए और अपने धर्म को बचाने के लिए भारत के मूलनिवासियों को शूद्र/अछूत बना कर जात पात के कड़े और घातक, मनुष्यता विरोधी नियमों के कारण भारत के मूल निवासी संस्कृत भाषा का प्रयोग नहीं कर सकते थे। यदि कोई मूलनिवासी शूद्र/अछूत संस्कृत बोलता था या आर्यों के संस्कृत भाषा में रचित ग्रंथों वेद आदि को पढ़ता था, यहां तक कि सुनता था, तो उस को मौत की सजा दी जाती थी। इसी कारण ही संस्कृत भाषा, बोलने वालों का कोई खास इलाका विकसित न हो सका।

3. संस्कृत का क्षेत्र विकसित न होने के कारण राजाओं के दरबार भी थे। राजाओं के दरबार में ब्राह्मण संस्कृत नहीं बोलते थे, क्योंकि दरबारियों को संस्कृत बोलने का अभ्यास नहीं था तथा न ही वे साहित्य रचना करने के अधिकारी थे। **कारण :** लगभग सभी दरबारी क्षत्रिय होते थे। इस कारण दरबार में ब्राह्मण, ब्राह्मण के साथ कभी संस्कृत में बात नहीं करते थे, क्योंकि ऋषि केवल ब्राह्मण ही हो सकते थे। इस कारण ब्राह्मण ही संस्कृत में ग्रन्थ की रचना करके विचार व्यक्त कर सकते थे। इस प्रकार आर्य राजाओं के दरबार की इस स्थिति से ही आम जनता ने संस्कृत बोलने से दूर ही रखा। अत: राजाओं के दरबार के कारण ही संस्कृत भाषा का क्षेत्र विकसित नहीं हो सका।

4. आर्य विदेशी थे। आर्यों की भाषायी ज़रूरतें मूलनिवासियों की भाषायी ज़रूरतों के साथ मेल नहीं खाती थीं। इसी कारण मूलनिवासियों ने कई इलाकों में देवनागरी लिपि को तो अपना लिया परंतु उन्होंने आर्यों की संस्कृत भाषा को जड़ से ही त्याग दिया, इसी तरह आर्यों की संस्कृत भाषा का कोई खास इलाका विकसित न हो सका।

5. आर्य की संस्कृत भाषा किसी खास इलाके में इस कारण भी विकसित न हो सकी थी, क्योंकि मूल निवासियों के साहित्य में निरूपित बराबरी इंसाफ, भाईचारा, आज़ादी का संकल्प आर्यों के संस्कृत साहित्य के बीच निरूपित नहीं था। इस कारण किसी इलाकाई समाज की भावात्मक एकता विकसित न होने के कारण संस्कृत भाषा वाला इलाका विकसित न हो सका।

परंतु संस्कृत भाषा का कोई खास इलाका विकसित न होने के बावजूद आर्यों की संस्कृत भाषा का लगभग हज़ार साल पहले बहुत बोलबाला रहा था। आर्य लोग लगभग उत्तर भारत में शासन करते थे और अपने घातक, मनुष्यता विरोधी नियमों से राज चला रहे थे, परंतु जब नौवीं और दसवीं शताब्दी में आर्यों/हिंदुओं का राज छीनना शुरू हुआ, संस्कृत भाषा का भी बोलबाला खत्म होना शुरू हो गया था। ग्यारहवीं-बाहरवीं शताब्दी ई. तक हिंदुओं का राज लगभग खत्म हो गया और साथ ही साथ संस्कृत भी खत्म हो गई, क्योंकि संस्कृत भाषा को बोलने वाला कोई निश्चित इलाका नहीं था परन्तु देवनागरी लिपि आज तक प्रचलित है।

कारण -

देवनागरी लिपि के जन्म और विकास में मूलनिवासियों का अधिकतर योगदान है, क्योंकि एक तो देवनागरी लिपि का भारत में ही जन्म और विकास हुआ है, दूसरे मूल निवासियों की बहुगिनती ने इस को अपना लिया था। इसी कारण देवनागरी लिपि केवल आर्यों ने ही नहीं अपनाई, इस को उत्तरी भारत के कुछ इलाकों के मूल निवासियों ने भी अपनाया था, परंतु यकीनन मूलनिवासियों की भाषा संस्कृत नहीं थी, जिस कारण आज 21वीं सदी ईस्वी में भी देवनागरी ज़िंदा है परंतु कारण स्पष्ट हैं, कि देवनागरी ज़िंदा रहने का कारण आर्य लोग नहीं हैं, केवल और केवल यहां के मूल निवासी ही हैं, परंतु मूलनिवासियों ने संस्कृत भाषा को सदा-सदा के लिए त्याग दिया, क्योंकि आर्यों के ही घातक, मनुष्यता विरोधी नियमों के कारण भारत के मूल निवासियों को संस्कृत त्यागने के लिए मज़बूर होना पड़ा। इस तरह संस्कृत भाषा सदा-सदा के लिए समाप्त हो गई।

जिस प्रकार आर्यों के घिनौने, घातक मनुष्यता विरोधी नियमों के कारण संस्कृत भाषा सदा-सदा के लिए समाप्त हो गई है। उसी तरह इन घृणित घातक मनुष्यता विरोधी नियमों के कारण देवनागरी लिपि भी अपनी असली हालत में कायम नहीं रह सकी। गुरु रविदास जी महाराज ने देवनागरी के 34 अक्षर बता कर साबित कर दिया है, कि देवनागरी के बाबन अक्षरों की साहित्य रचना के लिए आवश्यकता नहीं है। साहित्य रचना के लिए तो केवल 34 अक्षर ही ज़रूरी हैं।

उपरोक्त समूची चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि

1. दुनिया में प्रचलित लिपियों का सृजन मूलभूत तौर से सिंधु घाटी के

मूल निवासियों ने ही किया है। जिन को 21वीं शताब्दी ई. में शूद्र/अछूत कहा जाता है।

2. सिंधुघाटी की विकसित लिपि का सृजन मूलनिवासी अछूतों/शूद्रों ने किया है। आर्यों ने इस लिपि को बढ़ा कर, संवार कर ब्राह्मी लिपि का नाम दे दिया है।

3. गुरु रविदास जी ने पंद्रहवीं सदी ईस्वी में ब्रह्मी लिपि से विकसित हुई देवनागरी लिपि की बढ़ौतरी को रद्द कर के लगभग सिंधुघाटी की विकसित लिपि के अनुसार 34 अक्षरों को ही स्वीकार किया है, प्राकृत और माप (नाप तोल) में (ड़) अक्षर मौजूद था, परन्तु संस्कृत भाषा में इसकी कमी थी। जिस को आज के भाषा वैज्ञानिकों ने मान्यता दे कर गुरु रविदास जी महाराज के फैसले को स्वीकार करके चौतीस अक्षरी लिपि को वैज्ञानिक होना स्वीकार कर लिया है। यह चौतीस अक्षर कौन हैं, इस को हम अगले लेख 'गुरु रविदास भाषा वैज्ञानिक' में स्पष्ट करते हैं।

अत: शूद्रों/अछूतों ने ही दुनिया को लिपियां प्रदान की हैं और उन्होंने ही देवनागरी लिपि में पुन: सुधार कर वैज्ञानिक बनाया हुआ है। यह शूद्रों/अछूतों की महानतम उपलब्धि है।

गुरु रविदास जी भाषा वैज्ञानिक

गुरु रविदास जी अपने समय के उच्च दर्जे के भाषा वैज्ञानिक थे। उन्होंने राग सोरठ और राग मारू में दर्ज शब्द 'सुख सागर सुरितरु चिंतामणि' के बीच देवनागरी के बाबन अक्षरों में लिखे साहित्य को चौतीस अक्षरों में लिख कर, दिखा कर एक वैज्ञानिक सत्य को उजागर किया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि देवनागरी लिपि के केवल चौतीस अक्षर ही हैं, बाबन नहीं। बाकी के अठारह अक्षर और स्वर चौतीस अक्षरों में से ही बने हुए हैं। यह नुक्ता आगे जा कर स्पष्ट हो जाएगा, जिन के बिना साहित्य की रचना हो सकती है। उदाहरण के तौर पर पाली प्राकृत की लिपि में, 'ड़' सहित पैंतीस ही अक्षर हैं, जो देवनागरी लिपि में उपलब्ध नहीं है। पाली में सफलतापूर्वक साहित्य रचना हुई है। बौद्ध धर्म के ग्रंथ पाली में ही रचे गए हैं। अपभ्रंश लिपि के भी पैंतीस ही अक्षर हैं। ब्राह्मी लिपि से विकसित प्राकृत लिपियां और फिर अपभ्रंश लिपियों से ही आज की शारदा, टांकरी और गुरमुखी आदि लिपियों का विकास हुआ है। इन लिपियों में रचे गए साहित्य की भाषा को खड़ी बोली का नाम दिया गया है। दरअसल पंजाब की शारदा, टांकरी और गुरमुखी आदि लिपियों का आरंभिक स्रोत फिनिशियन लिपि है। जिस को भारत के मूलनिवासी लेकर आए। जिस को हम सिंधुघाटी की विकसित लिपि का नाम देते हैं। इस से पीछे की पाली, प्राकृत से लेकर इक्कीसवीं सदी की उपरोक्त और अन्य लिपियों के अक्षर की गिनती लगभग चौतीस ही है। इस आधार पर हम बेझिझक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं, कि सिंधुघाटी की विकसित लिपि के भी चौतीस अक्षर हैं। इन चौतीस अक्षरों को भी बढ़ा कर, सँवार कर आर्यों ने इस लिपि को ब्राह्मी लिपि का नाम दिया है। इस ब्राह्मी लिपि से ही उपरोक्त लिपियों का विकास हुआ है।

महान भाषा वैज्ञानिक स. जीबी सिंह उपरोक्त विचार की दृढ़ता के साथ परिपक्वता करते हुए लिखते हैं –

''नतीजा यह निकला है कि, पंजाब की सभी लिपियां वर्तमान देवनागरी की अपेक्षा आरंभ के बहुत नज़दीक हैं और गुरुमुखी तथा टांकरी और भी

नज़दीक है। प्रत्यक्ष है, कि गुरुमुखी एक पुरानी वर्णमाला है, जिस में जो फर्क पड़ा है, वह बहुत थोड़ा है।''[1]

लिपि की उत्पत्ति और विकास उसके अपने समाज और भौगोलिक इकाई के वातावरण के अनुसार होता है। देवनागरी लिपि भी एक खास समाज और भौगोलिक इकाई की उपज है परंतु समय पड़ने पर आर्यों ने इस समाज को जातियों के बीच बांट दिया। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र का बंटवारा हुआ समाज ब्राह्मण प्रधान समाज बन गया इस बंटवारे के अनुसार ब्राह्ण ने ही विद्या पढ़ने-पढ़ाने का काम भी संभाल लिया। इस तरह देवनागरी लिपि ब्राह्मण समाज की ही उपज बनकर रह गई। इसी कारण ब्राह्मण ही देवनागरी के 52 अक्षरों का सही उच्चारण कर सकता है। क्षत्रिय योद्धा था और वैश्य वाणिया था या जाट इस कारण इनको भाषा के उच्चारण की बारीकियों के साथ बहुत सरोकार नहीं है।

शूद्र को विद्या पढ़ने की बिल्कुल ही मनाही थी। वह न तो वेद सुन सकता था और न ही उस को पढ़ने की आज्ञा थी। इस की कोताही के कारण उस को मौत की सज़ा मिलती थी। इसलिए वह संस्कृत भाषा का उच्चारण बिल्कुल नहीं कर सकता था।

इस तरह आम लोग देवनागरी लिपि से टूटे हुए थे। लोगों के इस लिपि से टूटने का सब से बड़ा कारण समाज के बहुत बड़े वर्ग को बोलचाल के लिए नित्य के कार्य व्यवहार के लिए प्रयोग करने की मनाही थी। शूद्र को संस्कृत भाषा बोलने की मनाही थी और उसको खड़ी बोली बोलने के लिए मजबूर किया गया। इसी कारण शूद्र देवनागरी लिपि के अक्षरों का सूक्ष्म उच्चारण नहीं कर सकता था। वैश्यों को ऊपर और नीचे के वर्गों के साथ व्यवहार करना पड़ता था, इसी कारण उन का उच्चारण भी ब्राह्मण की तरह सूक्ष्म नहीं था। क्षत्रियों का उच्चारण भी मिला जुला ही था, क्योंकि क्षत्रिय का काम लड़ना था। इस कारण खड़ी बोली का प्रयोग वे अधिक नहीं करते थे। कारण – खड़ी बोली के शब्द खड़कवें हैं और लड़ाकू स्वभाव के अनुकूल हैं। इसी कारण खड़ी बोली का प्रयोग करने से क्षत्रिय का भी उच्चारण शुद्ध नहीं था।

परिणाम स्वरूप देवनागरी लिपि केवल ब्राह्मणों की ही इज़ारेदारी बन कर

1. गुरमुखी लिपि का जन्म और विकास – पृष्ठ : ७७

रह गई। सूक्ष्म उच्चारण होने के कारण कई सूक्ष्म ध्वनियां भी अस्तित्व में आ गईं, जिन का आम व्यक्ति उच्चारण ही नहीं कर सकता था। डॉक्टर काला सिंह बेदी का भी यही विचार है, वह लिखते हैं कि -

''संस्कृत के संयुक्त अक्षर उच्च समाज के उच्चारण में ज्यादातर ठीक उभरते हैं।''[1]

इन्हीं कारणों से देवनागरी लिपि देवताओं अर्थात् ब्राह्मणों की ही लिपि बन कर रह गई थी और बाकी समाज लिपि की तरफ से देवनागरी लिपि से लगभग टूट ही चुका था। यही कारण था कि आम लोगों में एक नई भाषा खड़ी बोली का जन्म हो रहा था और इस भाषा को लिखित रूप देने के लिए एक नई लिपि का भी जन्म हो रहा था और बड़ी तेज़ी के साथ प्राकृत भाषाओं का और इस के पीछे अपभ्रंश भाषाओं का भी विकास हो रहा था परन्तु अभी आधुनिक भाषाएं अपने पूर्ण रूप में विकसित नहीं हो सकी थीं।

इस विकास के अधीन गुरु रविदास जी ने देवनागरी लिपि का सुधार कर के एक नई लिपि की योजना बना कर दी थी, जो विद्वान इस तथ्य को गुरु अंगद देव जी के साथ जोड़ते हैं, वह तो सही नहीं है, क्योंकि उन्होंने अपनी रची हुई वाणी में कहीं भी इसका ज़िक्र नहीं किया है, जिस प्रकार गुरु रविदास जी ने किया है। इसलिए यह परिपक्व तौर से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी ने एक नई लिपि की योजनाबंदी की थी, जो विकास करती हुई गुरमुखी के रूप में प्राप्त हुई है, चाहे गुरमुखी अक्षरों की बनावट देवनागरी लिपि से पुरानी सिद्ध होती है, परंतु पांच अक्षरों की तरतीब के बिना गुरुमुखी लिपि के चौतीस अक्षरों की तरतीब के साथ समानता रखती है। इस तरह डॉक्टर काला सिंह बेदी और अन्य भाषा वैज्ञानिकों का दावा भी रद्द हो जाता है।

''यह लिपि जो गुरमुखी लिपि का पुराना रूप था, जब गुरु अंगद देव (1539-1552) तक पहुंचती हैं। उन्होंने देवनागरी लिपि के सहारे इस में सुधार किया है और इस का नाम आगे चल कर गुरुमुखी पड़ा है।''[2]

डॉक्टर काला सिंह बेदी देवनागरी लिपि के जिन अक्षरों की बात करते हैं और जो आगे चल कर गुरुमुखी लिपि का नाम ग्रहण करते हैं। उन्हीं अक्षरों को गुरु रविदास जी ने उन से बहुत पहले खोल कर उस लिपि के चौतीस अक्षर होने

1. पंजाबी भाषा विज्ञान - पृष्ठ : २९० 2. वही - पृष्ठ : २९७

का भी ऐलान कर दिया था, जिस का आगे चल कर के ज़िक्र करेंगे।

अत: देवनागरी लिपि का सुधार कर गुरु रविदास जी ने चौतीस अक्षर खोले हैं। इतने अक्षर ही पाली वर्णमाला के हैं और इतने ही अक्षर अपभ्रंश वर्णमाला के हैं, जिन में से गुरुमुखी लिपि का विकास होता है। प्राकृत और अपभ्रंश खड़ी बोली का प्रतीक हैं। इसी कारण प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं की वर्णमाला के बीच खड़कवां अक्षर 'ड़' भी विराजमान है, क्योंकि गुरुमुखी वर्णमाला का विकास भी उनसे ही हुआ है। इस कारण इस के बीच 'ड़' अक्षर विराजमान है। इसलिए इन सारी लिपियों की वर्णमाला में शामिल होने के कारण इन के अक्षरों की संख्या पैंतीस बन जाती है

गुरु रविदास जी दरअसल देवनागरी लिपि के बाबन अक्षरों को गैर वैज्ञानिक होने के कारण मान्यता नहीं देते हैं। इसी कारण वह सही अर्थों में अपभ्रंश की वैज्ञानिक वर्णमाला को भी स्वीकार करते हैं, जिस से गुरुमुखी लिपि भी विकसित हुई है, चाहे गुरुमुखी लिपि का संगठित रूप थोड़ा बहुत विकसित हो चुका था, परंतु इस का उच्चारण लिखित रूप में गुरु रविदास जी और गुरु कबीर जी की रचनाओं के बीच ही रूपमान हुआ है।

गुरु रविदास जी की बाहरली वाणी के बीच गुरुमुखी लिपि का उच्चारण 'ठेठ पंजाबी' में नीचे लिखे शब्दों में उपलब्ध है। महंत जसवंत सिंह उर्फ परम परस सति दरबारी लिखते हैं, कि -

चल मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ।।१।। रहाउ।।
प्रेम की पाटी सुरति की लेखनी
'ससा' 'तता' लिख आख लखाऊँ।।

''देखिए श्री गुरु रविदास प्रकाश का पृष्ठ 228 और अनेकों लिखित पुस्तकों के बीच एकुर भी लिखा हुआ देखा है और ऊपर लिखे 'ससा-तता' की जगह 'हाहा-रारा'भी देखा है। कहीं-कहीं 'रारा-ममा' भी लिखा हुआ देखा है।''[1]

उपरोक्त शब्द गुरु रविदास चेयर, पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ की प्रकाशित 'वाणी श्री गुरु रविदास जी' के पृष्ठ नंबर 39 और शब्द नंबर 72 के ऊपर दर्ज है।

1. गुरमुखी के ३५ अक्षर - पृष्ठ : १०

चल मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ।

----------। टेक।

प्रेम की पाटी-सुरति की लेखनि करिहौं।

'ररा ममा' लिख अंक दिखाऊँ।।

गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाबन अक्षरी में गुरु रविदास जी ने गुरुमुखी लिपि की वर्णमाला का उच्चारण ठेठ पंजाबी में किया है। इस में 'ड़' अक्षर नहीं है और ना ही उ, अ, इ अक्षर शामिल हैं।[1] अत: गुरु कबीर जी अपनी बाबन अक्षरी में इकतीस अक्षरी ही दर्ज करते हैं। गुरु ग्रंथ साहब में गुरु अर्जन देव जी की बाबन अक्षरी के बीच 'ड़' शामिल है, परन्तु उ, अ, इ शामिल नहीं है। इस तरह उनके भी बाबन अक्षरी के बीच केवल बतीस अक्षर ही शामिल हैं।[2]

गुरु रविदास जी ने वर्णमाला के अक्षरों की गिनती चौतीस बताई है। इस के बीच 'ड़' शामिल नहीं है। इस तरह गुरु जी की वर्णमाला, गुरु कबीर जी और गुरु अर्जुन देव जी की अपेक्षा ज्यादा सही है। इस कारण अधिक वैज्ञानिक हैं, क्योंकि 'ड़' गुरु कबीर जी की वर्णमाला के बीच भी शामिल नहीं है। इसी कारण गुरुमुखी लिपि के बीच 'ड़' कब शामिल हुआ, इसके बारे में आज के भाषा वैज्ञानिकों को भी कोई पता नहीं है। डॉक्टर काला सिंह बेदी 'ड़' को द्राविड़ भाषा में से प्राप्त किया हुआ मानते हैं परंतु वह यह नहीं बताते हैं कि 'ड़' गुरुमुखी लिपि में कब शामिल हुआ।

सरदार जीबी सिंह ने अपनी पुस्तक 'गुरुमुखी लिपि का जन्म और विकास' में पृष्ठ 157 से 159 तक प्लेट नंबर XXIII, XXII और XXI तक प्लेट के बीच गुरुमुखी लिपि के चौतीस अक्षरों के बारे में ही स्पष्ट किया है कि यह अक्षर किस-किस शताब्दी के बीच अपना वर्तमान रूप धारण करते हैं, परंतु 'ड़' इन प्लेटों में शामिल नहीं है। इन प्लेटों के बीच बारहवीं, तेहरवी, चौहदवीं ईसवी आदि शताब्दियों तक का ज़िक्र है। इस का अर्थ है कि 'ड़' तेरहवीं, चौहदवीं शताब्दी तक अभी तक गुरुमुखी लिपि का भाग नहीं बना था और गुरु रविदास जी का जन्म 1376 ईस्वी में हुआ है। इसलिए जब गुरु रविदास जी अपनी वाणी की रचना कर रहे थे। 'ड़' अक्षर गुरुमुखी लिपि में शामिल नहीं था। इसी कारण यह विचार दृढ़ हो जाता है, कि गुरु जी के समय गुरुमुखी लिपि के 34 अक्षर ही

1. देखे गुरु ग्रन्थ साहिब - पृष्ठ : ३४०-३४३ तक
2. वही - पृष्ठ : २५०-२६२

थे। गुरु जी अपनी वाणी में 52 अक्षरों के बीच में निखेड़ा (प्रमाणित) कर के इन्हीं 34 अक्षरों के बारे में बता रहे हैं।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी ने देवनागरी के 52 अक्षरों को मान्यता नहीं दी है। उन्होंने तो यह परिपक्व किया है कि समूचा संस्कृत साहित्य 34 अक्षरों में ही रचा हुआ है।

'नाना खियान पुरान वेद विधि

चउतीस अखर मांही।।'

वर्तमान युग के भाषा वैज्ञानिक भी देवनागरी (संस्कृत) के 34 अक्षर ही मानते हैं। इस तरह यह विद्वान गुरु रविदास जी की आज से 600 साल से भी पहले कही, अटल सच्चाई को ही दृढ़ करते हैं। गुरु जी के इस कथन को भाई काहन सिंह नाभा भी स्पष्ट करते हुए लिखते हैं -

संस्कृत के असली अक्षर 34 ही हैं -

अ इ उ क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण

त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व स ह

शेष जो अक्षर हैं वे इन अक्षरों के मेल से बने हुए हैं, जैसे-क ष से क्ष, त र से त्र आदि और एक ही हिस्से के तीन रूप हैं-

''नाना खियान पुरान बेद बिधि

चउतीस अखर (अछर) माही

(सोर तथा मारू रविदास)''

भाई काहन सिंह नाभा के बताए हुए उपरोक्त चौतीस अक्षर ही गुरुमुखी लिपि के चौतीस अक्षर बनते हैं। यह वे अक्षर हैं, जिन का गुरु रविदास जी राग सोरठ और राग मारू के बीच दर्ज दोनों शब्दों के बीच वर्णन करते हैं। गुरुमुखी अक्षरों के रूप नीचे दर्ज हैं-

अ इ उ क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण

त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व स ह

(नोट- इन अक्षरों में 'ड़' शामिल नहीं है।)

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि गुरुमुखी लिपि के चौतीस अक्षर ही हैं। पैंतीसवां अक्षर 'ड़' द्रविड़ लिपि का है, यह फालतू अक्षर गुरमुखी लिपि के बीच कब शामिल किया गया ? इस के बारे में किसी को कोई ज्ञान नहीं है।

अचूक परिणाम यही निकलता है, कि आज के भाषा वैज्ञानिक गुरु रविदास जी की ही खोज को स्वीकार करते हैं। इस चर्चा से यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि गुरु जी ने नियमित ढंग से सैद्धांतिक रूप में देवनागरी लिपि के बाबन अक्षरों में चौतीस अक्षरों का निखेड़ा (अनुशीलन) कर के वैज्ञानिक लिपि का सृजन किया है। जिस को बाद मेंजा कर गुरमुखी लिपि का नाम दिया गया है। इस में कोई सन्देह नहीं है कि गुरु रविदास जी एक उच्च दर्जे के भाषा वैज्ञानिक हैं।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द में ब्राह्मण जाति को संबोधित किया गया है, क्योंकि समूचा शब्द हिंदू धर्म के वेदों पुराणों और इस के बाकी सभी धार्मिक ग्रंथों का खंडन करता है। स्वर्गों के वृक्ष चिंतामणि, कामधेनु और चार प्रकार के पदार्थ, अठारह सिद्धियों और नौ निधियों के, हिंदू धर्म के इतिहास को भी रद्द किया है, इसी कारण गुरु रविदास जी ने यह शब्द ब्राह्मण जाति को संबोधित किया गया है तथा उपरोक्त रद्द किये गये अंश तथा कल्पनाओं को त्यागने की हिदायत दी है।

अत: बन्द नंबर 1 में गुरु रविदास जी ने, हिंदू धर्म की विचारधारा को रद्द कर के एक नए धर्म की विचारधारा का सृजन किया है। इस में गुरु जी फरमाते हैं, कि हे ब्राह्मणो! आप हिंदू धर्म ग्रंथों का हवाला देकर कहते हो, कि स्वर्गों के पांच वृक्ष, मन में सोची हर इच्छाओं को पूरा करने के लिए चिंतामणि, मन की हर कामना को पूरा करने वाली कामधेनु, इंद्र देवता के स्वर्ग के बीच हैं, उस के बस में हैं। चार पदार्थ अट्ठारह सिद्धियां और नौ निधियां देवताओं के हाथ में हैं, परंतु यह बात सही नहीं है, क्योंकि जिन सुखों के समुद्र प्रभु के पास स्वर्ग के वृक्ष चिंतामणि और कामधेनु हैं, उस एक प्रभ के हाथों की हथेलियों पर, चार पदार्थ, अठारह सिद्धियां और नौ खजाने हैं। दूसरा हिंदू धर्म के भगवानों, देवी, देवताओं को पैदा करने वाला ही वही परमात्मा है, इसलिए उस एक प्रभ के बिना और कोई भगवान या देवी देवता नहीं है। इसलिए ब्राह्मणो आप हिंदू धर्म के उपरोक्त विचारों को त्याग कर प्रभ का सिमरन करो, जिस ने सब कुछ प्रदान किया है।

इस बन्द से स्पष्ट है कि गुरु रविदास जी ने प्यार से परन्तु निर्भय होकर ब्राह्मणों के मानव विरोधी धार्मिक ग्रन्थों को तो रद्द करते ही हैं, साथ ही साथ ब्राह्मणों को भी इन ग्रन्थों का त्याग करने के लिये कहते हैं। ये विचार महाबली क्रांतिकारी महान योद्धा गुरु रविदास जी ने राजाओं-महाराजाओं के दरबारों में ब्राह्मणों को व्यक्त किये हैं। ये अटल सच्चाईयां तब कही जा सकीं, जब अनेकों बार ब्राह्मणों ने राजाओं-महाराजाओं को शिकायत की कि गुरु रविदास चमार होता हुआ भी हिन्दुओं के धर्म ग्रन्थों का विरोध करता हुआ उन्हें रद्द

करके ब्राह्मणों के धर्म अनुसार हिन्दू धर्म को अपमानित करता है। इस बन्द से यह भी सिद्ध हो जाता है कि इस शब्द की सृजन सोरठि राग के स्वभाव अनुसार हुआ है:

''सोरठि सदा सुहावणी जे सच्चा मन होइ।।''

हरि नाम के रस को पीकर मुर्दा नहीं आयेगी तथा इस लोक में तथा परलोक में गुरु के शिष्य की आत्मा निर्मल होगी।

''सोरठि सु रसु पीजीयै कबहु न फीका होइ।।
नानकु राम नाम गुन गाइअहि दरगाह निर्मल सोइ।।''

'रहाउ' में बंद नंबर 1 के बीच दर्ज विचारधारा को सिद्धांत का रूप दिया गया है। रद्द की गई हिंदू धर्म की विचारधारा का त्याग कर के उस की जगह पर नए धर्म की विचारधारा दे कर उस के अनुसार सब को खास कर के ब्राह्मणों को आराधना करने का आदेश है, हुकम है।

बन्द नंबर 2 के बीच गुरु रविदास जी ने हिंदू धर्म की रद्द की गई विचारधारा को महर्षि वेदव्यास द्वारा रद्द करवा कर इस को मूलभूत तौर से रद्द कर दिया है। व्यास जी का कथन है, देवनागरी के चौतीस अक्षरों में पुराणों के राजाओं और महाराजाओं के मिथ्य इतिहास को और ब्रह्मा के रचे वेदों को, देवनागरी के ही इन चौतीस अक्षरों के बीच रचित साहित्य अर्थात् हिंदू धार्मिक ग्रंथों को अच्छी तरह खोज कर उन का अध्ययन किया परन्तु वेद व्यास के मन को शान्ति नहीं मिली। फिर पूरी तरह गहन सोच विचार करने के बाद अपना निर्णय देते हैं परम तत्व बताते हैं कि यह हिंदू धर्म ग्रंथ मन की शान्ति प्रदान नहीं करते। इस कारण प्रभ के नाम सिमरन के बराबर नहीं हैं। इस तरह गुरु जी ने व्यास जी का निर्णय दर्ज करके हिन्दुओं के सब से महान भगवान ब्रह्मा द्वारा सृजित हिंदू धर्म की विचारधारा को हिंदुओं के ही महर्षि व्यास से रद्द करवा रखा है और इस तरह उनकी नई सृजित विचारधारा की पुष्टि भी हो गई है।

बन्द नंबर 3 में अपनी नई सृजित विचारधारा का अमली रूप पेश करते हैं, कि वे लोग बड़े किस्मत वाले हैं, जिन्होंने विकारों से रहित अन्तर्ध्यान हो कर अपनी सुरत प्रभ के साथ जोड़ ली है। उन के मन में प्रभ का प्रकाश हो जाता है और जन्म मरण के भय से मुक्त हो जाते हैं।

अत: गुरु रविदास जी की नई विचारधारा मनुष्य को विकारों से मुक्त कर के प्रभ प्राप्ति का साधन बनती है। इस कारण गुरु जी सब को खास कर ब्राह्मणों को उपरोक्त नई विचारधारा के अनुसार भक्ति करने का हुक्म देते हैं।

शब्दार्थ- हे ब्राह्मण! जिन सुखों के सागर प्रभ के वश में स्वर्ग के पांच वृक्ष, चिंतामणि और कामधेनु हैं, उसी की हथेली के चारों पदार्थ, अठारह सिद्धियां और नौ निधियां हैं। सो सब कुछ एक प्रभ के हाथ में ही है। अलग-अलग भगवानों, देवी, देवताओं के हाथ में कुछ नहीं है, क्योंकि ये सभी तो उस ने ही पैदा किए हुए हैं।

इसलिए हे ब्राह्मण! तू ब्रह्मा के वेद और पुराण आदि धार्मिक रचनाओं का त्याग कर के केवल और केवल एक प्रभ 'हरि' का सिमरन क्यों नहीं करता है।।१।। रहाउ।।

वेदों के खोजी महर्षि वेदव्यास ने पुराणों के बीच दर्ज अनेकों राजाओं, महाराजाओं का मिथ्य इतिहास और ब्रह्मा के वेदों और जिन्होंने देवनागरी के चौतीस अक्षरों के बीच धार्मिक साहित्य रचा गया है, का गहराई से अध्ययन कर के, सोच विचार के बाद रद्द कर दिया तथा फिर यह अटल सच्चाई बताई है, हिन्दू धर्म ग्रन्थों के अध्ययन करने से मन को शान्ति नहीं मिल सकती। इसी कारण हरि के नाम के सिमरन के बराबर ये रचनाएं कुछ भी नहीं हैं, फिर तूँ राम का नाम क्यों नहीं जपता है।।२।।

इसलिए गुरु रविदास जी महाराज अपने आप को संबोधित करते हुए फरमाते हैं, कि रविदास वे बड़े किस्मत वाले हैं, जिन की विकार रहित हो कर के प्रभ के सिमरन में 'सुरति' लग गई है। उन के मन के बीच ज्ञान का प्रकाश हो गया है। वे जन्म-मरण के भय से मुक्त हो गए हैं। उनको प्रभ प्राप्ति हो गई है।।३।।४।।

शब्द - 18

राग सोरठ वाणी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा॥
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा॥१॥
माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि॥
तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि॥१॥ रहाउ॥
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती॥
जउ तुम तीरथ तउ हम जाती॥२॥
साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी॥
तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी॥३॥
जह जह जाउ तहा तेरी सेवा॥
तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा॥४॥
तुमरे भजन कटहि जम फांसा॥
भगति हेत गावै रविदासा॥५॥५॥[1]

(पृष्ठ ६५८)

शब्दार्थ - **गिरिवर**-हरियाबल और पेड़ों वाला पहाड़।
तउ - तब। **भए**-हां।।1।।
तोरहु - तोड़ें। **तोरहि**-तोड़ूंगा। **सिउ**-नालों।1।। रहाउ।।
जाती - यात्री।।2।।
अवर संगि - अन्य की अपेक्षा।।3।।
सो - जैसा। **अउर** - और।।4।।
कटहि - कट जाते हैं। **फासा** - फंदा।।5।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५८-६५९

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी महाराज ने इस शब्द के बीच प्रभु प्रेम की तीक्ष्णता, तीव्रता और दृढ़ता को स्पष्ट किया है।

पहली बन्द नंबर 1 में जीव और अजीव के कुदरत में विचर रहे गहरे, अटूट प्रेम का ज़िक्र किया है। अजीव गिरिवर और चांद के साथ प्रेम करने वाले जीव मोर और चकोरी हैं। मनुष्य के लिए कई बार भ्रम हो जाता है, कि जीव का अजीव के साथ प्रेम का क्या अर्थ है? दरअसल मोर अजीव पहाड़ के साथ प्रेम नहीं करता है, बल्कि हरियाली और पेड़ों के बीच निरूपित प्रभ स्वरूप को पहचान कर मस्ती में आकर नाचता है। इस तरह चकोरी चांद को नहीं उस के शीतल प्रकाश के बीच निरूपित प्रभ स्वरूप को पहचान कर उस के बीच मुक्त हो कर अपने-आप को भूल जाती है, इसी प्रभ पहचान की मूलभूत बात गुरु जी, अपने अटूट, गहरे प्रभ प्रेम की गवाही देकर, मनुष्य को समझाते हैं।

इसी कारण तो वह, 'रहाउ' में प्रभ प्रेम के बीच विह्वल होकर कह उठते हैं कि हे प्रभ! यदि आप न तोड़ें, तो मैं नहीं तोड़ूंगा। मैं तो दरअसल तोड़ सकता ही नहीं हूं। आप से तोड़ कर मैं किस के साथ जोड़ूँगा।

इसलिए बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी महाराज प्रभ को अपने तीक्ष्ण और तीव्र प्रेम के बारे में दृढ़ करते हैं और कहते हैं, कि हे प्रभ! आप का और मेरा प्रेम तो दिये और बाती, तीर्थ और यात्री के संबंधों की तरह अटूट है। प्रभ रूपी दीपक में रविदास रूपी बत्ती जलने के लिए तत्पर है। तीर्थों में विचरण कर रहे प्रभ को यात्री रविदास मिलने के लिए (यात्रा) करता है। इसलिए गुरु जी का प्रभ प्राप्ति के लिए दृढ़ निश्चय है।

इस कारण बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी प्रभ को संबोधित कर के प्रेम में मुक्त हो कर अपना अटूट और स्थिर फैसला देते हुए फरमाते हैं कि, हे प्रभ! मैंने तो सारी दुनिया के साथ रिश्ते तोड़ कर आप के साथ सच्ची सुच्ची प्रीत का रिश्ता जोड़ लिया है। मेरी प्रीत तो मोर और चकोरी की तरह शाश्वत प्रीत है।

इस कारण बन्द नंबर 4 में वे स्पष्ट करते हैं कि, प्रभ जैसा दुनिया में कोई

और भगवान या देवता नहीं है। मैं तो आप के प्रेम की खुमारी के बीच जिधर भी जाता हूं, जहां भी जाता हूं, वहां ही आपकी सेवा करता हूं। आप तो सर्व व्यापक हैं, इस कारण मैं श्वास-श्वास हर जगह आप का ही सिमरन करता हूं।

तेरे सिमरन के साथ (बन्द नंबर 4 में) आप के गुण गाने से, हे प्रभ! मनुष्य यमदूतों की फांसी से बच जाता है, विकारों से मुक्त हो जाता है। इस कारण तेरी प्रेम भक्ति की प्राप्ति के लिए रविदास हर जगह, हर समय आप की महिमा, आप की स्तुति में लीन रहता है। हे प्रभ! सेवक को अपने चरण कमलों में स्थान देकर प्रभ प्रेम की दात प्रदान करो जी।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी सृष्टि में विचर रहे कुदरती जीव और अजीव के अटूट प्रेम का उदाहरण देकर अपने प्रभु प्रेम को अटूट दर्शाते हुए, प्रभ को संबोधित करते हैं, हे प्रभ! यदि आप सुंदर हरियाली और पेड़ों से भरे हुए पहाड़ हैं, तो मैं उस हरियाली और पेड़ों के बीच विचर रहे आप के स्वरूप पर मुग्ध हो कर मोर बन कर नाच उठता हूं, यदि आप चांद हैं तो मैं आप के शीतल प्रेम भरे प्रकाश के बीच चकोरी बन कर आनंदित हो जाता हूं।।१ ।।

इसलिए हे प्रभ! आप मुझ से अपना प्रेम न तोड़ना। मैं तो तोड़ ही नहीं सकता हूँ, आप के साथ तोड़ कर, फिर मैं किस के साथ प्रेम करूंगा।।२ ।। रहाउ।।

इस कारण हे प्रभ! यदि आप दीपक हैं तो मैं उसकी बाती हूं और यदि आप तीर्थ हैं तो मैं उसका यात्री हूं। मैं किसी तरह भी आप के प्रेम से दूर नहीं जा सकता हूं।।२ ।।

हे प्रभ! मैं तो आप के साथ, सच्ची-सच्ची प्रीत करता हूं। आप की प्रीत के कारण मैं बाकी दुनिया से अर्थात् विकारों से अपने आप को तोड़ लिया है। मैं माया के जाल से निकल गया हूं।।३ ।।

मैं जिधर भी जाऊंगा और जहां भी जाऊंगा, हे प्रभ! यह आप का सेवक वहां भी आप की ही सेवा में हाज़िर होकर आप की शिफ़्त गाऊंगा, क्योंकि आप सर्व व्यापक हैं। आप जैसा इस सृष्टि के बीच और कोई भगवान और देवता नहीं है।।४ ।।

हे प्रभ! आप के गुण गाने से मनुष्य यमदूतों के बंधन से मुक्त हो जाता है। इसी कारण रविदास आप की प्रेम भक्ति की प्राप्ति के लिए आप की शिफ़्त, सलाह में लीन है। हे प्रभ! मुझे प्रेम भक्ति की दात प्रदान करो जी।।५ ।।५ ।।

शब्द - 19

राग सोरठ वाणी भगत रविदास जी की

੧ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जल की भीति पवन का थंभा रकत बुंद का गारा॥
हाड मास नांड़ी को पिंजरु पंखी बसै बिचारा॥१॥
प्रानी किआ मेरा किआ तेरा॥
जैसे तरवर पंखि बसेरा॥१॥ रहाउ॥
राखहु कंध उसारहु नीवां॥
साढे तीनि हाथ तेरी सीवां॥२॥
बंके बाल पाग सिरि डेरी॥
इहु तनु होइगो भसम की ढेरी॥३॥
ऊचे मंदर सुंदर नारी॥
राम नाम बिनु बाजी हारी॥४॥
मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी
ओछा जनमु हमारा॥
तुम सरनागति राजा राम चंद
कहि रविदास चमारा॥५॥६॥[1]

(पृष्ठ ६५९)

शब्दार्थ - **जल**-पानी, इसका गुण रस, स्वभाव द्रव्य, ज्ञान इंद्री, रसना, **कर्म**=इंद्री, लिंग। **भीति**-दीवार। **पवन-हवा**= इस का गुण स्पर्श, स्वाभाविक वेग, ज्ञान, इंद्री, त्वचा; कर्म इंद्री, हाथ। **थंबा**-थमी, सहारा। **रक्त**-मां की रत। **बूंद**-पिता के वीर्य की बूंद। **रक्तबूंद**=आग=इसका गुण रूप, स्वभाव प्रकाश, ज्ञान इंद्री, आंखें, कर्म इंद्री, पैर। **हाड़ मास**-मिट्टी, धरती, इसकी ज्ञान इंद्री, नाक, विषय सुगंध, कर्म इंद्री गुदा। **नाड़ी**-आकाश, इस का गुण शब्द, स्वभाव, प्रसारित, ज्ञान इंद्री कान; कर्म इन्द्री मुंह

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५९

नोट : नाड़ी=3 थोथी नलकी; 4 क्षण भर समय। महान शब्दकोश 524 । समा=5 असमान महान शब्दकोश १२० Space=अंतरिक्ष, आकाश, समय, काल, खाली जगह (थोथी नलकी) पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला अंग्रेज़ी=पंजाबी कोष=843। स्पेस (Space) के अर्थों में नाड़ी के महान शब्दकोश वाले सारे अर्थ आ जाते हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि नाड़ी के अर्थ आकाश ही हैं। यह इस बन्द के प्रसंग में और भी स्पष्ट हो जाता है, कि नाड़ी के अर्थ आकाश ही हैं, क्योंकि इस बन्द में शुरू से आखिर तक शरीर की बनावट में शामिल शेष सभी तत्वों का ज़िक्र भी किया गया है। पंखी=आत्मा।।१।।

तरवर-वृक्ष। **पंखी**-पक्षी।।१।। रहाउ।।

नीवा-नींव। **सींवा**-सीमा, हद।।१।।

बंके-सोहना। **डेरी**-टेढ़ी। **बाजी हारी**-जीवन बर्बाद कर लिया, तबाह कर लिया।।4।। **जाति**=मनुष्य का विकारों वाला स्वभाव।

भगति रते से ऊतमा जति पति सबदे होइ।।
बिनु नावै सभ नीच जाति है बिसटा का कीड़ा होइ।।७।।

पृष्ठ ४२६ (आसा म ३)

''हे भाई जो मनुष्य प्रभ की भक्ति के रंग में रंग जाते हैं, वे ऊंची जाति वाले हैं। गुरु के शब्द से जुड़ने से ऊंची जाति बन गई है, ऊंचे कुल बनते हैं। प्रभ के नाम से खाली सारी दुनिया ही नीची जाति वाली है। (नाम से बिछुड़ (खुंज) कर दुनिया विकारों के गंद में टिकी रहती है)। जिस प्रकार विस्टा (गन्दगी) का कीड़ा बिस्ट (गन्दगी) में मग्न रहता है।''

(और जानकारी के लिए पढ़ो महान वैज्ञानिक गुरु रविदास जी शरीर की ऊसारी और मानवीय स्वभाव का सृजन)। **पाति**=वंश, कुल।

शरणागति-शरण में आया हूं। **राजा**-सृष्टि का बादशाह।

राम=प्रभ। **चंद**-सोहना।।५।।६।।

महान वैज्ञानिक गुरु रविदास जी और शरीर की रचना और स्वभाव की सृजना

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में पांच तत्वों को शरीर की रचना के बीच हूबहू उसी तरह कायम रख कर उन को नए अर्थ देकर एक नए सिद्धांत का सृजन किया है। इस पर हम विचार करते हैं।

शरीर की बनावट के बीच प्रयोग की जाने वाली सामग्री सत करतार ने अपनी करतारी (ईश्वरीय) शक्ति के साथ पैदा की है। सृष्टि का कोई भी जीव इस सामग्री को पैदा करने की सामर्थ्य नहीं रखता है। जीव तो खुद करतार की पैदा की हुई इस सामग्री से बना हुआ है, जो शरीर की बनावट के बीच प्रयोग की गई सामग्री जल की दीवार, पवन का स्तंभ (सहारा) आग (अग्नि रक्त बूंद खून की बूंदें) का गारा पृथ्वी हाड, मांस और आकाश (नाड़ियां) के मेल के साथ शरीर की रचना की गई है। इस सच्चाई को अब ज्ञान विज्ञान ने भी साबित कर दिया है। पांच तत्वों को भवन के बीच प्रयोग की जाने वाली सामग्री के अनुसार नाम दे कर गुरु जी सचमुच के शरीर रूपी भवन की तैयारी कर रहे हैं, जिस के बीच जीव पक्षी अर्थात् आत्मा का निवास होता है। पांच तत्वों के नए नाम दरअसल इन्हीं तत्वों के मूलभूत स्वभाव, गुण आदि हैं। अब हम अकेले अकेले तत्व के बारे में चर्चा करते हैं।

पांचों तत्व (पदार्थ) होने के कारण यह स्वाभाविक है कि शरीर के पांचों तत्वों के गुण भी साथ-साथ प्रवेश करते हैं। जल का गुण है रस। जीव (रसना) इसका ज्ञान इंद्री है और लिंग कर्म इंद्री। रसों के बीच सब से अधिक आकर्षण का कारण काम-चेष्टा है। इसी कारण ही लिंग इस की कर्म इंद्री है। संत हीरा दास जी स्पष्ट करते हैं कि -

'लघी (पिशाब) करनी ते काम चेष्टा का आनंद लेना तां की क्रिया है।'[1]

लिंग से ही सृष्टि का सृजन हुआ है। इस के बिना सृष्टि का विकास रुक

1. रविदास दीप - पृष्ठ : १८९

जाएगा और किसी दिन सृष्टि के बीच कोई जीवन नहीं होगा। इसी तरह पानी की किल्लत के कारण कोई भी जीव नहीं बच सकेगा। इस कारण शरीर के सृजन से जल को 'कंध' दीवार कह कर, इस के मूलभूत और महत्वपूर्ण गुण को ही उजागर किया गया है। वैज्ञानिक शरीर में 70 प्रतिशत पानी मानते हैं, इस तथ्य से भी सिद्ध हो गया है, कि जल शरीर के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है, बाकी तत्वों की खोज भी इसी स्तर की है। इस उत्तम वैज्ञानिक खोज के कारण गुरु रविदास जी महाराज महान वैज्ञानिक सिद्ध हो गए हैं।

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो गया है कि जल की कोई जाति नहीं है, जल न तो ब्राह्मण है, न ही क्षत्रिय, न वैश्य और न ही शूद्र। जल केवल जल ही है। हां, जल के साथ काम रस का विकास ज़रूर पैदा होता है, क्योंकि लिंग जल की कर्म इंद्री है।

पवन का गुण है, स्पर्श। इसकी ज्ञान इंद्री त्वचा है, त्वचा (चमड़ी) के स्पर्श के साथ एक दूसरे को जानने की भावना उजागर होती है। इस के अनुसार कर्म इंद्रियां प्रक्रिया करती हैं। इस के कारण इंद्री हाथ है, पकड़ना, छोड़ना इन की क्रिया है। इसलिए हाथ का दूसरों के साथ स्पर्श अपनी भावना दूसरे को बता रहा होता है और दूसरा उस को ग्रहण कर रहा होता है। इस प्रक्रिया में हर किस्म की भावना शामिल है, जिस प्रकार प्यार की भावना, नफरत की भावना, काम की भावना आदि। इस की कमी के कारण जीवन जीना, जीने की गति के बीच रुकावट आ जाती है। इसके महत्व को ध्यान में रखते हुए, गुरु जी ने बढ़िया जीवन जीने के लिए पवन को स्तंभ कहा है। इस के बिना न जीवन विकास करता है और न ही शरीर की रचना कायम रह सकती है। इसलिए शरीर का अस्तित्व और जीवन विकास के लिए अति ज़रूरी है।

उपरोक्त चर्चा से यह भी सिद्ध हो गया है कि पवन की कोई जाति नहीं है। पवन न ब्राह्मण है, न क्षत्रिय है, न वैश्य है और न ही शूद्र है। पवन केवल पवन है। हां। पवन के साथ स्पर्श रस का विकार पैदा ज़रूर होता है, क्योंकि हाथ पवन की कर्म इंद्री है।

अग्नि का गुण है रूप। इस की ज्ञान इंद्री आंखें और कर्म इंद्री पैर हैं। आंखें दृश्य देख कर, रूप देख कर, सृष्टि का ज्ञान प्राप्त करती हैं और उस के अनुसार पैर अपने मार्ग पर आगे बढ़ते हैं। यदि पैर मार्ग की तरफ न बढ़ें तो सृष्टि का कार्य रुक जाएगा। सारी एकाग्रता भंग हो जाएगी। इस कारण गुरु जी ने इस को गारा

कहा है। शरीर के सभी अंगों को जोड़ना (एकाग्र करना) गारे का काम है। यह जोड़ने की प्रक्रिया रुक जाए तो सब कुछ ही अधूरा रह जाएगा। शरीर का सृजन हो ही नहीं सकेगा, अग्नि इस जोड़ने की प्रक्रिया को सारे शरीर के बीच निरंतर जारी रखती है। इसकी गति (चाल) के बीच रुकावट शरीर के सारे तत्वों को टुकड़े-टुकड़े कर देती है। इसलिए अग्नि की जोड़ने की प्रक्रिया का निरंतर जारी रहना अति ज़रूरी है।

उपरोक्त चर्चा से यह भी सिद्ध हो गया है कि अग्नि की कोई जाति नहीं है। अग्नि न ब्राह्मण है न क्षत्रिय, न वैश्य है, न ही शूद्र। अग्नि केवल अग्नि है। हां, अग्नि के साथ रूप रस का विकार पैदा ज़रूर होता है, क्योंकि पैर अग्नि की कर्म इंद्री है।

पृथ्वी का गुण है सुगंधि। इस की ज्ञान इंद्री नाक और कर्म इंद्री गुदा है। इस का स्वभाव कठोर है। पृथ्वी के तत्वों का कठोर स्वभाव समूचे शरीर के ढांचे को सुदृढ़ कर के इस को बचाए रखता है। ढांचे का सुदृढ़ होना शरीर के अंदर उत्पन्न गन्द को बाहर निकालने में महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। इस गंद के अंदर रुके रहने की स्थिति में यह शरीर के ढांचे में सड़, गल कर दुर्गंध पैदा करता है और रोगी बना देता है। इसलिए गुदा आंतरिक मल का त्याग करके शरीर के अंदरूनी ढांचे की सफाई करके शरीर को कठोरता और अरोग्यता प्रदान करती हुई इस को सुरक्षित रखती है। अत: शरीर के ढांचे के लिए सुगंधि और कठोरता अति ज़रूरी है।

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो गया है कि पृथ्वी की कोई जाति नहीं है। पृथ्वी न ब्राह्मण है, न क्षत्रिय, न वैश्य, और न ही शूद्र। पृथ्वी केवल पृथ्वी है। हां, पृथ्वी के साथ सुगंध रस का विकार पैदा ज़रूर होता है, क्योंकि गुदा पृथ्वी की कर्म इंद्री है।

आकाश का गुण सुनना है। इसकी ज्ञान इंद्री कान और कर्म इंद्री मुंह है। शब्द कानों के साथ सुना जाता है और शब्द का मुंह द्वारा वाक उच्चारण होता है। प्रसारित होना इस का स्वभाव है। इस कारण वाक उच्चारण के समय इसका प्रसारण बहुत दूर तक होता है, जिस कारण एक मनुष्य दूसरे की बात सुनता है। यदि यह प्रसार रुक जाए तो जीव पक्षी भाव आत्मा का शरीर के अंदर रुके रहना कठिन हो जाता है, क्योंकि आकाश की कमी के कारण अर्थात् शरीर का विकास न होने के कारण शरीर मर जावेगा और जीव पक्षी अर्थात् आत्मा उड़ान

भर जाएगी। इसलिए समूचे शरीर के बीच आकाश (पसार) का होना ज़रूरी है। आकाश को गुरु जी ने नाड़ी कहा है। डॉ. साहिब सिंह राग धनासरी के बीच गुरु कबीर जी के शब्द 'दस बैरागनि मोहि' के बीच आए शब्द 'सतरि दोइ' का अर्थ बहत्तर हज़ार नाड़ियों करते हैं और उनके ही राग सूही के बीच आए शब्द 'एक कोटू पंच सिकदारा' की तुक ''बहतरी घर इकु पुरखु समाइया''[1] देखने का आदेश भी देते हैं। राग सूही के बीच गुरु कबीर जी ने नाड़ियों की गिनती बहतर बताई है। भाई काहन सिंह नाभा बहत्तर शब्द का अर्थ करते हुए लिखते हैं -

> ''बहतरी-करनि 'बहतरि' लागि ताहि (बसंत कबीर) बहतर नाड़ियां कसन वालिआं रसिआँ। योगमत दे ग्रँथ गोरकपद्धति विच बहतर हज़ार नाड़ी लिखी है (---------) जिन्हा विचों मुख बहतर मनीआँ हंन। प्राण सँगली विच वी बहतर हाट शरीर विच लिखे हन,बहतरी घरी इकु पुरखु समाइआ (सूही कबीर)''[2]

यहां नाड़ी को घर कहा है अर्थात् खाली जगह अर्थात् आकाश शरीर के नाड़ियां रूपी घर के बीच एक पुरुष निवास करता है, जिस को गुरु रविदास जी ने पक्षी कहा है। शरीर के बीच सिर से लेकर पैर के अंगूठे तक, इन नालियों का प्रसार है। इन नालियों द्वारा ही खून शरीर को गर्म करता रहता है। यदि ये नाड़ियां न हों तो खून का प्रसार नहीं हो सकता है अर्थात् आकाश के तत्वों की कमी के कारण खून का प्रसार नहीं हो सकेगा और शरीर का ढांचा नष्ट हो जाएगा और शरीर के अंदर बैठा आत्मा रूपी पक्षी उड़ान भर जाएगा। इसलिए आकाश (नाडियां) सारे शरीर के बीच प्रसारित हुई है। अत: नाड़ियां ही आकाश हैं। सारे शरीर के बीच फैली हुई हैं। इन के द्वारा ही खून शरीर को गर्म रख कर सजीव रखने का एकमात्र साधन है। इसलिए नाड़ियां (आकाश) का शरीर और पक्षी को सजीव रखने के लिए अति ज़रूरी हैं।

उपरोक्त चर्चा से दृढ़ हो गया है कि, आकाश की कोई जाति नहीं है। आकाश न ब्राह्मण है, न क्षत्रिय, न वैश्य और न शूद्र है। आकाश केवल आकाश ही है, हां, आकाश के साथ शब्द रस का विकार पैदा ज़रूर होता है, क्योंकि मुंह आकाश की कर्म इंद्री है।

उपरोक्त चर्चा से भलीभांति स्पष्ट होता है, कि गुरु रविदास जी ने केवल

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण (पोथी पांचवीं) - पृष्ठ : १६५-१६६
2. महान कोश - ६१८

शरीर सृजन ही वैज्ञानिक तौर से नहीं किया है बल्कि साथ ही साथ विषय विकारों की वैज्ञानिक तौर से विषय विकारों का सृजन कर के शरीर की सम्पूर्णता दृढ़ की है। इस महत्वपूर्ण महान वैज्ञानिक का सिद्धांत गुरु ग्रंथ साहिब के बीच एक ही शब्द में किसी और महापुरुष ने दर्ज नहीं किया है और न ही इस तरह वैज्ञानिक तौर से इन तत्वों का वर्णन करके और ज़रूरत अनुसार व्याख्या करके शरीर की बनावट का सैद्धांतिक तौर से बोध कराया है। गुरु रविदास जी ने एक शब्द के बीच और उसके पहले ही बन्द में शरीर के तत्वों का वैज्ञानिक सुमेल करवा कर शरीर के भौतिक अस्तित्व को प्रकट किया है। पांच तत्वों के प्रवेश के साथ शरीर के बीच इन के गुण और स्वभाव का प्रवेश करना भी स्वभाविक है। इन पांचों तत्वों के गुण और स्वभाव का ही दूसरा नाम विषय विकार है।

अत: स्पष्ट तौर से स्पष्ट हो गया है कि, गुरु रविदास जी ने पांच तत्वों के अनुसार शरीर की रचना और उन तत्वों के स्वभाव और उन के गुणों के अनुसार ज्ञान इंद्रियों और कर्म इंद्रियों का सृजन कर के शरीर की संपूर्ण रचना की है और गहराई में जाकर यह भी स्पष्ट हो जाता है, कि इन पांचों तत्वों की प्रकृति और इस प्रकृति से संबंधित तीन गुण सतो, रजो और तमो भी निरूपित हो जाते हैं। ये तीनों गुण हर एक तत्व के बीच निरूपित हैं। सतोगुण के अंश से पांच ज्ञानेंद्रियां कान, त्वचा, आंखें, जिह्वा और नासिका की उत्पत्ति हुई है। रजो की अंश से पांच कर्म इंद्रियां बोलना, हाथ, पैर, लिंग और गुदा उत्पन्न हुए हैं। तमो की अंश से पांच विषय शब्द स्पर्श, रूप, रस और गंध और पांचों तत्वों की पच्चीस प्रकृतियां भी उत्पन्न हुई हैं।

आकाश की प्रकृति - काम, क्रोध, लोभ, मोह और भय।

पवन की प्रकृति - चलना, जलना, वेग, बंधन (बांधना), संकोचन।

अग्नि की प्रकृति - निंद्रा, आलस्य, भूख, प्यास, क्रांति

जल की प्रकृति - राल, श्वेत, रक्त, वीरज, लघी।

पृथ्वी की प्रकृति - हाड, मांस, नाड़ी, त्वचा और रोम।'"[1]

दुनिया के इतिहास में शरीर का भौतिक और सूक्ष्म अस्तित्व का संपूर्ण सृजन पहली बार हुआ है। इन के संकेत शब्द के दूसरे, तीसरे, चौथे और खास कर के पांचवीं प्रस्तावना में पूर्ण रूप से मूर्तिमान हुए हैं। हम जायदाद का

1. रविदास दीप कर्ता - संत हीरा दास (शरांश) - पृष्ठ : १९३

लालच करते हैं, मृत्यु के समय ज़रूरत केवल साढ़े तीन हाथ ज़मीन की होती है। हम शरीर को संभाल संभाल कर रखते हैं। पग की इज्ज़त अर्थात् इज्ज़त मान का, जो कूड़े की तरह होता है, उस का हंकार करते हैं, जब कि सब कुछ नाश हो जाना है। ऊंचे-ऊंचे महलों और सुंदर-सुंदर स्त्रियों के बीच मोह रखते हैं, जब कि यह भी नाशवान ही हैं। आखिरी बात यहीं समाप्त होती है कि मनुष्य स्वभाव से ही विकारों से भरा हुआ है, जिस का स्रोत माया है, जिस कारण समूचा जीवन ही तबाह हो गया है।

अत: संपूर्ण शरीर की रचना करते हुए कुदरती ही विषय विकारों का भी सृजन हो गया है। इस तथ्य की स्पष्टता और पुष्टि हमें गुरु रविदास जी के शब्द 'मृग, मीन, भृंग, पतंग और कुंचर' से ही हो जाती है। इस शब्द में वर्णन किए दोष ज्ञान इंद्रियों से संबंधित हैं, कर्म इंद्रियों के साथ नहीं। मृग अर्थात् हिरण को कान रस का दोष है, कान आकाश की ज्ञान इंद्री है, मीन अर्थात मछली को जीभ रस का दोष है। जीभ जल की ज्ञान इंद्री है। भृंग अर्थात् भ्रमर को नाक रस का दोष है। नाक पृथ्वी की ज्ञान इंद्री है। पतंग अर्थात् पतंगा को आंख रस का दोष है। आंख अग्नि की ज्ञान इंद्री है और हाथी को काम रस का दोष है। काम का संबंध स्पर्श के साथ है। अत: स्पर्श त्वचा अर्थात् चमड़ी हवा की ज्ञान इंद्री है।

अत: शरीर का सृजन करते हुए पांच तत्व जल, पवन, अग्नि, पृथ्वी और आकाश का प्रयोग होता है। इन के प्रयोग के बिना शरीर का सृजन संभव नहीं है। इसी तरह इन पांच तत्वों से जुड़े विषय विकारों का आना भी हर हालत में ज़रूरी है। इस तरह शरीर का सृजन करते समय विषय विकारों का सृजन भी त्याग नहीं किया जा सकता। अत: स्पष्ट हो जाता है कि पांचों तत्वों में विषय विकार भी शामिल हैं। इन को निखेड़ कर अलग करना संभव नहीं है। इस कारण विषय विकार हर शरीर की बनावट का ज़रूरी अंग हैं।

उपरोक्त समूची चर्चा से यह भी परिपक्व हो गया है कि शरीर की कोई जाति नहीं है क्योंकि शरीर के पांचों तत्वों की कोई जाति नहीं है, इसलिए मनुष्य शरीर की कुदरत के विधान के बीच कोई जाति नहीं है। अत: हिंदू धर्म में जात पात किसी शरारती और पागल बिगड़े हुए दिमाग की देन है, परंतु सारे शरीरों में पांच विकार एक जैसे ही हैं अर्थात् सभी शरीर (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के बीच एक जैसी ही बुराइयां और अवगुण हैं।

अत: प्रभ के विधान में बेकार तो हैं, परंतु जाति पाति बिल्कुल ही नहीं है।

इस तरह यह अदभुत प्राप्ति गुरु रविदास जी को एक महान वैज्ञानिक के तौर पर उजागर करती है। एक तथ्य और स्पष्ट हो जाता है, कि जब हम उनकी बाकी वाणी का अध्ययन करते हैं।

रसायन विज्ञान (Chemistry)

एक और शब्द 'दुध त बछरै थनहूँ बिटारिउ' से भी गुरु रविदास जी वैज्ञानिक सिद्ध होते हैं। इस शब्द में भी लिखते हैं, 'विखु अमिरित बसही इक संगा'

गुरु जी के उपरोक्त कथन से सिद्ध हो जाता है कि, गुरु रविदास जी एक महान वैज्ञानिक थे। उन्हें इस तथ्य का ज्ञान भी था कि प्राणी के बीच विष और अमृत समरस हैं। आज के वैज्ञानिक विधि से पानी में से विष अर्थात् हाइड्रोजन गैस और अमृत अर्थात् ऑक्सीजन गैस को अलग-अलग करने में समर्थ है। रसायन विज्ञान में इसको H_2O कहा जाता है। वैज्ञानिक विधि के साथ दोनों गैसों को मिला कर फिर पानी तैयार किया जा सकता है।

भौतिक विज्ञान (Physics)

सफेद रोशनी को जब प्रिज़्म के बीच में से गुज़ारा जाता है, तब यह सात रंगों में विलय हो जाती है। इस से सिद्ध होता है, कि सफेद रंगीन रोशनी असल में सफेद न होकर सात रंगों का सुमेल है। इसलिए जिस प्रकार हम चीज़ों को देखते हैं वे असल में वैसी नहीं होती हैं।

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा॥
जैसा मानीऐ होइ न तैसा॥१॥ रहाउ॥[1]

(६५७-६५८ गुरु रविदास जी)

दुत विज्ञान (Biology)

जीव, जंतु, फल, फूल, बेल, बूटे, कीट, पतंगे सब में प्रभ आप ही है और आप ही सबके बीच बैठ कर, यह सब कुछ भोग रहे हैं।

सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भुोगवै सोई॥

(६५७-६५८ गुरु रविदास जी)

अत: गुरु रविदास जी की महानता अचंभा कर देने वाली वैज्ञानिक खोज के बीच निरूपित है। जिस को छ: सौ साल पूर्व अपनी वाणी में दर्ज किया है, जो उनको एक महान वैज्ञानिक सिद्ध करती है।

1. गुरबाणी और विज्ञान - प्रो. तरलोचन सिंह, फिज़िक्स विभाग, खालसा कालेज, पटियाला - पृष्ठ दर्ज नहीं है।

जात-पात हिंदू धर्म की देन है पांचों तत्वों की नहीं

यह बात उभर कर सामने आती है कि जब तक ज्ञान इंद्रियां और कर्म इंद्रियां शुभ कर्म करती हैं, मन के काबू में रहती हैं, तब तक मन प्रभ के साथ जुड़ा रहता है, जब यह घटिया कर्म करती हैं, तब पांचों विकार बेकाबू होकर सिर पर चढ़कर बोलते हैं यकीनन इन विकारों का जात पात छुआछूत के साथ किसी किस्म का कोई संबंध नहीं है। भारत में हिंदू धर्म ने जात पात छुआछूत को जन्म दिया है परंतु बाकी दुनिया में तो इसका नामोनिशान नहीं है। हां विकार सारी दुनिया के लोगों के बीच विराजमान हैं, चाहे वह कोई भी हो।

मनुष्य के स्वभाव का सृजन तो पांचों तत्वों ने किया है परंतु इन पांचों तत्वों की अपनी कोई जात नहीं है, फिर मनुष्य की कोई जात किस प्रकार हो सकती है, जो मनुष्य की कोई जात नहीं है यह विचार 'शरीर का सृजन' करने वाले लेख में दृढ़ हो चुका है। इस संबंध में संत हीरा दास जी चक हकीम (फगवाड़ा) लिखते हैं-

''तब रविदास जी कहते हैं जाति का अभिमान जो व्यक्ति करता है वह केवल अज्ञानता से करता है, क्योंकि ब्रह्म से अजात है। जाति धर्म इसमें कोई नहीं ब्रह्म अज्ञान कर नाना प्रकार के जगत का भ्रम होता है। जब ज्ञान होता है तब जीव ब्रह्मदायक भेद भ्रम दूर होता है। ऐसे तो जाति-जीव ब्रह्म धर्म नहीं है। और सुनो तुम एक तमो गुण का बिकार है। पांचो तत्व उन पांचों तत्वो द्वारा रचित पिंड ब्रमांड है। तब तो उन में आदि तत्व आकाश है, तिस की क्या जाति है। द्वितीय पवन है, उसकी क्या जाति है अग्न की भी कोई जाति नहीं ओर जल की ब्राह्मण, क्षत्रियत कोई जाति नहीं। पृथ्वी भी वैश्यत, शूद्रत कोई जाति नहीं। जब इन शरीर के कारण मैं कोई जाति नहीं, तब शरीर कारज में जाति धर्म कैसे हुआ, यह सब मिथ्य ही भ्रम है।[1]''

संत हीरा दास जी ने 'जल की भीति पवन का थंबा' शब्द की बन्द नंबर 1 और बन्द नंबर 5 को मिला कर स्पष्ट किया है कि जब शरीर के अव्यवों

1. रविदास दीप - पृष्ठ : ६४

(आकाश, हवा, आक्सीजन आदि) की कोई जाति नहीं है, फिर शरीर के कार्यों के बीच जाति धर्म कैसे हो सकता है? संत महाराज का यह निर्णय बड़ा ही वैज्ञानिक और तर्कसंगत है। इस शब्द के अर्थ करने में बहुत ही उपयोगी है। इस का हिंदू धर्म के बीच कोई उत्तर नहीं है और न ही हिंदू धर्म से संबंधित विद्वान इसका उत्तर दे सकते हैं।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है कि मनुष्य की कोई जाति नहीं है। सारी सृष्टि में विचर रहे मनुष्य का शरीर पांच तत्वों का बना हुआ है और उसका स्वभाव इन तत्वों के गुणों और स्वभाव के अनुसार ही बना है। इसलिए मनुष्य की कोई जाति नहीं है।

अब गुरु रविदास जी की वाणी के शब्द 'जल की भीति' की बन्द नंबर 5 और 'तुम चंदन हम इरंड बापुरे' की बन्द नंबर 3 पर विचार करते हैं। दोनों शब्दों की बन्द की पहली तुक एक ही जैसी है।

1. मेरी जाति कमीनी पाति कमीनी उछा जनम हमारा।।

2. जाति उछा पाति उछा, उछा जनम हमारा।।

इस से यह बात तो स्पष्ट हो चुकी है कि, हिंदू धर्म में सृजित जात पात मनुष्य की बनाई हुई है। शूद्रों को घटिया सिद्ध कर के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को उत्तम सिद्ध कर के हिंदू धर्म अहंकार की बीमारी का शिकार हो गया है और शूद्र वर्ग बना कर उस को हर तरफ से लूट-खसोट कर के अनपढ़ रख कर पशु बनाया हुआ है। यह हिंदू धर्म का बुनियादी तथ्य है, कि इस कारण यह एक घिनौना नफरत और विरोध पैदा करने वाला धर्म बनाया हुआ है।

अत: जात पात और छुआछूत हिंदू धर्म की उपज है। यह प्रभ के विधान के बीच नहीं है और न ही पांचों तत्वों के बीच है, जिस से शरीर का सृजन हुआ है।

गुरु रविदास जी की वाणी की उपरोक्त बन्दों को और बढ़िया ढंग से समझ कर स्पष्ट करने के लिए कुछ देर के लिए 99% विद्वानों की बात मान लेते हैं कि वे अपनी जाति को कमीनी और ओछी कहते हैं परंतु क्या इतने बड़े परमात्मा, रब्ब के रूप रविदास अपने सृष्टि सृजन के समय से चले आ रहे मनुष्य के वंश को भी क्या कमीना कह सकते हैं? जिस मनुष्य के वंश के बीच ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि भी शामिल हैं। गुरु रविदास जी की और हर मनुष्य का वंश मनुष्य जाति है, वंश का अर्थ है, मनुष्य के जन्म का स्त्रोत, मनुष्य का स्त्रोत या वंश तो सृष्टि सृजन के समय का पहला मनुष्य है, जिस से आगे सारी दुनिया

के मनुष्यों का विकास हुआ है। इस कारण गुरबाणी और गुरु रविदास जी शक्तिशाली तर्क और प्रभावशाली ढंग से परमात्मा को ही मनुष्य जाति का माता-पिता मानते हैं। 'सोई मुकंद हमरा पित्त माता हमारा' के अनुसार क्या गुरु जी परमात्मा को कमीना कह सकते हैं? क्या कोई भी सृष्टि का मनुष्य परमात्मा को कमीना कह सकता है? तोबा तोबा कितना बड़ा पाप हो रहा है! अनर्थ हो रहा है! ऐसा कहना तो उन की मौत है। ऐसा तो सोच तक नहीं सकते! कहना तो दूर की बात रही, गुरु जी जिस प्रभ को अपने प्राणों से भी प्यारा मान कर उस की प्राप्ति के लिए अपने शरीर के टुकड़े-टुकड़े करने के लिए तैयार हैं।

कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु॥
प्रेमु जाइ तउ डरपै तेरो जनु॥१॥[1]

वे किस प्रकार ऐसा घोर पाप कर सकते हैं। यह अर्थ गुरुवाणी के 99% विद्वानों ने गुरु जी की वाणी का अर्थ कर के स्वीकार किए हैं। ऐसा कर के उन्होंने न माफ़ करने वाला पाप किया है।

अत: 'पाति कमीनी' के अर्थ 'मेरा शूद्र वंश कमीना' करना शत-प्रतिशत गलत है।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि जाति कमीनी पाति कमीनी और 'जाति उछा, पाति उछा' के 99% दोनों के अर्थ गलत हैं। इन तुकों का अर्थ है, 'मेरा विकारों से भरा हुआ स्वभाव कमीना है। कमीनों की संगत के बीच स्वभाव भी कमीना ही बनना था। इस कमीने स्वभाव के कारण इन कमीने विकारों का वंश (स्त्रोत) माया- जिस के दूत पांचों विकार हैं-भी कमीने हैं।'

इन अर्थों को एक और दृष्टि से परखते हैं। कुछ पलों के लिए हम 99% विद्वानों के अर्थों को सही मान लेते हैं। इन विद्वानों के अनुसार अर्थ हैं, मेरी जात भी कमीनी है। जमात (कुल) भी कमीनी है, जन्म भी तुच्छ है, गुरु रविदास जी अपने-आप को रविदास चमारा कहते हैं। गुरु जी की जाति चमार है, वे इस बारे इस शब्द की आखिरी तुक में स्पष्ट करते हैं, 'कहि रविदास चमारा' इन विद्वानों से एक प्रश्न है कि गुरु रविदास जी, इन तुकों में चमार शब्द का प्रयोग मान अर्थात् सम्मान वाली भावना के साथ करते हैं या 'कमीनी भावना' के साथ करते हैं। इन विद्वानों के अर्थानुसार इस शब्द की प्रस्तावना नंबर 5 के अर्थ इस प्रकार

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४८६-४८७

बनते हैं, कमीना रविदास कहता है, मेरी जाति भी कमीनी है, जमात भी कमीनी है, जन्म भी घटिया है। इन विद्वानों के अनुसार गुरु रविदास जी अपने-आप को कमीना कहते हैं। कितना घोर पाप किया है? इन महान विद्वानों ने प्रभ इन विद्वानों को सुमति बख्शें। यह अर्थ 'सम्मान वाली' भावना के साथ करें, तो इन विद्वानों की इस प्रस्तावना की पहली तुक के अर्थ का विरोध, दूसरी तुक के अर्थों के साथ हो जाता है। पहली तुक के बीच तो चमार जाति को कमीनी कहा गया है और झटपट ही दूसरी तुक में यही जाति सम्मान वाली बन जाती है। यह कैसे संभव हो सकता है? यह 99% विद्वान इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते, क्योंकि दोनों स्थितियां स्पष्ट करती हैं और निर्णायक परिणाम भी घोषित करती हैं कि इस प्रस्तावना के इन 99% विद्वानों के अर्थ जड़ से ही गलत हैं 99% विद्वानों के अर्थ इस कारण भी गलत हैं।

इन 99% विद्वानों के अर्थ इस कारण भी गलत हैं, क्योंकि इन विद्वानों के अनुसार गुरु रविदास जी के ब्रह्म ज्ञानी बनने के पीछे ही उनकी जाति चमार को 'मान' वाली नहीं माना गया है, परंतु गुरु रविदास जी और गुरु ग्रंथ साहिब के अनेकों अन्य महापुरुषों ने चमार जाति का ज़िक्र कर के उन के ब्रह्म ज्ञानी बनने की और ब्राह्मण आदि का गुरु बनने की बड़ाई (सम्मान) की है।

रविदासु चमारु उसतति करे,
हरि कीरति निमख इक गाइ।।
पतित जाति उतमु भइआ,
चारि वरन पए पगि आइ।।२।। (आदि ग्रँथ पृष्ठ ७३३)

परंतु गुरु रविदास जी के ब्रह्मज्ञानी बनने से विकारों से छुटकारा मिल गया है। विकारों का नाश हो गया है। इस तथ्य को गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान 100% महापुरुषों ने स्वीकार किया है।

इसलिए इस शब्द के बन्द के अर्थ विकारों से संबंधित हैं। इन विकारों का नाश करने के लिए गुरु रविदास जी सुंदर प्रभ की शरण में जाते हैं। अपनी जाति का नाश करने के लिए वह प्रभ की शरण में नहीं जाते। यदि वह अपनी जाति को मिटाना चाहते होते तो वह अपने नाम के साथ कभी भी चमार नहीं लिखते, परंतु गुरु रविदास जी महाराज तो अपनी जाति का बड़े फखर के साथ ज़िक्र करते हैं। इस तरह 99% विद्वानों के अर्थ हर पक्ष से गलत हैं।

इन अर्थों को कुछ और गहराई के साथ एक और दृष्टि से परिपक्व करते हैं।

गुरु रविदास जी अपने नाम के साथ कई बार 'कहि रविदास चमारा' लिखते हैं। क्या विद्वान कहना चाहते हैं कि गुरु जी अपने आप को कमीना कह कर मान, सत्कार वाली बात कर रहे हैं? क्या चारों वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इस कारण उनको गुरु धारण करते हैं कि वह कमीने हैं? क्या गुरु नानक देव जी ने इस कारण गुरु रविदास जी महाराज को गुरु स्वीकार कर के, उन से वाणी प्राप्त की थी कि वह कमीने हैं? तोबा! तोबा! हाय कितना बड़ा अनर्थ कर रहे हैं, ये विद्वान लोग! गुरु नानक देव जी, गुरु रामदास जी, गुरु अर्जन देव जी तो उन को प्रभ रूप मानते हैं। इसीलिए तो वह गुरु रविदास जी महाराज को, 'ठाकुर वणी आई' कह कर सम्मानित करते हैं।

परंतु ये विद्वान लोग वाणी के अर्थों को अनजान बन कर, अपनी बेसमझी के कारण, इन तुकों का गलत अर्थ निकाल कर, इतना बड़ा घोर पाप करते चले आ रहे हैं। इस का केवल एक ही परिणाम यह निकलता है, कि इन विद्वानों को गुरु रविदास जी की वाणी की बिल्कुल ही कोई समझ नहीं है। यह 100% सही है, कि इन विद्वानों को कम से कम उपरोक्त दो बन्दों और नीचे दिये गए बन्द के अर्थों की बिल्कुल ही समझ नहीं है -

मेरी संगति पोच पोच दिनु राती॥
मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती॥१॥[1]

बात यहीं खत्म होती है कि, उपरोक्त तुकों 'मेरी जाति कमीनी' और जाति उच्छा का अर्थ एक ही है, 'विकारों की संगत कर के मेरा स्वभाव कमीना और ओछा बन गया है और इन पांचों विकारों का स्त्रोत या वंश माया है। विकार माया के दूत हैं। इस कारण इन विकारों के कारण मेरा समूचा जीवन ही घटिया, कमीना और ओछा' बन गया है। और इन पांचों विकारों का स्त्रोत या वंश केवल माया ही है। विकार माया के दूत हैं, इसी कारण इन विकारों ने मेरा समूचा जीवन ही घटिया और कमीना बना दिया है, इस के बिना कोई और अर्थ हो ही नहीं सकता है। अत: जात पात, पांचों तत्व या पांचों विकारों का सृजन नहीं है। जात पात का सृजन केवल और केवल हिंदू धर्म का सृजन है। यह दुनिया के और किसी भी धर्म में दर्ज नहीं है।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ३४५

शिल्पकारी रूपक का रहस्यवादी गुरु रविदास जी महाराज

हिंदू धर्म में माने जाते महान शिल्पकार भगवान विश्वकर्मा जी ने केवल संसार में भवन की रचना में कमाल हासिल किया है, परंतु गुरु रविदास जी ने कई कदम आगे जा कर अलौकिक और चमत्कारी शरीर के सृजन के साथ-साथ भवन की रचना भी की है। गुरु जी ने कुदरती नियमों को शरीर और भवन की रचना के लिए बुनियाद बनाया है। भगवान विश्वकर्मा ने शरीर की बनावट की रचना नहीं की है, इस लिए गुरु जी उन से कई कदम आगे निकल गए हैं। दूसरे भगवान विश्वकर्मा के बारे में लोगों ने ये तथ्य प्रकट किए हैं, कि उन की अपनी गवाही इस संबंध में प्राप्त नहीं है, परंतु गुरु रविदास जी की शरीर और भवन की रचना के बारे में उन का अपना सृजित कथन है -

इस तथ्य की सही तर्जमानी प्रोफैसर एस.एस. भट्टी प्रिंसिपल चंडीगढ़ कॉलेज आफ आर्केटेकचर, चंडीगढ़ अपने लेख 'शिल्पकारी रूपक का रहस्यवादी गुरु रविदास जी' के बीच करते हैं। उन का यह लेख 4 फरवरी 1990 को अंग्रेज़ी ट्रिब्यून के 'संडे रीडिंग' के पृष्ठ 1-2 के मिस्टिक आफ आर्किटेक्चरल मैटाफर के सरलेख के तहत छपा है। प्रिंसिपल भट्टी प्रौढ़ शिल्पकार हैं, इस कारण 'जल की भीति पवन का खंभा' शब्द के प्रसंग के बीच उनके विचार शिल्पकारी के पक्ष से महत्वपूर्ण भी हैं और प्रमाणिक भी। फिर भी उन के लेख में कुछ कमियां महसूस की गई हैं। इस कारण हम अपनी तरफ से उचित स्थान पर, उचित विचार शामिल कर के उन के लेख का कुछ भाग नीचे दे रहे हैं -

उपरोक्त शब्द के बीच गुरु रविदास जी का सृजित भवन निर्माणकारी (शिल्पकारी) रूपक दो पक्षों से अद्वितीय है।

(1) यह केवल वाक्य प्रपंच ही नहीं है

(2) यह उन की कला के शिल्पकारी और सृजनात्मकता के गहन ज्ञान का प्रमाण है। इस से भी आगे जिस संक्षिप्तता और संगठित रूप में उन्होंने मानवीय शरीर को आत्मा के निवास स्थान के रूप में कविताया है,

हैरानीजनक हद तक, वैज्ञानिक है। अब मैं (भट्टी साहब) इन नुक्ताओं की व्याख्या करता हूं -

''शिल्प कला का सर्वव्यापी शरीर रूपी भवन है, जिसके ये बुनियादी भाग हैं - दीवारें, स्तंभ, सीमेंट, गारा, ढांचा और संपूर्ण घर, जिस में जीव रहता है।''[1]

भट्टी साहिब ने ढांचे की संपूर्णता के लिए ईंटों (भाव ईंट रूपी मिट्टी) और स्थान अर्थात् नाड़ियों का ज़िक्र नहीं किया है। इन के बिना मकान का निर्माण संभव नहीं है। ईंट, पत्थर आदि दीवारों का निर्माण के लिए अर्थात् मकान के निर्माण के लिए खाली जगह बहुत ज़रूरी है।

''कंधां (दीवारें) अलग-अलग कार्यों के लिए रहने योग्य स्थान घेरती हैं, जिन को स्तंभ सहारा देते हैं। सीमेंट रक्त या गारा दीवारों की रचना के लिए ईंटों को जोड़ता है अर्थात् शरीर का ढांचा दीवारों और शब्दों का बनता है और यह भवन एक पिंजरा होता है, उसी तरह जिस प्रकार हड्डियां मनुष्य के शरीर के पिंजरे का ढांचा बनाती हैं।

इस शिल्पकारी रूपक की महानता गुरु जी के भवन की कला और विज्ञान के गहन ज्ञान से रूपमान होती है और इसी कारण इस को 'फोके' (खाली) शब्द जाल जो कविता के हर क्षेत्र में आम विचरण करते हैं, से उत्कृष्टता प्राप्त है। इस का वैज्ञानिक पक्ष इन तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि भवन निर्माण के कुदरत के सभी नियम ज़रूरी तौर से स्वीकार किए गए हैं। जिन के बीच में गुरुत्वाकर्षण के बल का नियम सब से अधिक ज़रूरी है। साधारण सुझबूझ की बात है, पर है वैज्ञानिक कि यदि छत को सहारा देने वाले स्तंभ हटा लिए जाएं, तो छत उसी समय गिर जाएगी। गुरु रविदास जी का हवा के तत्व को मानवीय शरीर के लिए प्रयोग करना, एक बहुत ही कमाल का शिल्पकारी रूपक है, क्योंकि यह केवल कवि की कल्पना ही नहीं है परंतु इसकी पुष्टि प्रयोग कर के सिद्ध करने से, निरीक्षण द्वारा की गई है। जैसे ही सांस बंद हो जाता है, मनुष्य का शरीर मुर्दा बन जाता है। इस तरह स्थान को घेराबंदी से दीवारें आपस में जुड़ जाती हैं। दीवारें भवन का सबसे बड़ा भाग हैं। जब रविदास जी कहते हैं, कि मनुष्य

1. अंग्रेज़ी ट्रिब्यून - पृष्ठ : १-२

के शरीर की दीवारें पानी के तत्व से बनी हुई हैं, वह वैज्ञानिक तौर से सही और तर्कपूर्ण हैं। अब हर कोई जानता है कि मनुष्य के शरीर में 70 प्रतिशत से भी अधिक पानी है।

सीमेंट के मसाले या मिट्टी के गारे के बारे में क्या कहा गया है? जो शरीर की दीवारों के निर्माण के लिए ईंटों को जोड़ता है, वही सीमेंट है। गुरु जी के अनुसार मनुष्य के शरीर की दीवारों के निर्माण के लिए रक्त बूंद रूपी सीमेंट का गारा काम करता है।

समस्या यह है कि अकेले पानी से बनी दीवार कायम नहीं रह सकती, इसलिए 'रक्त बूंद' को जोड़ने की शक्ति की ज़रूरत है। यह गारा उतनी ही देर तक काम करता है, जितनी देर तक नाड़ियों में खून दौरा करता है, जिस समय गारा निकाल दिया जाता है अर्थात् जब नाड़ियों में खून दौरा करना बंद हो जाता है तो दीवारें गिर जाती हैं। मनुष्य का शरीर भी मुर्दा बन जाता है।

इस से उपरोक्त हड्डियां, मांस और नाड़ियाँ 'शारीरिक पिंजरा अर्थात् मनुष्य के शरीर का ढांचा बनाती हैं। यह ढांचा (पिंजरा) मनुष्य के शरीर रूपी भवन की शिल्प कला की संपूर्णता के लिए हर पक्ष से ज़रूरी है, जैसे ही यह पिंजरा या भवन संपूर्ण होता है, वैसे ही आत्मा रूपी पक्षी बसेरा कर सकता है।'"[1]

हड्डियाँ, मांस और नाड़ियाँ शरीर के भीतर पिंजरा बनाने का भाग, किस प्रकार बनती हैं? भट्टी साहिब नुक्ते से अवसर खो बैठे हैं। हड्डियां और मांस मिट्टी है, जिस की ईंटें बनती हैं। गारा ईंटों को जोड़ने का बनता साधन है। इस तरह दीवारों का निर्माण संभव होता है। दूसरे खाली जगह या खाली पिंजर के कायम रहने के लिए ज़रूरी है। पिंजरें की नाड़ियों के बीच खाली जगह है, जिन के द्वारा खून दौरा करता है। दीवार के निर्माण में ईंटों की सतह बाली बीच वाली जगह, जहां गारा डाला जाता है, यह पिंजर की नाड़ियाँ हैं, यदि दीवारों के बीच से गारा निकाल लिया जाए तो भवन गिर जाता है। इसी तरह यदि नाड़ियों के बीच से खून का दौरा बंद हो जाए तो मनुष्य शरीर मुर्दा बन जाता है।

"इस शिल्पकारी रूपक को जिस को टैक्निकल तौर से निचला ढांचा

1. वही - पृष्ठ : १-२

कहा जाता- है इस स्तर तक बढ़ा दिया है। आम बोली के बीच भवन के इस निचले ढांचे को बुनियाद (नींव) कहा जाता है। मनुष्य के शरीर के सजावटी पक्ष को भी शिल्प कला के बीच स्थापित कर दिया है। जिस प्रकार 'बंके बाल' टेढ़ी पग और संपूर्ण भवन जिस को गुरु जी ने ऊंचे मंदिर कहा है। नश्वरता के पक्ष से इस से सन्तुष्ट न हो कर गुरु रविदास जी निश्चित भयानक अंत की ओर संकेत करते हैं, एक दिन यह शरीर राख की ढेरी बन जाना है, क्योंकि यही भवन के साथ भी होता है। जब भवन टूट जाता है तो केवल मलबे का ढेर ही रह जाता है।

शिल्प कला के बीच वह एक और अति ज़रूरी तत्व को भी नहीं भूले। यहां तक गुरु रविदास जी ने मुकम्मल भवन के अटूट लंबाई (अखंडनी माय) 'साढ़े तीन हाथ' स्थान का भी उल्लेख किया है।

गुरु रविदास जी ने गहरे रहस्यात्मक अनुभव के गंभीर विषय के वर्णन में इस शिल्पकारी रूपक का प्रयोग किया है। जिस प्रकार नाशवान शरीर और अमर आत्मा के बीच आकाशीय संसारिक संबंध के वर्णन के बीच इस शिल्पकारी रूपक का प्रयोग, सचमुच ही अलोकरारिक है। इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए मैं (भट्टी साहब) समूचे गुरु ग्रंथ साहिब का अध्ययन कर के देख लिया है, कि यह स्थाई तौर से सही है। गुरु जी ने इस पवित्र शब्द में शिल्पकारी रूपक को बेजोड़ अंतर्दृष्टि, बेजोड़ मौलिकता और बेजोड़ रूहानियत से सृजित किया है परंतु रविदास जी का यह योगदान क्या प्रदान करता है? उन की शिल्प कला और कवित्व की संक्षिप्तता के क्षेत्र में उत्तम स्तर के अचंभित ज्ञान की देन, जिस कारण उन्होंने इस ज्ञान को रहस्यवादी विषय के चित्रण के लिए प्रयोग किया है।

क्या हम गुरु रविदास जी को बिल्कुल ही शिल्पकारी रूपक का रहस्यवादी या रहस्यवादी रूपक का शिल्पकार नहीं कह सकते? महान गुरु की रूहानी सृजनात्मकता को सब से बढ़िया कौन सा सरलेख दिया जा सकता था? 'शिल्पकार' शब्द, धार्मिक नियमों की धरोहर को संजो बैठा है। यह एक ही शब्द है, जिस को हम सभी चाहे अचेत तौर से-जीवन की अपेक्षा बड़े उद्देश्य को दर्शाने के लिए प्रयोग करते हैं-अपनी किस्मत और कौम का शिल्पकार, विश्व का शिल्पकार। आखिरी नुक्ते से हमें विश्वकर्मा की याद आ जाती है, उस के साथ ही मूर्तिमान होती है, लोगों के मन में

प्रत्यक्ष तौर से ब्रह्मांड के नियमों को लगातार कायम रखने वाली भारतीय मिथ्य इतिहास के रूप को ही नुकसान देने वाली बहुतायत।

शिल्प कला का तर्कपूर्ण विस्तार टाऊन प्लानिंग है। इसलिए यह हैरान करने वाली बात है कि रविदास जी अपने सुंदर शिल्पकारी रूपक को एक भवन अर्थात् (नाशवान मनुष्य शरीर) से 'पूर्ण आबादी वाला शहर' (अर्थात् खालिस लोगों का अपरोक्ष (पारला) ब्रह्मांडी भवन) तक अंतरदृष्टिगत विस्तार कर दिया है और फिर गुरु जी ने अपनी प्रेरणात्मक दृष्टि से बेगमपुरा शहर की विचित्र मुकम्मल रूपरेखा भी चित्रित की है, जो इस संसार में विचरण कर रहे विशेष टाऊनशिप के सृष्टि के विवरणों के साथ संपूर्ण है। उन्होंने ऐसे नियमों और संकल्पों जैसे खिराज, मालू, मालकी, ज़मीनी, बंदोबस्त, सामाजिक प्रबंध, स्वतंत्रता का वातावरण, विश्व भाईचारा, समूची भलाई और समाज-भलाई आदि का वर्णन किया है।

गुरु रविदास जी ने एक शहर के बारे में उसी तरह ही शिल्पकारी रूपक का कलात्मक निपुणता का और अंतर दृष्टि के साथ प्रयोग किया है, जिस प्रकार एक भवन के बारे में किया है। उन्होंने हर रोज़ की तीव्र अकेलापन और स्थिरता का भरपूर कृपा के गहरे अनुभव के बीच कायाकल्प करके इसका समूचे अनंत और शाश्वत तक प्रसार कर दिया है।''[1]

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि गुरु रविदास जी शरीर के सृजन के साथ-साथ भवन निर्माण के बीच भी कमाल के शिल्पकार हैं। इस से भी महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि उन्होंने रूहानियत का जिस को शरीर का सृजन और भवन निर्माण से ओतप्रोत कर के इन के बीच आत्मा के निवास को परिपक्व किया है -

जल की भीति पवन का थंभा
रकत बुंद का गारा॥
हाड मास नांड़ी को पिंजरु
पंखी बसै बिचारा॥१॥

परिणाम अचूक और स्पष्ट है, कि गुरु रविदास जी अपने समय के उच्च दर्जे के वैज्ञानिक, कमाल के शिल्पकार, (भवन निर्माण कार) और महान ब्रह्मज्ञानी चिंतक हैं।

1. वही - पृष्ठ : १-२

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

प्रथम बन्द नंबर 1 में मनुष्य को शरीर की रचना की समझ करवा कर मनुष्य के स्वभाव और पांचों विकारों की समझ भी करवा दी है और यह भी स्पष्ट कर दिया है कि शरीर में आत्मा का निवास है।

'रहाउ' में मनुष्य को शरीर की रचना और स्वभाव के सृजन का बोध करवा कर उस को लोभ लालच की असलीयत प्रकट की है। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जिस प्रकार पक्षी पेड़ों के ऊपर रात गुज़ार कर चले जाते हैं, उसी तरह मनुष्य इस संसार में आयु भोग कर चले जाते हैं, हे जीव! तूँ, लोभ, लालच को छोड़ कर विकारों से मुक्त हो कर जीवन सफल बना ले।

बन्द नंबर 2 में मनुष्य को अमली रूप में कोठियों, जायदादों आदि का अहसास करवा कर दर्शाया गया है कि तुझे जीवन गुज़ारने के लिए (अंतिम बार सोने के लिए) केवल साढ़े तीन हाथ जगह की ज़रूरत है। हे भाई! तू जायदाद के अहंकार को छोड़, क्योंकि यह जीवन को नष्ट कर देता हैं।

बन्द नंबर 3 में उपरोक्त विचारों को आगे विकसित किया गया है। शरीर को सजाने संवारने के बारे में बताते हुए गुरु जी मनुष्य को सूचित करते हैं, कि यह शरीर नाशवान है, नश्वर है। इस ने अंत में खाक में मिल जाना है। तू अपने आप को ढहती कला अर्थात् बर्बादी की ओर से रोक।

बन्द नंबर 4 में सुंदर नारी और ऊंचे महलों की याद करवा कर मनुष्य के मोह से भरपूर कामी और लोभी स्वभाव को झिंझोड़ा गया है और स्पष्ट किया गया है, कि इस काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार के कारण प्रभ को भूल कर तूने अपना सारा जीवन नष्ट कर लिया है। प्रभ मिलन का मौका गंवा दिया है।

अन्तिम बन्द नंबर 5 में गुरु रविदास जी अपने आप को संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि घटिया विकारों की सँगत ने मुझे घटिया बना दिया है। इन विकारों का सृजन शरीर के सृजन से ही हो जाता है। इसलिए इन विकारों का वंश माया के पांच दूत काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार भी घटिया हैं, जिस कारण इन कमीने विकारों ने जगत का समूचा जीवन ही घटिया बना दिया है, परन्तु अब हे प्रभु! मैं सब प्रकार के विकारों को त्याग कर आपकी शरण में आ गया हूँ, मुझ पर कृपा करो।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे जीव! शरीर की रचना के बीच पानी की दीवार, पवन का सहारा अग्नि (रक्त बूंद) का गारा, पृथ्वी, हाड, मांस और आकाश नाड़ियाँ का सुमेल है। इस में बेचारी आत्मा (जीव की) निवास करती है।।१।।

हे जीव! तूँ मेरे तेरे की भावना को खत्म कर दे। यह दुनिया तो रैन बसेरा है। जिस प्रकार पक्षी वृक्ष के ऊपर रात गुज़ार कर चलते बनते हैं, उसी तरह मनुष्य भी इस दुनिया से जीवन गुज़ार कर चलता बनता है। तू विकारों से मुक्त हो कर प्रभ की शरण में चला जा।।१।।

हे भाई! तू पक्की नींव बना कर, दीवारें बना रहा है। अहंकार में डूब कर बढ़िया-बढ़िया कोठियां बना रहा है, जब कि तेरे सोने के लिए केवल साढ़े तीन हाथ ज़मीन की ज़रूरत है। तू क्यों ऐसे बेकार के आडंबर रचता फिरता है।।२।।

हे वीर! तू विकारों के बीच इतना मग्न हो गया है कि तुझे समझ ही नहीं आ रही है, कि तू क्या कर रहा है? तू बालों को सोहने और बढ़िया ढंग से सजा रहा है, अपने-आप से अनजान बन कर टेढ़ी पगड़ियां बांध रहा है अर्थात् अहंकार से भरा हुआ है परंतु तुझे समझ नहीं है, कि जिस सुंदर शरीर के बालों पर पगड़ियां बांधता है, ये सिर सहित सारा शरीर किसी दिन नष्ट हो जाएगा और मिट्टी हो जाएगा।।३।।

हे भाई! तू बड़े-बड़े भवन और सुंदर नारी के बीच मदहोश हुआ फिरता है अर्थात् लोभ, मोह और काम के बीच फंस कर तू प्रभ के सिमरन को भूल कर सारा जीवन बर्बाद और नष्ट कर लिया है।।४।।

गुरु रविदास जी अपने-आप को संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि हे चमार रविदास! विकारों की घटिया संगत के कारण मेरा स्वभाव भी घटिया बन गया है और घटिया विकारों की वंश माया जिस के दूत पांचों विकार हैं, ये सब से घटिया दर्जे के हैं। जिस कारण हमारा सारा जीवन ही घटिया बन गया है, परंतु आप प्रभ की कृपा के कारण, मैं प्रभ की शरण में जाकर उस की महिमा गाने में सक्रिय हूं।।५।।

शब्द - 20

राग सोरठ वाणी गुरु रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

चमरटा गांठि न जनई॥
लोगु गठावै पनही॥१॥ रहाउ॥
आर नही जिह तोपउ॥
नही रांबी ठाउ रोपउ॥१॥
लोगु गंठि गंठि खरा बिगूचा॥
हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा॥२॥
रविदास जपै राम नामा॥
मोहि जम सिउ नाही कामा॥३॥७॥[1]

(पृष्ठ ६५९)

पद अर्थ - **चमरटा**-चमार। **जनई**-जांच। **पनही**-जूते, पनही से भाव देह है।।1।। रहाउ।।

आर-विकारों वाली तीव्र बुद्धि। **तोपऊ**-धोखेबाज़ी का तोपा भरना। **राँबी**-रंबी, रंबी से तात्पर्य खंडन मंडन वाली विद्या है।"[2] अर्थात् उल्टी-सीधी धोखेबाज़ी वाली बातें अर्थात् काटने कटाने की विद्या। **ठाऊ**-स्थान, जगह। **रोपऊ**-टाकी लगाना, धोखेबाजी के ऊपर पर्दा डालना।।1।।

खरा-बहुत। **बिगूचा**-खुआर होना, खराब होना। **पहुंचा**-प्रभ की शरण, प्रभ प्राप्ति।।2।। **मोहि**-मुझे। **जम**-यम। **कामा**-बास्ता, संबंध।।3।।7।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६५९
2. महान कोश - पृष्ठ : ७७३

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द का विचार विधान बड़ा ही गहरा, गंभीर और प्रतीकात्मक है। इस में चमार के जूतियां गांठने वाले औज़ारों द्वारा परमार्थ की रहस्यमय उलझनों को सुलझाया गया है। कमाल की बात तो यह है कि इस शब्द में चमारों के औज़ारों को ब्राह्मण, क्षत्रिय, आदि सभी लोग प्रयोग करते हुए साबित किये गए हैं। औज़ार विकारों के प्रतीक हैं। इस कारण ब्राह्मण आदि विकारों द्वारा विकृत किए हुए हैं परंतु गुरु रविदास जी चमार होते हुए भी इन औज़ारों का प्रयोग नहीं करते हैं अर्थात् विकारों से मुक्त हैं।

'रहाउ' में गुरु रविदास स्पष्ट करते हैं कि मैं चमार शरीर रूपी जूती को गांठना नहीं जानता अर्थात् मैंने, शरीर को पालने वाले विकारों, पदार्थों और लालचों आदि को त्याग दिया है, परंतु अनजान लोग मेरे पास जूती गंठाने आ जाते हैं।

बन्द नंबर 1 में वे स्पष्ट करते हैं, कि क्योंकि मैं शरीर रूपी जूती को गाँठना नहीं जानता हूं अर्थात् संसार के पदार्थों के लालचों के साथ जोड़ना नहीं जानता, इसलिए मेरे पास तीखे बारीक तेज़ मुंह वाली तीक्ष्ण बुद्धि रूपी अर्थात् शक्तिशाली विकार शक्ति नहीं है, जिस से अपने मतलब के लिए दूसरों के मनों के बीच विकारी विचार और धोखे वाला धंधा कर सकूं और न ही मेरे पास राँबी अर्थात् काटने वाले औज़ार हैं अर्थात् उलटे सीधे धोखे से भरी बातों वाली विद्या है, जिस से पदार्थक रूपी चमड़े की टाकी छील कर, सँवार कर शरीर रूपी जूती के ऊपर लगा सकूं अर्थात् दूसरों की अच्छी तरह लूट-खसोट कर के उस के ऊपर धोखेबाजी का पर्दा डाल सकूं।

बन्द नंबर 2 में परिपक्व किया गया है, कि ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि लोगों ने चमारों वाला अथवा नीचों वाला कार्य अपना लिया है। उन के पास आर अर्थात् विकारों भरी तीक्ष्ण बुद्धि है राँबी धोखे वाली विद्या चमड़ा रूपी पदार्थ है। इस तरह वे पदार्थक लालचों के लिए धोखेबाज़ी वाली विद्या के भी माहिर हैं और चमारों के इन तीखे तेज़ शक्तिशाली आरी, राँबी आदि औज़ार रूपी विकारों के

साथ शरीर रूपी जूती अर्थात् पदार्थों को गाँठने अर्थात् प्राप्त करने की मूर्खता कर रहे हैं। इस प्रकार विकार और शक्तिशाली हो जाते हैं और पहले ही परेशानियों के बीच तड़प रहे लोग और परेशान हो जाते हैं परन्तु गुरु रविदास जी शरीर रूपी जूती अर्थात् पदार्थों के साथ मोह नहीं रखते हैं। इस कारण वे गाँठने, तोपने से निर्लेप हैं अर्थात् विकारों से मुक्त हैं। परिणाम स्वरूप वह प्रभ को प्राप्त कर गए हैं। इस बन्द में ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि चमार हैं परन्तु गुरु रविदास जी ब्राह्मण हैं।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी चमार नहीं बल्कि ब्रह्मज्ञानी होने के कारण ब्राह्मण हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि सभी लोग विकारी स्वभाव होने के कारण चमार हैं। कमाल की बात यह है कि चमारों के व्यवसाय में प्रयोग किए जाने वाले औज़ारों के साथ गहन गंभीर ब्रह्मज्ञान के रहस्यमय पदार्थों के भेदों को खोला है। आज बीसवीं सदी में यह क्रांतिकारी लहर पैदा करके मुकम्मल तौर से युग बदल दिया है। **कारण**-ब्राह्मण आदि लोग विकारों को त्यागने की जगह इन को और शक्तिशाली बना कर इन की ही प्राप्ति में लगे हुए हैं। इस कारण शूद्र हैं और बहुत ही दुखी और परेशान हो रहे हैं परंतु चमार गुरु रविदास जी ने विकारों को त्याग कर ब्रह्म ज्ञान की बख्शीश प्राप्त कर ली है, इसी कारण वह ब्राह्मण हैं।

इस कारण बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी परिपक्व करते हुए स्पष्ट करते हैं कि मेरा शरीर से अर्थात् संसारिक पदार्थों के साथ कोई लालच, मोह, प्यार नहीं है। मैं तो अपने प्रभ का नाम जपता हूं, उस के ही सिमरन में मग्न हूं। परिणाम स्वरूप मेरा यमदूतों के साथ कोई लेना-देना नहीं है। मेरा उन के साथ कोई संबंध नहीं है। मेरा प्रभ में निवास हो गया है।

साग सोरठि का बुनियादी तत्व भी यही है :

''हरि नाम के रस को पीकर मुरदेहान नहीं आयेगी और लोक परलोक में गुरु शिष्य की चमक निर्मल होगी।

''सोरठि सु रसु पीजीयै कबहु न फीका होइ।।
नानक राम नाम गुण गाइअहि दरगाह निर्मल होइ।।''[1]

1. राग नाद शब्दि सोहणे विस्माद नाद, पृष्ठ : ६४

शब्दार्थ – मैं चमार – शरीर रूपी जूतियों को गांठना नहीं जानता हूं अर्थात् मैंने शरीर को पालने वाले विकारों, पदार्थों, लालचों आदि को त्याग दिया है। अब मैंने अपना मन प्रभ के साथ गांठ लिया है, परन्तु अनजान लोग मुझ से शरीर रूपी जूती गंठवाने अर्थात् पदार्थों के साथ गांठ डालने के लिए आते हैं परंतु मुझे विकारों के साथ जोड़ने का बुरा काम नहीं आता है। मैं तो केवल प्रभ के साथ जोड़ने का ही धंधा जानता हूं।।१ ।। रहाउ।।

मैं शरीर रूपी जूती अर्थात् पदार्थों के साथ जोड़ना नहीं जानता हूँ। इस कारण मेरे पास तेज़ धार वाली तीव्र बुद्धि रूपी अर्थात् विकारों को काटने वाली राँबी नहीं है, जिस के साथ अपने मतलब के लिए दूसरों के दिलों में बीच विकारी विचार डालकर धोखा देने वाला धंधा कर सकूं और न ही मेरे पास रंबी अर्थात् काटने के लिए उल्टी-सीधी धोखे भरी बातें करने वाली विद्या नहीं है, जिस से पदार्थ रूपी चमड़े की टाकी को छील कर, सँवार कर शरीर रूपी जूती के ऊपर लगा सकूं अर्थात् दूसरों को अच्छी तरह लूट-खसूट कर के उन के ऊपर धोखेबाजी का पर्चा डाल सकूं।।१ ।।

परंतु लोग अपने पदार्थों के लालचों के लिए एक दूसरे के साथ गठजोड़ कर के विकारों के बीच फंसे हुए हैं। वह आर अर्थात् शक्तिशाली विकारों से भरी तेज़ बुद्धि और रंबी अर्थात् काटने वाले औज़ार अर्थात् उल्टी-सीधी धोखे भरी बातें कर के एक दूसरे को धोखा देकर पदार्थक मतलब पूरा कर रहे हैं। इस तरह वे अति परेशानियों से भरा जीवन जी रहे हैं। मैं रविदास इस तरह के गाँठने, सिलने वाले विकारों से निर्लिप्त और मुक्त हूं। इस कारण मुझे प्रभ प्राप्ति हो गई है।

इस कारण गुरु रविदास जी महाराज स्पष्ट करते हैं, कि मेरा पदार्थों के लालचों के साथ मोह प्यार नहीं है। मैं तो प्रभु सिमरन में मग्न हूं। उस का जाप करता हूं। इस कारण मेरा यमदूतों के साथ कोई वास्ता नहीं है। मुझे प्रभ प्रेम की बख्शीश प्राप्त हो गई है।।३।।७।।

शब्द - 21

धनासरी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि
अब पतीआरु किआ कीजै॥
बचनी तोर मोर मनु मानै
जन कउ पूरनु दीजै॥१॥
हउ बलि बलि जाउ रमईआ कारने॥
कारन कवन अबोल॥ रहाउ॥
बहुत जनम बिछुरे थे माधउ
इहु जनमु तुम्हारे लेखे॥
कहि रविदास आस लगि जीवउ
चिर भइओ दरसनु देखे॥२॥१॥[1]

(पृष्ठ ६९४)

पद अर्थ – **सरि**-समान, आप जैसा, बराबर। **दीनु**-असहाय, असमर्थ। **पतिआरु**-समझाना परखना। **बचनी**-विचार, ब्रह्म ज्ञान। **पूरनु दीजै**-सम्पूर्ण ज्ञान अर्थात् ब्रह्म ज्ञान प्रदान करो।

बलि बलि-बलिहार, कुर्बान। **अबोल**-चुप रहना, ना बोलना।। रहाउ।।

भईउ-हो गया है।

1. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : ६९४

प्रभु के अस्तित्व की परिपक्वता

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में परिपक्वता के साथ स्पष्ट किया है कि हे प्रभ! इस में ज़रा भर भी सन्देह नहीं है। प्रभ के अपने विचार हैं, जिन के अनुसार सेवक कर्म कर के प्रभ के दर्शन करता है आमतौर पर प्रभ के विचारों को ब्रह्मज्ञान कहा जाता है। गुरु रविदास जी ब्रह्म ज्ञान को परिभाषित करते हुए लिखते हैं।

बचनी तोर मोर मनु मानै
जन कउ पूरनु दीजै ॥१ ॥

'ब्रह्म ज्ञान वह है, जिस को प्रभ खुद प्रदान करता है और सेवक उस को स्वीकार कर के प्रभ को प्राप्त होता है।'

प्रभ के अस्तित्व का दूसरा प्रमाण यह है कि प्रभ बोलता है, बातचीत करता है। यदि वह बोलता न हो तो वह अपने विचार साधक को समझा ही नहीं सकता। गुरु रविदास जी की तुक 'मैं सुमति देहु समझाई' को अमल के बीच नहीं लाया जा सकता है, क्योंकि बोलने के बिना प्रभ साधक को अपनी 'सुमत' अर्थात् ब्रह्म ज्ञान को समझा नहीं सकता। यही कारण है कि गुरु रविदास जी दृढ़ता से साबित करते हैं, कि प्रभ बोलता भी है, वह लिखते भी हैं –

हउ बलि बलि जाउ रमईआ कारने ॥
कारन कवन अबोल ॥ रहाउ ॥

इसलिए प्रभ बोलता है और अपने विचार साधु को समझाता भी है। प्रभ के अस्तित्व का तीसरा प्रमाण यह है, कि वह दर्शन देता है। दर्शन का अर्थ है कि उसका स्वरूप भी है। साधक अपनी भक्ति से प्रभ के ब्रह्म ज्ञान को अमल में लाकर उसके दर्शन भी करता है। गुरु रविदास जी लिखते हैं –

कहि रविदास आस लगि जीवउ
चिर भइओ दरसनु देखे ॥२ ॥१ ॥

अत: प्रभ दर्शन भी देता है।

उपरोक्त यह तीन सबूत स्पष्ट करते हैं कि प्रभ का हर हालत में अस्तित्व है।

उस की विचारधारा है। वह बोलता है और दर्शन भी देता है। इस तरह गुरु रविदास जी ने प्रभ के स्वरूप का निरूपण कर के उस के अस्तित्व को भलीभांति मूर्तिमान कर दिया है परंतु कई सज्जन प्रश्न करते हैं कि यदि प्रभ है, तो वह नज़र क्यों नहीं आता? इस का उत्तर है, प्रोफैसर त्रिलोचन सिंह ने बहुत ही प्रभावशाली और तर्कसंगत दलीलों से दिया है। गुरु नानक देव जी –

सभ महि जोति है सोइ ॥
तिस कै चानणि सभ महि चानन होइ ॥ **पन्ना ६६३**

की व्याख्या करते हुए लिखते हैं –

''तो इस लाट (प्रकाश) का हर एक वस्तु (मिट्टी, पानी, पौधे, जानवर आदि) के बीच मौजूद होना ज़रूरी है, परंतु इस लाट से हमें न तो मिट्टी या हवा के बीच दिखाई देती है और न ही कहीं जीव-जंतुओं और पौधों के बीच। परंतु यदि हम देखें कि हर चीज़ का दिखाई देना उस के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए ज़रूरी है, तो इस प्रकार ठीक नहीं होगा, जिस प्रकार किसी बनेरे के ऊपर बैठ कर कोई पक्षी आकाश की तरफ उड़ता हुआ इतना ऊंचा निकल जाए कि वह दिखाई देना बंद हो जाए। उस का अस्तित्व किल्लत के बीच नहीं बदल जाता, फिर यह ज़रूरी नहीं कि जो चीज़ दिखाई देती है वह चीज़ और अमल के रूप में ही दिखाई देती है। देखने वाली आंख के बीच फर्क हो सकता है, आओ ज़रा सोचिए कि यदि हम अपने टेलिस्कोप (दूरबीन) के साथ किसी ऐसे ग्रह को देख रहे हों, जो हम से 80 रोशनी साल (Light Year) दूर है तो हम जिस 5 साल के बच्चे को देख रहे होंगे, वह वास्तव में 5 साल का न होकर एक 85 साल का बुजुर्ग होगा, है न कितना बड़ा भ्रम! गुरु रविदास जी गुरबाणी में यही कहते हैं कि, हे प्रभ! हम जिस तरह चीज़ों को समझते हैं, वास्तव में वे उस तरह नहीं होती हैं।

माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा ॥
जैसा मानीऐ होइ न तैसा ॥१ ॥ रहाउ ॥ ६४७ ॥
गुरु रविदास जी

जो प्रकाश की किरण हम देखते हैं, उसका जन्म दीपक के बीच जल रहे देसी घी और बत्ती है, जिस से तात्पर्य यह है कि प्रकाश देसी घी और बत्ती के बीच मौजूद है। देसी घी बनता है दूध से और दूध की प्राप्ति होती

है भैंसों से, गऊओं से अर्थात् यह प्रकाश भैंसों, गऊओं के बीच मौजूद है। भैंस-गाय दूध देती है। घास फूस खा कर और घास फूस पैदा होता है मिट्टी में। जिस का अर्थ है कि यह किरण इस मिट्टी अर्थात् धरती के बीच है। यह ज्योति (प्रकाश, शक्ति) सब का आधार है। यह वह केन्द्र है, जिस के इर्द-गिर्द सब जीव घूमते हैं। ज्योति एक है, परन्तु इस की शक्लें अनगिनत हैं। जिस प्रकार :

एक रूप सगलो पासारा।।

पृष्ठ ८०३ गुरु अर्जुन देव जी।।'[1]

दरअसल इस से भी स्पष्ट रूप में यही विचार इस से पहले गुरु रविदास जी की वाणी में भी निरूपित हुआ है, जिस का ज़िक्र प्रोफैसर त्रिलोचन सिंह ने उपरोक्त व्याख्या में कर दिया है, परंतु यह अधूरा है, क्योंकि इस 'रहाउ' वाले शब्द के बन्द नंबर 4 में इसी 'रहाउ' को खोल कर बयान किया गया है। इस बन्द के बीच रहाउ वाले भ्रम को दूर कर के स्पष्ट किया गया है, कि पारब्रह्म प्रभ को साक्षात् रूप में प्रकट किया जा सकता है। विज्ञान के अनुसार शक्ति पारब्रह्म को मादे (पदार्थ) के बीच बदला जा सकता है :

"In the twentieth century, man of science came to realize that energy can be transformed into mass and mass into energy"

अर्थात् - बीसवीं सदी के बीच आदमी को यह स्पष्ट हुआ कि, शक्ति को पदार्थ और पदार्थ को शक्ति में बदला जा सकता है।

From : The book of popular science vol. 4 New York Page 217.[1]

गुरु रविदास जी ने अपनी भक्ति की ताकत के साथ पारब्रह्म रूपी शक्ति को पदार्थ में बदल लिया अर्थात् उन्होंने प्रभ को रविदास चमार के रूप में प्रकट कर लिया। गुरु रविदास जी उपरोक्त प्रस्तावना नंबर 4 में लिखते हैं -

सरबे एकु अनेकै सुआमी
सभ घट भुगवै सोई॥

1. गुरबाणी और विज्ञान - प्रो. तरलोचन सिंह खालसा कालेज पटियाला - पृष्ठ : ६८-६९
2. वही - पृष्ठ : ७९

कहि रविदास हाथ पै नैरै
सहजे होइ सु होई॥४॥१॥ (पृष्ठ ६५७)

उपरोक्त बन्द नंबर 4 में स्पष्ट किया गया है कि सर्व व्यापक पारब्रह्म अनेकों स्वरूप धारण कर के वह भी कण-कण में आत्मिक और पदार्थों के आनंद उठाता है। प्रभ रविदास चमार के अनेकों स्वरूप धारण करके हर एक ब्राह्मण के साथ पंक्ति के बीच बैठ कर आत्मिक और पदार्थों के आनंद भोगता है।

इस तथ्य से परिपक्व तौर से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी ने अपनी भक्ति की ताकत से पारब्रह्म रूपी शक्ति को रविदास का स्वरूप दे कर पदार्थक रूप में बदल लिया है। अत: गुरु रविदास जी ने इस प्रस्तावना में भौतिक विज्ञान की इस अटल सच्चाई को आज से 625 वर्ष पूर्व ही उजागर कर दिया था। इसी प्रस्तावना में गुरु रविदास जी ने भोगने की प्रक्रिया को प्रकट कर के जीव विज्ञान की अटल सच्चाई को भी उजागर कर दिया था।

अत: उपरोक्त चर्चा से परिपक्व तौर से स्पष्ट हो गया है, कि पारब्रह्म को साकार रूप में प्रकट कर के उस का दर्शन किया जा सकता है कि विज्ञान से भी स्पष्ट रूप में सिद्ध हो गया है कि प्रभ का अस्तित्व है और इस को किसी भी तरह झुठलाया नहीं जा सकता है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द में गुरु रविदास जी तीन बातों को स्पष्ट करते हैं। पहली बात, वह स्पष्ट करते हैं कि जो भी प्रभ के वचन अर्थात् हुकम को तन मन से स्वीकार करता है, प्रभ उसको संपूर्ण ज्ञान अर्थात् ब्रह्मज्ञान की बख्शिश करता है। इसलिए प्रभ ब्रह्मज्ञान भी प्रदान करता है। दूसरी बात स्पष्ट की गई है, कि प्रभ अपने भक्तों के साथ वार्तालाप भी करता है। इस तरह प्रभ बोलता भी है। तीसरी बात इस शब्द में स्पष्ट की गई है कि, प्रभ के दर्शन के लिए अनेक ही जन्मों की भक्ति की ज़रूरत है। इसलिए प्रभ दर्शन भी देता है।

प्रभ के स्वरूप को परिपक्वता से दृढ़ करते हुए गुरु रविदास जी बन्द नंबर 1 में फरमाते हैं, कि हे प्रभ! मेरे जैसा असहाय कोई नहीं है। अब और परख करने की आवश्यकता नहीं है। मेरे मन ने आप की विचारधारा (ब्रह्मज्ञान) को स्वीकार कर लिया है। आप के वचन मेरे मन को बहुत भाते हैं। इसलिए हे प्रभ! मेरे जैसे भोले-भाले को ब्रह्मज्ञान से भरपूर करो।

'रहाउ' में बुनियादी सिद्धांत होता है, जिसे गलत नहीं किया जा सकता। इसलिये 'रहाउ' में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि ब्रह्मज्ञान तो प्राप्त हो गया है, परंतु हे प्रभ! मैं बलिहार बलिहार जाता हूं परंतु क्या कारण है कि आप मेरे साथ बोलते क्यों नहीं? इस से स्पष्ट हो जाता है कि प्रभ बोलता है, बातचीत भी करता है।

बन्द नंबर 2 में गुरु जी जन्म जन्मांतरों के बिछोड़े की धुर आंतरिक चीख के कारण अधीर मन के साथ तड़फ उठते हैं। इसलिए कथित ब्रह्मांड को, कर्मकांड को त्याग कर प्रभ मिलाप के लिए प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभ! आप के बिछुड़े अनेकों जन्म बीत गए हैं, परंतु दर्शन नसीब नहीं हुए हैं। आप के दर्शन के लिए अब मैंने यह जीवन आप के नमित, आप के लेखे लगा दिया है, आप की अराधना के बीच अर्पण कर दिया है। आप के दर्शन किए बिना मुद्दतें बीत गई हैं, अब मैं केवल आपके दर्शन की आशा कर के ही जी रहा हूं। इस प्रकार प्रभ दर्शन भी देता है।

इसलिए इस शब्द में विचार विधान का सृजन वैज्ञानिक विधि से किया गया है। पहले ब्रह्मज्ञान के बारे में बता कर फिर उस को स्वीकार किया गया है, फिर यह सिद्ध किया गया है कि प्रभ बोलता है, आखिर में स्पष्ट किया गया है कि प्रभ दर्शन भी देता है, प्रभ के दर्शन के लिए किसी कर्मकांड की आवश्यकता नहीं है। यह प्रभ का अस्तित्व ही गवाही देता है।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी प्रभ के आगे प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभ! मेरे जैसा निमाणा कोई नहीं है और आप की तरह निमाणों का मान विकसित करने वाला दयालु भी कोई नहीं है। इसलिए अब और परख करने की तो क्या आवश्यकता है ? हे प्रभ! आप के वचन, आप के विचार मेरे मन को वहुत भाते हैं, मेरा मन आप के हुकुम पे रीझ जाता है, इसलिए इस दास को संपूर्ण ज्ञान अर्थात् ब्रह्मज्ञान से भरपूर कर दो।।१ ।।

गुरु जी प्रभ का हुक्म स्वीकार करते हैं, परंतु फिर भी प्रभ बोलते नहीं हैं। हे प्रभ! मैं आप पर बलिहार बलिहार जाता हूं, परंतु क्या कारण है कि आप मेरे साथ बोलते क्यों नहीं हैं।।१ ।। रहाउ।।

हे प्रभ! आप के दर्शन किए बिना अनेकों जन्म बीत गए हैं, परंतु इस जन्म में भी आप के दर्शन नसीब नहीं हुए। इसलिए यह समूचा जीवन आप के दर्शनों के लिए अर्पण कर दिया है। आप के नमित, आप के लेखे लगा दिया है। इसलिए गुरु रविदास जी कहते हैं कि आप के दर्शन किए हुए बहुत समय बीत गया है। अब मैं केवल आप के दर्शन की आस हूं। आप की अराधना मग्न हूं। अपना जीवन व्यतीत कर रहा हूं।।२।।१ ।।

शब्द - 22

धनासरी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो
स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ॥
मनु सु मधुकरु करउ चरन हिरदे धरउ
रसन अंम्रित राम नाम भाखउ॥१ ॥
मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि घटै॥
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै॥१ ॥ रहाउ॥
साधसंगति बिना भाउ नही ऊपजै
भाव बिनु भगति नही होइ तेरी॥
कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ
पैज राखहु राजा राम मेरी॥२ ॥२ ॥[1] **(पृष्ठ ६९४)**

पद अर्थ - चित-चितवत का संक्षेप है। चितवत का अर्थ है चिंतन करना। चिंतन की जगह भी चित आया है। चिंतन का अर्थ है विचार करना। चित का अर्थ ज्ञान भी है। सो चित विचार सृजन करता है। अविलोकनो-देखना। **सरवन**-कान, सुनना। **सुजसु**-पवित्र यश/ विचार सुप्रसिद्ध, बहुत सम्मान। **पूरी राखउ**-भरपूर रखना, भरा हुआ रखना। **मनु**- मन्नत करने वाला, मन्नत का अर्थ मान्यता देना भी है। सो मन प्रवान करता है मन चित के सृजित विचारों को प्रदान करता है। **मधुकरु**-भंवरा, मधु, शहद बनाने वाला, शहद की मक्खी, मीठे बोल सृजन करने वाला, बोलने वाला। **हिरदा**- अंत:करण मन दिल हृदय के बीच निवास करने वाला। हिरदे रिदै निहाल।। (वार, माझ, म 1)। **रिदै बिच**-निवास करने वाला। मन के बीच करतार को देख। **चरण हृदय धरउ**- मैं हृदय के बीच प्रभ चरणों को टिका लूं, अर्थात् मन के बीच विचर रहे विचारों के साथ ओतप्रोत

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६९४

होकर हृदय के बीच प्रभु के दर्शन करूं। **रसनु**-जीभ के साथ। **भाखउ**-उच्चारण।।१।।

जिनि- मते, किते, विचार। **जीनी घटे**- विचार घट जावें, कहीं कम न हो जाएं। **सटै**- बदले बंटे।। रहाउ।।

भाऊ - प्रेम। भाव-विचार, ज्ञान। **नोट** - गुरु रविदास जी की विचारधारा के अनुसार भक्ति का आधार ज्ञान और प्रेम है। जिन के अनुसार प्रभु प्राप्ति के लिए कर्म किया जाता है। इसलिए साध संगत प्रभ प्राप्ति के लिए कार्य क्षेत्र है, जहां प्रेम की उत्पत्ति होती है और ज्ञान इसको परिपक्वता और दृढ़ता प्रदान करता है। दूसरे गुरु रविदास जी फरमाते हैं -

संत तुझी तनु संगति प्रान॥
सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव॥१॥

वह इस प्रस्तावना में स्पष्ट करते हैं, कि हे प्रभ! आप के ब्रह्म ज्ञान को आप की कृपा से संतों ने प्राप्त कर लिया है, जान लिया है। इस कारण संत आप का ही स्वरूप हैं और ऐसे संतों की संगत में आप की जिंद जान है। इस कथन से स्पष्ट है कि **ब्रह्मज्ञान के बिना जीव साध नहीं बन सकता है। साध संगत के बीच ज्ञान भी है और प्रेम भी।**

इस शब्द में गुरु रविदास जी ने साध संगत को दोनों कार्यों को निखेड़ (खोल कर विस्तार से) कर स्पष्ट कर दिया है कि साध संगत कार्यक्षेत्र है। जिस में पहला कार्य साध संगत में प्रेम भक्ति है और दूसरा ज्ञान प्राप्ति है। इसलिए भाव का अर्थ ज्ञान है।

पैज- लाज, इज्ज़त। **राजा**- बादशाह।।२।।२।।

प्रभु प्राप्ति की विधि का सिद्धांत

बन्द नंबर 1 की पहली तुक में बौद्धिक विचार निरूपण किए गए हैं और दूसरे बन्द में भावुक भावना अर्थात् इस बन्द की पहली तुक में वैज्ञानिक विचारों का सृजन किया गया है और दूसरी तुक के बीच इन विचारों को भावुकता से ओतप्रोत कर के चित, मन और हृदय की एकाग्रता का निरूपण किया गया है।

इस बन्द में चित्त के विचारों का सृजन एक बौद्धिक क्रिया है। मन इन सृजित विचारों को निरख परख कर मान्यता देता है, यह भी बौद्धिक क्रिया है। इस तरह मन के बीच सृजित विचारों और अमल की प्रक्रिया का सुमेल होता है। हृदय इस बौद्धिक अमल की प्रक्रिया के सुमेल में भावुकता को ओतप्रोत करके प्रभु के साथ अटूट संबंध पैदा करता है।

उपरोक्त सिद्धांत को बन्द नंबर दो में अमली रूप में लागू करके प्रभु प्राप्ति की विधि को रूपवान किया गया है। इस में स्पष्ट किया गया है, कि साध संगत के बिना प्रभ प्रेम की उत्पत्ति नहीं हो सकती है और यह उत्पत्ति विचारधारा के आधार पर अर्थात् ब्रह्मज्ञान के आधार के बिना सार्थक स्थाई और स्थिर नहीं हो सकती है।

इस तरह शब्द के बीच एक महत्वपूर्ण सिद्धांत को निरूपित किया गया है।

प्रभ प्राप्ति के लिए, प्रेम ज्ञान और कर्म का सुमेल निरूपित किया गया है। साध संगत कर्म क्षेत्र है भक्ति का जहां प्रभ प्रेम की उत्पत्ति होती है और ज्ञान इस उत्पत्ति को आधार प्रदान करके सार्थक स्थाई और टिकाऊ वाली बनाता है।

अत: इस शब्द में प्रभु प्राप्ति के लिए प्रेम, ज्ञान और कर्म के सुमेल के साथ एक महान सिद्धांत रूपमान होता है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

बन्द नंबर 1 में चित्त, मन और हृदय अपना-अपना कार्य करते हैं। चित्त विचार करता है, मन का कार्य सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। जैसे भंवरा फूलों में निरख परख कर रस को चूसता है, उसी प्रकार मन, विचार-रूप फूलों में से निरख-परख कर उसमें से तत्व सिद्धांत निखेड़कर विचारों की बुनियाद पक्की करता है। इसी प्रकार खंडन मत करके सैद्धांतिक विचारों का भंवरा बन कर स्वीकार करता है और हृदय भावुक तौर से विचार के साथ इकमिक होता है। इस विचार के आधार पर ज्ञान इंद्रियां अपना-अपना कार्य करती हैं। ज्ञान इंद्रियां, आंख, कान, नाक, (मधुकर) जिह्वा हैं। अन्त:करण अंदर की इंद्री है, जिस के सहयोग से बाहर की दस इंद्रियों के कार्य करती हैं। अन्त:करण के चार भेद हैं, मन, बुद्धि चित्त, अहंकार। मोटे अर्थों में चित्त, हृदय आदि ही अन्त:करण हैं। इस तरह इस शब्द में अन्त:करण के संयोग से बाकी की ज्ञान इंद्रियां आंख, कान आदि कार्यशील हैं। मधुकर का अर्थ ही मिठास और प्यार पैदा करना है। इस तरह अंत:करण बौद्धिकता और भावुकता का सुमेल है। स्पष्ट है कि इस प्रस्तावना में विचार और प्रेम की एकाग्रता प्रभ प्राप्ति का साधन बनती है।

पहले बन्द नंबर 1 में चित्त, मन और हृदय के अलग-अलग कार्यों को निखेड़ कर स्पष्ट किया गया है, ताकि प्रभ प्राप्ति की विधि को भ्रम, संदेह और धुंधलेपन से बचाया जा सके। यह अन्त:करण की प्रक्रिया है, जिस को विद्वान ज्ञानियों और ब्रह्मज्ञानियों ने ग्याहरवीं ज्ञानेंद्रिय माना है। इस में बाकी की ज्ञान इंद्रियां हैं, नाक, कान, जीव और आंखें। गुरु रविदास जी ने इन के कार्यो को स्पष्ट और निश्चित कर के साधक को कर्मकांडों से मुक्त कर दिया है।

'रहाउ' में भी स्पष्ट किया गया है कि चित्त, मन और हृदय की एकाग्रता, फिर आंखों, कानों आदि पर काबू प्रभ प्राप्ति के लिए अति कठिन तपस्या है। इस कठिन तपस्या की विधि गुरु रविदास जी ने इस शब्द की प्रस्तावना नंबर 1 में निरूपित की है। इस प्रस्तावना की पहली तुक बोधात्मक है और दूसरी तुक भावनात्मक है। इसी कारण गुरु रविदास जी महाराज कहते हैं, कि प्रभ प्रेम का

मूल तारने के लिए समूचा जीवन ही अर्पण करना पड़ता है। इसलिए प्रभ प्रेम अति महंगा है और प्राप्त करना अति कठिन है।

बन्द नंबर 2 में उपरोक्त बन्द नंबर 1 के सिद्धांत को अमली रूप में लागू कर के साध संगत द्वारा प्रेम और ज्ञान प्राप्त कर के उत्तम मानसिक अवस्था को रूपमान किया गया है, जिस के द्वारा प्रभ की बख्शीश के साथ उस की प्राप्ति की जा सकती है।

इस शब्द का सृजन राग धनासरी के सुभाव और विषय क्षेत्र को ध्यान में रख कर किया गया है। इस शब्द में प्रभ प्राप्ति के लिए कर्मकांड का ज़िक्र तक नहीं किया गया है। इस के विपरीत सतसंगत को आधार बना कर के प्रभ प्राप्ति के लिए सिमरन और सिफत सलाह को प्रमुख माना गया है। भारत के प्रमुख संगीत शास्त्रियों के अनुसार

रश्मि कर्मकांडां नूं छड्ड 'जापीअले राम चे नामं' तभी धनासरी गाने वाला धनवंत हो होगा।

धनासरी धनवंती जाणीऐ भाई।।
जे सतगुर की कार कमाई।।

(श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १४१३)

अत: हर पक्ष से शब्द का सृजन राग की ज़रूरतों के अनुसार ही किया गया है।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी प्रभ के आगे बेनती करते हैं, कि चित्त विचारों का सृजन करता हुआ प्रभ का सिमरन करें, (इन्हीं विचारों के प्रकाश के बीच) आंखें उसके दर्शन करें और कान इस पवित्र कर्म से भरपूर रहें। मन इन विचारों के अनुसार किए गए कर्मों का प्रभाव कबूल कर के भंवरे की तरह प्रभ प्यार के बीच मीठा-मीठा राग अलापता रहे और विह्वल हो कर उस के चरणों को हृदय में टिका ले अर्थात् हृदय के बीच उस के दर्शनों के साथ तृप्त हो जाए। ऐसे रूहानी और नूरानी वातावरण में सृजित अमृतवाणी द्वारा जिह्वा प्रभ नाम उच्चारण करती रहे।।१।।

गुरु रविदास जी प्रभ के आगे विह्वल हो कर प्रार्थना करते हैं, कि हे प्रभ! मैं ने आप का प्रेम बड़े महंगे भाव अपनी जान के बदले चुकाया है। यह प्रभ प्रेम कहीं कम न हो जाए, मुझे इस की चिंता जलाती रहती है, (हे प्रभ जी! इस प्रीत की रक्षा करना जी)।।२।। रहाउ।।

हे प्रभ! साध संगत के बिना आप के प्रेम की उत्पत्ति नहीं हो सकती है और न ही साध संगत के बिना ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। इस के लिए रविदास जी प्रार्थना करते हैं, कि हे प्रभ! हे बादशाह! मुझे अपने प्रेम और ज्ञान की बख्शीश कर के मेरी लाज रखो जी।।२।।२।।

शब्द - 23

धनासरी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे॥
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे॥१॥ रहाउ॥
नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा
नामु तेरा केसरो ले छिटकारे॥
नामु तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो
घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे॥१॥
नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती
नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे॥
नाम तेरे की जोति लगाई भइओ
उजिआरो भवन सगलारे॥२॥
नामु तेरो तागा नामु फूल माला
भार अठारह सगल जूठारे॥
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ
नामु तेरा तूही चवर ढोलारे॥३॥
दस अठा अठसठे चारे खाणी
इहै वरतणि है सगल संसारे॥
कहै रविदासु नामु तेरो आरती
सतिनामु है हरि भोग तुहारे॥४॥३॥[1] **(पृष्ठ ६९४)**

पद अर्थ - आरती-हिंदू धर्म की रीति के अनुसार थाल के बीच दीपक आदि रखकर मूर्ति के आगे थाल को घुमाया जाता है और भजन गाए जाते हैं। **मजनु**-तीर्थों का स्नान। **मुरारे**-प्रभु। **पसारे**-खलार, आडंबर, प्रसार।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ६९४

आसनो–कपड़ा जिस के ऊपर बैठकर मूर्ति की पूजा की जाती है। **उरसा**–चंदन रगड़ने वाला पत्थर। **अंभुला**–पानी। **चारै**–चढ़ाना, अर्पित करना।

माहि–बीच। **पसारे**–प्रसारित, पाना। **भवन सगला**–सारी सृष्टि।

भार अठारह–संसार की सारी वनस्पति के हर एक पौधे का एक–एक पत्ता इकट्ठा कर अठारह भार बनते हैं। **अरपउ**–भेंट करना, अर्पण करना। **ढोलारे**–झुलाना।

दस अठा–अठारह पुराण। **अठ सठे**–हिंदुओं के अठाहट तीर्थ। **चारे खाणी**–पैदायश के चार स्रोत, अंडज, जेरज, सेतज, उतभुज (जीवों का भोजन)।

वह पूजा सामग्री जो कुदरती नियम के अनुसार जूठी नहीं हो सकती है अर्थात् यह सामग्री मनुष्य के उपयोग से व्यर्थ बन जाती है, क्योंकि यह सामग्री प्रभ प्राप्ति के लिये वैसे ही ज़रूरी नहीं है। इस कारण उसको रद्द किया गया है।

नए धर्म की नई आरती

गुरु रविदास जी ने अपने नए धर्म की क्रांतिकारी विचारधारा हिंदू धर्म की पूजा सामग्री और पूजा विधि को तबदील कर के इस की जगह एक नई क्रांतिकारी पूजा सामग्री और नई ही पूजा विधि स्थापित कर के नए धर्म की स्थापना को और परिपक्व कर दिया है। इस तरह गुरु रविदास जी ने बाहरी कर्मकांड और प्रभु की ही पैदा की हुई सामग्री को अर्पण न कर के, ब्राह्मणों की पूजा विधि में एक क्रांतिकारी परिवर्तन किया है।

इस के बिना गुरु जी ने एक और महत्वपूर्ण कर्मकांड का खंडन भी किया है। यह हिंदू धर्म के कुछ चुने हुए मूलभूत धार्मिक स्तंभों में से एक है। उन के तीर्थ स्थानों पर जा कर स्नान करने का भी ज़ोरदार खंडन किया है। पहले इस का खंडन रहाउ में किया है और फिर अन्तिम बन्द नंबर 4 में।

यहीं पर ही बस नहीं, गुरु रविदास जी ने जिन अठारह पुराणों की मिथ्य इतिहास की (मनगढ़ंत) कहानियां, जो इन तीर्थों को महत्वपूर्ण बनाती हैं, उन का वह पूरी शक्ति के साथ ज़ोरदार खंडन कर के तीर्थों के स्नान के महत्व को बिल्कुल ही अर्थहीन सिद्ध कर दिया है। इस की जगह पर यह स्पष्ट तौर से सिद्ध कर दिया है कि घर बैठे ही उस प्रभ के सतनाम का सच्चा सिमरन करना ही सही अर्थों में तीर्थ स्नान है और यही सही अर्थों में प्रभ के आगे सच्चा सुच्चा भोग अर्पण करना है। इसलिए गुरु जी ने कर्मकांड के खंडन के साथ–साथ तीर्थ स्नान का खंडन और उस के साथ जोड़ी धार्मिक विचारधाराओं का खंडन भी किया है और इसके बदले में प्रभ प्राप्ति के लिए उस की आरती के बीच उस के सच्चे सुच्चे सतनाम का भोग अर्पण करने की नई विधि और नई विचारधारा को उजागर किया है।

अत: इस नए धर्म की नवीन विचारधारा के अनुसार प्रभ की आरती के लिए नई सामग्री और नई प्रकार की विधि स्थापित की है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

धनासरी राग के बीच दर्ज आरती में गुरु रविदास जी महाराज ने धनासरी राग के सिद्धांत की सही और सच्ची आत्मा को निरूपित किया है। इस राग का स्वभाव भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों ने भी इस तरह किया है –

''रस्मी कर्मकांड को छोड़ राम का नाम जप लें तभी धनासरी गाने वाला धनवंत होगा।''[1]

प्रभ का नाम सही अर्थों में तभी जपा जा सकता है, यदि कर्मकांडों का खंडन किया जाए।

गुरु रविदास जी महाराज ने आरती के बीच कर्मकांडों अर्थात् दान, यज्ञ (सतयुग), देवपूजा (त्रेतायुग), अवतार पूजा (द्वापरयुग), मूर्ति पूजा (कलियुग) तीर्थ स्थानों आदि का खंडन तो किया ही है, उन्होंने तो कई कदम आगे जा कर भी इन कर्मकांडों को विकसित करने वाले साधनों, तीर्थ स्थानों और इन की जिंद जान हिंदू धर्म के अठारह पुराणों की मनगढ़ंत कहानियों का खंडन कर के कर्मकांडों को सिरे से ही रद्द कर दिया है।

बन्द नंबर 2 और 3 में हिंदू धर्म के कर्मकांडों और पदार्थक सामग्री की एक एक चीज़ का खंडन कर के, साथ ही साथ उसका समाधान भी पेश किया गया है। बैठने वाला आसन, केसर घिसने वाली पत्थर की शिला, केसर, दीवा उस के बीच डाली जाने वाली बाती और तेल उस दीपक की ज्योति का ज़िक्र कर के इस का खंडन भी किया है और इसके स्थान पर केवल और केवल प्रभ के नाम का सिमरन सिद्ध किया है। नाम सिमरन से साधक को जब ज्योतिर्ज्ञान होता है अर्थात् उस के नाम की ज्योति जगाता है, तब सारा ज्योतिर्मंडल प्रकाश के साथ जगमगा उठता है, अत: प्रभ प्राप्ति के लिए किसी सामग्री या कर्मकांड की ज़रूरत नहीं बल्कि केवल सच्चे मन से उस प्रभ का नाम जपने की आवश्यकता है।

बन्द नंबर 3 में सारी सामग्री और कर्मकांड दलीलों के साथ वैज्ञानिक तौर

1. राग नाद शब्दि सोहणे – पृष्ठ : ६६

पर रद्द कर के गुरु महाराज जी स्पष्ट करते हैं, कि आप के नाम का सिमरन ही धागा है और आपके नाम का सिमरन ही फूलों की माला है। वह परिपक्व करते हैं कि समूची सृष्टि में से चुन-चुन कर इकट्ठी की गई उपरोक्त सामग्री किसी न किसी ढंग से जूठी और अपवित्र हो चुकी है, जिस प्रकार बछड़ा दूध को थनों में ही जूठा कर देता है और भंवरा फूल को सूंघ कर। इसलिए उपरोक्त सारी सामग्री जूठी होने के कारण प्रभ को अर्पण करने के योग्य नहीं है।

इस बन्द में गुरु रविदास जी, प्रभ के आगे अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए प्रश्न करते हैं कि, हे प्रभ! आप की पैदा की हुई सामग्री आप को ही अर्पण कर के आप की पूजा के लिए अर्पण करूं तो उपरोक्त सामग्री अर्पण कर के आप की पूजा करना हास्यस्पद बात है।

इसलिए हे प्रभ! मैं तन मन से आप का नाम जप कर, सच्ची सुच्ची भावना से आप के नाम का, आप को चंवर झुलाता हूं। इसलिए गुरु जी वैज्ञानिक तौर से उपरोक्त सामग्री को रद्द कर के अमली रूप में कर्मकांड को खत्म कर के नई पूजा विधि की स्थापना करते हैं।

बन्द नंबर 4 में गुरु जी ने उपरोक्त हिंदू धर्म की पूजा सामग्री और कर्मकांड को पूरी तरह नष्ट करने के लिए उन को महत्व देने वाले अठारह पुराणों की मनगढ़ंत कहानियों को और इन कहानियों के कारण विकसित हो रहे अठासठ तीर्थों तथा इन के कारण विकसित हो रहे पाखंडों और कर्मकांडों को पूरी शक्ति के साथ रद्द कर दिया है। इस का विकल्प देते हुए गुरु जी स्पष्ट करते हैं, कि प्रभु की आरती उस के नाम का सिमरन है और आप के सतनाम के सिमरन का ही आप को भोग अर्पण करता हूं, प्रभ पूजा के लिए किसी सामग्री, ढोंग और कर्मकांड की आवश्यकता नहीं है, बल्कि तन, मन उन के सतनाम का सच्चा सुच्चा सिमरन ही असली पूजा है।

शब्दार्थ - हे प्रभ! आपका सिमरन ही आप की आरती है और आप का नाम सिमरन ही सभी तीर्थों का स्नान है। इसलिए प्रभ सिमरन के बिना शेष सब कुछ झूठ है और थोथे आडंबर ही हैं।।१ ।। रहाउ ।।

आप का नाम सिमरन ही आसन है और आप का नाम सिमरन ही उरसा अर्थात् पत्थर की शिला है और आप का नाम सिमरन ही मूर्ति के ऊपर केसर के छींटे देना है। हे प्रभ! आप का नाम सिमरन ही पानी है और आपका नाम सिमरन ही चंदन है। इस नाम रूपी पानी और नाम रूपी केसर को भी घिस कर आप के ही नाम सिमरन के लिए भेंट चढ़ाता हूं।।२ ।।

आप का नाम सिमरन ही दीवा है और आप का नाम सिमरन ही उस के बीच डाली जाने वाली बत्ती है और आप का नाम सिमरन ही तेल है, जिस को नाम रूपी दीपक के बीच डालता हूं। इस तरह मैंने आप के नाम सिमरन की ही ज्योति जगाई हुई है। जिस से समूचा ब्रह्ममंड प्रकाश के साथ जगमगा उठा है।।२ ।।

हे प्रभ! आप का नाम सिमरन ही धागा है और आपका नाम सिमरन ही फूलों की माला है। आप के नाम सिमरन की पूजा के लिए अन्य समूची वनस्पति जूठी है। वह आप की पूजा में भेंट करने के योग्य नहीं है, इसलिए हे प्रभ! मैं, आप की पैदा की हुई सृष्टि में से प्राप्त की हुई सामग्री आप को क्या अर्पण करूं ? आप की पैदा की हुई सामग्री आप को ही अर्पण कर के मैंने आपको अपनी ओर से क्या अर्पण किया? इसलिए मैं तन मन से आपका सिमरन करता हूं और नाम सिमरन रूपी चंवर झुलाता हूं।।३ ।।

सारा संसार अठारह पुराणों की कपोलकल्पित (मनगढ़ंत) कहानियों के कारण विकसित हो रहे अठाहठ तीर्थों और उनके ऊपर विकसित हो रहे कर्मकांडों को पुण्य कर्म समझ कर करता जा रहा है। इस लिये चारों प्रकार के खाना खाने वाली चौरासी लाख योनियों के चक्कर में भटक रहा है। इसलिए गुरु रविदास जी महाराज फरमाते हैं, कि हे प्रभ! आप का नाम सिमरन ही आप की सच्ची आरती है और सतनाम के सिमरन का ही आप को भोग लगाता हूं।।४ ।।३ ।।

शब्द - 24

जैतश्री वाणी भगता की

ੴ सतिगुर प्रसादि ।।

नाथ कछूअ न जानउ ॥
मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ॥१ ॥ रहाउ ॥
तुम कहीअत हौ जगत गुर सुआमी ॥
हम कहीअत कलिजुग के कामी ॥१ ॥
इन पंचन मेरो मनु जु बिगारिओ ॥
पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ ॥२ ॥
जत देखउ तत दुख की रासी ॥
अजौं न पत्याइ निगम भए साखी ॥३ ॥
गोतम नारि उमापति स्वामी ॥
सीसु धरनि सहस भग गांमी ॥४ ॥
इन दूतन खलु बधु करि मारिओ ॥
बडो निलाजु अजहू नही हारिओ ॥५ ॥
कहि रविदास कहा कैसे कीजै ॥
बिन रघुनाथ सरनि का की लीजै ॥६ ॥ १ ॥ [1]

(पृष्ठ ७१०)

पद अर्थ- नाथ-हे प्रभ। **कछुआ**- कुछ। **बिकानउ**- बेच दिया है।।१ ।। रहाउ ।।

कहीअत-कहा जाता। **सुआमी**-पारब्रह्म, परमात्मा। **कामी**-विषयी।।१ ।।

पँचन- काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार।। **जु**-इतना। **साखी**- गवाह।

जत- जिधर। **तत**- उधर। **रासी**- बेअंत, ढेर। **अजौं**- अभी भी। **पढ़ाई**- पतीजना, विश्वास। **निगम** - वेद आदि हिन्दु धर्म की पुस्तकें।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ७१०

गौतम नारी – गौतम की पत्नी अहल्या, वह अपने पति के साथ छल करके इंद्र के साथ भोग विलास करती रही है। उमापति–शिव,सं, उमा (पार्वती) का पति धव (शिव), रुद्र 'गौतम–नारी उमापति सुआमी सीस धरन सहस भग गामी।।' स्वामी–ब्रह्मा। सीसु धरनि–ब्रह्मा का सिर काटने वाला शिव।

नोट – जब ब्रह्मा अपनी ही बेटी पर मोहित हो गया और जिस तरफ वह जाए, उसी तरफ ब्रह्मा अपना नया मुंह बनाता जाए; वह आकाश की ओर उड़ खड़ी, ब्रह्मा ने अपना पांचवां मुंह ऊपर की ओर बना लिया, तब शिव ने ही यह अति देख कर ब्रह्मा का सिर काट दिया था–अहंकार कर के सिर काट दिया।[1] उसी ईर्ष्या, अहंकार (मतसर) के कारण ब्रह्मा का सिर काटता है।

नोट –भाई काहन सिंह नाभा लिखते हैं –

'गौतम नारि उमापति स्वामी। सीस धरनि सहस भग गामी।' (जैतु रविदास) पाठ का अन्वय यूं है–सीसधरनि उमापति सुआमी, गौतम नारी गामी सहस भग, पुराण कथा यूं है कि ब्रह्मा को कामातुर देख कर शिव ने नाखून के साथ सिर काट लिया, परन्तु वह शिव से चिपट गया, देखो कपाल मोचन, गौतम ऋषि की स्त्री अहल्या के साथ व्यभिचार कर के इंद्र हज़ार टुकड़े अपने शरीर के हज़ार टुकड़े करवा बैठा।'[2]

उपरोक्त नोट से हमें इस बन्द के अर्थ को स्पष्ट करने में सहायता मिलती है। दूसरे यहां यह भी स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी के अर्थ ब्रह्मा ही हैं। तीसरे ब्रह्मा के सिर काटने के कारण का भी पता लग जाता है। इस ब्रह्मा के कामी, विषयी होने का प्रमाण भी मिलता है। **सहस**–हज़ार। **भग**–स्त्री योनि। **गांमी**–संगम करने वाला। **सहस भग गामी** – संगम करने के दोष में हज़ार भगां वाला। ''इंद्र देवता के सरीर के ऊपर गौतम ऋषि के श्राप से हज़ार भगों के चिन्ह हो गये।''[3]।।४।।

दूतन–माया के पंच विकार– काम, क्रोध, माया, मध मसतर। **खलु**– मूर्ख। **बधु**–बांध कर। **निलाजु**– बेशर्म। **अजहू**–अभी भी।

कहा– कहां। **कीजै** – करूं। **का की**–किस की। **लीजै**–लेना।।६।।

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण (पोथी पांचवीं) पृष्ठ : २५७
2. वही – पृष्ठ : १५२ 3. भक्त रविदास जीवन तथा रचना–भाई जोध सिंह पृष्ठ – ३६

गुरु रविदास जी का गुरु कौन ?

इस शब्द में गुरु रविदास जी ने अपने गुरु के बारे में बड़ी दृढ़ता के साथ परिपक्व किया है कि 'ब्रह्म गुरु' ही उन के गुरु हैं। यह तथ्य जैतसिरी के सिद्धांत अनुसार ही स्पष्ट हो जाता है। अब हम इस दृष्टिकोण से राग जैतश्री और इस शब्द का अध्ययन करते हैं।

यह शब्द राग जैतश्री में सृजित किया गया है। जैतश्री का प्रभाव सुख और खुशी देने वाला है। खुशी लेने के लिए मन के 'आलस्य उल्लंघन' वाला स्वभाव छोड़ कर हृदय के बीच रतन नाम को बसा कर गुरु बख्शीश लेनी पड़ती है।[1]

इस में दो विचार हैं –

1. प्रभाव सुख और आनंद देने वाला।
2. आनंद प्राप्ति के लिए गुरु की बख्शीश ज़रूरी।

इस शब्द में गुरु रविदास जी सुख और आनंद की प्राप्ति के लिए विकारों से छुटकारा पाने के लिए ब्रह्मगुरु की बख्शीश की प्राप्ति के लिए उसकी शरण में जाते हैं।

इस तरह शब्द सुख और आनंद की प्राप्ति के लिए और प्रभु की प्राप्ति के लिए ब्रह्मगुरु की शरण में जाना जैतश्री राग की बुनियादी आवश्यकता को पूरा करता है।

इस शब्द के विचार विधान में विकसित विचारधारा राग जैतश्री की अगवाई के अधीन सृजित की गई है। सैद्धांतिक तौर से राग जैतश्री की वैज्ञानिक और विचारधारात्मक संरचना ने गुरु रविदास जी की ब्रह्मगुरु की शरण में जाने की घटना को वैज्ञानिक तौर से उजागर किया है। गुरु जी ने विकारों को काबू करने के लिए ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए केवल और केवल ब्रह्मगुरु को ही गुरु स्वीकार कर के उस की शरण ली है, इसलिए गुरु जी के गुरु ब्रह्मगुरु ही हैं।

1. राग नाद शब्दि सोहणे – पृष्ठ : ३८

इस तथ्य को इस शब्द में आई विचारधारा और राग जैतश्री के अनुपम सैद्धांतिक और विचारधारात्मक प्रभाव दोनों के मिलाप ने परिपक्व वैज्ञानिक आधार देकर स्पष्ट किया है।

नोट - अन्य जानकारी के लिए पढ़े लेखक की पुस्तक 'श्री गुरु रविदास जी उनका गुरु और श्री गुरु ग्रंथ साहिब।'

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी के विचार विधान की रचना और गंभीरता शब्द में दर्ज विचारों के विकास की महत्ता का प्रतीक है। 'रहाउ' में वह स्पष्ट करते हैं, कि मैं अज्ञानी हूं, मेरा मन माया के हाथ बिक चुका है।

इस माया से मुक्ति पाने के लिए बन्द नंबर 1 में स्पष्ट तौर से जगतगुरु का ज़िक्र है। जगत का मालिक (जगतगुरु) माया का जन्मदाता भी है। इसलिए यह कलयुगी जीव इस माया से केवल ब्रह्मगुरु की कृपा से ही मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

बन्द नंबर 2 में माया के मन पर पड़े प्रभाव को दर्शाया गया है कि पांचों विकार मुझे हर क्षण प्रभु से दूर कर रहे हैं।

बन्द नंबर 3 में इन विकारों के कारण दुखों के बीच तड़प रही जनता की अटल सच्चाई के बारे में बता रहे हैं कि इन कारणों से हर तरफ दुख ही दुख हैं, फिर भी मन को विश्वास नहीं आता है, जबकि हिंदू धर्म के वेद आदि ग्रंथ भी इन लोगों की गवाही भरते हैं।

बन्द नंबर 4 में गुरु जी गहनता और तीक्ष्ण विरोधी शक्ति को हिंदुओं के भगवानों, ब्रह्मा, महेश और देवताओं के सिरताज इंद्र और ऋषि गौतम आदि की गवाहियां देकर सिद्ध करते हैं, जिसके साथ विकारों की अथाह शक्ति की भयानकता और भी भयानक हो जाती है।

बन्द नंबर 5 में उपरोक्त भयानकता को दर्शाने वाले अपने मन को कोसते हैं कि मेरा मन माया के काबू में आकर बेशर्म बन गया है। भगवानों, देवताओं, ऋषियों आदि का घटिया हाल देख कर भी विकारों का खैहड़ा (छुटकारा) नहीं छूटता है।

अन्तिम बन्द नंबर 6 में गुरु जी इन से छुटकारा पाने के लिए ब्रह्मगुरु (जगतगुरु) की शरण लेते हैं। ब्रह्मगुरु के बिना इन विकारों से मुक्ति संभव ही नहीं है। इसलिए गुरु रविदास जी रघुनाथ अर्थात् प्रभ ब्रह्मगुरु को अपना गुरु स्वीकार करते हैं और उसकी अगवाई के अधीन ही विकारों पर काबू पा कर मुक्ति प्राप्त करते हैं।

शब्द अर्थ - गुरु रविदास जी अपनी समस्या का उल्लेख करके स्पष्ट करते हैं कि, हे नाथ! हे प्रभ! मुझे कुछ पता नहीं है, मैं अज्ञानी हूं, मेरा मन माया के हाथ बुरी तरह बिक चुका है।।1।। रहाउ।।

हे प्रभ (नाथ)! आप सकल जगत के गुरु और सृष्टि के सृजनहार हैं और हम कलियुगी विषयी जीव हैं। इस तरह गुरु जी ने माया के साथ-साथ पापी जीवों का भी ज़िक्र कर दिया है।।1।।

माया के इन पांचों दूतों काम, क्रोध, आदि ने मेरे मन को इतना मलीन कर दिया है कि मैं हर क्षण प्रभ से दूर होता जा रहा हूं। माया की घातक शक्ति के प्रभाव को स्पष्ट किया गया है।।2।।

इन विकारों की विकराल शक्ति के कारण मैं जहां भी देखता हूं, उधर ही संसार दुखों के बीच तड़पता हुआ नज़र आ रहा है। इस तरह संसार दुखों का घर बना हुआ है, फिर भी मेरे मन को विश्वास नहीं आया, जबकि हिंदू धर्म के वेद आदि ग्रंथ भी इसकी गवाही देते हैं।।3।।

गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि हिंदू धर्म ग्रंथों में उपलब्ध गवाहियाँ समस्या की भयानकता और गंभीरता को स्पष्ट करती हैं।

पहली गवाही-अहल्या का अपने पति गौतम के साथ छल (माया)।

दूसरी गवाही-अहंकारी भगवान शिव की।

तीसरी गवाही-कामी भगवान ब्रह्मा की।

चौथी गवाही-व्यभिचारी इंद्र देवता की।

पांचवीं गवाही-क्रोधी गौतम ऋषि की है।

इन पांचों गवाहियों को पढ़ कर पांचों विकारों की विकराल शक्ति की भयानकता का ज्ञान हो जाता है कि भगवानों, देवताओं, ऋषियों आदि को भी विकारों ने बुरी तरह बर्बाद किया है, फिर आम मनुष्य की क्या कीमत रह जाती है।।4।।

गुरु जी उपरोक्त भयानकता को दर्शाते हुए अपने-आप को कोसते हैं, कि माया के इन पांचों विकारों ने मेरे मूर्ख मन को बांध कर काबू किया हुआ है, परंतु यह बड़ा ही बेशर्म है। भगवानों, देवताओं, ऋषियों आदि का बुरा हाल देख कर भी इन विकारों का साथ नहीं छोड़ता है। ५।।

अन्त में गुरु जी इन विकारों से छुटकारा पाने के लिए ब्रह्म गुरु की शरण लेते हैं। वे अपने-आप को संबोधित कर के कहते हैं 'रविदास बता! अब मैं कहां जाऊं?' की करां? आप ही उत्तर देते हुए स्पष्ट करते हैं, कि अब तो विकारों से छुटकारा पाने के लिए प्रभ (ब्रह्म गुरु) के बिना कोई अन्य सहारा नहीं है।। ६।।

शब्द - 25

राग सूही वाणी श्री रविदास जीउ की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

सह की सार सुहागनि जानै॥
तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै॥
तनु मनु देइ न अंतरु राखै॥
अवरा देखि न सुनै अभाखै॥१॥
सो कत जानै पीर पराई॥
जा कै अंतरि दरदु न पाई॥१॥ रहाउ॥
दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी॥
जिनि नाह निरंतरि भगति न कीनी॥
पुर सलात का पंथु दुहेला॥
संगि न साथी गवनु इकेला॥२॥
दुखीआ दरदवंदु दरि आइआ॥
बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ॥
कहि रविदास सरनि प्रभ तेरी॥
जिउ जानहु तिउ करु गति मेरी॥३॥१॥[1] **(पृष्ठ ७९३)**

शब्दार्थ - **सह**- खसम, पति, परमेश्वर। **सुख-रलीआ**- आनंद। **अवरा**-दूसरा। **अभाखै**-बोलती है। **पाई**-भोराभर, थोड़ा सा।।१।। रहाउ।।

दुई पख-लोक-परलोक, मायके और सुसराल। **नाह**- प्रभ-पति। **निरंतरि**-एक मन, एक रस। **पुरसलात**-इस्लाम धर्म के अनुसार नर्क जाते समय बाल की तरह बना पुल जिस के ऊपर से मरने के बाद लांघना पड़ता है। **दुहेला**-कठिन। **गवनु**-लांघना, पार करना।

बहुतु पिआस-तीव्र मिलने की आशा, दर्शन की तीव्र अभिलाषा, दर्शन की तीव्र आशा। **गति**- मुक्ति, पार करने वाला।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ७९३

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में सुहागन और दुहागन के जीवन की तुलना करके स्पष्ट किया है कि सुहागन अर्थात् साधक सदा ही आनंदमय जीवन जीता है। इसी कारण गुरु जी प्रभ का सिमरन करके उसको प्राप्त करने का उपदेश देते हैं।

बन्द नंबर 1 में रविदास जी साधक रूपी सुहागन का दृष्टांत पेश करते हैं। वह सादर स्त्रियां जो अपने प्रभ प्रीतम के प्रेम के लिए अहंकार का त्याग करके तन और मन अर्पण करके दूसरों की ओर ज़रा भी ध्यान नहीं करती हैं, वह आनंद भरपूर खुशियां प्राप्त करती हैं। वह अपने पति परमेश्वर का आदर सत्कार करना जानती हैं। इस दृष्टांत में दरअसल गुरु जी ने साधक की प्रभ मिलाप के पीछे आनंदमय जीवन को पेश किया है।

'रहाउ' में गुरु रविदास जी ने अटल सच्चाई को पेश किया है, जिनके अंत:करण में कभी प्रेम विछोड़े का दर्द नहीं उठा है, उनको प्रेम विछोड़े के दर्द की रत्ती भर भी जानकारी नहीं हो सकती है।

इस अटल सच्चाई को स्पष्ट करने के लिए बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी ने दोहागन के जीवन का दृष्टांत पेश किया है। गुरु जी ने स्पष्ट किया है कि जो साधक स्त्रियां अपने पति परमेश्वर की एक मन हो कर भक्ति नहीं करती हैं उनको न इस लोक में अर्थात् मायके के घर और न ही परलोक अर्थात् ससुराल के घर में कोई शरण न मिलती है अर्थात् आदर सत्कार नहीं मिलता है, उनको मृत्यु के बाद पंथ रास्ते को साथी के बगैर अकेले ही पार करना मुश्किल हो जाता है।

इस कारण गुरु रविदास जी जीव को बन्द नंबर तीन में स्पष्ट करते हैं कि प्रभ के प्रेम को प्राप्त करना कठिन है। साधक प्रभ प्राप्ति की तांघ भरपूर आस के साथ प्रभ के दर पर विनती करता है परंतु प्रभ को यह प्रेम स्वीकार नहीं है इसलिए गुरु जी तरले करते हैं कि हे प्रभ! जिस प्रकार तू चाहे वैसे ही मेरा कल्याण कर के मुक्ति प्रदान कर दें।

तो इस शब्द में गुरु रविदास जी ने जीव के आगे प्रभ प्राप्ति वाले जीवन

और विकारों से भरे जीवन की तुलना करके उसको प्रभु प्रेम के लिए उत्साहित कर के उपदेश दिया है ताकि जीव दुखों से मुक्ति प्राप्त करके आनंदमय जीवन व्यतीत कर सके।

भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों के अनुसार भी यह सिद्ध हो गया है कि इस शब्द के विचार और भावना राग सूही के अनुसार सृजित की गई है, संगीत शास्त्रों का कथन है :

> ''सूही उत्साह का राग है। सूफियों का प्रिय राग है सुहाग और सुहागन का यहां बहुत वर्णन है ''सुचजी गुणवंती, कीचजी कुड़माई'' और लावां इसी राग में हैं, जिस प्रकार इस राग के बीच सुहागन की निशानियां बताई गई हैं उसी प्रकार प्रभ मिलन की निशानियां भी बताई गई हैं। ''एक ज्योति दोई मूर्ति'' होना ही असल वसल है।''[1]

इसलिए इस शब्द में सुहागन और दोहागन की परिभाषाएं भी उत्पन्न सहज रूप में ही हुई हैं।

परिभाषाएं :

1. सुहागन की परिभाषा : इस बन्द नंबर 1 में सुहागन की परिभाषा भी स्पष्ट हो जाती है। सुहागन वही है, जो पांचों विकारों को त्याग कर एक मन हो कर अपने पति को अपना तन-मन अर्पण कर देती है। वह न किसी की ओर देखती है और न किसी और के बारे में सुनती है और न ही किसी और के साथ बात करती है।

2. दुहागन की परिभाषा - इस बन्द नं. 2 में दुहागन की परिभाषा दी जाती है। दुहागन वह जो अपने पति का आदर सत्कार नहीं करती। इस तरह की स्त्री को न मायके घर में सत्कार मिलता है और न ही ससुराल में अर्थात् वह दुख से भरा, तिरस्कार से भरा जीवन जीती है।

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ७६

शब्द अर्थ = साधक रूबी स्त्रियां ही अपने पति परमेश्वर की कद्र जानती हैं। इस सूझबूझ के कारण वे अहंकार त्याग कर और एक मन हो कर पति को तन और मन अर्पण करके सुख, आनंद भरपूर जीवन व्यतीत करती हैं। वे अपने प्रभ पति के प्रेम में इतनी मुग्ध हो जाती हैं कि वे किसी और की ओर देखती तक नहीं हैं, न ही किसी और की बात सुनती हैं और न ही किसी और के साथ बोलती हैं अर्थात् वे विकारों से मुक्त, दुनिया से बेखबर अपने प्रभ पति के साथ समरस हो जाती हैं।।1।।

इसलिए जिन दुहागनो (परित्यक्ता) ने अपने पति परमेश्वर के साथ प्रेम नहीं किया, वे उन सुहागिनों की अपने पति परमेश्वर के प्रति प्रेम के बीच बिछोड़े की पीड़ा को रत्ती भर भी नहीं जान सकती हैं, भावार्थ उनको सुहागनों के बिछोड़े के बीच प्रेम की पीड़ा का रंच मात्र भी अहसास नहीं होता है।।1।। रहाउ।।

इस कारण जिन दुहागनों ने अपने पति परमेश्वर को एक मन हो कर प्रेम नहीं किया, उन की भक्ति नहीं की, वे सदा दुखी रहती हैं। उनको न लोक (मायके के घर) और न ही परलोक (ससुराल के घर) दोनों जगह शरण मिलती है अर्थात् मान सत्कार नहीं मिलता है। ऐसी दुहागनों को पुरुषलात के कठिन रास्ते को बिना साथी से अकेले ही पार करना पड़ता है।।2।।

इसलिए दुखों में तड़प रहा प्रभ बिछोड़े की पीड़ा से प्रताड़ित साधक प्रभ मिलाप के लिए, प्रभ दर्शन के लिए बड़ी तीव्र आस से प्रभ के दर पर बिनती करता है। प्रभ को यह प्रेम स्वीकार नहीं है और साधक की ओर से बेपरवाह हो जाता है। ऐसी स्थिति में रविदास रूप साधक प्रभ के आगे तरले करता है, कि हे प्रभ! मैं तो आपकी शरण में आ गया हूं, अब आप जो चाहे वैसे ही मुझे मुक्ति प्रदान करें।।३।।1।।

शब्द - 26

राग सूही वाणी श्री रविदास जीउ की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जो दिन आवहि सो दिन जाही॥
करना कूचु रहनु थिरु नाही॥
संगु चलत है हम भी चलना॥
दूरि गवनु सिर ऊपरि मरना॥१॥
किआ तू सोइआ जागु इआना॥
तै जीवनु जगि सचु करि जाना॥१॥ रहाउ॥
जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै॥
सभ घट भीतरि हाटु चलावै॥
करि बंदिगी छाडि मै मेरा॥
हिरदै नामु सम्हारि सवेरा॥२॥
जनमु सिरानो पंथु न सवारा॥
सांझ परी दह दिस अंधिआरा॥
कहि रविदास निदानि दिवाने॥
चेतसि नाही दुनीआ फन खाने॥३॥२॥[1] **(पन्ना 793)**

पद अर्थ - थिरु=सदा के लिए। **संगू**=साथ। **गबनु**=रास्ता।।१।।

किआ=क्यों। **ईआना**-अनजान।।१।। रहाउ।।

जिनि-जिस प्रभ ने। **जीऊ**-जीवन, जन्म। **अंबरावै**-पहुंचाना, प्रदान करना, बेअंत भंडार। **घट**-शरीर, जीव। **समारि**-सिमरन करना, संभाल करना। **सवेरा**-जवानी की उमर, चढ़ती आयु।।२।।

सिरानो-समाप्त होती जा रही है। **पंथ**-जीवन का रास्ता। **सांझ परी**-बुढ़ापा आ गया है।। **दहदिस**-दस दिशाएं। **अंधियारा**-अज्ञानता का अंधेरा, अंधकार, अज्ञानता। **निदानि**-अंत को, उड़क को। **फ़नखाने**-नाशवान।।३।।२।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ७९३-७९४

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी ने, इस शब्द में जन्म से ले कर मौत तक की जीवन की वास्तविकता को व्यक्त किया है। मौत, जन्म, जवानी और बुढ़ापे के हर पक्ष को स्पष्ट कर के जीव को सूचित किया है कि यह दुनिया नाशवान है। इसलिए तू मोह माया और ममता को छोड़ कर प्रभ का सिमरन कर।

इसी कारण गुरु रविदास जी बन्द नंबर 1 में मौत के बारे में स्पष्ट करते हैं कि जिस प्रकार जो दिन चढ़ता है, उस ने हर हालत में छिपना है, वैसे ही जिस जीव ने जन्म लिया है, उस ने हर हालत में मरना है। यहां सदा के लिए कोई भी जीवित नहीं रह सका है। इस अटल सच्चाई को गुरु रविदास जी अपने आप पर भी लागू करते हैं और फरमाते हैं, कि मेरे साथी चलते जा रहे हैं अर्थात् मेरे कुछ साथी चले गए, कुछ साथियों का अंत समय आ गया है और मेरा अंत समय भी नज़दीक आ रहा है। इस मंजिल का मार्ग दूर का है, मौत पता नहीं कब आ जाए।

इस तरह गुरु रविदास जी महाराज ने स्पष्ट किया है कि मौत अटल है और कभी भी आ सकती है। इसी कारण संसार नश्वर है, क्योंकि जो भी पैदा हुआ है, उस ने ज़रूर मरना है।

इसलिए गुरु रविदास जी 'रहाउ' में जीव को सचेत करते हुए फरमाते हैं, कि हे गाफिल! तूँ क्यों अपने जीवन और संसार को शाश्वत समझ बैठा है? क्यों अज्ञानता की नींद में सोया हुआ है? तू जाग, अज्ञानता के अंधेरे में से निकल कर ज्ञान के प्रकाश को प्राप्त कर।

गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 2 में स्पष्ट कर के कहा है कि प्रभ ने ज्ञान प्राप्ति के लिए तुझे हर तरफ से आज़ाद किया है। उस ने जिस को भी जन्म दिया है, उस की पेट की भूख मिटाने के लिए, अन्न के अमुक (खत्म न होने वाला अथाह) भंडार, उस को बिना शर्त, बिना किसी काम करने से हर समय, हर हालत में प्रदान किये हैं।

इसलिए गुरु रविदास जी जीव को उत्साहित कर के उपदेश देते हैं कि वह मेरे, तेरे अर्थात् अहंकार आदि विकारों को छोड़ कर हृदय में प्रभ का सिमरन कर के अपनी जवानी (भरी दोपहर) को तबाही से बचा ले।

परंतु बड़ी हैरानी की बात है, कि बड़े पद पर विराजमान धर्मपाल सिंगल पूर्व प्रोफैसर और प्रमुख गुरु रविदास चेयर, पंजाब यूनिवर्सिटी तथा कुछ अन्य विद्वान नीचे दिए सलोक, साखी को गुरु रविदास जी का लिखा हुआ स्वीकार करते हैं।

'ऐसा चाहूं राज में, जहां मिले सबन को अन्न।
छोट बड़ सब सम वसै, रविदास रहे प्रसन्न।। २३६।।'[1]

यह सलोक या साखी उपरोक्त बन्द नंबर 2 की विचारधारा के विरुद्ध है। यहीं पर बस नहीं, यह साखी गुरु रविदास जी और गुरु ग्रंथ साहिब की समूची विचारधारा का विरोध भी करती है। सारी सृष्टि में हर एक जीव के लिए उस के जन्म के साथ ही, उस की सारी ज़िंदगी के लिए प्रभ अन्न का प्रबंध करता है।

जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै॥
सभ घट भीतरि हाटु चलावै॥

इस प्रकार इस प्रस्तावना में निरूपित विचार सिद्धांत प्रभ के अन्य प्रबंध की व्याख्या भी है और पुष्टि भी।

इस प्रकार उपरोक्त साखी गुरु रविदास जी की रचना नहीं है, क्योंकि गुरु रविदास जी की वाणी की विचारधारा से विरोध करती है। अत: इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि यह साखी किसी अज्ञानी की रचना है। अत: डॉक्टर धर्मपाल सिंह ने इस साखी को गुरु रविदास जी की रचना स्वीकार कर अज्ञानता का ही प्रमाण दिया है। गुरु रविदास जी बन्द नंबर 3 में बुढ़ापे (दिन के छिपने) के समय जीव को स्पष्ट करते हैं कि तुम ने, सारा जीवन प्रभ का सिमरन नहीं किया, अब उम्र समाप्त होने पर आ गई है परंतु तूँ ने पुरसलात के रास्ते को ज्ञान के प्रकाश के साथ प्रकाशमान नहीं किया है। इसलिए अंत समय दसों दिशाओं में अज्ञानता का अंधेरा ही अंधेरा होगा। इसीलिए गुरु जी फरमाते हैं, कि हे गाफिल! तू अंत में इस नश्वर दुनिया से कूच कर जाएगा, फिर तू प्रभ के नाम का सिमरन क्यों नहीं करता अर्थात् तू इस नश्वर दुनिया से मुक्ति प्राप्त करने के लिए प्रभ का सिमरन ज़रूर कर।

यह शब्द राग सूही अर्थात् जीव को प्रभ प्राप्ति के लिए प्रभ सिमरन करने के लिए उत्साहित करता है।

1. बाणी श्री गुरु रविदास जी - पृष्ठ : ९१

शब्दार्थ - जिस प्रकार दिन चढ़ता है और छिप जाता है, उसी प्रकार जीव जन्म लेता है और जीवन भोग कर मर जाता है। कोई भी सदा के लिए नहीं रहता। यहां हर जीव का अंत होता है। मेरे साथी जा रहे हैं और मैं भी जाने के लिए तैयार हूं। यह रास्ता दूर का है, पता नहीं मौत कब आ जाए।।१।।

इसलिए हे कमले! तू क्यों अज्ञानता की नींद में सोया हुआ है और अपने जीवन और जगत को सत्य समझ लिया है। तू अज्ञानता के अंधेरे को प्रभ का सिमरन कर के ज्ञान के प्रकाश के साथ रोशन कर।।१।। रहाउ।।

मूलमंत्र : प्रभ सिमरन के उद्देश्य को पूरा करने के लिए, प्रभ ने जिस जीव को जन्म दिया है, उस की पेट पूजा के लिए अनाज और अमुक भंडार पैदा कर दिए हैं, वह आप जीव के अंदर बैठ कर इस का प्रबंध चला रहा है। इसलिए हे जीव! तू मेरा तेरा अर्थात् अहंकार आदि विकारों का त्याग कर मन में प्रभ सिमरन कर जवानी के समय को संभाल ले।।२।।

जीवन का समय समाप्त होता जा रहा है, परंतु हे जीव! तू अभी तक अपने रास्ते को ज्ञान के प्रकाश के साथ रोशन नहीं कर सका। इसलिए बुढ़ापे के बाद अंत समय दसों दिशाओं में अज्ञानता का अंधकार ही अंधकार होना है। इसलिए गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे कमले! तूँ प्रभ का सिमरन क्यों नहीं करता। यह दुनिया जिस को तू सत्य मान बैठा है, अंत में इस का नाश होना ही है। इसलिए तू प्रभ का सिमरन कर के प्रभ प्राप्ति कर।।३।।२।।

शब्द - 27

राग सूही वाणी श्री रविदास जीउ की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

ऊचे मंदर साल रसोई॥
एक घरी फुनि रहनु न होई॥१॥
इहु तनु ऐसा जैसे घास की टाटी॥
जलि गइओ घासु
रलि गइओ माटी॥१॥ रहाउ॥
भाई बंध कुटंब सहेरा॥
ओइ भी लागे काढु सवेरा॥२॥
घर की नारि उरहि तन लागी॥
उह तउ भूतु भूतु करि भागी॥३॥
कहि रविदास सभै जगु लूटिआ॥
हम तउ एक राम कहि छूटिआ॥४॥३॥[1]

(पृष्ठ ७९४)

पद अर्थ - **साल**=उत्तम, बढ़िया। (जिस प्रकार 'ऊंचे' विशेषण है, उसी प्रकार साल भी रसोई का विशेषण है। इसलिए 'साल' रसोई के अर्थ, रसोई शाला या रसोई खाना नहीं किया जा सकता।) **साल रसोई**-उत्तम रसोई। **फुनि**-फिर, दुबारा।।१।।

टाटी-छप्पर।।१।। रहाउ।।

भाई बंध=रिश्तेदार। **कुटंब**=परिवार। **सहेरा**=सखा, मित्र।।२।।

नारि-पत्नी, बहू। **उरहि तन**-छाती से। **भूत**-मुर्दा, प्रेत।।३।।

लुटिआ-ठगा गया।।४।।३।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ७९४

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी इस शब्द में स्पष्ट करते हैं कि सांसारिक रिश्ते और पदार्थ मनुष्य के असली साथी नहीं हैं। असली साथी तो प्रभ के नाम का सिमरन है, जो सदा साथ निभाता है। इसलिए गुरु रविदास जी बन्द नंबर 1 में स्पष्ट करते हैं, कि ऊंची-ऊंची कोठियों और उन के बीच बढ़िया-बढ़िया रसोइयों का मनुष्यों को अहंकार नहीं करना चाहिए, क्योंकि मरने के उपरांत मनुष्य एक पल के लिए भी इन के बीच नहीं रह सकता है।

'रहाउ' में गुरु रविदास जी अटल सच्चाई का वर्णन करते हुए मनुष्य के शरीर की नश्वरता को स्पष्ट करते हुए कहते हैं, कि जिस प्रकार घास की छपरी को आग लगने से ही राख बन कर मिट्टी के साथ मिल कर मिट्टी बन जाती है और उसका कोई निशान बाकी नहीं रहता है, उसी प्रकार मनुष्य का शरीर मरने के उपरांत मिट्टी में मिलकर मिट्टी हो जाता है और इस का भी नामो-निशान मिट जाता है। इसलिए अंतिम समय मनुष्य का अपना शरीर भी साथ नहीं देता है।

जायदाद के लालच से सावधान करने के बाद गुरु जी बन्द नंबर 2 में मृत्यु के बाद में दुनियावी रिश्तों के व्यवहार को दर्शाते हुए फरमाते हैं कि मौत के बाद रिश्तेदार परिवार और सज्जन साथी उस को मिट्टी समझ कर जल्दी जल्दी घर से निकालने के लिए बेचैन हो जाते हैं।

यहाँ तक कि, अपनी पत्नी जो प्रेम के कारण सदा ही छाती के साथ लिपटी रहती थी, वह भी पति के मरने के साथ ही साथ छोड़ देती है और 'मर गया', 'मर गया' कह कर दूर भाग जाती है। बन्द नंबर 3 के इस विचार का उद्देश्य यह है कि मनुष्य जिन को सारी उम्र अपने समझ कर मोह माया के बीच फंसा रहता है, वह भी अंत समय उस का साथ छोड़ जाते हैं।

इसीलिये गुरु रविदास जी महाराज बन्द नंबर 4 में शाश्वत अटल सच्चाई का ज़िक्र करते हुए फरमाते हैं, कि दुनिया के रिश्ते और पदार्थ नश्वर हैं, केवल प्रभ का नाम सिमरन ही अमर है। इसलिए प्रभ का नाम सिमरन ही मनुष्य का असली साथी है, जो नश्वरता अर्थात् विकारों से मुक्त करवाता है और प्रभ को मिलाता है।

शब्दार्थ - मनुष्य ऊंची-ऊंची कोठियों और बढ़िया-बढ़िया रसोइयों का अहंकार करता है, परंतु अंत समय इन के बीच एक पल भी रहना नसीब नहीं होता, अर्थात् मरने के उपरांत इन को यहीं छोड़ कर जाना पड़ता है।।१।।

यह शरीर घास की बनी हुई छपरी की तरह है, जिस प्रकार घास जल कर राख हो कर मिट्टी में मिल जाती है, वैसे ही शरीर भी मरने के उपरांत मिट्टी के साथ मिल कर की मिट्टी ही हो जाता है। इसलिए मनुष्य का शरीर भी नश्वर अर्थात् नाशवान है।।१।। रहाउ।।

मरने के उपरांत रिश्तेदार, परिवार, दोस्त और मित्र भी लाश को घर से निकालने के लिए बेचैन हो जाते हैं और अंत समय सारे ही साथ छोड़ जाते हैं।।२।।

यहां तक कि घर की अपनी पत्नी जो प्रेम के कारण छाती से चिपकी रहती थी, वह भी मर गया है, मर गया है कह कर दूर भाग जाती है। वह भी साथ छोड़ जाती है।।३।।

इस कारण गुरु रविदास जी फरमाते हैं, कि दुनियावी रिश्तों और पदार्थों के लालचों के कारण सारा संसार ही ठगा जा रहा है, परंतु मैं प्रभ का नाम सिमरन कर के इन विकारों से मुक्त हो गया हूं।।४।।३।।

शब्द - 28

बिलावलु वाणी रविदास भगत की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी॥
असट दसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी॥१॥
तु जानत मै किछु नही भव खंडन राम॥
सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम॥१॥ रहाउ॥
जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु॥
ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु॥२॥
कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै॥
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै॥३॥१॥[1]

(पृष्ठ ८५८)

पद अर्थ - **दारिदु**-गरीबी, निर्धनता। **असट**-दसा-अठारह। **कर तलै**-हाथ की हथेली के ऊपर।।१।।

भव खंडन-जन्म-जन्म के चक्र को नष्ट करने वाला।। **पूरन काम**-सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला।।१।। रहाउ।।

भारु-विकारों का भार, पापों का बोझ। **आलजु**-मुसीबतों से भरा हुआ, जंजाल भरपूर।।२।।

अकथ-कथन से बाहर, बयान से परे। **बहु**=बहुत। **काइ**=की।।३।।१।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ८५८

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी इस शब्द में जात-पात, छूत-छात का खंडन करते स्पष्ट करते हैं कि प्रभ की बख्शीश-चाहे कोई ऊँच हो या नीच, गरीब हो या अमीर सब पर एक समान होती है और जो भी प्रभ का सिमरन करता है, उस की कृपा के कारण उसकी कामनाएं पूरी होती हैं।

इसी कारण गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 1 में प्रभ के गुणगान करते हैं। वह अपने बारे में स्पष्ट करते हुए फरमाते हैं कि मेरी अति की गरीबी के कारण कोई बुरी हालत को देख कर लोग मखौल उड़ाते हैं, परंतु प्रभ की बख्शीश के कारण और मेरे साथ लगभग अठारह सिद्धियों हैं, अर्थात् मेरे पास हर किस्म की नियामत है।

'रहाउ' में गुरु रविदास जी उपरोक्त विचार का सिद्धांत व्यक्त करते हुए फरमाते हैं कि जो-जो भी प्रभ की शरण में आता है, जन्म-मरण के चक्कर को नाश करने वाला प्रभ उन सब की कामनाएं पूरी करता है अर्थात् जातपात, छुआछात में से उपजी गरीबी के कारण मेरी हास्यस्पद स्थिति बन गई थी तथा प्रभ की कृपा के कारण मैं भवसागर से पार हो गया हूँ, वैसे ही जो भी किसी भी कारण दुखी हालत में प्रभ की शरण में आता है, उस की बख्शीश के कारण वह अपनी मुसीबतों से मुक्त हो जाता है।

बन्द नंबर 2 में उपरोक्त सिद्धांत की पुष्टि की गई है। गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि जो भी प्रभ की शरण में जाता है, चाहे वह गरीब हो या अमीर, ऊँच हो या नीच, ब्राह्मण हो या अछूत प्रभ इन बखेड़ों (झगड़ों) भरे संसार में सब के ऊपर बख्शिश कर के उन के विकारों के कारण उपजे पापों के बोझ से मुक्त कर देता है, अर्थात् प्रभ के साथ उन का मेल हो जाता है।

अंत में गुरु रविदास जी बन्द नंबर 3 में प्रभ की अनंत बख्शिशों का ज़िक्र करते हैं, कि प्रभ की अनंत कथाएं हैं, जिन का बयान नहीं किया जा सकता, फिर हम अधिक क्या कह कर क्या कर लेंगे, अर्थात् जितना मर्जी गिनते चले जाओ उस की रहमतों का अंत नहीं हो सकता। इस जीव की सामर्थ्य ही नहीं है, कि वह प्रभ की कथाओं का कथन कर सके। इसलिए प्रभ के प्रति इतना ही

कहा जा सकता है, कि हे प्रभ! आप की तरह केवल और केवल वह आप ही हैं। आप की कोई किसी अन्य के साथ उपमा नहीं हो सकती है।

अत: प्रभ की बख्शीशें अनंत हैं। जो भी प्रभ की शरण में आता है, उस की बख्शीशों से भरपूर हो जाता है।

इस शब्द में आए विचार राग बिलावल के अनुसार भी सही (मिलते जुलते) हैं।

प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों का कथन है -

''मिलाप उपरांत पैदा हुई निराली खुशी आत्मिक ज़िंदगी के सफर में जो उल्लास खुशी आनंद पैदा करती है, उसी का अधिकतर वर्णन इस राग में उच्चारण की गई वाणी में है।' 'पर दूजे भाई बिलावल ना होवई', ''जिस मुखि विच नाम है, विलावलु उन्हां नू सोभदा है।''[1]

उपरोक्त से स्पष्ट है, कि इस शब्द का सृजन राग के इस सिद्धांत के अनुसार ही किया गया है।

परिभाषा - जैसा पारब्रह्म है, वैसा पारब्रह्म खुद ही है। इसलिए पारब्रह्म के साथ किसी और की उपमा नहीं की जा सकती है और न ही किसी अन्य के साथ पारब्रह्म की उपमा दी जा सकती है।

नोट - सन्त या ब्रह्मज्ञानी की पारब्रह्म के साथ उपमा नहीं की जा सकती है, क्योंकि सन्त या ब्रह्मज्ञानी पारब्रह्म का ही सृजन है। पारब्रह्म का सृजन पारब्रह्म ही बराबरी नहीं कर सकता है। उपमा सदा बराबर के साथ ही की जा सकती है, जिस प्रकार मनुष्य उपमा मनुष्य से ही की जा सकती है। दूसरे - सन्त या ब्रह्मज्ञानी पारब्रह्म की बख्शीश के कारण ही बने हैं। यदि पारब्रह्म बख्शीश छीन ले तो सन्त या ब्रह्म ज्ञानी आम मनुष्य ही बन जाते हैं।

शब्दार्थ – हे प्रभ! मेरी अति की गरीबी के कारण हुई मेरी हालत देख कर लोग मेरा हंसी मज़ाक उड़ाते थे, परंतु अब मैं हे प्रभ! आप की बख्शिश के कारण अठारह सिद्धियां अर्थात् हर प्रकार की नियामत मेरी पहुंच में है।।१।।

इसलिए हे, जन्म मरण के चक्र का नाश करने वाले प्रभ! आप जानते ही हैं कि मैं कुछ भी नहीं हूं। मेरी कोई बुक्त नहीं है। इसलिए जिस प्रकार आप ने, मुझ पर बख्शीश की है, वैसे ही जो भी आप की शरण में आते हैं, आप उन की सारी कामनाओं को पूरी करते हैं।।१।। रहाउ।।

इस तरह हे प्रभ! जो भी आप की शरण में आता है, चाहे वह गरीब हो या अमीर हो, ऊँच हो या नीच हो, इन जंजालों से भरे संसार से वह आप की मेहर से विकारों के बोध से मुक्त हो जाते हैं और प्रभ को प्राप्त हो जाते हैं। इस तरह प्रभ को प्राप्त हो जाते हैं।।२।।

इस तरह प्रभ की अनन्त बख्शिशों के कारण गुरु रविदास जी फिर फरमाते हैं कि हे प्रभ! आप की अनंत बख्शीशों का बखान नहीं किया जा सकता है। अधिक कह कर हम क्या कर लेंगे? अर्थात् प्रभ की अनंत कथाओं को कहने की किसी में सामर्थ्य नहीं है। हम बस इतना ही कह सकते हैं कि आप की तरह केवल आप ही हैं। इस कारण आप की उपमा किसी के साथ भी नहीं की जा सकती है।।३।।

शब्द - 29

बिलावलु वाणी रविदास भगत की

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

जिह कुल साधु बैसनो होइ॥
बरन अबरन रंकु नही ईसुरु
बिमल बासु जानीऐ जगि सोइ॥१॥ रहाउ॥
ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री
डोम चंडार मलेछ मन सोइ॥
होइ पुनीत भगवंत भजन ते
आपु तारि तारे कुल दोइ॥१॥
धंनि सु गाउ धंनि सो ठाउ
धंनि पुनीत कुटंब सभ लोइ॥
जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस
होइ रस मगन डारे बिखु खोइ॥२॥
पंडित सूर छत्रपति राजा
भगत बराबर अउरु न कोइ॥
जैसे पुरैन पात रहै जल समीप
भनि रविदास जनमे जगि ओइ॥३॥२॥[1]

(पृष्ठ ८५८)

पद अर्थ – **साधु**-उत्तम, भला, नेक। **बैसनो**-प्रभ का भगत। **बरन**-चार वर्ण, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। **अबरन**-वर्ण से बाहर जिस प्रकार डूम, चंडाल। **रकु**-गरीब। **ईशर**-धनाढय। **बिमल**-पवित्र। **बास**=सुगंधि, शोभा। **सोई**=प्रभ के भगत की शोभा।।१।। रहाउ।।

डोम=मरासी। **चंडार**=चंडाल। **मलेश**=अपवित्र। **सोई**=वह प्रभ।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ८५८

पुनीत=पवित्र। **दोई**=दादके तथा नानके।।१।।

ठाऊ= स्थान। **कुटंब**= परिवार। **लोई**= लोक। **सार**= उत्तम। **आन**= अन्य, दूसरे। **मगन**- मुग्ध। **डारे**- त्यागना, नाश। **बिख**- विकार। खोइ- नष्ट कर देना।।२।।

सूर-बहादुर। **अउर**-दूसरा। **पुरैन पात**=चार पत्तियों वाली। **समीप**-नज़दीक। **भनि**-कहता है। **उइ**-वही भगत।।३।।२।।

क्या गुरु रविदास विष्णु भगत थे?

कई विद्वानों ने वैष्णव के अर्थ विष्णु का उपासक किया है, भाई जोध सिंह लिखते हैं -

''वैष्णो- एकमत का नाम है। ये लोग भक्ति भाव के बीच बहुत प्रसिद्ध थे। लगभग सारे ही भक्त इस टोले के थे।''[1]

इस तरह डेरा सचखंड बल्लां द्वारा प्रकाशित अमृतवाणी श्री गुरु रविदास जी महाराज की सटीक में दर्ज है,

जिह कुल साधु बैसनो होइ॥

जिस कुल में कोई आदमी विष्णु का साधु अर्थात् विष्णु का उपासक हो जाए।'' पृष्ठ नंबर 117

संत हीरा दास चक्क हकीम भी उपरोक्त विचारों से सहमति रखते हैं। उनका कथन है,

'जिह कुल जिस किसी कुल में साध श्रेष्ठ वैष्णो विशन का भगत हो------।'[2]

उपरोक्त तीनों विद्वान वैष्णो का अर्थ विष्णु का उपासक करते हैं। कई कारणों से यह अर्थ विचाराधीन शब्द संबंध नहीं रखते।

1. विष्णु मत जात पात को मानता है। विष्णु का अवतार 'भगवान राम' ने हिंदू धर्म ग्रँथों का सहारा लेकर शूद्र महर्षि शंभूक का कत्ल किया था। इसी कारण अनेकों अन्य कारणों से गुरु रविदास जी और गुरु ग्रंथ साहिब की विचारधारा इस को नहीं मानती। इसलिए वैष्णव के अर्थ विष्णु उपासक इस शब्द के बीच नहीं उतरते।

2. विष्णु 'भगवान' को गुरु रविदास जी और गुरु ग्रंथ साहब की विचारधारा ने रद्द कर दिया है। ''हरि जपत तेऊ जना पदम् कवलासपति, तॉस सम तुलि नहीं आन कोऊ।।'' इस तुक का सहारा ले कर भाई जोध सिंह लिखते हैं,

1. भक्त रविदास : जीवनी तथा रचना - पृष्ठ : ४१
2. रविदास दीप : पृष्ठ : ३७५

'---------बल्कि यह कहा है कि विष्णु और शिव जी भक्तों की बराबरी नहीं कर सकते।'[1]

जिस विष्णु को गुरु रविदास जी रद्द करते हैं, उसी विष्णु के वे भगत किस प्रकार बन सकते हैं। इस के साथ उनकी विचारधारा में आपसी विरोधता उत्पन्न हो जाती है। इस कारण भी वैष्णो के अर्थ विष्णु नहीं उतरते हैं।

इस परिभाषा में गुरु अर्जुन देव जी ने सुखमणि साहिब की अष्टपदी नवमी की पौड़ी दूसरी में दर्ज किया है -

वैसनो सो जिस ऊपरी सु प्रशन।।
बिसन की माईआ ते होइ भिन।।
करम करत होवै निहकाम।।
तिसु बेसनो का निरमल धर्म।।
काहु फल की इच्छा नहीं बाछे।।
केवल भगति कीरतन संगी राचै।।
तन मन अंतरी सिमरन गोपाल।।
सभ उपरि होवत किरपाल।।
आपि दृढे अवरह नामु जपावै।।
नानक उहू बेसनो परम् गति पावै।।२।।९।।[2]

उपरोक्त पौड़ी की व्याख्या इस तरह है -

''वैष्णो वह है, जिस पर प्रभ प्रसन्न हैं। माया से दूर रहता हैं, निष्कर्मी हैं। वह फल की इच्छा नहीं करता। भक्ति और कीर्तन से प्रीत करता है। वह कृपालु है। वह आप, नाम सिमरन को दृढ़ कर के दूसरों से नाम जपाता है। वह वैष्णो परम गति को प्राप्त होता है।''

गुरु अर्जुन देव जी की वैष्णव की परिभाषा से नीचे लिखे विचार स्पष्ट होते हैं -

1. गुरु रविदास जी के विचार अधीन शब्द में प्रयोग शब्द वैष्णो, विष्णु मत से संबंधित नहीं है।

2. गुरु ग्रंथ साहब में दर्ज 'वैष्णो' की परिभाषा अनुसार 'वैष्णो' का अर्थ प्रभ का भगत है। विष्णु मत के भगवान विष्णु के उपासक से वैष्णव का वैसे

1. भक्त रविदास : जीवनी तथा रचना : पृष्ठ : ४
2. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : २७३

कोई संबंध नहीं है।

उपरोक्त समूची चर्चा से यह परिपक्वता से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी वैष्णव मत के उपासक बिल्कुल ही नहीं हैं। वैष्णो मत से उनका दूर का भी संबंध नहीं है।

इस से विपरीत गुरु रविदास जी अपनी वाणी में भगवान विष्णु को रद्द करते हैं। वह तो भगवान विष्णु को प्रभ के भगत के बराबर भी नहीं समझते। फिर गुरु जी विष्णु का भगवान कैसे मान सकते हैं? इस तरह गुरु रविदास जी की विचारधारा भगवान विष्णु और उस से संबंधित विष्णु मत की विचारधारा को बुनियादी तौर से रद्द करती है।

इस निर्णायक परिणाम से स्पष्ट है, कि गुरु रविदास जी को वैष्णव भगत कहना किसी तरह भी उचित नहीं है। इसलिए गुरु रविदास जी किसी तरह भी वैष्णव मत से संबंधित नहीं हैं।

इस शब्द के 'रहाउ' में हिन्दू धर्म के धार्मिक ग्रन्थों में दर्ज जात-पात के सिद्धांत को स्पष्ट करके, फिर उस को शक्तिशाली दलीलों से रद्द किया है।

प्रथम बन्द में हिन्दू धर्म के धार्मिक ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अछूतों के बुनियादी सिद्धांत जातपात को रद्द करके मनुष्य को प्रभ की सृजना प्रमाणित करके हिन्दू धर्म ग्रन्थों को रद्द किया है।

दूसरी बन्द में ब्राह्मण की कथित विद्वता, सूरमे तथा चक्रवर्ती राजे प्रभ के भक्त बराबर ही नहीं, वह तो उस के अधीन हैं, पंडित केवल ते केवल हिन्दू धर्म ग्रन्थों में ब्राह्मण के लिये ही प्रयुक्त किया जाता है। इस लिये ब्राह्मण की विद्वता को रद्द करके भक्त की महानता को इतनी उच्चता प्रदान की है कि भक्त के बराबर कोई हो ही नहीं सकता।

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी इस शब्द में स्पष्ट करते हैं, कि प्रभ का भगत न उत्तम जात का होता है न ही नीच जात का, न वह गरीब होता है और न ही अमीर। वह अपने पवित्र कर्मो के कारण बन जाता है और निर्मल शोभा के कारण जगत में प्रसिद्ध हो जाता है। इस तरह यह सिद्धांत विश्व व्यापी होने के कारण हर एक जीव पर लागू होता है।

इसलिए गुरु रविदास जी बन्द नंबर 1 और 'रहाउ' में उपरोक्त सिद्धांत को लागू करते हैं। वह फरमाते हैं कि चाहे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हो या मरासी, चांडाल या अपवित्र मलेच्छ हो, सब के मन में उस प्रभ का निवास है। जो भी उस प्रभ का सिमरन करता है, पहले वह अपने-आप को तारता है और फिर दादके और नानके दोनों कुलों को तार देता है। इस प्रस्तावना में गुरु रविदास जी स्पष्ट कर देते हैं कि हिंदू धर्म ग्रंथों का यह फतवा कि शूद्र प्रभ प्राप्ति नहीं कर सकता है, गुरु रविदास जी ने हिम्मत तथा उद्यम से प्रभ को प्राप्त करके मूल से ही गलत साबित कर दिया है। वह तो हिंदू धर्म के बाहर के सब लोगों को भी प्रभ प्राप्ति में शामिल करते हैं और दृढ़ करते हैं कि वही प्रभ को प्राप्त कर सकते हैं। इस तरह हिंदू धर्म ग्रंथ और इन को लागू करने वाले भगवान राम जैसे भी अपने-आप ही रद्द हो जाते हैं। सब से महत्वपूर्ण बात यह है, कि हिंदू धर्म ग्रंथ खास करके वेद भगवान की रचना हैं-यह भी बन्द नंबर 1 के विचारों द्वारा गलत सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार इस बन्द की विचारधारा सर्वव्यापी है। हर कोई प्रभ का सिमरन कर के प्रभ को प्राप्त कर सकता है।

अगली बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी प्रभ के भगत की पवित्र शोभा और महानता के प्रभाव का ज़िक्र करते हैं, कि वह गांव धन्य है, किस्मत वाला है जिस कुल में जन्म ले कर उन्होंने अमृत रस दिया है और दूसरे विकारी स्वादों का त्याग किया है। वह प्रभ के प्रेम में इतने मुग्ध हो गए हैं कि उन्होंने विकारों के विष का नाश कर दिया है।

इस बन्द में सर्वव्यापी पहुंच को स्पष्ट किया गया है कि जिस ने भी प्रभ प्रेम का अमृत रस पिया है, उस ने अपने परिवार, गांव, स्थान आदि को भी किस्मत वाला बना दिया है।

अन्तिम बन्द नंबर 3 में प्रभ के भक्तों की प्रसिद्धि और महानता को चार चांद लगाए गये हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभ का भगत प्रभ रूप बन जाता है, इसलिए दुनिया में विचर रहे विद्वान, सूरमे, चक्रवर्ती राजा कोई भी प्रभ के भक्तों के बराबर नहीं है।

नोट - पंडित का अर्थ सदा ही विद्वान होता है। इस का अर्थ ब्राह्मण कदाचित भी नहीं होता है।

इस कारण जिस प्रकार चारपत्री दूसरे पौधों की अपेक्षा भिन्न और निराली होती है, वह केवल पानी के पास ही जीवित रह सकती है, उसी तरह ही प्रभ के भक्त भी दुनिया की अपेक्षा भिन्न और निराले होते हैं, जो केवल प्रभ के चरणों में ही निवास कर के बिछोड़े की आग से बच सकते हैं, अर्थात् परम आनंद को प्राप्त कर सकते हैं।

इस शब्द के विचारों की रचना राग बिलावल की ज़रूरतों के अनुसार ही की गई है।

परिभाषा - पारब्रह्म हर जीव में निवास करता है, चाहे वह ब्राह्मण हो या क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हो या मरासी हो,या चांडाल, अब अपवित्र मलेच्छ हो या और कोई भी, सब के मन में प्रभ वास करता है।

शब्दार्थ - जिस किसी भी कुल में प्रभ का भक्त प्रकट होता है, न वह जात का उत्तम होता है, ना नीच जाति का होता है, न गरीब होता है और न ही अमीर। वह तो अपने पवित्र कर्मों के साथ पवित्र शोभा प्राप्त कर के दुनिया में प्रसिद्ध हो जाता है।।१ ।। रहाउ।।

इस कारण चाहे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र या मरासी, चांडाल और अपवित्र (मलेच्छ) मन वाला हो। सब में उस एक परमात्मा का निवास होता है, इसलिए जो कोई भी प्रभ का सिमरन करता है, वह पहले अपने-आप को तारता है अर्थात् कल्याण कर लेता है और फिर दादके, नानके दोनों कुलों को भी तार देता है अर्थात् विकारों से मुक्त कर देता है।।१ ।।

इसलिए धन्य है वे परिवार के लोग और धन्य है वह गांव और स्थान जहां भगत ने जन्म लिया है और प्रभु प्रेम का अमृत रस पी कर सब त्याग दिए हैं। विकारों का नाश कर दिया है।।२ ।।

प्रभ प्राप्ति के कारण बड़े-बड़े विद्वान महान सूरमे और चक्रवर्ती राजा तथा अन्य कोई भी प्रभ के भगत के बराबर नहीं हो सकता है। इसलिए जगत में ऐसे भक्तों का जन्म ही मुबारक है, क्योंकि जिस प्रकार चारपत्री निराली होती है, वह केवल पानी के पास ही जीवित रह सकती है। उसी तरह ही प्रभ के भक्त निराले हैं, जो केवल प्रभ चरणों में निवास कर के ही बिछोड़े की आग से बच सकते हैं अर्थात् परमानंद को प्राप्त कर सकते हैं।।३ ।।२ ।।

शब्द - 30

राग गोंड वाणी-रविदास जीउ की घर २

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

मुकंद मुकंद जपहु संसार॥
बिनु मुकंद तनु होइ अउहार॥
सोई मुकंदु मुकति का दाता॥
सोई मुकंदु हमरा पित माता॥१॥
जीवत मुकंदे मरत मुकंदे॥
ता के सेवक कउ सदा अनंदे॥१॥ रहाउ॥
मुकंद मुकंद हमारे प्रानं॥
जपि मुकंद मसतकि नीसानं॥
सेव मुकंद करै बैरागी॥
सोई मुकंदु दुरबल धनु लाधी॥२॥
एक मुकंदु करै उपकारु॥
हमरा कहा करै संसारु॥
मेटी जाति हूए दरबारि॥
तुही मुकंद जोग जुग तारि॥३॥
उपजिओ गिआनु हूआ परगास॥
करि किरपा लीने कीट दास॥
कहु रविदास अब त्रिसना चूकी॥
जपि मुकंद सेवा ताहू की॥४॥१॥[1]

(पृष्ठ ८७५)

शब्दार्थ - **मुकंद**-मुक्ति देने वाला प्रभ। **जपहु**-सिमरन करो। **अउहार**-नाश होने वाला व्यर्थ जाने वाला।।।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ८७५

जीवत–जीते जी। **मरत**=मरते समय।

ता के=उस प्रभ के।।१।।'रहाउ'।।

प्रानं=जिंद जान। **निसानँ**–प्रमाणिकता का चिन्ह। **दुरबल**–आत्मिक तौर से कमज़ोर। **धनु**–प्रभ का नाम रूपी धन।

लादी–प्राप्त कर लिया।।।।

जाति= देखो पृष्ट नंबर 115 का बन्द नंबर ।।३।।३।।

कीट–कीड़े, बेसहारे। **तृष्ना**–इच्छाएं, विकार। **ताहू** की–उसी प्रभ की।

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द के बन्द नंबर 1 में मुकुंद शब्द दो बार प्रयोग करके प्रभ के सिमरन के लिए सेवक को शक्तिशाली रूप में चेतावनी दी है और यह भी स्पष्ट किया है कि प्रभ का सिमरन ही जीव को चौरासी के चक्रों से मुक्त कर सकता है। प्रभ समस्त सृष्टि का पिता है। इस कारण प्रभ हमें माता पिता की तरह संभाल कर पालन करता है।

'रहाउ' में दूसरा नुक्ता प्रभ के सिमरन की महत्ता और विधि के बारे में है। गुरु रविदास जी महाराज चेतावनी देते हैं, कि सेवक प्रभ का निरंतर हर पल सिमरन करे, तभी वह प्रभ का परम आनंद प्राप्त कर सकता है। यह समूचे शब्द का बुनियादी सिद्धांत है।

अगला बन्द नंबर 2 में इस सिद्धांत को लागू किया गया है। सेवक प्रभ का सिमरन करता हुआ प्रभ को अपने प्राण समझता है। इसका प्रमाण इस प्रस्तावना के आरंभिक मुकंद शब्द का दो बार आना है। इस का उद्देश्य विषय की गंभीरता, गहराई और सेवक की बदल रही मानसिक अवस्था दर्शा कर स्पष्ट करना भी है। इस अवस्था में सेवक के चेहरे का जलाल नूर नूर जल उठता है। यह वैराग्य की परम अवस्था का प्रमाण है। जिस शब्द के कारण उस की आत्मिक कमज़ोरी मिट जाती है और आत्मिक शक्ति रूप धन प्राप्त कर लेता है।

अगला बन्द नंबर 1 नंबर 3 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि जब एक प्रभ बख्शिश करता है तो आत्मिक बल प्राप्त होता है। अब लोग सेवक का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। इस तरह प्रभ की कृपा सेवक के विकारी स्वभाव को नष्ट कर के पवित्रता प्रदान कर देती है और प्रभ के चरणों में स्थान प्राप्त हो जाता है। हे प्रभ! युगों-युगों से बख्शिश कर के आप अपने सेवक को भवसागर से पार उतारता है।

इस बन्द नंबर 4 में विकारी स्वभाव को नष्ट करने वाली शक्ति का ज़िक्र है। यह शक्ति है, प्रभ द्वारा कृपा कर के प्रदान किया गया ब्रह्म ज्ञान, जिस के प्रकाश से अज्ञानता मिट जाती है और प्रभ मिलाप हो जाता है। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि अब इस अवस्था में मेरी इच्छाओं और विकारों का नाश हो गया है।

इसलिए हे रविदास! आप प्रभ का निरंतर सिमरन कर और उस की सेवा के लिए ही सदा तत्पर रह।

इस तरह गुरु रविदास जी ने प्रभ के सिमरन का महत्व बता कर उस को सेवक पर लागू कर के स्पष्ट भी किया है कि प्रभ का निरंतर पल-पल सिमरन, सेवक को शाश्वत आनंद प्रदान करता है।

गोंड राग के सिद्धांत की बुनियादी ज़रूरतों के अनुसार इस शब्द का सृजन किया गया है। इस राग का बुनियादी केंद्र एक परमात्मा का संकल्प है और एक परमात्मा के सेवक को बार-बार सिमरन करने की चेतावनी दी गई है।

गुरु रविदास जी इस शब्द की बन्द नंबर 3 में राग गोंड के मूलभूत अर्थात् केंद्र का ज़िक्र करते हैं -

'एकु मुकुंद करै उपकार।।' 'इस एकु मुकुंद' के सिमरन के लिए बन्द नंबर 1 और 2 में मुकंद शब्द को दो-दो बार प्रयोग कर के प्रभ के बार-बार सिमरन के ऊपर ज़ोर दे कर सिमरन की महत्ता को स्पष्ट किया गया है। इसलिए यह शब्द में आए विचार राज गोंड की बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करता है। भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्री राग की सैद्धांतिक जरूरतों को निश्चित करके लिखते हैं।

केवल एक ही आस रखनी इस चेतावनी को बार-बार सोचना है, क्योंकि इस आस पर मित्री भाऊ दूजा है, 'खिन महि झूठ बिनासि सब जाई।।'[1]

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ८०

शब्दार्थ - हे संसार के लोगो! उस मुक्ति प्रदान करने वाले प्रभ का सिमरन करो। हां, ज़रूरी ही उस का सिमरन करो, क्योंकि उस के सिमरन के बिना यह शरीर व्यर्थ ही चला जाता है, वही प्रभ मुक्ति प्रदान करता है। इस कारण वह हमारी माता-पिता की तरह संभाल करता है।।१ ।।

इसलिए प्रभ का सेवक जो जीते जी हर पल उस के नाम के सिमरन में जीता है और मरते समय भी उस की सुरति प्रभ में टिकी रहती है। वह सदा ही परमानंद का रस मानता है, भाव प्रभ को प्राप्त होता है।।१ ।। रहाउ ।।

इस कारण ही गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि प्रभ, हां भाई! प्रभ ही हमारी जान है, उस के सिमरन से सेवक के माथे के प्रमाणिकता का चिन्ह अर्थात् चेहरा प्रभ के नूर के साथ नूरानी हो जाता है। नूर प्राप्ति से प्रभ का सेवक बैरागी बन जाता है और आत्मिक तौर से निर्बल सेवक को आत्मिक शक्ति रूपी धन प्राप्त हो जाता है।।२ ।।

इस प्रकार प्रभ ने हमें बख्शिश कर के सारी दुनिया में यश और कीर्ति प्रदान की है। अब लोग कुछ नहीं बिगाड़ सकते, क्योंकि विकारी स्वभाव को विकारों से मुक्ति मिलने के कारण प्रभ के चरणों में स्थान प्राप्त हो गया है। वह प्रभ तो युगों-युगों से सदा ही अपने सेवकों को पार करता रहा है।।३ ।।

प्रभ के सिमरन से विकारों से मुक्ति प्राप्त होने के साथ सेवक को ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति हुई है, जिस प्रकाश से अज्ञानता मिट गई है। इस तरह इस निमाने (भोले-भाले) सेवक को प्रभ ने बख्शिश कर के अपना बना लिया है, इसलिए गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि अब मेरी इच्छाएं और विकार मिट गए हैं और अब उस प्रभ का ही सिमरन करता हूं और हर समय उसकी सेवा में ही मग्न रहता हूं।।४।।१ ।।

शब्द - 31

राग गोंड वाणी रविदास जीउ की घर २

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जे ओहु अठसठि तीरथ न्हावै॥
जे ओहु दुआदस सिला पूजावै॥
जे ओहु कूप तटा देवावै॥
करै निंद सभ बिरथा जावै॥१॥
साध का निंदकु कैसे तरै॥
सरपर जानहु नरक ही परै॥१॥ रहाउ॥
जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति॥
अरपै नारि सीगार समेति॥
सगली सिंम्रिति स्रवनी सुनै॥
करै निंद कवनै नही गुनै॥२॥
जे ओहु अनिक प्रसाद करावै॥
भूमि दान सोभा मंडपि पावै॥
अपना बिगारि बिरांना सांढै॥
करै निंद बहु जोनी हांढै॥३॥
निंदा कहा करहु संसारा॥
निंदक का परगटि पाहारा॥
निंदकु सोधि साधि बीचारिआ॥
कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ॥४॥२॥[1]

(पृष्ठ ८७५)

पद अर्थ - अठसठि- अठाहसट। **दुआदस**-बारह। सिला-शिवलिंग। **दुआदस शिला**-बारह शिवलिंग (सोमनाथ, बद्री नारायण, केदार, विश्वेशर, रामेश्वर, नागेश्वर, बैजनाथ, भीम शंकर आदि।) **कूप**-कुआं, **तटा**=तला। **देवावे**=दिलाता है। **निंद**=गुणों में दोष थोंपने की क्रिया''[1]।।१।।

सरपर-निश्चित, ज़रूर।।१।। रहाउ।।

कुलखेती-कुरुक्षेत्र। **सर्वनी**-कानों से।।२।।

अनिक=कई प्रकार के। **मंडपि**=देव मंदिर। **बिरांना**-पराया। **साढै**-संवारना। **हाँढै**-भटकता है।।३।।

पाहारा-संसार। **सोधि**-निर्णय कर के। **साधि**=साधना करके। **सोधि-साधि**=सोच विचार कर निर्णय करना।। ४।।२।।११।। ७।।२।।४८।। जोड़।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ८७५

गुरु रविदास जी का धर्म आदि धर्म है। यह धर्म प्राकृतिक नियमों पर आधारित है, परन्तु हिन्दू धर्म आर्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य का धर्म है, जो गैर कुदरती नियमों पर आधारित है।

हिन्दू धर्म की पाखंड पर आधारित पूजा द्वारा साधुओं की निंदा को रद्द किया है। प्रमाण : पिछले शब्द में किसी पूजा सामग्री तथा पाखंड से प्रभ की प्राप्ति की है।

यह शब्द ऊपरी तौर पर व्यक्तिगत निन्दक के नर्क में बिना रोक-टोक सीधे ही नर्क को जाता है, फिर क्या धर्म भी निन्दक हो सकता है? क्या निन्दा करने वाले भगवान भी निन्दक होते है? यदि ऐसा है तो स्पष्ट है कि वह भी सीधे स्पाट हर हालत में नरक को ही जाएंगे। आर्य ब्राह्मणों का हिन्दू धर्म तथा इसके भगवान व देवी-देवता सभी नर्क को गये हैं, क्योंकि इनका धर्म समूचे रूप में निन्दा पर ही आधारित है। प्रमाण : Riddles in Hinduism

1. महान कोश - पृष्ठ : ५३०

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में निंदक को उपदेश दिया है कि वह सच्चे सुच्चे महापुरुषों की निंदा करना छोड़ कर प्रभु का नाम स्मरण करे। निंदक वह है, जो गुणों को दोष कहता है। इसलिए जो भी कोई गुणों को अवगुण बना कर किसी की बेइज्ज़ती करता है, वह प्रभ की नज़र में दोषी होता है। इसलिए इस शब्द में सच्चे सुच्चे साधु संतों की निंदा करने से उन्हें वर्जित किया गया है।

बन्द नंबर 1 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं, कि दिखावे और पाखंड वाली पूजा निंदनीय कर्म है। वह अठाहट तीर्थों का स्नान बारह शिवलिंग की पूजा और श्रद्धालुओं के लिए कुएं और तालाब बनवाता है, यह सब दिखावे हैं, पाखंड हैं, यदि वे महापुरुषों की निंदा करता है।

इस कारण 'रहाउ' में गुरु रविदास जी एक सिद्धांत का सृजन करते हैं, कि सच्चे सुच्चे साधु सन्तों, महापुरुषों का निंदक निश्चय ही नरक को जाता है।

गुरु रविदास जी बन्द नंबर 2 में स्पष्ट करते हैं कि चाहे कोई मनुस्मृतियों की शिक्षा को सुनकर उसके अनुसार ग्रहण वाले दिन कुरुक्षेत्र का स्नान करके आभूषणों से सजी अपनी पत्नी का ब्राह्मण को दान कर दे, तब भी संतों के निंदक को इसका कोई लाभ नहीं मिलता है।

गुरु रविदास जी बन्द नंबर 3 में निंदक को सामाजिक पक्ष भी स्पष्ट करते हैं, कि साधु-संतों का निंदक फिर चौरासी के चक्कर में भटकेगा। यदि वह भूमि दान और मंदिर दान दे कर और दूसरों का भला करने के लिए अपने काम बिगाड़ कर संसार में बडियाई भी प्राप्त कर लेता है परंतु साधुओं की निंदा करने के कारण यह वडियाई व्यर्थ बन जाती है। हर तरफ से विचार करने के उपरांत गुरु रविदास जी बन्द नंबर 4 में लोगों को संबोधित करते हुए उपदेश देते हैं कि हे संसार के लोगो! आप संतों की निंदा न करो यह तो नश्वर हो जाती है। निंदक का रहस्य खुल जाता है, इस तरह, यह निंदा बदनामी का कारण बनती है। गुरु जी यह भी स्पष्ट करते हैं, कि सोच विचार के बाद परिणाम यही निकलता है कि निंदक पापी है, वह निश्चय ही नर्क को जाता है। आप इस निंदा से बचकर रहो।

शब्द अर्थ - यदि कोई मनुष्य अठाहट तीर्थों का स्नान करके बारह शिवलिंगों की पूजा भी करे और यदि वह लोगों या श्रद्धालुओं के भले के लिए कुएं और तालाब भी बनवा देता है। यदि वह सच्चे सुच्चे संतों की निंदा करता है तो सब व्यर्थ ही जाता है।।१।।

इसलिए गुरु रविदास जी स्पष्ट निर्णय देते हैं कि साधु-संतों का निंदक किस प्रकार तर सकता है, अर्थात् वह तर ही नहीं सकता। निश्चय ही नरक को जाता है।।१।। रहाउ।।

यदि कोई जीव ग्रहण वाले दिन कुरुक्षेत्र जाकर स्नान कर के पूरे आभूषणों सहित अपनी पत्नी को ब्राह्मण को दान ही कर दे और सारी मनुस्मृतियों को कानों से सुन ले, पर यदि वह साधु संतों की निंदा करता है, तो ऐसे दान का कोई भी लाभ नहीं होता है।।२।।

यदि वह देवी-देवताओं को कई प्रकार के भोग लगाए, भूमि दान करे, मंदिर दान कर के बडियाई ही प्राप्त कर ले, यहां तक कि अपना काम बिगाड़ करके दूसरों का भला भी करे तो भी वह चौरासी लाख योनियों के चक्कर में ही भटकता रहता है, यदि संत महापुरुषों की निंदा करता है। गुरु रविदास जी समझाते हैं कि हे दुनिया के लोगो! आप साधुओं की निंदा क्यों करते हो? जबकि उन का यह निंदा वाला घटिया व्यवहार नश्र हो जाता है अर्थात् इस का भेद खुल जाता है। इस कारण गुरु जी स्पष्ट करते हैं, कि बहुत सोच-विचार करने के उपरांत यह निर्णय परिपक्व होता है, कि निंदक पापी है और निश्चय ही उसका निवास नर्क में ही होता है।।४।।२।।११।।७।।२।।४९।। जोड़।।

सिद्धांत - निंदक वह है, जो गुणों को दोष कहता है। गुणों को अबगुण कहने वाला महा पापी है और वह सीधा नर्क को जाता है।

शब्द - 32

रामकली वाणी रविदास जीउ की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ
अनभउ भाउ न दरसै॥
लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे
जउ पारसहि न परसै॥१॥
देव संसै गांठि न छूटै॥
काम क्रोध माइआ मद मतसर
इन पंचहु मिलि लूटे॥१॥ रहाउ॥
हम बड कबि कुलीन हम पंडित
हम जोगी संनिआसी॥
गिआनी गुनी सूर हम दाते
इह बुधि कबहि न नासी॥२॥
कहु रविदास सभै नही समझसि
भूल परे जैसे बउरे॥
मोहि अधारु नामु नाराइन
जीवन प्रांन धन मोरे॥३॥१॥[1] **(पृष्ठ ९७३)**

पद अर्थ - पढ़ीए-पढ़ना। **गुनिए**-विचारना। **सुनीए**-सुनना। **अनभऊ**-करतार, परमात्मा, प्रभ। **दरसै**-दर्शन होना। **कचनु हिरन**-शुद्ध सोना। **परसै**-स्पर्श करता है।।१।।

संसै-शंका की, शक की, सन्देह, वहम। **मद**-अहंकार। **मतसर**-ईर्ष्या।।१।। रहाउ।। **बड**-बड़ा। **कबि**-कवि। **सूर**- सूरमे।।२।।

भूलि परे-भूल गए हैं। **बउरे**-बहरे। **आधार**-आसरा।।३।।१।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ९७३-९७४

शब्द का अंतरीव विचार-विधान

गुरु रविदास जी ने समूचे शब्द में स्पष्ट किया है कि खोखली बातों से प्रभ प्राप्ति नहीं हो सकती है। इस कारण उन्होंने बुनियादी समस्या यह बताई है कि पांचों विकारों के शक्तिशाली होने से मन के संशयों से छुटकारा नहीं हो सकता है। साथ ही साथ यह भी स्पष्ट कर दिया गया है, कि संसार के जीव किसी न किसी विकार के कारण अपने-अपने मन और बुद्धि को मलीन कर बैठे हैं। आखिर में गुरु जी स्पष्ट करते हैं, कि इस मलीनता के कारण जीव पागलों की तरह भटक रहे हैं। इन विकारों से मुक्ति तभी मिल सकती है, यदि जीव मन को प्रभ के साथ जोड़ कर उस का सिमरन करे।

इस शब्द की बन्द नंबर 1 में गुरु रविदास जी ने जीव को स्पष्ट किया है, कि पढ़ने, विचारने और प्रभ के सारे नाम सुनने से प्रभ के दर्शन नहीं हो सकते हैं। जिस प्रकार जीव को लोहे से सोना बनाने के लिए उद्यम कर के पारस को लोहे के साथ स्पर्श करना पड़ता है। इस उद्यमी कर्म के कारण ही लोहा सोना बनता है। इस तरह जीव के उद्यम करने से, भाव प्रभ का सिमरन करने से उस के साथ प्रेम करने से, प्रभ का स्पर्श प्राप्त हो जाता है अर्थात् प्रभ के दर्शन हो जाते हैं।

इसी कारण 'रहाउ' में गुरु रविदास जी ने सचेत हो कर पांचों विकारों का नाम ले कर उन को शक्तिशाली ढंग से उभारा है ताकि जीव सचेत हो कर इन से छुटकारा पाने का उपाय करें। इस कारण जीव, प्रभ को संबोधित करते हैं कि, हे प्रभ! काम, क्रोध, लोभ, अहंकार और ईर्ष्या, इन पांचों ने मिल कर हमें पागल कर दिया है और इस कारण मन की शंकाओं से छुटकारा नहीं मिल रहा है।

अगली बन्द नंबर 2 में इस विकारी जीव के अहंकार को व्यक्त कर के उस की मानसिक दशा को नंगा किया है। अत: विकारों के हाथों पागल हुए जीव अपने मन के आंतरिक विकारों को स्पष्ट करते हैं कि हम बड़े कवि हैं, उत्तम कुल में से हैं, हम विद्वान हैं, हम ब्रह्मचारी योगी और संन्यासी हैं, हम ज्ञानी हैं, गुणवान हैं, महान सूरमे और बड़े दानी हैं। इन विकारों के कारण ही जीव की बुद्धि मलीन हो चुकी है और वे कभी भी इन से छुटकारा नहीं पा

सकते हैं।

अन्तिम बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि सारा संसार ही विकारों के कारण पागल हुआ भटकता फिर रहा है, क्योंकि किसी को भी प्रभ के सिमरन का उद्यम करने की समझ नहीं है, जिस कारण विकारों से मुक्ति पा कर प्रभ के दर्शन कर सके। गुरु जी फरमाते हैं कि मैं तो प्रभ का सिमरन कर के विकारों से मुक्त हो गया हूं। इसलिए अब प्रभ के नाम का सिमरन ही मेरे जीवन का आधार है। नाम सिमरन ही मेरे प्राण हैं और नाम सिमरन ही मेरा धन है।

विकारों से छुटकारा पा कर परमानंद की प्राप्ति के लिए जीव को प्रभ के नाम का सिमरन करना चाहिए।

प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों का कथन है,

''गुरु महाराज जी ने 'रामकली राम मनि वसिआ ताँ बनिआ सिंगार।। गुरु शब्दि कमलु विगसिया ता सउपिआ भगउ भंडार।।' लिख कर इस राग का प्रस्ताव स्पष्ट किया है।''[1]

उपरोक्त परिभाषा के अनुसार राग रामकली गाने से प्रभ मन में बस जाता है, ब्रह्मगुरु की बख्शीश से प्रभ के भरपूर प्रेम के कारण मन आनंद में मुग्ध हो जाता है। यह रामकली राग का विषय है। यही विषय गुरु रविदास जी के इस शब्द की बुनियाद है इस में स्पष्ट किया गया है कि प्रभ के सिमरन से चाहे वह कोई भी हो प्रभ प्राप्ति होती है। प्रभ प्राप्ति के आनंद के बिना साधक को अब अन्य रस खोखले लगते हैं और वह प्रभ के प्रेम रस में मुग्ध है।

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ८२

शब्द अर्थ : प्रभ का नाम पढ़ा भी जाता है, विचार भी किया जाता है और प्रभ के हर एक नाम की प्रशंसा भी सुनी जाती है परंतु फिर भी प्रभ के दर्शन नहीं होते हैं। प्रभ के दर्शन हो भी नहीं सकते, क्योंकि जीव पांच विकारों की शक्तिशाली पकड़ के कारण दीवाना हुआ फिरता है। इसलिए जिस प्रकार लोहा पारस के छूने के बिना शुद्ध सोना नहीं बन सकता, उसी तरह जब तक जीव प्रभ का सिमरन कर के प्रभ प्यार में मुग्ध हो कर विकारों से मुक्त नहीं हो जाता है, उस को प्रभ का स्पर्श प्राप्त नहीं हो सकता है।।१।।

हे प्रभ! मुझे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और ईर्ष्या इन पांचों विकारों ने मिल कर तबाह कर दिया है। इसी कारण मन को आंतरिक शंकाओं और भ्रमों से छुटकारा नहीं मिलता अर्थात् मुक्ति नहीं मिलती है।।१।। रहाउ।।

इन विकारों के कारण ही जीव अहंकार में भटके रहते हैं कि हम बड़े कवि हैं, उत्तम कुल के विद्वान हैं, हम ब्रहमचारी, योगी, संन्यासी, आत्मज्ञानी हैं, हम गुणवान हैं, महान सूरमे और बड़े दानी हैं। इस ईर्ष्या आदि विकारों वाली समझ से हम कभी भी छुटकारा नहीं पा सकते।।२।।

इसी कारण गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि ईर्ष्या आदि विकारों के कारण, किसी को भी प्रभ के नाम सिमरन के लिए उद्यम करने की समझ नहीं है। इस कारण सभी पागलों की तरह भटक रहे हैं। गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि मैं प्रभ के सिमरन से ही विकारों से मुक्त हो गया हूं अर्थात् प्रभ के दर्शन हो गए हैं। इसलिए अब प्रभ के नाम का सिमरन ही मेरे जीवन का आधार है। नाम सिमरन ही मेरे प्राण हैं और नाम सिमरन ही मेरा धन है।।३।।१।।

शब्द - 33

राग मारू वाणी रविदास जीउ की

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै॥
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा
माथै छत्रु धरै॥१॥ रहाउ॥
जा की छोति जगत कउ लागै
ता पर तुहीं ढरै॥
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु
काहू ते न डरै॥१॥
नामदेव कबीरु तिलोचनु
सधना सैनु तरै॥
कहि रविदासु सुनहु रे संतहु
हरि जीउ ते सभै सरै॥२॥१॥[1] **(पृष्ठ ११०६)**

शब्दार्थ - लाल-सुंदर प्रभ। **निवाजु**- सत्कार देने वाला। **गुसईया**=प्रभ। **माथै**-मसलना, कुचलना, युद्ध में सफलता प्राप्त करनी। पृष्ठ : 963 **छत्र धरै**-छत्र धारण करने वाला बादशाह, महाराज।।१।। रहाउ।। महान् कोश 486

छोति-छूत, भ्रिष्ट। **ढरै**-पसीजना, रीझना। **निचहु**-अछूत।।१।।

सभै सरै-सब कुछ करने में समर्थ।।२।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ११०६

क्रांतिकारी गुरु रविदास
तथा
शब्द का अंतरीव विचार-विधान

यह शब्द मारू राग में रचित है। भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों ने मारू राग का प्रभाव इस तरह अंकित किया है -

''टिकी हुई आत्मा में, स्वाभिमान जाग उठता है, क्योंकि वहां केवल सत्य टिका होता है। सत्य ही निर्भय, निरवैर है, इसलिए स्वयं धर्म दृढ़ होता है। ऐसी आत्मा में जुर्रत भर जाती है। बेपरवाह हो जाती है, कायरता भाग जाती है, यह मारू का प्रभाव सुनकर ''**शुद्ध न कहे कायर की, जब बाज धुन मारू।**'' फिर मारू राग में वैराग्य भावना की भी प्रधानता होने के कारण इस को प्राणी के अंत समय में गाने की भी प्रथा है। अत: युद्धों और मृत्यु के समय इस राग को गाया जाता है।''[1]

इस शब्द में वैराग्य की भावना नहीं है। 'ऐसी लाल' कह कर, इस शब्द में तो महाबली शूरवीर महान गुरु रविदास जी ने अछूत, शूद्र, गरीब वर्ग के महाबली शूरवीर संतों (गुरुओं) को संबोधन कर के स्पष्ट किया है कि इन्होंने भी हिंदू धर्म के भगवानों के जुल्मों के विरुद्ध निर्भय हो कर क्रांति मचाई है तथा सफलता प्राप्त की है। इसी कारण गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि प्रभ सर्वशक्तिमान है और सब कुछ करने में समर्थ है। गुरु अर्जुन साहिब इस की पुष्टि करते हुये लिखते हैं :

बाबुलु मेरा बड समरथा करण कारण प्रभ हारा।। पृष्ठ ७७८

प्रभ पातशाह सर्वशक्तिमान है। वह स्वयं ही जो चाहता है, वह करता है। उसकी समर्था का कोई विकल्प नहीं, प्रभ पातशाह के वरदान से सतिगुरु रविदास जी ब्रह्मज्ञानी बन गये, गुरु अर्जुन देव साहिब स्पष्ट करते हैं कि ब्रह्मज्ञानी स्वयं परमेश्वर है। इस प्रकार गुरु रविदास जी परमेश्वर पातशाह बन

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ८८

प्रमुख सामर्थ्य के मालक बन गये। इस प्रकार सर्व सामर्थ्य वाले तथा सर्वशक्तिमान अजेय योद्धा बन गये।

मारू राग का दूसरा शब्द 'सुख सागर सुरतरु' हिंदू धर्म के प्रताड़ित और सताए हुए लोगों को संबोधित है।

अत: गुरु रविदास जी ने दोनों शब्दों के तरतीब को बड़ी ही गहरी, गंभीर सोच विचार के बाद निश्चित किया है। 'ऐसी लाल' शब्द में जो कुछ पृष्ठभूमि में विचर रहा है। वह सुख सागर वाले शब्द में प्रत्यक्ष तौर से मुख्य विचार बन गया है।

प्रथम शब्द 'ऐसी लाल' में अछूतों और गरीबों पर सक्रियता के साथ जुल्म करने वाली पृष्ठभूमि में विचर रहे हिंदू धर्म के भगवानों और देवताओं का खंडन किया गया है, जिन्होंने छुआछूत को जन्म दिया है। उन भगवानों और देवताओं आदि के घिनौने जुल्मों का मुंह बोलता मिथ्य इतिहास है, जिस से शूद्र और अछूत त्राहि-त्राहि करते हैं। वे जुल्मों के कारण इतने भयभीत हो चुके हैं, कि उन के ऊपर हो रहे जुल्मों का विरोध करने में समर्थ भी नहीं है। इस कारण हिंदू धर्म के कर्ताधर्ता धर्म के नाम पर भेड़-बकरियों की तरह शूद्रों अछूतों का कत्ल कर देते हैं। आज भी बीसवीं शताब्दी में भी ऐसा कुछ हो रहा है।

हे गरीबों की आन, स्वाभिमान तथा शान प्रदान करने वाले महायोद्धा, प्रभ पातशाह तेरे बिना इस प्रकार की आलौकिक, अलोकारक, करामाती तथा क्रांतिकारी घटना कोई करवा सकता, तूं ही मेरे ऊपर कृपा करके मुझ से ही मेरे दुश्मनों, शास्त्रधारी विरोधियों का नामोनिशान, (मारवै) मिटाकर शत्रु राजाओं की शक्तिशाली सेनाओं को पराजित कर मुझे चक्रवर्ती महाराजा बनाकर बादशाह के ऊपर छत्र (छत्र धरै) झुला दिया।

उपरोक्त अर्थ विषय के अंतरीव मुख्य विचार के अनुसार हैं। गुरु रविदास जी ने इस विषय पर विचार किया तथा परिपक्व भी 'रहाउ' में ही किया है। 'रहाउ' शब्द का सिद्धांत तथा मुख्य विचार होता है। इस विषय (विचार) की परिपक्वता का आधार राग की प्रकृति तथा इसके अनुसार उसके विचारों के दिशा निर्देश ही हैं। इस प्रकार इन विचारों की 'रहाउ' में सृजना करना तथा राग के दिशा निर्देश अनुसार करना समूचे शब्द में निरूपित विचारों की परिपक्वता महत्व तथा महानता का वैज्ञानिक सत्य स्पष्ट हो गया है।

इसी स्थिति को गुरु रविदास जी 'रहाउ' में वर्णन करते हैं, जब राजगुरु की

पदवी मिली तो धर्म-कर्म के बीच परिपक्व महत्वपूर्ण ब्राह्मण संस्थाओं के प्रधान ब्राह्मणों ने अपने ही धर्म खंडन करके गुरु जी को गुरु धारण किया था। उस समय में प्रभ की अपार बख्शीश में प्रभ की सिफत सलाह कर के स्पष्ट करते हैं, कि हे मेरे सोहने प्रभ! आप के बिना ऐसा अलौकिक चमत्कार अन्य कोई नहीं कर सकता मेरा राम! गरीबों को ऊंचे से ऊंचा सम्मान देता है और मेरे जैसे अछूत को राजगुरु की पदवी बख्शीश कर के सिर पर छत्र झूला देना, केवल और केवल आपका ही सामर्थ्य है।

अत: गुरु रविदास जी का राम अछूत 'रविदास' को राजगुरु तथा चक्रवर्ती महाराजा की पदवी बख्शीश करता है। परंतु बाल्मीकि रामायण का राम प्रभ की भक्ति करने के दोष में महर्षि शंभूक का कत्ल करते हैं।[1] इसी कारण गुरु जी ने 'भगवान' विष्णु जिसके अवतार भगवान राम हैं और हिंदू धर्म के शेष सभी सारे भगवानों और देवताओं के किरदार को रद्द किया है।

(उ) हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
तास सम तुलि नही आन कोऊ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥

(अ) गोतम नारि उमापति स्वामी॥
सीसु धरनि सहस भग गांमी॥४॥

अत: इसलिए इस अलौकिक चमत्कारी विचारधारा और आश्चर्यजनक घटना ने गरीब शूद्रों और अछूतों को उत्साहित किया है कि वे कायरता को त्याग कर निर्भय बनें। अकेले योद्धा बन कर अपने महान सत्कार की सुरक्षा के लिए क्रांति मचाएं। गुरु रविदास जी ने, राजगुरु की पदवी क्रांति मचाने के बाद ही प्राप्त की है।

बन्द नंबर 1 में हिंदू धर्म के भगवानों, देवताओं और ऋषियों की विचारधारा के कारण उत्पन्न धार्मिक और सामाजिक कोहड़ को स्पष्ट कर के उस को रद्द किया गया है। गुरु जी फरमाते हैं कि हिंदू धर्म के अनुसार जिस अछूत के छूने से 'भगवान, देवते' ऋषि और समूचा संसार भ्रष्ट हो जाता है, उन भगवानो को आदि के कारण जिस को प्रभ की भक्ति करने के आरोप में मौत की सज़ा दी

1. श्रीमद बाल्मीकि रामायण : अनुवादक चतुर्वेदी द्वारका प्रशाद शर्मा : १०.७६.४

जाती है, (शंभूक) उस मंदिर की ओर देख तक नहीं सकता, अंदर जाने का तो सवाल ही नहीं है। वेद उच्चारण करने के कारण जीभ काटी जाती है और सुनने के कारण कानों में सिक्का ढाल कर भर दिया जाता है। अनेकों ऐसे अन्य जुल्म किए जाते हैं। गुरु रविदास जी ने जुल्मों को खत्म करने के लिए सफल क्रांति की और राजगुरु की पदवी प्राप्त की। इस सफल हुई क्रांति का शुक्राना करते हुए रविदास जी फरमाते हैं कि हे सुंदर प्रभ! आप ऐसे हालात के होते हुए भी मुझ अछूत को राजगुरु की पदवी प्रदान कर के नीचे से अति नीच, को ऊंचे से ऊंचा बना दिया है, ऐसा करते समय प्रभ आप किसी से डरते नहीं हैं।

इस प्रकार हिंदू धर्म की अन्याय और अत्याचार पूर्ण विचारधारा को प्रभ ने ही नष्ट कर दिया है और एक अछूत को राजगुरु की पदवी पर विराजमान कर दिया है। इस से बड़ी और क्रांति क्या हो सकती है? इस अलौकिक घटना ने हिंदू धर्म की विचारधारा नष्ट कर दी है। इसने हिदुओं के भगवानों, देवताओं और ऋषियों को भी रद्द कर दिया है। यह हर तरफ से संपूर्ण तबदीली है। संपूर्ण तबदीली ही सही अर्थों में क्रांति है। इस क्रांतिकारी घटना को स्पष्ट रूप में गुरु जी संबोधित कर के ही महान क्रांतिकारी लहर का सफल आरंभ करते हैं।

बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी सर्व सतगुरु नामदेव, कबीर, त्रिलोचन, सदना और सेन का ज़िक्र करते हैं। गुरु त्रिलोचन वैश्य हैं और बाकी सभी शूद्र हैं। गुरु जी राजगुरु की पदवी प्राप्त करने के बाद इन संतों को संबोधित करते हुए उन की गवाही देते हैं कि इन्होंने ही क्रांति मचा कर हिंदू धर्म के भगवानों और देवताओं को रद्द किया है और एक निर्भय और निरवैर प्रभ का प्रचार कर के बड़ी शान से धर्म युद्ध जीता है।

इस जीत के पीछे यह महान संत चैन से नहीं बैठे, बल्कि सभी ने क्रांति मचा दी थी। गरीबों शूद्रों और अछूतों में जुर्रत भरी, निर्भय बनाया, स्वाभिमानी बना कर क्रांति मचाने का हुक्म दिया। जिस कारण आज भी बीसवीं शताब्दी में क्रांतिकारी विचारधारा एक लहर का रूप धारण कर गई है, जिस कारण हिंदू धर्म के ठेकेदार आप अपने ही धर्म ग्रंथों को संशोधित कर के तबदील करने पर मजबूर हो गए हैं, गवाही के तौर पर 'गीता प्रेस गोरखपुर' द्वारा प्रकाशित बाल्मीकि रामायण है। जिस में से 'शंभूक' कत्ल कांड को निकाल दिया गया है।

इस का प्रमाण 'सुखसागर सुरतरु' वाले मारू राग वाले शब्द में भी उपलब्ध है। इस शब्द में वे भगवानों, देवताओं के साथ उन के धर्म ग्रंथों को भी रद्द कर देते हैं, फिर गुरु जी हिंदू धर्म के धार्मिक ग्रंथों वेदों, पुराणों और शेष सभी सारे धर्म ग्रंथों को महर्षि वेदव्यास द्वारा रद्द करवा कर परिपक्वता के साथ हिंदू धर्म को सदा-सदा के लिए नष्ट कर देते हैं, जिस को बाद में पंजाब के सिख गुरु साहिबानों ने भी पूरी शक्ति के साथ हिंदू धर्म के ग्रंथों 'भगवानों', देवताओं आदि का खंडन उस नींव पर ही किया है, जिन पर उपरोक्त गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी आदि ने किया है।

अत: गुरु रविदास जी को खूंखार हिंदू धर्म की विचारधारा जिस को लागू करने वाले अत्याचारी राजाओं, महाराजाओं और ब्राह्मणों के विरुद्ध क्रांति मचा कर धर्म युद्ध लड़ना पड़ा है तथा विजय प्राप्त की है। इसलिए उनका क्रांतिकारी होना जरूरी ही बुनियादी तौर से स्वाभाविक है। एक क्रांतिकारी केवल तबदीली ही कर सकता है। गुरु जी ने तबदीली ही नहीं की, बल्कि हिंदू धर्म की विचारधारा को नष्ट कर के उस की जगह एक नए सृजित धर्म की विचारधारा अनुसार अमली रूप में विचर भी रहे हैं। अत: हर पक्ष और हर रूप में गुरु रविदास जी क्रांतिकारी ही हैं।

इस कारण गुरु रविदास जी 'ऐसी लाल' शब्द की प्रथम बन्द से लेकर अन्तिम बन्द तक प्रभ पातशाह की अद्भुत अनुमानहीन अजेय महाशक्ति का वर्णन करते हैं कि इस अथाह शक्ति का कोई विकल्प नहीं। यह तथ्य 'ऐसी लाल' को 'माथे छत्र धरे' के साथ मिलाकर अर्थ करने से ही ''राग मारू की प्रकृति में निरूपत विचार'' की सही तथा सार्थक व्याख्या द्वारा शक्तिशाली क्रांतिकारी, हथियारबंद अथाह अनंतशक्ति का प्रमाण उपलब्ध होता है। यह उपलब्धि दरअसल प्रभ पातशाह की ही मूलभूत अथाह तथा अनुमानहीन अनंत शक्ति को ही प्रकट करती है। दूसरे अर्थों में गुरु रविदास जी की प्रभ पातशाह के साथ गहरी तथा घनी एकरूपता तथा एकस्वरता होने के कारण प्रभ पातशाह भी गुरु रविदास जी को प्रदान की गई समूची अनुमानहीन, अनंत, अथाह क्रांतिकारी हथियारबंद शक्ति का प्राकृतिक रूप प्रकट होने का प्रमाण है।

इस कारण 'ऐसी लाल माथै छत्र धरै' अर्थात् अद्भुत अनुमानहीन महाशक्ति का प्रभ पातशाह की ओर से गुरु रविदास जी को वरसोया जाना ही अपने आप में बड़ी-बड़ी शक्तिशाली हथियारबंद महाराजाओं की सेनाओं पर विजय एक

महान तथा अनक्यासी दुर्लभ महाशक्ति का प्रमाण है।

चक्रवर्ती महाराजा बनने के पश्चात् छत्र उठाने का प्रमाण है-

उपरोक्त से स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी ने अपनी अजय शक्तिशाली सेनाओं के कारण ही विश्व के महाराजाओं की सैन्य शक्ति मलियामेट (नष्ट) करके निर्णायक विजय प्राप्त की। गुरु रविदास जी परिपक्वता के साथ स्पष्ट करते हैं कि शक्तिशाली अनक्यासी जीत दरअसल प्रभ पातशाह की ही विजय है:

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै॥
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा
माथै छत्रु धरै॥१॥ रहाउ॥
जा की छोति जगत कउ लागै
ता पर तुहीं ढरै॥
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु
काहू ते न डरै॥१॥

उपरोक्त अद्भुत अनुमानहीन जीतों ने गुरु रविदास जी तथा गुरु अर्जुन जी के निम्नलिखित सिद्धांत को सत्य साबित कर दिया है :

(1) कहि रविदासु सुनहु रे संतहु
हरि जीउ ते सभै सरै॥२॥१॥ (पृष्ठ ११०६)

(2) बाबुलु मेरा बड समरथा
करण कारण प्रभ राहा।।

गुरु अर्जुन देव जी पृष्ठ 778

शब्दार्थ - हे सुंदर प्रभ! आप गरीबों के सहारा बन कर उन को मान सम्मान प्रदान करते हैं। यहां तक कि आप उन को ऊंचे से ऊंचा, सम्मान प्रदान कर उन के सिर पर छत्र झुला देते हैं। जिस प्रकार मेरे जैसे अछूत को राजगुरु की पदवी प्रदान कर सिर पर चवर झुला दिया है। हे प्रभ! ऐसा अलौकिक चमत्कार आप के बिना और कोई नहीं कर सकता।

यह घटना हिंदू धर्म की विचारधारा और उन के कल्पित भगवानों और देवताओं के किरदार से बिल्कुल विपरीत है। यह खूनी क्रांतिकारी तबदीली है।।१।। रहाउ।।

हे प्रभ! जिन के छूने से भगवान देवता और संसार के लोग भ्रष्ट हो जाते हैं, जिन को अछूत कह कर तिरस्कार किया जाता है उन के बचाव के लिए आप ढाल बन कर आते हैं। इन नीचों से नीच अछूतों को आप ऊंचे से ऊंचा बना कर उच्च कर के सम्मानित करते हैं। ऐसा करते हुए आप किसी से नहीं डरते और प्रभ सिमरन करने वाले को भी निर्भय बना देते हैं।

यह छुआछूत, जात पात हिंदू धर्म के भगवान ब्रह्मा की बनाई हुई है। (ऋग्वेद 10.10, 11-12) ब्रह्मा खुद प्रभ का सृजन है। इसलिए छुआछूत आदमी ने बनाई है, प्रभ ने नहीं। इस प्रथा का प्रभ के प्रबंध में ज़िक्र तक नहीं है।

अत: इस बन्द में भी हिंदू धर्म को रद्द किया गया है और इस एक नए धर्म की विचारधारा अस्तित्व में आई है, जो समूचे विश्व के लिए है। यह भी एक क्रांतिकारी तबदीली है और 'रहाउ' इस की पुष्टि करती है।।१।।

गुरु रविदास जी इस नए धर्म की विचारधारा की परिपक्वता के लिए सर्व गुरु नामदेव, कबीर, त्रिलोचन और सेन जी की गवाही देते हैं। गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि ये सभी महापुरुष उपरोक्त नई विचारधारा के कारण ही प्रभ को प्राप्त हुए हैं, वे भी क्रांतिकारी हैं।

इसलिए गुरु रविदास जी संतों को संबोधित करते हुए फरमाते हैं, कि हे सन्तो सुनो! प्रभ बड़ी-बड़ी अलौकिक घटनाओं को कर देते हैं। अछूतों को राजगुरु बना देते हैं, अन्याय को खत्म कर देते हैं, ऐसा वही करता है, जो किसी

से नहीं डरता है। ये सब कुछ करने की सामर्थ्य रखते हैं। इसलिए प्रभ का सिमरन हर एक को निर्भय बना देता है।

अत: आप भी इस नई सृजित विचारधारा के अनुसार समाज को निर्भय बना कर, अन्याय भरपूर धर्मों को बदलने के लिए क्रांति मचा दो।।२।।१।।

शब्द - 34

राग मारू वाणी रविदास जीउ की

੧ੴ सतिगुर प्रसादि।।

सुख सागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जा के रे॥
चारि पदारथ असट महा सिधि नव निधि कर तल ता कै॥१॥
हरि हरि हरि न जपसि रसना॥
अवर सभ छाडि बचन रचना॥१॥ रहाउ॥
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही॥
बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही॥२॥
सहज समाधि उपाधि रहत होइ बडे भागि लिव लागी।
कहि रविदास उदास दास मति जनम मरन भै भागी॥३॥२॥[1]

(पृष्ठ ११०६)

पद अर्थ - **रे**-उ, अरे। '**उ**=संबोधन, हे! रे! उ! छोटे दर्जे के आदमी को 'उ' शब्द के साथ बुलाते हैं।'[2] '**अरे**= संबोधन शब्द, हे! अरे! शब्द के साथ छोटे दर्जे के आदमी को बुलाते हैं।'[3] **रे**= हे हिंदू धर्म के लताड़े और सताए लोगो! (ध्यान देने वाला अति महत्वपूर्ण तथ्य (Fact) यह है, कि राग सोरठ में 'नवनिधि करतल ताके।।' तुक के साथ 'रे' शब्द नहीं है, कारण - प्रभ को 'उ' या 'अरे' कह कर संबोधित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि सर्व सृष्टि, प्रभ के हुक्म के अधीन काम करती है। इस कारण वह सबसे ऊंचा है। इस तथ्य से स्पष्ट हो गया है कि प्रस्तावना नंबर 1 की पहली तुक के अंत में दर्ज 'रे' छोटे दर्जे के लोगों के लिए ही प्रयोग किया गया है।) **जपसि**=जप करता, जपेगा। उदास दास=बैचेन दास। **मति**=सेवक की मत विकारों से ऊपराम रहती है।

नोट बाकी पद अर्थ पृष्ठ नंबर 187 पर देखे।

---

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ११०६ 2. महान कोश - १६ 3. वही - ६२

समूचे शब्द की विचारधारा और राग

जितने भी शब्द गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं, उन की रचना लगभग रागों में ही हुई है। इसलिए प्रत्येक शब्द में दर्ज विचार और संबंधित राग का आपसी गहरा और अटूट संबंध है। इसीलिए यह अत्यंत ज़रूरी है, कि इन शब्दों के अर्थ संबंधित राग के निर्देशन के अनुसार ही किए जाएं। राग को आधार न बना कर हम दो अति घातक गलतियां करेंगे।

1. शब्दों के बुनियादी तौर पर अर्थ गलत हो जाएंगे और आंतरिक भाग भी गलत हो जाएगा।

2. शब्द की विचारधारा भी बुनियादी तौर से स्पष्ट रूप में गलत हो जाएगी।

उपरोक्त घातक गलतियों से बचने के लिए राग के स्वभाव और गुणों के अनुसार शब्दों का अर्थ करना अत्यंत ज़रूरी है। यह तथ्य अभी तक विद्वानों ने टिप्पणी करते समय ध्यान में नहीं रखा है। अत: अटल सिद्धांत है और अटल सच्चाई भी है, कि गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हर शब्द संबंधित राग के मार्गदर्शन के अधीन ही रचा गया है। इस महत्वपूर्ण तर्क के कारण राग के निर्देशन अनुसार ही उस शब्द की विचारधारा की उत्पत्ति और पद अर्थों की खोज भी अति ज़रूरी है।

यहाँ तक कि अकेला एक शब्द जो दो रागों के अन्तर्गत दर्ज है, तो यकीनन उन दोनों रागों के मार्गदर्शन या निर्देशन के कारण दोनों शब्दों में निरूपित विचारधारा एक नहीं रहती, वह संबंधित राग के स्वभाव और गुणों के अनुसार बदल जाती है तथा केवल और केवल एक विचारधारा मूलभूत तौर से दो विचारधाराएँ बन जाती है।

इस चर्चा से गुरबाणी के अर्थों को समझने परखने का एक बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्धांत जन्म लेता है। गुरु ग्रंथ साहब में दर्ज हर शब्द के अर्थ संबंधित राग को समझे बिना नहीं किए जा सकते हैं। अत: शब्द के अर्थ करने के लिए संबंधित राग के मार्ग दर्शन या निर्देशन के अनुसार शब्द का अध्ययन और सोच विचार ज़रूरी है।

गुरु ग्रंथ साहिब का हुकम है, गुरु अर्जन देव जी का हुक्म है और गुरु रविदास जी का हुक्म है, कि वाणी को संबंधित राग के निर्देशन में ही गाना चाहिए। राग ही इस ढंग के साथ गाना चाहिए, ताकि राग का स्वभाव शब्द के गाते समय स्पष्ट रूप में शब्द के बीच निरूपित आत्मा को राग के अनुसार मूर्तिमान किया जा सके। यह परिपक्व तौर से स्पष्ट है कि शब्द को संबंधित राग में गाने से उस के अर्थों को समझने में गलती नहीं लग सकती।

परंतु गुरबाणी के अर्थ करते समय 99% विद्वानों ने राग के निर्देशन को बिल्कुल ही अनावश्यक समझकर त्याग दिया है। जिस कारण विद्वान शब्द के सही अर्थ करने में असमर्थ हो रहे हैं और पूरी तरह गलत साबित हो गए हैं। गलती करने वाले ऐसे प्रसिद्ध विद्वानों में डॉक्टर साहब सिंह और डॉ भाई जोध सिंह हैं। दोनों ने ही गुरु रविदास जी के शब्द 'सुख सागर सुरतरु चिंतामणि' के अर्थ गलत किए हैं। गुरु ग्रंथ साहिब में यह शब्द राग सोरठ और राग मारू में दर्ज हैं। डॉक्टर साहब सिंह लिखते हैं।

> **नोट** - ''गुरु रविदास जी का यह शब्द थोड़े से फर्क से सोरठ राग में भी है। इस का अर्थ यह है कि यह शब्द दोनों रागों के बीच गाया जाना चाहिए। इस शब्द के पद अर्थ देखो सोरठ राग के बीच शब्द नंबर 4 गुरु रविदास जी का।''[1]

उपरोक्त गद्यांश स्पष्ट करता है कि डॉक्टर साहब सिंह इस तथ्य से पूरी तरह अनभिज्ञ और अनजान हैं कि हर एक राग का अपना स्वभाव होता है और उस के अपने गुण होते हैं। डॉक्टर साहब सिंह इस तथ्य से भी पूरी तरह अनजान है कि उपरोक्त शब्द सोरठ राग में गाने से और अर्थ होंगे और मारू राग में गाने से यह शब्द के अर्थ पूरी तरह मुकम्मल तौर से बदल जाएंगे तथा क्रांतिकारी स्वर प्रधान बन जाएगी। इस प्रकार डॉक्टर साहब सिंह के मारू राग में किये गए इस शब्द के अर्थ गलत हैं।

यही हाल भाई जोध सिंह का है, वह 'भगत रविदास जीवन ते रचना' के पृष्ठ नंबर 45 पर लिखते हैं।

'यह शब्द आगे सोरठ राग में आ चुका है। थोड़ा सा भेद है। अत: उन शब्दों का अर्थ दिया जाता है।'

---

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण (पोथी आठवीं) - पृष्ठ : १२०

नोट - यहां पूरे शब्द के अर्थ नहीं किए गए हैं। ये दोनों विद्वान गुरबाणी के अर्थ करने के लिए सिख जगत में सब से बड़े विद्वान माने गए हैं। इन दोनों विद्वानों ने ही गुरबाणी के अर्थ करते समय राग की विशेषता को नहीं समझा और न ही राग के स्वभाव और गुणों को वाणी के साथ जोड़ कर इस के अर्थ जानने की कोशिश की है। स्पष्ट है दोनों विद्वानों ने गुरुवाणी के अर्थ करते समय राग को अनावश्यक समझ कर त्याग दिया है। परिणाम अचूक और स्पष्ट हैं - गुरबाणी के अर्थ हर हालत में गलत कर दिए गए हैं। खास कर राग मारू के अधीन आई गुरबाणी के।

उदाहरण के लिए इस सिद्धांत का अमली रूप और शब्दों के बीच राग के कारण आई विचारधारा में तबदीली के कारण भी स्पष्ट हो जाएंगे। गुरु रविदास जी का शब्द 'सुख सागर सुरतरु चिंतामणि' राग सोरठ में भी दर्ज है और राग मारू में भी। राग मारू में दर्ज शब्द के बीच केवल नीचे लिखे शब्द बदले हुए हैं -

हरी के रस को पीकर नहीं आयेगी तथा इस संसार में तथा परलोक में गुरसिख की सोच सामान्य होगी।

शब्द राग सोरठ।	**शब्द राग मारू**
1. नहीं है।।	1. रे
2. दसा।	2. महा
3. जपहि।	3. जपसि
4. तिआगि।	4. छाड़ि
5. अखर।	5. अछर
6. फुनि।	6. होइ
7. परगास रिदै धरि।	7. उदास दास मत

अत: गुरु रविदास जी की मारू राग में की गई शब्दों में तबदीली राग मारू के क्रांतिकारी सुभा तथा बार (लड़ाई) की ज़रूरत को पूरा करने के लिये ज़रूरी था। क्रांतिकारी युद्ध के लिये खड़कवे शब्दों का उपयोग करके मन में क्रांतिकारी युद्ध के लिये जुर्रत भरने के लिये हर स्थिति में ज़रूरी था। अत: गुरु रविदास जी ने कुछ विशेष शब्दों में तबदीली करके मूल निवासी अछूतों में क्रांतिकारी जुर्रत को कूट-कूट कर भर दिया तथा कायर मूल निवासी अछूतों में महाबलि क्रांतिकारी योद्धा बनाकर शुत्रुओं, अत्याचारियों के साथ युद्ध लड़कर

विजय प्राप्त की।

रे शब्द के बिना उपरोक्त शब्दों के अंतर के कारण अर्थों में कोई अंतर नहीं है परंतु संबंधित रागों के मार्गदर्शन या निर्देशन के कारण दोनों रागों में स्थित केवल एक ही शब्द की दो अलग-अलग विचारधाराएँ विकसित हो गई हैं। सोरठ राग में उच्चारण किया गया गुरु रविदास जी का यह शब्द ब्राह्मणों को संबोधित किया गया है और समझाया गया है कि वे स्वर्ग के पेड़ चिंतामणि, कामधेनु, चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) अठारह सिद्धियों और नौ निधियों ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि के हाथ में नहीं है। यह सब कुछ तो प्रभ के ही वश में है। उस प्रभ ने हीं ब्रह्मा, विष्णु, महेश सहित उपरोक्त सभी पदार्थों का सृजन किया है। गुरु रविदास जी ने यह भी स्पष्ट तौर से हुक्म दिया है कि जो कुछ भी चौतीस अक्षरों (नागरी लिपि के बाबन नहीं चौतीस अक्षर हैं) के बीच अर्थात् संस्कृत में जितना भी धार्मिक ग्रंथ और साहित्य रचा गया है, उस को त्याग कर केवल प्रभ का ही सिमरन करो।

उपरोक्त विचार ब्राह्मणों को बड़े ही ठंडे दिमाग से शांत चित रह कर इंसानियत के नाते प्यार भावना के साथ समझाए हैं, परंतु प्यार भावना के साथ समझाई चमार रविदास की बात उच्च जाति के ब्राह्मणों के अहंकार को ठेस पहुंचाती है। इस कारण शुरू से ही ब्राह्मणों ने उन की बात को स्वीकार नहीं किया है।

बहुत समय तक इंतज़ार करने के बाद गुरु रविदास जी ने उपरोक्त शब्द में कुछ मामूली तबदीली कर के मारू राग में दर्ज कर दिया है। यह परिवर्तन कर के गुरु रविदास जी ने इस शब्द में सताए और लताड़े हुए लोगों को अर्थात् शुद्ध अशुद्ध आदि को संबोधित कर के उपरोक्त पदार्थों की असलीयत को स्पष्ट कर के क्रांति मचाने का आदेश दिया है, और यह भी स्पष्ट किया है कि चौतीस अक्षरों में संस्कृत में लिखे हिंदुओं के धार्मिक ग्रंथों और सारे साहित्य को छोड़े बिना नष्ट किए बिना क्रांति नहीं बचाई जा सकती है।

इसलिए गुरु रविदास जी ने आदेश दिया है कि प्रताड़ित किए गए और सताए हुए लोगो! हिंदू धर्म ग्रंथों की विचारधारा और कर्मकांडों के पाखंडों से मुक्त हो कर अपनी धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और कानूनी आज़ादी के लिए क्रांति मचा दो। इस तरह मारू राग के निर्देशन में गाने से इस शब्द की विचारधारा का मूलभूत प्रभाव बदल गया है। इस राग के निर्देशन में यह

विचारधारा जुझारू (क्रांतिकारी) बन गई है और प्रताड़ित किए गए और सताए हुए लोग योद्धा बन गए हैं। इस कारण इस शब्द में निर्भय बन कर क्रांति मचाने का हुक्म है।

राग मारू जीव में प्रभ प्रेम जगा कर अर्थात् परिवर्तित मन में प्यार भरपूर परिपक्व आचरण पैदा कर के क्रांति मचाने के लिए भावना भरता है। इस राग के अधीन इस शब्द का उद्देश्य हिंदू धर्म की विचारधारा को रद्द कर के जोश और तर्क के साथ प्रभ प्रेम की रंगत चढ़ा कर नई विचारधारा से क्रांति मचाना है। भारत के प्रमुख संगीत शास्त्रियों का कथन है :-

> ''टिकी हुई आत्मा के बीच स्वाभिमान जाग उठता है, क्योंकि वहां केवल सच टिका होता है। सच है, निर्भय, निर्वैर है। इसलिए स्वयं धर्म (आपा धर्म) दृढ़ होता है। ऐसी आत्मा में जुर्रत भर जाती है। बेपरवाह हो जाती है, कायरता खत्म हो जाती है, यह है मारू का प्रभाव सुन के सुध न रहे, कायर की, जब बाजे धुन मारू। फिर मारू राग में वैराग्य भावना की ही प्रधानता होने के कारण इस को प्राणी के अंतिम समय पर गाने की भी प्रथा है। युद्धों के समय और मृत्यु के समय इस राग को गाया जाता है।''[1]

भाई काहन सिंह नाभा का भी यही विचार है। वे लिखते हैं,

> ''यह (मारू) राग युद्ध और जीवन के अंतिम समय खास कर तथा दिन के तीसरे पहर साधारण नीति के अनुसार गाया जाता है।''[2]

इस शब्द में वैराग्य की भावना का अभाव है। इस शब्द में तो बल्कि हिंदू धर्म की विचारधारा को बदल कर इस की जगह नए धर्म की क्रांतिकारी विचारधारा को स्थापित किया गया है। यह क्रांतिकारी विचारधारा हिंदू धर्म के प्रताड़ित और सताए हुए अछूतों, शूद्रों, (अछूत sc-st पिछड़ी श्रेणियों B C) और गरीबों को स्वाभिमानी बनाती है। कायरता को नष्ट करके जुर्रत पैदा करती है, निर्भय बनाती है। स्पष्ट रूप में बिना किसी संकोच से गुरु रविदास जी की इस क्रांतिकारी विचारधारा के रास्ते पर चलते हुए हर क्षेत्र में क्रांति मचाने के लिए यौद्धा पैदा करती है। वास्तव में ऐसे यौद्धा ही बेगमपुरा, विश्व वतन का सृजन का आधार है।

---

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ८८
2. महान कोश - ७२४

इस प्रकार दोनों शब्दों से यही स्पष्ट हो गया है, कि इन शब्दों के अर्थ करते समय राग को आंखों से ओझल नहीं किया जा सकता है। दरअसल राग ही है जो साधक और खोजी को शब्द की दुरात्मा के साथ एकम एक कर के अर्थों के अंतरीव भाव तक ले जाने का साधन बनता है। इसलिए राग के प्रसंग में रख कर पड़ताल किए बिना शब्द के सही अर्थों तक पहुंचना कठिन है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द में हिंदू धर्म द्वारा प्रताड़ित और सताए गए लोगों को संबोधित किया गया है। हिंदू धर्म का नाम इस कारण आया है, क्योंकि सवर्गों के वृक्ष, चिंतामणि और कामधेनु आदि का हिंदू धर्म के देवताओं से संबंधित हैं। खास कर के स्वर्ग के इंद्र देवता के साथ चार पदार्थ आठ बड़ी-बड़ी सिद्धियां और नौ खजानों का ज़िक्र हिंदू धर्म ग्रंथों में दर्ज है। प्रत्यक्ष तौर से इस शब्द में वेदों, पुराणों और बाकी समूचे हिंदू धर्म ग्रंथों को रद्द किया गया है।

इसलिए बन्द नंबर 1 में गुरु रविदास जी संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि हिंदू धर्म के प्रताड़ित और सताए हुए लोगो! ये ब्राह्मण लोग हिंदू धर्म ग्रंथों का हवाला दे कर कहते हैं, कि इस सवर्गों के पांच वृक्ष मन में सोची हुई हर इच्छा को पूरा करने वाली चिंतामणि, मन की हर कामनाओं को पूरा करने वाली कामधेनु, इंद्र देवता के स्वर्ग में हैं। उस के वश में हैं। चार पदार्थ, आठ बड़ी सिद्धियां और नौ खजाने देवताओं के हैं। पर यह गलत है, क्योंकि जिस सुखों के समुद्र प्रभ के पास स्वर्ग के वृक्ष चिंतामणि कामधेनु है, उसी एक प्रभ के हाथों की तलियों के चार पदार्थ, आठ बड़ी सिद्धियां और नौ खजाने हैं। हिंदू धर्म के ये भगवान देवी-देवताओं को पैदा करने वाला भी वही प्रभ है। इसलिए उस तक प्रभ के बिना कोई भगवान या देवी देवता नहीं है। इसलिए हे प्रताड़ित हुए लोगो! हिंदू धर्म की विचारधारा को नष्ट कर के नए धर्म की विचारधारा समझो और इस को परिपक्व करके क्रांति मचा दो।

'रहाउ' में स्पष्ट तौर से गुरु रविदास जी हुकुम करते हैं कि नए धर्म के अनुसार आराधना करो, इसलिए 'रहाउ' में बैरागी मन की नहीं, बल्कि क्रांतिकारी मन का सृजन किया गया है। प्रताड़ित हुए लोगों को हुक्म है कि वह हिंदू धर्म की विचारधारा को नष्ट करके अपनी विचारधारा के अनुसार प्रभ का सिमरन कर के क्रांतिकारी क्रांति में जाओ। वैरागी मन तबदीली नहीं लाता है। तबदीली का अर्थ है, क्रांति। अत: क्रांति मचाने का महान काम तो जोश के साथ भरे जुर्रत के साथ ओतप्रोत निर्भय मन का है। अत: इस शब्द की बुनियाद क्रांतिकारी तबदीली है।

बन्द नंबर 2 में गुरु जी हिंदू धर्म की नष्ट की गई विचारधारा को महर्षि वेदव्यास द्वारा रद्द करवा कर इस को मूलभूत तौर से नष्ट कर देते हैं। यह एक ऐतिहासिक क्रांतिकारी घटना है। महर्षि वेदव्यास का क्रांतिकारी कथन है, पुराणों के राजा महाराजाओं के मिथ्य इतिहास को खोज कर के, विश्लेषण कर के ब्रह्मा द्वारा रचे वेदों का और देवनागरी लिपि के चौतीस अक्षरों अर्थात् समूची संस्कृत भाषा में जो भी हिंदू धर्म ग्रंथ रचे गए हैं, का पूरी तरह गहनता के साथ अध्ययन करने के बाद सोच विचार कर के यह महान क्रांतिकारी परम तत्व की अटल सच्चाई बताई है, कि वेद, पुराण आदि हिंदू धर्म ग्रंथ प्रभ नाम सिमरन के बराबर नहीं है। इस तरह गुरु जी ने निर्भय होकर बड़ी स्पष्टता के साथ हिंदू धर्म की विचारधारा को नष्ट किया गया है और अपने क्रांतिकारी धर्म की विचारधारा की पुष्टि भी कर दी है।

बन्द नंबर 3 में गुरु जी अपनी नई सृजित विचारधारा का अमली रूप पेश करते हैं। गुरु जी फरमाते हैं,कि हे प्रताड़ित लोगो! वे लोग बड़े सौभाग्यशाली हैं, जिन्होंने विकारों से रहित हो कर प्रभ के साथ अंतर्ध्यान हो कर सुरति जोड़ ली है। इस प्रकार वे विकारों पर काबू पा लेते हैं और जन्म मरण के भय से मुक्त हो जाते हैं। परिणाम स्वरूप ऐसी आत्मा में जुर्रत भर जाती है, बेपरवाह हो जाती है, कायरता नष्ट हो जाती है। इस तरह योद्धा बनी हुई आत्मा क्रांति मचा देती है।

विचारधारा में आई क्रांतिकारी तबदीली खास कर इस आधी तुक 'कहि रविदास उदास दास मति' के कारण निरूपित हुई है। इस तुक के अनुसार प्रताड़ित हुए (सेवक) लोग हर प्रकार की उदासीनता से उपराम आम हो जाते हैं। जन्म मरण के भय से मुक्त हो जाते हैं तथा महाबलि योद्धा बन जाते हैं। इस तरह सताए हुए लोग निर्भय योद्धा बन कर क्रांति मचाते हैं।

इस तरह गुरु रविदास जी मारू राग में इस शब्द द्वारा सताए हुए लोगों को निर्भय बना कर अपने धार्मिक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक हकों के लिए क्रांति मचाते वास्तव में युद्ध लहते हैं। इसका अमली रूप 'बेगमपुरा शहर को नाउ' 'तुम चंदन हम इरंड बापरे' तथा अन्य अनेक शब्दों में निरूपित है।

अत: इस शब्द में गुरु रविदास जी का क्रांति मचा देने का हुक्म हे सताए हुए लोगो! आत्मिक और सदाचारिक तौर से परिपक्व हो कर निर्भय योद्धा बन कर और क्रांति मचा दो और अपने हक प्राप्त करो।

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी संबोधित करते हुए फरमाते हैं कि हे हिन्दू धर्म के सताए हुए प्रताड़ित लोगो! ब्राह्मणों के धार्मिक ग्रंथों के अनुसार स्वर्गों के पांच वृक्ष चिंतामणि, कामधेनु इंद्र देवता के स्वर्ग में हैं और चारों पदार्थ, आठ बड़ी सिद्धियों, नौ खजाने, देवताओं के हाथ में हैं। यह सब गलत है, क्योंकि स्वर्ग के वृक्ष चिंतामणि कामधेनु सुखों के समुद्र प्रभ के वश में है, उस के ही हाथों की हथेलियों पर चार पदार्थ आठ बड़ी सिद्धियां और नौ खजाने हैं। हिंदू धर्म के अनुसार बताए इन के मालिक देवता भी तो इस एक प्रभ के ही पैदा किए हुए हैं। अत: हे सताए और प्रताड़ित लोगो! हिंदू धर्म की विचारधारा और नित्य इतिहास को नष्ट कर के एक नई सृजित विचारधारा के अनुसार प्रभ का सिमरन करो।।१।।

इसलिए सताए हुए लोगो! अन्य सब विचारधाराओं को त्याग दो, नष्ट कर दो और नई विचारधारा के अनुसार प्रभ का सिमरन करो। अत: गुरु जी ने हिंदू धर्म द्वारा सताए लोगों की नई क्रांतिकारी मानसिकता को सृजने के लिए, पुराने विचारधारावादी सिद्धांतों का खंडन कर नए सिद्धांत के सृजन के अनुसार प्रभ का सिमरन करने का हुक्म दिया है।।१।। रहाउ।।

महर्षि वेदव्यास ने इस क्रांतिकारी विचारधारा की तबदीली को अपने अध्ययन से पूरी तरह सोच-विचार कर स्पष्ट किया है। महर्षि व्यास ने पुराणों के अनेकों प्रसंगों का ब्रह्मा के वेदों का और देवनागरी लिपि के चौतीस अक्षरों अर्थात् समूची संस्कृत भाषा में जो भी रचा गया है, उस का गहनता से अध्ययन कर के सोच विचार कर, हिंदू धर्म की विचारधारा और मिथ्य इतिहास को रद्द कर के और इस की जगह नई स्थापित की गई विचारधारा की पुष्टि की है। इस कारण व्यास जी ने अपने कथन में स्पष्ट किया है कि हिंदू धर्म ग्रंथ वेद, पुराण आदि प्रभ नाम के सिमरन के बराबर नहीं हैं।।२।।

इसलिए गुरु जी अपने धर्म की विचारधारा का अमली रूप पेश करते हैं। वह फरमाते हैं, कि हे सताए हुए लोगो! वे लोग बड़े सौभाग्यशाली हैं, जिन्होंने विकारों से रहित अन्तर्ध्यान हो कर अपनी सुरति प्रभ के साथ जोड़ ली है। वे लोग मोह-माया से उदास होकर विकारों पर काबू पा लेते हैं। इस प्रकार जन्म-

मरण का भय खत्म हो जाता है। आत्मा-परमात्मा इकमिक अर्थात् समरस हो जाती है। हे लोगो! ऐसी आत्मा में जुर्रत भर जाती है, बेपरवाह हो जाती है, कायरता नष्ट हो जाती है और योद्धा बन कर क्रांति मचा देती है। इसलिये हे सताए हुए लोगो! निर्भय बन कर क्रांति मचा कर अपने अधिकार प्राप्त करो।।३।।२।।१५।।

शब्द - 35

राग केदारा वाणी रविदास जीउ की

੧ੴ सतिगुर प्रसादि।।

खटु करम कुल संजुगतु है
हरि भगति हिरदै नाहि॥
चरनारबिंद न कथा भावै
सुपच तुलि समानि॥१॥
रे चित चेति चेत अचेत॥
काहे न बालमीकहि देख॥
किसु जाति ते किह पदहि
अमरिओ राम भगति बिसेख॥१॥ रहाउ॥
सुआन सत्रु अजातु सभ ते
क्रिस्न लावै हेतु॥
लोगु बपुरा किआ सराहै
तीनि लोक प्रवेस॥२॥
अजामलु पिंगुला लुभतु कुंचरु
गए हरि कै पास॥
ऐसे दुरमति निसतरे
तू किउ न तरहि रविदास॥३॥१॥[1]

(पृष्ठ ११२४)

पद अर्थ - खटु करम-हिन्दू धर्म ग्रँथों के अनुसार ब्राह्मणों के छः कर्म शिक्षा पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, कराना, दान देना तथा लेना। संजुगत-संयोगवश, सहित, परिपक्व। चरनारविन्द-परमात्मा। सुपच=चंडाल, जो कुत्ते को पका कर खाए। तुलि-बराबर। समानि- समान।।1।।

रे-दूसरे दर्जे का, निकम्मा अनादर बोधक। चित-मन। चेति-तूँ याद कर,

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ११२४

सिमरन कर। चेत-जागता मन, (Conscious Mind)। अचेत=सोया हुआ, सोया हुआ मन। (Unconscious Mind)। चेत अचेत-जागृत अर्थात् सुप्तावस्था भाव निरंतर। काहे न =क्यों नहीं। अमिरिउ-अमर हो गया। बिसेख-विशेष, खास।।1।। रहाउ।।

सुआनशत्रु-कुत्ते का दुश्मन, कुत्तों को मार कर खाने वाला। अजातु-सुपच, चंडाल। बपुरा-बेचारा, निमाणा।।2।।

दुरमति-कुटिल बुद्धि वाला। लुभत-शिकारी। कुंचर-हाथी।।3।।1।।

नोट वाल्मीक - गुरु रविदास जी 'रहाउ' में संकेत करते हैं और बन्द नंबर 2 में स्पष्ट करते हैं कि महर्षि बाल्मीक चांडाल थे, जिस ने अपनी भक्ति के बल पर प्रभ का विशेष भगत बन कर अमर पद को प्राप्त किया था। भाई जोध सिंह लिखते हैं -

''**स्वानशत्र** - 'कुत्तों का वैरी' वाल्मीक चांडाल था। पांडवों ने बड़ा यज्ञ किया था। सब भोजन खा चुके परंतु यज्ञ की पूर्णता का घंटा नहीं बजा था। फिर कृष्ण जी ने कहा, वाल्मीक नहीं आए। जब वह आए तो कृष्ण जी ने उनके चरण धोकर जब उन्होंने भोजन खिलाया, तब घंटा बजा था।''[1]

भाई काहन सिंह नाभा के विचार भी भाई जोध सिंह से मिलते-जुलते हैं।

आजामल - भाई काहन सिंह नाभा लिखते हैं,

''कन्नौज देश का एक दुराचारी ब्राह्मण जिस ने एक वैश्य के साथ विवाह किया था। जिस के उदर से दस पुत्र पैदा हुए। भगतमाल और भागवत में कथा है, कि छोटे पुत्र का नाम नारायण होने के कारण आजामल, नारायण का भगत हो कर मुक्ति का अधिकारी बना था।''[2]

पिंगला - भाई काहन सिंह नाभा लिखते हैं,

''विदेह नगर (जनकपुरी) में एक वैश्या रहती थी, जिस का नाम पिंगला था। उस ने एक दिन एक धनी सुंदर जवान देखा और काम से वह व्याकुल हो उठी, परंतु वह उस के पास नहीं आया, जिस से सारी रात बेचैनी में बीती। अंत में उस का मन वैराग्य हो गया कि यदि ऐसा प्रेम में

1. भक्त रविदास : जीवनी तथा रचना - पृष्ठ : ४५-४६
2. महान कोश : पृष्ठ : ३६

ईश्वर से करती, तब कितना उत्तम फल होता। इस पर वह करतार के सिमरन में लग कर मुक्ति को प्राप्त हुई। सांख्य सूत्रों में इसका वर्णन आया है।''[1]

लुभतु - शिकारी। ज्ञानी बरकत सिंह आनंद गुरालबी (धक्कड़ां) लिखते हैं,

''श्री बाबा जी से यह पवित्र उपदेश सुन कर शिकारी का मन प्यार और वैराग्य से मोम हो गया- गुरु रविदास जी ने प्रेम देख कर गले लगा कर सिक्खी के सिद्धांत समझा कर, लोक सेवा का तरीका बता कर, नाम जपने की युक्ति दान दी। हिरनी समेत बच्चों को छुड़ा दिया। वह भगत जी का धन्यवाद करती उछलती कूदती हुई बच्चों के साथ जंगल की ओर दौड़ पड़ी। फिर हीरू राम फांदकी गुरु जी का पहला भगत हुआ है।''[2]

उपरोक्त साखी सही लगती है। भाई जोध सिंह ने नीचे दिए कथन के साथ,

'''लुभित शिकारी' जिस ने कृष्ण जी के चरणों में बाण मारा था, कृष्ण जी ने उस को भी मुक्त कर दिया था।''[3]

यह साखी पुराणों में है। महर्षि वाल्मीक वाली साखी भी पुराणों में है।

''कुंचर-हाथी, गजराज। एक गंधर्व जो केवल ऋषि के श्राप से हाथी बन गया था। वरुण देवता के तालाब में तेंदुए ने इसको ग्रस लिया था। जब निर्बल हो कर डूबने लगा तब कमल सूंड में ले कर ईश्वर को स्मरण करते हुए पुकार की थी। भगवान ने तेंदुए के बंधनों से गजराज को मुक्त किया था। यह कथा भागवत के आठवें स्कंद के दूसरे अध्याय में है।''[4]

1. वही - पृष्ठ : ५७६
2. जन्म साखी रविदास भक्त की - पृष्ठ : ३९-४०
3. भक्त कविदास : जीवनी तथा रचना : पृष्ठ : ४५-४६
4. भक्त बाणी सटीक - द्वितीय भाग - डा. साहिब सिंह - पृष्ठ : १४३

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में वैज्ञानिक और शक्तिशाली तर्क से जात-पात का खंडन किया है। इस शब्द की विचारधारा से उन की ब्रह्मज्ञानी चिंतक, निडर यौद्धा और महान गुरु के तौर पर पहचान होती है। गुरु जी ने स्पष्ट किया है कि प्रभ अपने भक्तों का प्रेम स्वीकार करते समय किसी भी ऊंची जाति और किसी भी नीची जाति को बिल्कुल ही नहीं मानते हैं। दरअसल जात पात, छुआछूत प्रभ की रचना की हुई नहीं है। यह तो मनुष्य की अपनी रचना है। इसलिए प्रभ के विधान में इस के अस्तित्व का कोई तात्पर्य ही पैदा नहीं होता है।

इसलिए गुरु रविदास जी बन्द नंबर 1 में पहले तथाकथित सब से ऊंची जाति ब्राह्मण का दृष्टांत दे कर सिद्ध करते हैं, कि यदि ब्राह्मण प्रभ की भक्ति नहीं करते तो ब्राह्मणों के छः के छः कर्मों, विद्या पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना और दान लेने-देने में परिपक्व हैं, तो वे ब्राह्मण कुत्तों को मार कर खा जाने वाले चांडाल का ही रूप है।

उपरोक्त बन्द से स्पष्ट हो गया है कि प्रभ प्राप्ति के लिए सब से ऊंची या सब से नीची और घटिया जाति कोई महत्व नहीं रखती है, जो भी जीव एक मन हो कर प्रभ का सिमरन करता है, वह प्रभ को प्राप्त हो जाता है। गुरु रविदास जी ने इस विचार को 'रहाउ' में दर्ज किया है और इस को स्पष्ट करने के लिए महर्षि वाल्मीकि जी का दृष्टांत दिया है। वह सब से नीची जाति के थे परंतु प्रभ भक्ति के कारण प्रभ के विशेष भगत बन कर अमर पद को प्राप्त हुए।

इस प्रकार बन्द नंबर 2 में उपरोक्त बन्द नंबर 1 से विपरीत सबसे निम्न जाति के महर्षि वाल्मीकि का दृष्टांत देकर सिद्ध किया है, कि प्रभ के नाम का सिमरन करने से ऐसी निम्न जाति वाला जीव ही प्रभ को प्राप्त हो जाता है।

इस अटल सच्चाई को और परिपक्वता के साथ दृढ़ करने के लिए गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 3 में घटिया से घटिया कर्म करने वाले जीवों का ज़िक्र कर के सिद्ध किया है कि प्रभ का स्मरण करने वाले महा पापियों को भी प्रभ बख्श देता है और अपने विशेष भक्तों में शामिल कर लेता है। अतः प्रभ प्राप्ति

के लिए जातिपाति का कोई महत्व नहीं है। महत्व तो एकाग्र हो कर प्रभ के सिमरन करने का है, जिस से प्रभ की बख्शीश प्राप्त होती है और प्रभ के चरणों में निवास हो जाता है।

इस शव्द की विचारधारा राग केदारा की धारणा के अनुकूल है। इस राग में दर्ज विषय बुनियादी तौर से प्रभ के साथ प्रेम का है। प्रभ के सिमरन का है। भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों ने गुरमत के अनुसार ही इस राग का विषय निश्चित किया है। वह लिखते हैं,

इस राग के संबंध में गुरुवाक है,

''केदारा राग बिच में जानिए भाई सबदे करे पिआरु।।
सति सँगत सिउ मिलदे रहै सचै करै पिआरु।।''[1]

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ९२

शब्दार्थ - यदि कोई उच्च कुल का ब्राह्मण अपने छः कर्मों विद्या पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना, दान देना-लेना में परिपक्व है परंतु उस के मन में प्रभ प्रेम नहीं है और न ही उस को प्रभ की शिफ़्त-सलाह अच्छी लगती है तो वह ब्राह्मण रूप चांडाल है। वह कुत्ते का मांस पका कर खाने वाले चांडाल जैसा ही है।।१।।

इसलिए हे मेरे निकम्मे मन! तू जागते-सोते समय अर्थात् निरंतर प्रभ के नाम का सिमरन कर। तू महर्षि बाल्मीकि जी की ओर ध्यान क्यों नहीं करता है? उस की क्या जाति थी? और वह प्रभ का सिमरन करने के कारण प्रभ के विशेष भगत के अमर पद को प्राप्त हुआ है।।१।। रहाउ।।

परंतु कुत्तों का बैरी और कुत्तों को मार कर खाने वाले चांडाल की जाति सब से नीची मानी जाती है। उस ने भी प्रभ की भक्ति कर के प्रभ का प्रेम प्राप्त कर लिया था। दुनिया के लोग उस की भी बडियाई, मान-सम्मान करते हैं। उस का मान-सम्मान तो तीनों लोकों में हो रहा है।।२।।

इसलिए घटिया से घटिया कर्म करने वाले बड़े-बड़े महापापी अजमिल, पिंगला, शिकारी और हाथी प्रभ का नाम जप कर, उस की बख्शीश से मुक्ति प्राप्त कर गए हैं। हे रविदास! यदि इतनी निम्न मत वाले और घटिया काम करने वाले तर गए हैं तो फिर तू प्रभ का सिमरन कर के प्रभ को प्राप्त क्यों नहीं कर सकेगा।।३।।

शब्द - 36

भैरऊ वाणी रविदास जीऊ की घर २

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

बिनु देखे उपजै नही आसा॥
जो दीसै सो होइ बिनासा॥
बरन सहित जो जापै नामु॥
सो जोगी केवल निहकामु॥१॥
परचै रामु रवै जउ कोई॥
पारसु परसै दुबिधा न होई॥१॥ रहाउ॥
सो मुनि मन की दुबिधा खाइ॥
बिनु दुआरै त्रै लोक समाइ॥
मन का सुभाउ सभु कोई करै॥
करता होइ सु अनभै रहै॥२॥
फल कारन फूली बनराइ॥
फलु लागा तब फूलु बिलाइ॥
गिआनै कारन करम अभिआसु॥
गिआनु भइआ तह करमह नासु॥३॥
घ्रित कारन दधि मथै सइआन॥
जीवत मुकत सदा निरबान॥
कहि रविदास परम बैराग॥
रिदै रामु की न जपसि अभाग॥४॥१॥[1] **(पृष्ठ ११६७)**

पद अर्थ - **आसा**-विश्वास, उडीक, प्रतीक्षा। **बिनासा**-नाशवान। बरन '७ सं. वर्णित (व्रणय) वर्णन करने योग्य, भावार्थ शब्द का सिद्धान्त अर्थ।'[2]

नोट - भाव-शब्द का अर्थ है, शब्द की अंतरीव दशा (या विचार) को प्रकट करने वाला और सिद्धांत का अर्थ है 'अंत को सिद्ध हुई बात, सही नतीजा'

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ११६७ 2. महान कोश - पृष्ठ : ६३०

इसलिये वर्ण साहित्य का अर्थ है सृष्टि के नियमों के समूचे ज्ञान के साथ। **निहकाम**-इच्छा रहित, कामना रहित, वासना रहित।।१।। **रवै**=जाप करता है। **परसै**-स्पर्श करता है। **दुविधा**-द्वैतभाव। भ्रम, दुख, इच्छाएं।। रहाउ।।

खाई-मुक्त हो जाता है। **बिनू दुआरे**-जिसकी इंद्रियां नहीं हैं अर्थात् परमात्मा। **समाई**-लीन होना। **करता होई**-करतार रूप होकर। **अनभै**-प्रत्यक्ष ज्ञान, निर्भय।।२।।

बनराइ-वनस्पति। **गिआनै**-ज्ञान संबधी। **करम अभिआस**-ज्ञान को परिपक्व करने के लिए सख्त मेहनत। **करमह नासु**-दुखों, इच्छाओं, विकारों का नाश।।३।।

दधि-दही। **मथै**-रिड़कती है। **निरबान**-इच्छाओं से रहित, वासना रहित अर्थात् प्रभ प्राप्ति। **बैराग**-दुखों, इच्छाओं, विकारों से मुक्ति।।4।।1।।

प्रमुख ज्ञान, बुद्ध का बुनियादी तथा महत्वपूर्ण सिद्धांत है। इसकी पालना हर स्थिति में अनिवार्य है।

आदिधर्म, बुद्ध धर्म और वाणी गुरु रविदास जी

गुरु रविदास जी ब्रह्मज्ञानी थे, इसी कारण उन को त्रिलोकी का ज्ञान था। त्रिलोकी का ज्ञान होने के कारण वे गहन, गंभीर और उच्च स्तरीय चिंतक भी थे। इस कारण उन की गहरी सोच पारखी, वैज्ञानिक दृष्टि और विश्वव्यापी सूझबूझ ने विश्व धर्म की नई विचारधारा को जन्म दिया था।

गुरु रविदास जी के शब्द 'विनु देखै उपजै नहीं आसा' तथा उन की समूची वाणी से यह स्पष्ट हो जाता है, कि विश्वधर्म की विचारधारा का आधार आदिधर्म है, जिस को विद्वानों ने श्रमण धर्म या अवैदिक धर्म का नाम दिया है। अवैदिक, वैदिक का विरोधी शब्द है। इसलिए अवैदिक धर्म का वैदिक धर्म के साथ कोई संबंध नहीं है, इस के विपरीत अवैदिक धर्म, वैदिक धर्म की अपेक्षा प्राचीन होने के कारण वैदिक धर्म में निरूपित सदाचारी पक्ष के ऊपर अवैदिक धर्म का अमिट और शक्तिशाली प्रभाव है। अवैदिक धर्म दुनिया के धर्मों में सबसे प्राचीन धर्म है। इस कारण कई विद्वानों ने इस को आदिधर्म का नाम भी दिया है।

गुरु रविदास जी के विचाराधीन शब्द में जोगी शब्द का प्रयोग करते हैं।

'मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में कई योगियों की मूर्तियां मिली हैं'[1]

इस से स्पष्ट होता है कि गुरु रविदास जी को मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के सांस्कृतिक और धार्मिक बारे में भी गहन अध्ययन ज्ञान था। डॉक्टर एल एम जोशी 'गुरु गोविंद सिंह धर्म अध्ययन विभाग पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला' लिखते हैं,

''इस वैदिक ब्राह्मण धर्म के साथ ही प्राचीन भारत में एक दूसरा मुख्य धर्म था, जिस को श्रमण धर्म या वैदिक धर्म कहा गया है। इस की उत्पत्ति भारत के मूल निवासियों के धर्म से हुई है। यह मूल धर्म आर्यों के

1. धमपद - पृष्ठ : १२

भारत प्रवेश से बहुत पहले से चला आ रहा था। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की सभ्यता भारत के मूल निवासियों की सभ्यता थी।''[1]

इस पैरे से नीचे लिखे परिणाम निकलते हैं -

1. श्रमण धर्म (आदिधर्म) मूल निवासियों का धर्म है।

2. आदिधर्म, आर्यों के भारत प्रवेश से बहुत समय पहले अस्तित्व में आ चुका था।

3. मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की सभ्यता भारत के मूलनिवासियों की सभ्यता थी।

4. आर्य लोग विदेशी थे।

इस अध्ययन से परिपक्व हो गया है कि आदिधर्म (श्रमण धर्म) संसार के सभी धर्मों से पुराना धर्म है। आर्यों ने तो अभी तक भारत में प्रवेश ही नहीं किया था, जब यह धर्म पूर्ण रूप में विकसित हो चुका था। दूसरा जब आर्य लोगों ने भारत में प्रवेश किया था, उस समय आर्य लोग कोरे अनपढ़, गवार और जंगली थे। इस तथ्य की पुष्टि मैसोपोटामिया के स्थानों की खुदाई से प्राप्त हुई है। इस संबंध में सरदार कपूर सिंह I.C.S. लिखते हैं,

''अब नक्शा बिल्कुल बदल गया है। अब नक्शा यूं है, जो हड़प्पा सभ्यता के लोगों के सामने आर्य लोग क्षात्र वृत्तियों वाले जंगली और असभ्य लोग थे। इस विश्वव्यापी उथल-पुथल से यह संकेत हो चुका है, उस के बारे में मैसोपोटामिया के एक स्थान 'अमरू' में एक टूटा हुआ ठीकर लगभग चालीस वर्ष पहले मिला है, जिस के ऊपर एक नहेरना लिखत में 'उर' के तृतीय राजघराने के समय, खुशहाल रह रहे शहरों में जंगली लोगों की यादगार बारे लिखा हुआ है, भय और असभ्य भरे लहजे में -

'ये जंगली लोग हवा के तूफान की तरह टूट कर आ पड़ते थे। इन लोगों ने जन्म के बाद कोई शहर या नगर नहीं देखा था। यह लिखत मसीही सम्वत के आरंभ से पहले की सहस्त्राब्दी के मध्यान्तर काल की है। यही समय ऋग्वेद के आर्य लोगों के सिंधु भूमि की हड़प्पा सभ्यता को नष्ट करने का समय है।''[2]

1. वही - पृष्ठ : ११-१२

2. पुंद्रीक - पृष्ठ : २१२-२१३, करता सिरदार कपूर सिंह एम.ए. (पंजाब) एम.ए. (कंटब) भूतपूर्व आई.सी.एस., धार्मिक प्रोफैसर खालसा कालेज मुम्बई, सांसद (लोकसभा), विधान सभा सदस्य, भूतपूर्व प्रोफैसर आफ सिख्ज़्म आदि।

अत: इस तथ्य से परिपक्व तौर से सुदृढ़ हो गया है कि यूरेशियन आर्य लोग गवार थे, जंगली थे। धर्म क्या होता है? और संस्कृति किस बला का नाम है? वे इस बारे में बिल्कुल ही अनजान थे। वह केवल और केवल जंगली थे। इस कारण आर्य लोगों ने भारत में प्रवेश करते ही, यहाँ की अमूल्य विकसित संस्कृति, (culture) धर्म और सभ्यता को जला कर बर्बाद कर दिया था और मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा के लोगों को घरों में बंद कर के अन्य घरों को आग लगा कर के चित्ता बना दिया था। समूचा क्षेत्र श्मशान घाट बन गया था। आर्यों के खूंखार जंगली होने का इस से बढ़ कर और प्रमाण क्या हो सकता है? इसी कारण पुरातत्व वैज्ञानिकों ने इस क्षेत्र का नामकरण ही मोहनजोदड़ो रख दिया है। मोहनजोदड़ो का शाब्दिक अर्थ होता है 'मुर्दों का स्थान।'

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है, कि आर्य लोग जंगली थे। इस से यह भी स्पष्ट हो गया है, कि आर्य लोगों को धर्म, शिक्षा, संस्कृति और सभ्यता का ढंग, तरीका केवल मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से प्राप्त हुआ है। इसलिए आदिधर्म पर वैदिक धर्म के प्रभाव का प्रश्न ही नहीं उठता है। इस के विपरीत वैदिक धर्म ने तो अवैदिक धर्म (आदिधर्म) की विचारधारा से शक्तिशाली और अमिट प्रभाव कबूल किया है। इस कारण अवैदिक धर्म की विचारधारा वैदिक धर्म की विचारधारा का आधार बनी हुई है। इस तथ्य की पुष्टि डॉक्टर जोशी भी स्पष्ट करते हुए लिखते हैं -

> ''सांख्य दर्शन, योग (अभ्यास) जैन धर्म, बौद्ध, धर्म, आजीवक धर्म और उपनिषदों की वह विचारधारा, जो वैदिक विचारों की विरोधी और सांख्य, योग, बुद्ध तथा जैन आदर्शों के अनुकूल है, जो इसी अवैदिक संस्कृति की देन है। यहां सवाल यह पैदा होता है, उपनिषद, वैदिक और ब्राह्मण धर्म के ग्रंथ हैं, इन में और अवैदिक विचार, विचार किस प्रकार आए हैं? सुनिश्चित बात यह है, कि अवैदिक विचार और वैदिक संस्कृति से ही दाखिल हुए हैं।''[1]

इस गद्यांश से यह विचार स्पष्ट हो जाता है, कि आदिधर्म में निरूपित उच्च पाय के सदाचारी, धार्मिक और सांस्कृतिक आदि विचारों को बुद्ध धर्म, जैन

1. धमपद - पृष्ठ : १२

धर्म, उपनिषदों आदि ने उधार लिया है। बुद्ध धर्म की जिस विचारधारा की प्रशंसा सारा संसार करता है, वह विचारधारा दरअसल आदिधर्म (श्रवण धर्म) की ही है।

आदिधर्म (श्रमण धर्म) के कुछ मूलभूत विचार श्री एसआर राव ने, अपनी पुस्तक (Decipherment of the Indus script) में मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के ठीकरों, मुहरों आदि की बोली को पढ़ने के बाद दर्ज किए हैं। ये विचार बड़े महत्वपूर्ण और अमूल्य हैं। यही विचार वैदिक धर्म का आधार बनते हैं और यही गुरु रविदास जी की वाणी का आधार बनते हैं। आश्चर्यजनक बात यह है, कि आदिधर्म के बुनियादी विचार वैदिक धर्म की अपेक्षा गुरु रविदास वाणी के अधिक नज़दीक हैं, दूसरे अर्थों में गुरु ग्रंथ साहिब की मूलभूत विचारधारा का आधार बनते हैं। आदिधर्म में निरूपित इन विचारों को हम नीचे दर्ज कर रहे हैं।

> ''वह (सृष्टि) से परे है अर्थात् वह (पारब्रह्म) सृष्टि के अस्तित्व से पहले के समय भी विचरण करता है)''[1]। इस कारण वह सदा के लिए कायम है। ('कायम दायम सदा पातशाही।।'[2] वह पारब्रह्म निरंतर लगातार सदा-सदा कायम है और पातशाह होने के कारण, वह आदि से ही हुकुम चला रहा है। वह अपने-आप से ज्ञानवान है और सब का हितैषी दोस्त है।[3] वह अपने-आप ही ज्ञान का निर्माण पैदा करता है।[4] अर्थात् वह अपने-आप से ही प्रकाशमान है। वह अपना ज्ञान दूसरों को प्रदान कर के अगवाई कर के रक्षा भी करता है।''[5]
>
> ''(इसलिये वह) ज्ञान के साथ, साथ इच्छाओं पर भी काबू पता है।[6] इस कारण वह शांत[7] है। (स्पष्ट है कि वह) ज्ञान के साथ ही इच्छाओं पर भी काबू पाता है।''[8]
>
> ''(सामाजिक तौर से) वह बचाता भी है[1] और दोस्त

(1) पृष्ठ : ११७-२६, १३५-३०, १३६-१३६, ३८८-६८. (२) पृष्ठ : ८५-१३, ३८८-६८. (3) पृष्ठ : १०६-८५, १०६-८६. (4) पृष्ठ : १०४-६३. (5) पृष्ठ : १२६-६२,. (6) पृष्ठ : १०४-६२. (7) पृष्ठ : ९३-५, ९४-३६. (8) पृष्ठ : ८९-६५, ११२-३, ११५-९, १७२-७.

बन कर बचाव करने में मदद भी करता है।[2] वह दोस्त धोखेबाज नहीं है और न ही घटिया इच्छाओं वाला है।''[3]

'(वह राजनीतिक तौर से) शक्ति प्रदान करता है।'[4] 'वह बचाने वाला और पवित्र है। शक्तिशाली है और तवाह करने वाला है।'[5] 'वह बख्शनहार है।'[6]

''सदाचारक तौर से वह सराहनीय है।'[7] 'दैवी गुणों वाला और विश्वास का पात्र है।'[8] वह सत्यवादी है।''[9]

समूचे तौर पर –

'वह (हर क्षेत्र में) अगवाई करता है, (धार्मिक, शैक्षणिक, सामाजिक, राजनीतिक और सदाचार आदि। भावार्थ वह हर क्षेत्र में गुरु रूप है।'[10]

उपरोक्त विचारों में कहीं भी पक्षपात नज़र नहीं आता है। किसी विशेष वर्ग को अधिक अधिकार नहीं दिए गए हैं और न ही कोई निम्न वर्ग सृजित कर के उस को कम अधिकार दिए गए हैं। सारे विचार सब के लिए बराबर का अधिकार प्रदान करते हैं। स्पष्ट है मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के धर्म और समाज के बीच किसी तरह की कोई विभाजन रेखा नहीं है। ये सभी विचार कुदरत के नियमों की ही स्पष्टता करते हैं। गुरु रविदास जी के शब्द 'बेगमपुरा शहर को नाउ' में बड़े स्पष्ट व सैद्धांतिक रूप में दर्ज हैं।

इसलिए उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट होता है, कि महात्मा बुद्ध ने आदिधर्म में संशोधन कर के इस के बुनियादी और वैज्ञानिक तत्वों को अपनी विचारधारा में भी शामिल कर लिया है, इसलिए आदिधर्म की विचारधारा, मूलभूत तत्व आज के संसार में विचरण कर रहे धर्मों के बीच महानतम हैं। बुद्ध धर्म की बुनियादी विचारधारा का शक्तिशाली प्रभाव गुरु रविदास जी की समूची वाणी में पड़ा है। इस तथ्य का सबूत अकेले इस शब्द के अध्ययन से ही प्राप्त हो जाता है। अत: इस गद्यांश से परिपक्वता से स्पष्ट हो गया है, कि संसार के वर्तमान धर्मों में गुरु रविदास जी की वाणी श्रेष्ठ और सर्वोत्तम है। उन की विचारधारा वैज्ञानिक होने के कारण महान भी है। इस की पुष्टि के लिए गहन अध्ययन की ज़रूरत है।

(1) पृष्ठ : ६०-३२, ६२-५०. (२) पृष्ठ : ६८-५३. (3) पृष्ठ : १७८-१९. (4) पृष्ठ : ५७-४. (5) पृष्ठ : १२४-४४, ३७९-२०३. (6) पृष्ठ : १६७-१४. (7) पृष्ठ : ८६-२८. (8) पृष्ठ : ८६-२९. (9) पृष्ठ : ६५-१०. (10) पृष्ठ : १४७-२२

पुष्टि केवल विचाराधीन शब्द से ही मुकम्मल तौर से स्पष्ट हो जाती है। हम आगे चल कर इसका अध्ययन करेंगे।

इस गद्यांश से परिपक्व तौर से यह भी स्पष्ट हो गया है, कि आदिधर्म से वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) में भी शक्तिशाली और महत्वपूर्ण प्रभाव कबूल किए हैं। इस से निष्कर्ष निकलता है, कि जो थोड़ा बहुत वैज्ञानिक धर्म और सदाचार, वैदिक धर्म में उपलब्ध है, वह अवैदिक धर्म के प्रभाव के कारण ही है। यह तथ्य अवैदिक धर्म, आदि धर्म (श्रवण धर्म) की विचारधारा से भी स्पष्ट हो जाता है।

''दूसरी विचारधारा (अवैदिक धर्म की विचारधारा) में सारे संसार का विचार (दुख की चेतना) कर्म का सिद्धांत, नैतिक आदर्श, ध्यान, योग, साधना और मोक्ष के विचार मुख्य हैं। इस को श्रमण संस्कृति कहा गया है। इस के प्रधान आदर्श योगी, जति, मुनि, वानप्रस्थ और उदासी साधु थे।''[1]

इस गद्यांश से नीचे लिखे परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं :

1. आदिधर्म (अवैदिक धर्म) की विचारधारा विश्वव्यापी थी। बुद्ध धर्म और वाणी गुरु रविदास जी की विचारधारा विश्वव्यापी है।

2. इस के मूलभूत तत्व नैतिकता, साधना और मुक्ति आदि हैं। यही मूलभूत तत्व बौद्ध धर्म और गुरु रविदास जी की वाणी में भी निरूपित हैं।

3. योगी, मुनि आदि धर्म के संचालक थे। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में मिली जोगियों की मूर्तियां इस विचार को बल प्रदान करती हैं। योगी और मुनि आदि शब्द आदिधर्म बौद्ध धर्म और गुरु रविदास की वाणी में दर्ज हैं। इस से आदिधर्म, बौद्ध धर्म और गुरु रविदास वाणी की विचारधारा में एकता और सुमेल स्पष्ट हो जाते हैं।

इस तरह बुद्ध धर्म ने बहुत कुछ आदिधर्म (श्रवण धर्म) की विचारधारा और संस्कृति से ही प्राप्त किया है। पर गुरु रविदास जी प्रकृति के नियमों में से विचारधारा प्राप्त की है, जिसकी स्वभाविक ही आदिधर्म की विचारधारा तथा संस्कृति के साथ मेल खाती है बुद्ध धर्म से। डॉक्टर जोशी इस विचार को और दृढ़ करते हुए लिखते हैं –

'इस से स्पष्ट है कि बुद्ध धर्म ब्राह्मण प्रधान वैदिक धर्म से भिन्न प्राचीन वैदिक धर्म की ही परंपरा है।'

1. धमपद – पृष्ठ : १२

इसलिए परिणाम यही निकलता है, कि बुद्ध धर्म ने बहुत कुछ आदिधर्म और वैदिक धर्म से ग्रहण किया है। इस तरह नैतिकता और साधना मुक्ति आदि का संकल्प आदिधर्म (श्रवण धर्म) बौद्ध धर्म और उस के बाद गुरु रविदास जी की वाणी में निरूपित है, परंतु आदिधर्म में निरूपित आत्मा और परमात्मा के विचार गुरु रविदास की वाणी में दर्ज हैं बुद्ध मत के बीच नहीं। यह तथ्य बौद्ध धर्म और गुरु रविदास जी की वाणी के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है। इस तथ्य से स्पष्टता से यह भी सिद्ध ही जाता है कि गुरु रविदास वाणी, परम प्रभु की अपेक्षा आदि धर्म के अधिक समीप है तथा रविदास वाणी में विकार विचार बुध धम्म की अपेक्षा पुरातन हैं तथा सहजकारों की विचारधारा के साथ एकजुट है।

गुरु रविदास जी ने नए विश्वधर्म के सृजन के लिए आदिधर्म और बौद्ध धर्म पर ध्यान केंद्रित किया है। इस से पूर्व उन्होंने हिंदू धर्म की विचारधारा और इस से संबंधित भगवानों, अवतारों और देवी-देवताओं का खंडन मुकम्मल तौर से

सतिजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार॥[1]

वाले शब्द में किया है। विचाराधीन शब्द के प्रथम बन्द में भी हिंदू धर्म के भगवानों और अवतारों का खंडन कर के एक शाश्वत प्रभ के अस्तित्व को स्पष्ट किया है। फिर 'बिनु देखै उपजे नहीं आसा' शब्द में गुरु जी ने, बुद्ध धर्म की विचारधारा का अध्ययन किया है। विचाराधीन शब्द के अध्ययन से भी यह स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी को बुद्ध धर्म का संपूर्ण और गहन ज्ञान था। इसी कारण गुरु जी ने इस शब्द की दूसरे बन्द में मुनि का ज़िक्र कर के, साथ ही साथ दुविधा अर्थात् दुखों और इच्छाओं का भी ज़िक्र करते हुए यह भी स्पष्ट किया है कि इच्छाओं को ज्ञान के प्रकाश के साथ नष्ट कर के जीव करतार रूप बन जाता है। इस बन्द में स्पष्ट किया गया है, कि मुनि इच्छाओं को मार कर प्रभ पद को प्राप्त होता है। प्रभ प्राप्ति का संकल्प धर्म की विचारधारा में शामिल किया गया है। बुद्ध धर्म में न तो आत्मा और परमात्मा को परवान अर्थात् स्वीकार किया गया है और न ही इस को रद्द किया गया है।

परंतु क्या बुद्ध धर्म में प्रभु विचार नहीं है? बुद्ध धर्म के गहन अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि महात्मा बुध भी आंतरिक तौर से परमात्मा को मानते थे। महात्मा बुद्ध मन की शक्ति को स्वीकार करते करते हैं। इस संबंध में भारत रत्न

1. वही - पृष्ठ : १३

डॉक्टर भीमराव अंबेदकर लिखते हैं -

''3. वह सदा ही अपनी समस्याओं का हल ढूंढने के लिए आशावादी थे, यहां तक कि जिस दिन उस ने सुजाता का भेजा हुआ खाना खाया था, उसी रात गौतम को स्वप्न में आए थे, जब वह जाग गया था और उस ने इन सपनों के अर्थ निकाले तो उस को ज्ञान प्रकाश की प्राप्ति का दृढ़ निश्चय हो गया था।''[1]

उपरोक्त गद्यांश से स्पष्ट हो गया है कि ज्ञान की प्राप्ति की दृढ़ता का आधार स्वप्न है। स्वप्न मन का सृजन है। मन में जैसे-जैसे शक्तिशाली पवित्र और स्पष्ट विचार होते हैं, सपनों के विचार भी उतने ही शक्तिशाली पवित्र और स्वस्थ होते हैं। इसलिए इन से भविष्य की सही और स्पष्ट दिशा प्राप्त हो जाती है। यह सब कुछ मन में भी विकसित होता है। इस कारण यह मन की ही शक्ति है, जिस के ऊपर महात्मा बुद्ध दृढ़ हो गए थे, कि उन को ज्ञान का प्रकाश हर हालत में होना है। सपनों की घटना के पीछे महात्मा बुद्ध ने अपने मन की शक्ति परख की है। डॉक्टर अंबेदकर लिखते हैं -

''4. उस ने अपने भविष्य की भविष्यवाणी की थी।' यह उस ने सुजाता की नौकरानी के लाए गए भोजन वाली थाली को नागराजा दरिया के बीच फेंकते हुए, भविष्यवाणी यह कह कर की थी कि 'यदि मुझे ज्ञान होना है तो यह प्याला तैर कर दरिया के पार चला जाए; यदि नहीं तो यह डूब जाए।' 'सचमुच ही प्याला दरिया के बहाव के विरुद्ध तैर कर दूसरे किनारे नागराजा, काला के महल के पास डूब गया।''[2]

उपरोक्त गद्यांशों से दो विचार स्पष्ट होते हैं -

1. महात्मा बुद्ध को भविष्यवाणी में विश्वास था।

2. प्याला दरिया की विपरीत दिशा में, मन की शक्ति के साथ ही तैरा था। इसलिए बुद्ध को मन की शक्ति पर विश्वास था और वह मन को ही मनुष्य की ज्ञान प्राप्ति का साधन मानते थे।'[2] यही कारण है कि उक्ति इस पर सही उतरती है ''सम समाधि मन को अच्छा सोचने की और सदा ही अच्छा सोचने की आदत प्रदान करती है। अच्छा करने के लिए यह मन को ज़रूरी उद्देश्य और भरपूर शक्ति प्रदान करती है।''[1]

1-2. बुद्धा एंड हिज़ धम्मा - पृष्ठ : ७३ 2. वही पृष्ठ : १२४

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि –

1. महात्मा बुध को सपनों में विश्वास था। उन को स्वप्नों से परिपक्व हो गया था, कि उन्हें हर हालत में ज्ञान होना है। सपनों का आधार मन है, इसलिए बुद्ध मन की शक्ति में दृढ़ विश्वास रखते थे। डॉक्टर जोशी का भी यही विचार है,

उन्होंने (बुद्ध ने) बुद्धि, ज्ञान, सदाचार और आत्मबल पर ज़ोर दिया था।[2]

2. महात्मा बुद्ध को मन की शक्ति पर दृढ़ विश्वास था। यह विचार सम समाधि से भी प्रमाणित हो जाता है। वह मन को ही ज्ञान का साधन मानते हैं।

3. गुरु रविदास जी और गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी भी मन की शक्ति को परवान (स्वीकार) करते हैं। इन के अनुसार ज्ञान का प्रकाश ही मन का प्रकाश है –

(उ) 'उनमन, मन मन ही मिले, गुण निर्गुण एक विचार।।'[3]

(अ) 'उपजिउ गिआन भयो प्रगाश।।'[4]

(ए) 'मन तूँ जोति सरूप है)' (जपुजी)

जिस मन द्वारा महात्मा बुद्ध ज्ञान प्राप्त करते हैं, उसी मन द्वारा गुरु रविदास और गुरु ग्रंथ साहिब ज्ञान का प्रकाश हुआ स्पष्ट करते हैं। गुरु रविदास जी और गुरु ग्रंथ साहिब के ज्ञान के प्रकाश को परमात्मा मानते हैं, परंतु महात्मा बुद्ध इस को परमात्मा कहने से परहेज़ करते हैं। महात्मा बुद्ध न परमात्मा के संकल्प को मानते हैं और न ही कहीं रद्द करते हैं, परंतु गुरु रविदास जी और महात्मा बुद्ध दोनों की वाणी का मूलभूत आधार मन द्वारा ज्ञान प्राप्ति ही है।

कहा जा सकता है कि चाहे महात्मा बुद्ध आत्मा और परमात्मा को नहीं मानते, परंतु मूलभूत तौर से उनकी विचारधारा का आंतरिक विचार गुरु रविदास जी की विचारधारा के साथ मेल खाता है। इसलिए विचाराधीन शब्द में गुरु रविदास जी ने महात्मा बुद्ध की विचारधारा के बीच आत्मा परमात्मा का संकल्प दर्ज कर के संशोधन किया है। यह संशोधन दरअसल महात्मा बुद्ध की विचारधारा के आंतरिक विचार में ओतप्रोत है। उदाहरण के तौर पर जिस मन में, गुरु रविदास जी के प्रभ का प्रकाश है, उसी मन में महात्मा बुद्ध के ज्ञान का प्रकाश है, जो प्रभ और ज्ञान दोनों का प्रकाश मन में है –

(उ) सो मुनि मन की दुबिधा खाइ॥

1. वही पृष्ठ : १२७ 2. धमपद – पृष्ठ : ९
3. आदि ग्रन्थ – पृष्ठ : ३४६ 4. वही – पृष्ठ : ८७५

बिनु दुआरै त्रै लोक समाइ।।२।।

(अ) घ्रित कारन दधि मथै सइआन॥

जीवत मुकत सदा निरबान॥

कहि रविदास परम बैराग॥

रिदै रामु की न जपसि अभाग॥४॥१॥

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है कि महात्मा बुद्ध आंतरिक तौर से परमात्मा के अस्तित्व और प्रभाव को स्वीकार करते हैं, फिर क्या कारण है कि महात्मा बुद्ध ने अपनी विचारधारा में इस का ज़िक्र तक नहीं किया है। हमारी जांच पड़तालों के नीचे लिखे कारण हैं –

1. यदि महात्मा बुद्ध किसी भी रूप में परमात्मा को स्वीकार कर लेते तो वैदिक धर्म वालों ने दुष्प्रचार कर के इस को अंकुरित होते ही दबोच लेना था और वह धर्म की विचारधारा ने सांख्य दर्शन चारवाक दर्शन आदि की तरह वैदिक धर्म हिंदू धर्म का ही अंग बन कर के रह जाना था, जिस प्रकार अब भारत की उच्चतम अदालत सुप्रीम कोर्ट (Supreme Court) ने अपने फैसले में जैन धर्म को हिंदू धर्म का ही भाग घोषित किया है।

2. उस समय महात्मा बुद्ध ने परमात्मा को स्वीकार करने के साथ हिंदू धर्म के देहधारी भगवानों, अवतारों आदि को बल मिल जाना था और हिंदू धर्म ने अपने प्रचार के साथ बुद्ध धर्म के प्रभाव को भी अपने दैवीय भगवानों, अवतारों जैसा ही बना देना था। इस तरह बुद्ध धर्म की महान विचारधारा को ग्रहण कर लेना था। इस तरह बुद्ध धर्म को अंकुरित होते ही प्रभावहीन कर देना था।

3. परिणाम स्वरूप पर इस ग्रहण से ग्रस्त और प्रभावहीन हो चुकी विचारधारा ने शायद अशोक जैसे महान महाराजाओं को प्रभावित करने में असमर्थ हो जाना था और इस को विशाल स्तर पर प्रचारित करने वाला भी उपलब्ध नहीं होना था और न ही आज की तरह बुद्ध धर्म का प्रसार होना था। इस तरह बुद्ध धर्म के उत्थान के समय परमात्मा के संकल्प को स्वीकार करना किसी भी तरह उचित नहीं था।

4. बौद्धधर्म के बीच जातपात, छुआछूत का ज़िक्र तक नहीं है परंतु आर्य (हिंदुओं) ने अपने जातिवाद, छुआछूत के सृजन कर्ता हिंदू धर्म के भगवानों और अवतारों की तरह अपने प्रचार के साथ प्रभावित कर के महात्मा बुद्ध ने, परमात्मा को भी जात पात, छुआछूत का जन्मदाता सिद्ध कर के, जात पात जैसे

कोहड़ को बौद्ध संस्कृति में शामिल कर देना था। जिस प्रकार आज के सिख धर्म के धार्मिक ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब में जात पात का खंडन किया गया है, परंतु इस के 99% पैरोकार हिंदू धर्म के प्रभाव के कारण जात पात को पूरी तरह से मानते और इस पर पैहरा देते हैं। इस तरह सिख धर्म के पैरोंकारों की संस्कृति लगभग हिंदू धर्म की ही संस्कृति है।

अत: महात्मा बुद्ध ने समय की नज़ाकत को भांपते हुये और पहचानते हुए आत्मा और परमात्मा के संकल्प के बारे में चुप्पी धारण करने की सब से बड़ी समझदारी अपनाई है। इस तरह बुद्ध धर्म को वैदिक धर्म के पैरोंकारों की बौछार से बचा लिया है।

अब हम विचाराधीन शब्द के आधार पर बुद्ध धर्म और गुरु रविदास की वाणी का अध्ययन करते हैं।

गुरु रविदास जी ने 'रहाउ' में बुद्ध धर्म और अपनी विचारधारा दोनों को एक स्वर कर के एक नई विचारधारा के रूप में पेश किया है। पहली तुक में उन्होंने अपनी विचारधारा को निरूपित किया है और दूसरी तुक में बुद्ध धर्म की विचारधारा को। परंतु दोनों विचारधाराओं को प्रभ की संजीव, प्रत्यक्ष स्पर्श की जाने वाली अस्तित्व के साथ एक स्वर कर के गुरु जी ने अपनी विचारधारा के अनुरूप सृजित किया है।

दुख और इच्छाओं पर काबू पाना बौद्ध धर्म की मूलभूत समस्या है। संसार दुखों का घर है और दुखों का कारण मनुष्य की इच्छाएं 'दुविधा' हैं।

अत: 'रहाउ' में दोनों विचारधाराओं का मेल है। गुरु जी की विचारधारा के विकार 'दुविधा' बुद्ध धर्म की विचारधारा के दुख और इच्छाएं ही हैं, जिन को प्रभ सिमरन के साथ नष्ट कर के परमानंद या निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु आत्मा परमात्मा का संकल्प दर्ज करके गुरु रविदास जी ने बुद्ध मत को संशोधित कर दिया है।

बन्द नंबर 2, 3 और 4 में दोनों विचारधाराएँ बराबर-बराबर चलती हैं। बुद्ध धर्म में निर्वाण प्राप्ति का सिद्धांत है। दुखों का कारण इच्छाएं हैं। ज्ञान के साथ इच्छाओं पर काबू पाया जा सकता है और जीव निर्वाण पद को प्राप्त कर लेता है। बुद्ध धर्म में निर्वाण प्राप्ति करने वाले साधक को बुद्ध, मुनि, योगी, भिक्षु आदि कहा जाता है। इसलिए गुरु रविदास जी ने बुद्ध धर्म की विचारधारा का अध्ययन करते समय शब्द योगी तथा मुनि प्रयोग किया है, फिर दुविधा अर्थात्

दुखों की बात की है, फिर इच्छाओं की -

(क) सो जोगी केवल निष्काम।।

(ख) सो मुनि मन की दुबिधा खाइ॥

(ग) मन का सुभाउ सभु कोई करै॥

इस के पश्चात् ज्ञान का उद्देश्य सिद्ध किया है और अंत में निर्वाण प्राप्ति के बारे में स्पष्ट किया है। अत: बन्द नंबर 2 से आरंभ कर बन्द नंबर 3 तक बुद्ध धर्म की विचारधारा को सांकेतिक परंतु स्पष्ट रूप में विचार कर के सिद्ध किया गया है कि बुद्ध धर्म और गुरु रविदास जी के नए धर्म की विचारधारा एक ही है, परंतु गुरु रविदास जी ने बुद्ध धर्म की विचारधारा में आत्मा और परमात्मा को शामिल कर के एक नए धर्म की नई विचारधारा को विकसित किया है। इस शामिल किए गए नए संकल्प, बुद्ध धर्म की आंतरिक भावना में ओतप्रोत हैं। बौद्ध धर्म के अनुसार ज्ञान के प्रकाश के साथ निर्वाण पद प्राप्त होता है, जो साधक-भिक्षु निर्वाण पद को प्राप्त होता है, उस को बुद्ध, मुनि, भिक्षु आदि कहा जाता है। गुरु रविदास वाणी के अनुसार, जो साधक निर्वाण पद अर्थात् प्रभ को प्राप्त होता है, उस को संत, भगत, मुनि आदि कहा जाता है। इसलिए महापुरुषों को बुद्ध धर्म में भी मुनि कहा जाता है और गुरु रविदास वाणी में भी मुनि कहा जाता है। यहां तक दोनों विचारों में कोई अंतर नहीं है। इस तरह बुद्ध, मुनि, भिक्षु, ज्ञान प्राप्ति के आधार पर संत भगत मुनि के बराबर हैं।

परंतु गुरु रविदास जी एक कदम आगे जाते हैं, वे ऐसे संत, भगत को प्रभ का ही रूप मानते हैं -

(उ) संत अनंतहि अंतरु नाही ॥४॥२॥

(अ) रिदै रामु की न जपसि अभाग ॥४॥१॥

ज्ञान प्राप्ति से ही संत या मुनि बनता है और ज्ञान प्राप्ति से ही बुद्ध, मुनि या भिक्षु बनता है। गुरु रविदास जी के अनुसार, मुनि प्रभ का ही रूप है, चाहे बुद्ध धर्म ने प्रभ के संकल्प को मान्यता नहीं दी है परंतु उपरोक्त विचार में मुनि प्रभ का रूप ही सिद्ध होता है।

गुरु रविदास जी के सृजित विचाराधीन शब्द में यही सिद्ध किया गया है, कि निर्वाण पद की प्राप्ति प्रभ प्राप्ति ही है। इस शब्द की प्रस्तावना नंबर 2 से बन्द नंबर 4 तक बुद्ध धर्म की विचारधारा और गुरु रविदास जी की विचारधारा

बराबर-बराबर चलती है।

बौद्ध धर्म के सिद्धांत के अनुसार संसार दुखों का घर है। दुख इच्छाओं के कारण हैं, इच्छाएं ज्ञान के प्रकाश के साथ काबू की जा सकती हैं। इस उद्देश्य के लिए बुद्ध धर्म में अष्टांग मार्ग को अपनाया गया है। ज्ञान प्राप्ति के साथ ही निर्वाण प्राप्ति होती है और साधक बुद्ध, मुनि, भिक्षु बन जाता है।

अब हम इस सिद्धांत की विचाराधीन शब्द में खोज करते हैं।

1. बुद्ध धर्म के अनुसार संसार दुखों का घर है। गुरु रविदास जी भी संसार को दुखों का घर मानते हैं -

(उ) जत देखउ तत दुख की रासी॥

(अ) सो मुनि मन की दुबिधा खाइ॥

दुविधा का अर्थ दुख और इच्छाएं हैं, जो साधक इच्छाओं को मार लेता है, उस के दुख भी साथ ही साथ मिट जाते हैं, तो गुरु रविदास जी की वाणी भी मूलभूत तौर से संसार को दुखों का घर मानती है।

2. बुद्ध धर्म के अनुसार दुखों का कारण इच्छाएं हैं।

गुरु रविदास जी भी इच्छाओं को ही दुखों का कारण मानते हैं। उन की वाणी में इच्छाओं की घातक और विरोधी शक्ति का वर्णन है।

(उ) म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास॥
पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस॥१॥

(अ) माधो अबिदिआ हित कीन॥
बिबेक दीप मलीन॥१॥ रहाउ॥

(इ) मन का सुभाउ सभु कोई करै॥

अत: गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि मन की इच्छाएं इतनी शक्तिशाली हैं कि इन पर काबू पाना अत्यंत कठिन है। इस कारण हर जीव का मन इन इच्छाओं की पूर्ति के लिए व्याकुल हुआ फिरता है। यह सब कुछ अज्ञानता के कारण ही हो रहा है। बुद्ध धर्म में भी दुखों का कारण इच्छाएं और अज्ञानता ही है।

3. बुद्धधर्म के अनुसार इच्छाओं (अज्ञानता) को ज्ञान के साथ काबू किया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए बौद्ध धर्म में अष्टांग मार्ग को अपनाकर इस को परिपक्व करने के लिए अभ्यास किया जाता है।

गुरु रविदास-वाणी में इच्छाओं को विकार भी कहा गया है। काम, क्रोध, मोह, लोभ (अहंकार), मद, मतसर ईर्ष्या पांच विकार हैं। गुरु रविदास जी भी

इन विकारों को काबू करने के लिए ज्ञान को आवश्यक मानते हैं। समूची सृष्टि के दायित्वों अर्थात् नियमों को पहचान कर के साधक ज्ञान प्राप्त करता है। 'बरन सहित जो जापे नाम।।' ज्ञान प्राप्ति के लिए दायित्वों की पहचान में साधक के दुखों के कारण पांच विकार भी हैं। सो साधक विकारों पर काबू पाने के लिए पहचान द्वारा प्राप्त किए ज्ञान को परिपक्व करने के लिए अमली जीवन में कर्म का अभ्यास करता हुआ पूरी ताकत से संघर्ष करता है।

(उ) रविदास दास उदास तजु भ्रमु
तपन तपु गुर गिआन॥

(अ) गिआनै कारन करम अभिआसु॥

अत: बुद्ध धर्म में इच्छाओं पर काबू पाने के लिए अष्टांग मार्ग द्वारा समाधि के साथ ज्ञान प्राप्ति के लिए अभ्यास करता है। संघर्ष करता है। इसी तरह गुरु रविदास वाणी में विकारों पर काबू पाने के लिए ज्ञान को परिपक्व करने हेतु कर्म अभ्यास है। यह ज्ञान की परिपक्वता या ज्ञान प्राप्ति प्रभ की मेहर के कारण ही प्राप्त होती है।

4. बुद्ध धर्म के अष्ट मार्ग के कठिन अभ्यास से ज्ञान का प्रकाश होता है। यही ज्ञान का प्रकाश निर्वाण पद है। ज्ञान के प्रकाश से दुखों के कारण इच्छाओं पर काबू पाया जाता है। इस तरह मुनि जीते जी निर्वाण पद की पदवी को प्राप्त होता है।

गुरु रविदास वाणी में भी ज्ञान के प्रकाश के साथ इच्छाओं पर काबू पाया जाता है अर्थात् पांचों विकार काबू में हो जाते हैं, परंतु यह ज्ञान प्राप्ति प्रभ की बख्शीश से प्राप्त होती है।

(उ) उपजिओ गिआनु हूआ परगास॥
करि किरपा लीने कीट दास॥
कहु रविदास अब त्रिसना चूकी॥
जपि मुकंद सेवा ताहू की॥४॥१॥

(अ) गिआनु भइआ तह करमह नासु॥३॥

अत: गुरु रविदास जी बड़ी परिपक्वता के साथ स्पष्ट करते हैं, कि जीते जी साधक को ज्ञान का प्रकाश प्रभ की बख्शीश से प्राप्त होता है। यह धर्म वैराग की अवस्था है। इस अवस्था में तृष्णाओं और इच्छाओं आदि का नाश हो जाता है। यह अवस्था निर्वाण पद की अवस्था ही है। इस तरह गुरुजी स्पष्ट करते हैं कि

साधक ज्ञान की प्राप्ति से ही निर्वाण पद प्राप्त कर लेता है। यही निर्वाण पद की प्राप्ति प्रभु प्राप्ति है।

घ्रित कारन दधि मथै सइआन॥
जीवत मुकत सदा निरबान॥
कहि रविदास परम बैराग॥
रिदै रामु की न जपसि अभाग॥४॥१॥

अत: उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है कि महात्मा बुद्ध ने मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा के आदि धर्म में से आत्मा-परमात्मा का संकल्प निकाल कर, इसमें संशोधन किया है। इस प्रकार महात्मा बुद्ध ने आदिधर्म के मूलभूत तथा वैज्ञानिक तत्व सिद्धांत को अपनी विचारधारा में से शामिल कर लिया।

परन्तु गुरु रविदास जी ने बुद्ध धर्म की विचारधारा में आत्मा-परमात्मा के संकल्प को पुन: दर्ज करके इसमें सैद्धांतिक संशोधन कर दिया है, जिस प्रकार आज के वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार गुरु रविदास जी ने मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा के मौलिक धर्म, आदिधर्म को पुन: सजीव करके विश्वव्यापी विचारधारा का सृजन किया है, जिस प्रकार विश्व धर्म को पुनर-जन्म होता है।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है कि :-

1. गुरु रविदास जी ने बुद्ध धर्म का गहन और सर्व पक्षीय अध्ययन कर के इस विचार के अधीन शब्द का सृजन किया है। इस कारण ही उन की वाणी में बौद्ध धर्म के मूलभूत तत्वों के सिद्धांत को पूर्ण रूप में निरूपित किया गया है।

2. इस चर्चा से यह भी स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी ने बुद्ध धर्म के सिद्धांतों को स्वीकार नहीं किया है। वह तो आत्मा और परमात्मा के संकल्प को बुद्ध धर्म की विचारधारा के साथ विरोध कर के जड़ से ही मूलभूत तौर पर एक नई विचारधारा का सृजन करते हैं। यह नई विचारधारा एक नए विश्व धर्म की स्थापना का साधन बनी है, जिस को गुरु रविदास जी के अनुयायी आदिधर्म का नाम देते हैं।

आदिधर्म का नाम और भी अधिक उचित हो जाता है, जब हम बीसवीं सदी के प्रौढ़ विद्वानों के विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन करते हैं।

आदिधर्म मंडल की स्थापना 1925 ई. पूर्व की गई और इसकी पहला

सम्मेलन 11-12 जून 1926 को बाबू मंगू राम मुगोवालिया की अध्यक्षता में हुआ था। इस सम्मेलन में पास किए गए निम्नलिखित प्रस्ताव हैं :-

''1. (अ) हमारा शुभकामना सन्देश 'जय गुरुदेव' है।'

2. (स) हमारा पवित्र शब्द 'सोहम' है।

3. हमारे धर्म आदिधर्म संस्थाक हैं, महर्षि वाल्मीकि

गुरु रविदास, गुरु कबीर, गुरु नाम देव, गुरु सेन हैं और वाणी के ग्रँथ का नाम गुरु 'आदि परगास' माना गया है।''[1]

इस प्रस्ताव के अनुसार दो तथ्य स्पष्ट होते हैं -

1. मूलनिवासियों का धर्म आदिधर्म है।

2. मूलनिवासियों की औलाद का धर्म ग्रँथ 'गुरु आदि परगास' है। अब हम इस पर चर्चा करते हैं -

1. आदिधर्म मंडल के प्रौढ़ विद्वानों ने लार्ड लोथियन कमेटी के आगे आदिधर्म के बारे में स्पष्ट किया है -

सवाल - लार्ड लोथियन ने सवाल किया था, आप कौन हैं?

हमारी ओर से जबाब - हम आदिधर्मी हैं।

सवाल - आदिधर्म का तात्पर्य क्या है?

हमारी ओर से जबाब - हम भारत वर्ष के असली मूल निवासियों की सन्तान हैं। इस लिये हम आदिवासी (आदिधर्मी) हैं। हिन्दू, तिब्बत और मध्य एशिया से आए हैं और मुसलमान अरब देशों से आए हैं।

''हम न तो जनेऊ धारण करते हैं और न ही पांच कके रखते हैं और न ही खतना करवाते हैं। हम तो केवल परमात्मा के आदि सिद्धांतों के मुताबिक जिस सूरत में पैदा होते हैं, उसी में ही मरते हैं। उसी आदिधर्म को ही मानते हैं, इसलिए हम आदिधर्मी हैं।''[2]

इन आदि सिद्धांतों अर्थात् कुदरत के नियमों के अनुसार ही गुरु रविदास जी ने अपनी वाणी का सृजन किया है। आदिधर्म मंडल ने गुरु रविदास वाणी द्वारा मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के धर्म के मूलभूत तत्व कुदरती नियमों को समझ कर अपनाया और प्रचार किया है। यह भी स्पष्ट किया है, कि वे भारत के मोहन जोदड़ो और हड़प्पा के आदिवासियों की सन्तान हैं। इसलिए वे भारत के

1-2. आदि धर्म मंडल रिपोर्ट - पृष्ठ : ११- कौमी उडारियां विशेषांक - पृष्ठ : १२

आदिवासी हैं। आदिवासियों के धर्म का नाम आदिधर्म ही सही तथा उचित है।

आदिधर्म नाम और भी उचित तब लगता है, जब यह स्पष्ट हो जाता है कि आदिधर्म की जड़ें मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के श्रमण धर्म में विराजमान हैं। दरअसल श्रमण धर्म ही आदिधर्म है, इस का विकास बुद्ध धर्म द्वारा गुरु रविदास वाणी की नई विचारधारा के रूप में प्रकट हुआ है। इस नई विचारधारा के स्थापित किए गए नए विश्वधर्म को आदि धर्म कहना ही उचित है।

2. इस विश्व धर्म की नई विचारधारा का आधार मोहनजोदड़ो और हड़प्पा अर्थात् सिंधुघाटी के श्रमण धर्म अर्थात् आदधर्म की कुदरती नियमों के अनुसार सृजित विचारधारा है, जिस को बुद्धवाणी द्वारा गुरु रविदास जी की वाणी में प्रकट किया गया है। कुदरत का अर्थ है, ब्रह्म और नियम का अर्थ है ज्ञान। कुदरती नियमों का अर्थ है ब्रह्म ज्ञान। यही ब्रह्म ज्ञान गुरु रविदास और अन्य गैर महापुरुषों की वाणी में निरूपित है। उपरोक्त प्रस्ताव में गुरु रविदास जी, गुरु कबीर और गुरु नामदेव की वाणी का नाम गुरु आदि प्रगास ग्रंथ रखा है। आदि प्रगास का अर्थ है आदि से प्रगट हुआ ज्ञान। यह ज्ञान दुनिया भर की सब से पुरानी सिंधु घाटी की विचारधारा का वह ज्ञान है, जो बुद्धवाणी द्वारा गुरु रविदास वाणी में प्रकट हुआ है। इस तथ्य से साबित हो गया है कि गुरु आदि प्रगास ग्रंथ बहुत ही समीप का नाम है, उचित नाम है। इस तथ्य से यह भी साबित हो गया है कि गुरु आदि प्रकास ग्रंथ के धर्म का उचित नाम केवल आदि धर्म ही हो सकता है।

गहनता तथा गम्भीरता से अध्ययन करने के उपरांत उपरोक्त चर्चा से परिपक्व हो गया है कि –

3. सिंधु घाटी मूल निवासियों की कुदरती नियमानुसार सृजित विचारधारा जो बुद्धवाणी के द्वारा गुरु रविदास वाणी में से प्रकट हुई है। यह सिन्धु घाटी के धर्म की विचारधारक का ही विकसित रूप है, जिस के ग्रंथ का नाम गुरु आदि प्रगास बहुत ही उचित है।

4. मूलनिवासियों की सन्तानों ने बीसवीं शताब्दी में गुरु आदि प्रगास ग्रंथ के आधार पर ही अपने धर्म का नाम आदिधर्म रखा हुआ है। इसलिये आदि प्रगास ग्रंथ की नई विश्वव्यापी विचारधारा के स्थापित किए धर्म को 'आदिधर्म' कहना ही उचित है।

अत: गुरु नामदेव जी, गुरु रविदास जी और गुरु कबीर जी की वाणी के ग्रंथ का नाम गुरु 'आदि प्रगास' है और इस वाणी की नई विश्वव्यापी विचारधारा के स्थापित किए धर्म का सही और उचित नाम 'आदिधर्म' है।

अब भारत सरकार ने भी आदिधर्म को, धर्म के रूप में स्वीकार करके, 1931 की जनगणना में शामिल कर लिया है।

1. आदिवासी शूद्रों, अछूतों का धर्म मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा अर्थात् सिंधु घाटी का धर्म है।

2. इस धर्म को विद्वानों ने ''श्रमण धर्म'' या अवैदिक धर्म का नाम दिया है परन्तु बीसवीं शताब्दि के आदिवासी विद्वानों ने इसे 'आदिधर्म' का नाम दिया है, जिसको भारत रत्म बाबा साहिब डा. अंबेडकर ने लोथियन कमेटी के समक्ष वकालत करके आदिधर्म को स्वीकार करके, भारत सरकार से स्वीकृत करवा लिया।

3. सटीक पृष्ठ : 342 का नुक्ता-1

4. सटीक पृष्ठ : 433 का नुक्ता-2

5. गुरु रविदास जी की समूची वाणी, ''सोहम के सिद्धांत'' की व्याख्या करते हैं। जिसको हमने ''प्रभ दी होंद'' तथा उसकी सृजना ''सृष्टि'' तक ही सीमित रखा है।

''सोहम'' सैद्धांतिक शब्द है। ''सो'' का अर्थ है ''प्रभु'' तथा ''अहं'' का अर्थ है ''प्रभ की सृष्टि'' दोनों ही सोहम में विराजमान हैं।

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा॥

दोनों ही एक दूसरे से ओतप्रोत हैं।

गुरु रविदास वाणी और जपुजी के पांच-खंड

गुरु रविदास जी ने विचाराधीन शब्द में बड़ी स्पष्टता और विलक्षणता से प्रभु प्राप्ति की विधि को निरूपित किया है। गुरु जी फरमाते हैं कि जो साधक समूची सृष्टि के सिद्धांतों नियमों को पहचान लेता है अर्थात् सृष्टि का ज्ञान प्राप्त कर लेता है और उसके अनुसार प्रभु का सिमरन करता है, वह इच्छा रहित तथा कामना रहित हो जाता है, दूसरे अर्थों में वह प्रभु को प्राप्त होता है। (वर्ण का एक अर्थ भाई काहन सिंह नाभा ने, 'भाव शब्द का सिद्धांत अर्थ' भी किया है। इस तुक में यही अर्थ सही है।)

1. धर्म खंड

समूची सृष्टि के नियमों की पहचान में जीव और अजीव सब की समझ और पहचान साधक को हो जाती है। इस में जीव को निखेड़ अर्थात् खोल कर गुरु जी ने उस की मुक्ति के लिए

बरन सहित जो जापै नामु॥
सो जोगी केवल निहकामु॥१॥

के सिद्धांत का सृजन किया है। अत: इस विचार में साधक कुदरत के नियमों को समझ कर और पहचान कर इस के अनुसार प्रभु का सिमरन करता है, जिस कारण वह प्रभु को प्राप्त होता है। साधक की इस मानसिक अवस्था को जपुजी में गुरु नानक देव जी ने धर्म खंड का नाम देकर व्याख्या की है।

तिथै सोहनी पंच परवाणु।।
नदरी करमि पवै नीसाणु।। **(पाउड़ी 34)**

डॉक्टर राम सिंह इन पंक्तियों पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं -

''उस सच्चे दरबार में (नाम जप कर शुभ कर्मों के नज़रिए से ऊंचे उठ कर के निरंकारी मेहर द्वारा चुने गए) पवित्र मनुष्य (कर्मों की देवी कसौटी पर) पूरे उतरते हैं और शोभा प्राप्त करते हैं। (उन के ऊपर) दयावान निरंकार की मेहर द्वारा (परवानगी अर्थात् स्वीकृति की) मुहर लग जाती है।''[1]

1. जपुजी के पांच खंड - पृष्ठ : ९६

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है, कि दोनों महापुरुषों के धर्म खंड संबंधी विचार एक जैसे ही हैं। गुरु रविदास जी के विचार संकेत मात्र हैं, परंतु गुरु नानक देव जी ने इस विचार की विस्तारपूर्वक व्याख्या की है।

2. ज्ञान खंड

गुरु रविदास जी ने सृष्टि के समूचे सिद्धांतों या नियमों में केवल जीव के आत्मिक जीवन के विकास के लिए मन की इच्छाओं अर्थात् पांच विकारों का खुल कर वर्णन किया है। जीव को अलग तौर से पूर्ण रूप में सूचित करने के लिए इन विकारों का शक्तिशाली ढंग से बोध करवाया है, फिर साधक पांच विकारों पर शक्तिशाली ढंग से काबू पा कर प्रत्यक्ष ज्ञान को दृढ़ करता है। अनभै का अर्थ भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार प्रत्यक्ष ज्ञान भी है, जो इस बन्द के नज़दीक लगता है। यही प्रत्यक्ष ज्ञान साधक को प्रभु रूप बनाने का साधन बनता है।

सो मुनि मन की दुबिधा खाइ॥
बिनु दुआरै त्रै लोक समाइ॥
मन का सुभाउ सभु कोई करै॥
करता होइ सु अनभै रहै॥२॥

अत: गुरु रविदास जी ने विशाल ज्ञान का बोध करवाने के साथ-साथ अलग तौर से प्रभावशाली ढंग से पांचों विकारों पर काबू पा कर प्रत्यक्ष ज्ञान का ज़िक्र किया है। इन पांचों विकारों को किस प्रकार काबू किया जा सकता है, इस का जिक्र गुरु जी ने इस शब्द की तीसरे बन्द में किया है। इस प्रकार गुरु जी ने साधक की इस मानसिक अवस्था को संपूर्ण व्यापक ज्ञान की अवस्था के तौर पर सृजित किया है। इस मानसिक अवस्था को जपुजी मॉन गुरु नानक देव जी ने ज्ञान खंड में सृजित किया है।

उ) धर्म खंड का इहो धरम।।
गिआन खंड का आखहु करमु।। **(पाउडी ३५)**

डॉक्टर राम सिंह लिखते हैं, धरम के नियम वाले अर्थों को मैं तो चौतीसवीं पाउड़ी में कारण कार्य का नियम, जो केवल धरती के प्राकृतिक और मानवीय भाग्य के बीच प्रयोग किया गया बताया है। पैंतीसवीं पाउड़ी में उसी नियम को सारी सृष्टि में व्यापक दर्शाने का प्रयास किया गया है।[1]

1. वही - पृष्ठ : १७

इस विचाराधीन शब्द में जो सृष्टि के नियमों को पहचान कर साधक प्रभु का सिमरन करता है और प्रत्यक्ष ज्ञान को प्राप्त करता है, उसे डॉक्टर राम सिंह ने धर्म खंड में कारण कार्य का नियम कहा है और इन्हें सृष्टि के नियमों का विकास ही ज्ञान खंड में व्यापक प्रयोग किया गया दिखाया गया है, जिस को गुरु रविदास जी ने प्रत्यक्ष ज्ञान के रूप में दर्ज किया है, उसी को ज्ञान खंड के प्रसंग में छतीसवीं पाउड़ी की पहली तुक में ज्ञान को स्पष्ट किया गया है।

गिआन खंड महि गिआन परचंडु।। पाउड़ी ३६

अत: ज्ञान खंड संबधी भी दोनों महापुरुषों के विचार मिलते-जुलते हैं।

यहां यह बात स्पष्ट करनी ज़रूरी है, कि गुरु रविदास जी के साधक ने आत्मिक जीवन के विकास की पहली मानसिक अवस्था में ही समूची सृष्टि के नियमों की पहचान और सूझबूझ प्राप्त की है, परंतु गुरु नानक देव जी के साधक ने भी धर्म खंड में समूची सृष्टि के नियमों की पहचान की है और ज्ञान खंड अर्थात् दूसरी अवस्था में उसको समूची सृष्टि की अनंतता का बोध होता है। साधक सृष्टि के भरपूर ज्ञान उद्देश्य भरपूर हो जाता है, परंतु गुरु रविदास जी का साथ पहली अवस्था में ही सृष्टि के ज्ञान के साथ भरपूर हो जाता है और दूसरी अवस्था में अपने उद्देश्य प्रभु प्राप्ति के लिए मन का स्वभाव पांच विकारों को खोल कर उन के ऊपर काबू किस प्रकार पाया जा सकता है, इस पर बहुत अधिक ध्यान केंद्रित कर के महत्वपूर्ण पहचान और सूझबूझ प्राप्त करता है, अर्थात् प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है।

इस प्रकार गुरु रविदास जी और गुरु नानक देव जी के अनुसार साधक दूसरी अवस्था तक सृष्टि के ज्ञान से युक्त हो जाता है।

3. श्रम खंड

इस मानसिक अवस्था के पीछे गुरु रविदास जी उस विधि का सृजन करते हैं, जिस के द्वारा साधक ज्ञान की प्राप्ति करके आत्मा को प्रकाश कर सकता है। ज्ञान वाली मानसिक अवस्था को प्राप्त करने के लिए गुरु जी की बताई गई विधि के अनुसार कर्म अभ्यास करता है। साधक स्पष्ट किये गए ज्ञान के अनुसार इस अवस्था में अच्छे कर्मों को अर्थात् सच्च को प्राप्त करने के लिए और बुरे कर्मों को अर्थात् विकारों को त्यागने के लिए पूरी शक्ति से संघर्ष करता है, जब साधक इस कठोर साधना के संघर्ष में सत्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है, तब प्रत्यक्ष ज्ञान अर्थात् ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है, इस विधि को गुरु जी ने

निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया है-

गिआनै कारन करम अभिआसु।।

जिस कर्म अभ्यास का ज़िक्र गुरु रविदास जी ने विचाराधीन शब्द में किया है, इस को गुरु नानक देव जी के श्रम कांड का नाम दिया है। श्रम का अर्थ है, उद्यम, मेहनत। अत: यह खंड कड़ी मेहनत का खंड है, जिस में साधक अपने आत्मिक जीवन के विकास के बीच विकारों को त्याग कर श्रम सच को प्राप्त करने के लिए कड़ा उद्यम करता है। डॉ. राम सिंह लिखते हैं -

> 'श्रम खंड उस को (साधक को) सुसंस्कृत बनाने के लिए त्याग करता है, परंतु यह तैयारी बहुत कठिन कोशिशों द्वारा सिरे चढ़ती है। इस संबंध में गुरु नानक देव जी का फरमान है, श्रम खंड की वाणी रूप।'[1]

तिथे घड़ती घड़ीए बहुत अनूप।। (पाउड़ी ३६)

इस खंड की शेष तुकों ऊपर की दो तुकों की व्याख्या है। आंतरिक दो तुकों में वह क्षेत्र निश्चित किए गए हैं, जिन के बीच आत्मिक जीवन का विकास होता है। इन दोनों तुकों के अनुसार साधक की सूरति, मति, मनी और बुद्धि का ज्ञान खंड के ज्ञान के अनुसार विकास होता है। यह अर्थ उपरोक्त दो तुकों के अर्थों के बीच समाए हुए हैं। इस तरह स्पष्ट हो जाता है, कि गुरु रविदास जी का कर्म अभ्यास और गुरु नानक देव जी का श्रम खंड एक ही विचार और भावना को व्यक्त करते हैं। अत: साधक की इस मानसिक अवस्था संबंधी दोनों महापुरुषों के विचार एक जैसे ही हैं।

4. कर्म खंड

गुरु रविदास जी प्रभु प्राप्ति के लिए बताई गई विधि का विकास करते हुए फरमाते हैं कि जब ज्ञान का प्रकाश होता है तो 'करमहि नास' विकारों का नाश हो जाता है। यह प्राप्ति प्रभु की बख्शिश से ही संभव होती है।

अत: इस मानसिक अवस्था में प्रभु की बख्शीश होती है और साधक ब्रह्म ज्ञान के प्रकाश से युक्त हो जाता है। साधक और प्रभ के बीच एक स्वरता हो जाती है, दोनों के बीच कोई अंतर नहीं रहता है। गुरु रविदास जी का फरमान है-

गिआनु भइआ तह करमह नासु॥३॥

शब्द के बिना भी गुरु जी ने इस संबंध में विचार प्रकट किए हैं, जो इस

1. वही - पृष्ठ : ३३

विचार को और परिपक्व और स्पष्ट करते हैं –

उपजिओ गिआनु हूआ परगास॥
करि किरपा लीने कीट दास॥
कहु रविदास अब त्रिसना चूकी॥
जपि मुकंद सेवा ताहू की॥४॥१॥

'गिआनु भइआ तह करमह नासु' वाली तुक उपरोक्त बन्द से स्पष्ट हो जाती है, जो संकेत इस तुक में गुरु रविदास जी ने दिए हैं, उपरोक्त बन्द उसकी ही व्याख्या है। इस तरह स्पष्ट हो गया है कि ज्ञान के प्रकाश के साथ विकारों का नाश हो जाता है और प्रभ मिलाप हो जाता है, परंतु यह मिलाप प्रभ की कृपा से ही संभव हो सका है। अत: यह मानसिक अवस्था साधक पर प्रभ की बख्शिश की अवस्था है, जिस से ब्रह्म ज्ञान का प्रकाश होता है और साधक से प्रभु की अभेद्यता हो जाती है।

इस 'करमहि नास' वाली मानसिक अवस्था को गुरु नानक देव जी ने 'कर्म-खंड' का नाम दिया है। कर्म खंड के बारे में डॉक्टर राम सिंह लिखते हैं कि ''कर्म-खंड प्राप्त करते हुये आत्माओं का खंड है, जिन के परिश्रम का अब मूल्य पड़ता है।''[1]

एक और स्थान पर डॉक्टर राम सिंह स्पष्ट करते हैं कि कर्म खंड में साधक के प्रभ एकमेक हो जाते हैं। वे लिखते हैं,

'गुरु नानक साहब ने कर्म खंड में साधक के मन में 'रामु' या 'सच' के बस जाने के तथ्य का उल्लेख तीन बार किया है। इससे पता चलता है कि इस खंड का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष दैवी होने का साधक की चेतना में प्रधान होना है।'[2]

इस विचार से दृष्टिगोचर होता है कि कर्म-खंड बख्शीश इसका खंड है और साधक और प्रभ इस खंड में अभेद्य हो जाते हैं। गुरु नानक देव जी का फरमान है –

कर्म खंड की वाणी जोरु॥
तिथै होरु ना कोई होरु॥ **(पाउड़ी ३७)**

इस पाउड़ी की शेष तुकों की उपरोक्त दो तुकों की ही व्याख्या है। अन्तिम

1. वही – पृष्ठ : ५३ 2. वही – पृष्ठ : ४८

तुक 'करहि आनंदु सचा मनि सोइ' में पाउड़ी का सारांश दिया है। आखिरी तुक के अर्थ हैं, जिनके मन में उस सच्चे प्रभु का वास है। वह साधक परमानंद की अवस्था को प्राप्त होते हैं।

अत: साधक की इस मानसिक अवस्था के बारे में भी दोनों महापुरुषों के विचारों में पूर्ण एकता है।

5. सच खंड

आखिरी मानसिक अवस्था के बारे में गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि साधक कठिन तपस्या के बाद प्रभु की कृपा से ज्ञान को स्पष्ट करता है और साधक और प्रभ अभेद्य हो जाते हैं। इस तरह इसी जीवन में जीते जी ही साधक विकारों से मुक्त हो जाता है। गुरु जी ने इसको परम वैराग्य की अवस्था और निर्वाण पद की प्राप्ति कहा है। उन्होंने अपने शब्द में इस अवस्था को निम्नलिखित प्रस्तावना में व्यक्त किया है –

घ्रित कारन दधि मथै सइआन॥
जीवत मुकत सदा निरबान॥
कहि रविदास परम बैराग॥
रिदै रामु की न जपसि अभाग॥४॥१॥

गुरु रविदास द्वारा सृजित आखिरी मानसिक अवस्था निर्वाण अवस्था को गुरु नानक देव जी ने सचखंड की अवस्था कहा है। डॉक्टर साहिब सिंह इस मानसिक अवस्था का वर्णन करते हुए लिखते हैं,

''अकाल पुरख की कृपा के पात्र बनकर अन्तिम पांचवें खंड में जाकर निवास करता है, अर्थात् अकाल पुरख के साथ एकम एक हो जाते हैं। सर्वोच्च ज्योति की हजूरी में पहुँच जाते हैं, जो सारे जीवों की संभाल कर रहा है, जिसका हुकम सारे प्रयोग कर रहे हैं।''[1]

इस प्रकार आखिरी मानसिक अवस्था के बारे में भी दोनों महापुरुषों के विचार एक ही हैं।

अत: साधक की पांचों मानसिक अवस्थाओं में गुरु रविदास जी और गुरु नानक देव जी के विचार एक जैसे हैं। उपरोक्त विचार की पुष्टि इस तथ्य से भी की जाती है कि गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज सारी वाणी में एक जैसे विचार हैं, कहीं

1. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण (प्रथम पोथी) – पृष्ठ : १२५

पर भी रत्ती भर विरोध नहीं है। इस तथ्य से यही स्पष्ट हो जाता है कि गुरु रविदास जी के विचार अधीन शब्द में आए विचार गुरु नानक देव जी के जपुजी साहिब में आए पांच खंडों के विचार एक जैसे ही हैं। गुरु रविदास जी ने इस शब्द में स्पष्ट और अर्थ भरपूर संकेत दिए हैं परंतु गुरु नानक देव जी ने इन विचारों को व्याख्या सहित व्यक्त किया है।

पांचों अवस्थाओं या पांच खंडों के अध्ययन के उपरांत, यह बात स्पष्ट करनी ज़रूरी है कि आत्मिक जीवन के विकास के बीच वास्तविक रूप में उपरोक्त खंडों का खोलकर वर्णन करना संभव नहीं है। प्रथम दोनों खंडों में साधक सृष्टि और फिर इसके बीचो-बीच आत्मिक जीवन के विकास के लिए नियमों की पहचान करके अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए तीसरी मानसिक अवस्था या खंड में प्रवेश करता है। इस अवस्था में वह प्राप्त किए गए ज्ञान के अनुसार प्रभु प्राप्ति के लिए कड़ा परिश्रम करता है परंतु पहली अवस्था को दूसरी अवस्था की अपेक्षा अमली रूप में विस्तार से खोलकर वर्णन नहीं किया जा सकता। उसी तरह तीसरी अवस्था को भी विस्तार पूर्वक वर्णन करना संभव नहीं है। चौथी अवस्था प्रभ की बख्शिश का है। साधक की कठोर मेहनत रंग लाती है और प्रभ उसके प्रेम और लगन से निहाल होकर बख्शिश करता है। यही स्थिति है, जहां साधक और प्रभ अभेद्य हो जाते हैं और फिर खुलकर समझाने की संभावना ही मिट जाती है। इसके पीछे झटपट ही साधक परम वैराग्य की अवस्था को प्राप्त होता है, जिसको निर्वाण पद की अवस्था या सचखंड की अवस्था का नाम दिया है। इस तरह तीसरी अवस्था से चौथी अवस्था को खुल कर बताना संभव नहीं है और न ही चौथी अवस्था की अपेक्षा पांचवीं अवस्था को विस्तारपूर्वक बताया जा सकता है। इन अवस्थाओं का खुलकर वर्णन करना केवल साधक के समझने और समझाने के लिए ही किया गया है। दरअसल इन मानसिक अवस्थाओं का खुलकर वर्णन हो ही नहीं सकता, क्योंकि आत्मिक जीवन के विकास की यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है।

उपरोक्त चर्चा से तीन निर्णायक परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं -

1. पहली मानसिक अवस्था से पांचवीं मानसिक अवस्था तक आत्मिक जीवन का विकास निरंतर जारी है। इसकी खुल कर व्याख्या नहीं की जा सकती

है। इन अवस्थाओं का खुलकर वर्णन करना केवल तीन अवस्थाओं को समझने समझाने के लिए ही किया गया है।

2. आत्मिक जीवन के विकास की ही पांचों अवस्थाओं में आए नियम और प्रभ प्राप्ति की विधि में गुरु रविदास जी और गुरु नानक देव जी के विचारों में समानता है।

3. गुरु रविदास जी ने इन अवस्थाओं को संकेत मात्र परंतु स्पष्ट और अर्थ पूर्वक व्यक्त किया है। गुरु नानक देव जी ने इन अवस्थाओं को व्याख्या सहित व्यक्त किया है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी के विचार अधीन शब्द के अंतरिम विचार विधान का सृजन आलौकिक है। मुख्य तौर पर इसमें प्रभ प्राप्ति की विधि का उल्लेख है। साथ ही साथ इस शब्द में दो विचारधाराओं का भी उल्लेख है। एक उनकी अपने नए धर्म की सृजित नई विचारधारा है। दूसरी विचारधारा है बुद्ध धर्म की। गुरु जी ने बुध धर्म की विचारधारा में संशोधन करके इसको अपनी विचारधारा के अनुरूप ढाला है। इस तरह, इस में आत्मा और परमात्मा के संकल्प को एकम एक करके, इसको नया रूप प्रदान किया है। यह गुरु जी की ब्रह्म ज्ञान के महान चिंतक के तौर पर एक महान उपलब्धि है, जो उनकी विश्वव्यापी वैज्ञानिक दृष्टि, गहन, गंभीर सूझ-बूझ और गहरी सोच के कारण ही संभव हो सकी है।

दूसरी विशेषता इस शब्द की यह है कि इसकी हर एक बन्द में दृष्टांत देकर विचारों की गहन तथा गंभीर भावना को स्पष्ट किया गया है।

मूल निवासियों के आधिधर्म बुद्ध दर्शन प्रत्यक्ष सत्य (Reception) अनुसार (Infrrence) के प्रमाणों को मानता है। इनमें प्रत्यक्ष को विशेष महत्त्व दिया जाता है। गाथा 93..... निर्वाण को देख लिया है।'' परन्तु गुरु रविदास जी इसे बिल्कुल रद्द कर देते हैं :-

बिन देखे उपजै नहीं आसा।।
सो दीसै सो होइ बिनासा।।

प्रथम बन्द नंबर 1 में (बुद्ध का प्रत्यक्ष रूप में देखने का सिद्धांत) बुद्ध दर्शन प्रत्यक्ष सत्य (Perception) के अनुमान (inference) दो प्रमाणों को मानता है। इन में प्रत्यक्ष को विशेष महत्व दिया जाता है। गाथा-93 '---- निर्वाण को देख लिया है।' परन्तु गुरु रविदास जी इस दर्शन को पूर्ण तौर से रद्द कर देते हैं-

बिन देखै उपजै नहीं आसा।।
जो दीसै सो होइ विनासा।।४३।।

गुरु रविदास जी ने प्रभ के प्रति विचार को स्पष्ट किया है। प्रभ दिखाई नहीं

देता है, इस कारण उसकी प्राप्ति के लिए रुचि नहीं पैदा होती है। इस बन्द की अगली तुक में हिंदू धर्म के भगवानों और अवतारों को रद्द किया गया है। गुरुजी दूसरी तुक में स्पष्ट कर देते हैं कि प्रभ तो अमर है और सृष्टि के कण-कण में विचरण करता है, परंतु जो कुछ दिखाई देता है, यह नाश होने वाला है। इसके साथ दो विचार स्पष्ट होते हैं -

1. प्रभ को देखे बिना प्रभ प्राप्ति के लिए रुचि नहीं पैदा होती है।
2. जो दिखाई देता है, वह नाशवान है, इस कारण वह प्रभ नहीं हो सकता। प्रभ तो अमर है परन्तु बुध का प्रत्यक्ष रूप में देखने का सिद्धांत है। इस तरह हिंदू धर्म के भगवान और अवतारों का भी खंडन हो जाता है, क्योंकि मौत ने उनको अपनी लपेट में ले लिया है।

इन विचारों का निर्णायक उत्तर इस बन्द की पिछली तुकों में दिया गया है। जोगी का दृष्टांत देकर इन दोनों विचारों को स्पष्ट किया गया है। जो जोगी जीव समूची सृष्टि के साथ एक स्वर होकर प्रभ का सिमरन करता है, वह विकारों से रहित हो जाता है अर्थात् प्रभ के दर्शन कर लेता है। इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि वर्ण के साथ जोगी का सम्बंध मूलनिवासियों के आदिधर्म को दृढ़ करता है।

इस दृष्टांत से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि प्रभ देहधारी नहीं हो सकता है। अत: देहधारी भगवान अवतार प्रभ नहीं है, क्योंकि देह नाशवान है, जबकि प्रभ अमर है। इस तरह गुरु रविदास जी ने प्रथम प्रस्तावना में देहधारी भगवानों का खंडन किया है और साथ ही साथ स्पष्ट किया है कि प्रभ के दर्शन सिमरन से हो सकते हैं।

रहाउ की पहली तुक में स्पष्ट किया गया है कि जो प्रभ का सिमरन करता है वह प्रभ का स्पर्श प्राप्त कर लेता है। दूसरी तुक में स्पष्ट किया गया है कि प्रभ का स्पर्श प्राप्त करते ही साधक के दुख और इच्छाएं दुविधाओं का नाश हो जाता है। यह बौद्ध धर्म की विचारधारा की ओर संकेत है। इसकी पुष्टि प्रस्तावना नंबर दो में आए दुविधा शब्द के मुनि के साथ संबंधित होने से हो जाती है।

इस प्रकार गुरु रविदास जी ने बौद्ध धर्म की विचारधारा के बीच आत्मा और परमात्मा का संकल्प शामिल करके इसको अपनी विचारधारा के अनुरूप सोच लिया है। यह तथ्य बन्द नंबर 2 से प्रस्तावना नंबर 4 में आए विचारों से स्पष्ट हो जाता है। अब हम दोनों विचारधाराओं का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं -

बुद्ध धर्म	गुरु रविदास वाणी
1. बुध धर्म के अनुसार संसार दुखों का घर है।	1. गुरु रविदास वाणी के अनुसार भी संसार दुखों का घर है। (उ)'जित देखउ तित दुख की रासी।।' (अ)'सो मुनि मन की दुविधा खाई।।' वही मुनि है, जो दुखों को मार लेता है और प्रभु को प्राप्त कर लेता है। इस तुक में मुनि का दृष्टांत इस विचार को भी स्पष्ट करता है और बुद्ध धर्म से संबंध को भी परिपक्व करता है। यह दृश्य अलंकार प्रस्तावना नंबर 2 में निरूपित है और बुध धर्म की पहली और दूसरी अवस्था से संबंधित है।
2. बुद्ध धर्म के अनुसार दुखों का कारण इच्छाएं हैं।	2. गुरु रविदास जी की वाणी के अनुसार जो जीव मन की इच्छा की प्राप्ति के लिए व्याकुल है, वही दुख प्राप्त करते हैं। **मन का सुभाउ सभु कोई करै॥** **करता होइ सु अनभै रहै॥२॥** ''परंतु जो मन को वश में करके अपने-आप करता (अर्थात् प्रभ) बन जाता है वह प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है।''[1]
3. बुद्ध धर्म के अनुसार ज्ञान को दृढ़ करने से 'मुनि' इच्छा पर काबू पा लेता है। इस उद्देश्य के लिए वह आठ सुनहरी सिद्धांतों पर अमल करता है।	3. गुरु रविदास जी की वाणी के अनुसार प्रत्यक्ष ज्ञान अर्थात् ज्ञान के प्रकाश से ही ज्ञान को स्पष्ट करता है। **गिआनै कारन करम अभिआसु।।** और ज्ञान भावार्थ काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार से मुक्त हो जाता है। **गिआनु भइआ तह करमह नासु॥३॥** ज्ञान प्राप्ति से ही प्रभ प्राप्ति है।
4. बुद्ध धर्म के अनुसार ज्ञान के प्रकाश से मुनि इसी जीवन में ही निर्वाण पद प्राप्त करता है।	4. गुरु रविदास जी की वाणी के अनुसार प्रत्यक्ष ज्ञान अर्थात् प्रभ के ज्ञान के प्रकाश से ही मुनि इसी जीवन में जीते जी जीव निर्वाण पद को प्राप्त होता है। **जीवत मुकत सदा निरबान॥** मुनि मुक्ति प्राप्त करके अर्थात् निर्वाण पद प्राप्त करके शाश्वत आनंद में निवास करता है। उपरोक्त तुक से पहले दृष्टांत देकर इस तुक के सूक्ष्म विचार की गहनता और उद्देश्य को स्पष्ट किया गया है।

अत: ज्ञान के प्रकाश से जिस प्राप्ति को महात्मा बुध निर्वाण प्राप्ति कहते हैं, गुरु रविदास जी उसी ज्ञान-प्रकाश को प्रभु प्राप्ति का नाम देते हैं। 'रिदै राम की ना जपसी अभाग' इसलिए निर्वाण प्राप्ति का अर्थ प्रभु प्राप्ति ही है। इसी कारण गुरु जी ने प्रभु प्राप्ति के लिए निर्वाण शब्द का उपयोग किया है। इसलिए अंतरीव तौर से महात्मा बुध परमात्मा को मानते हैं परंतु उन्होंने अपनी विचारधारा में कहीं भी इसका ज़िक्र नहीं किया है।

इस तरह दोनों विचारधाराओं का सुमेल किया गया है ?

1. भक्त रविदास : जीवनी तथा रचना - पृष्ठ : ४७

5. गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि यह निर्वाण पद की अवस्था परम वैराग्य की अवस्था है। महात्मा बुद्ध ने भी धमपद की बन्द नंबर 273 में सब अवस्थाओं में बीच वैराग्य की अवस्था को श्रेष्ठ माना है।[1] यह परम वैराग्य की अवस्था ही प्रभु प्राप्ति है। इसलिए गुरु जी फरमाते हैं कि हे अभागे! प्रभ तेरे मन में निवास करते हैं, तूँ उस की आराधना क्यों नहीं करता है? जिस से निर्वाण पद अर्थात् प्रभ प्राप्ति हो जाती है।

गुरु रविदास जी ने भैरव राग की प्रकृति को ध्यान में रखकर ही इस शब्द की रचना की है। भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों के अनुसार भैरव राग में धार्मिक विचारधारा का आपसी विरोध होता है। गुरु ग्रंथ साहब की विचारधारा के अनुसार ही धार्मिक विचारधाराओं को दृष्टांतों के साथ परिपक्व करके उभारा गया है और उनको सही माना गया है। संगीत शास्त्रियों ने इस राग की भावना को स्पष्ट करने के लिए एक दृष्टांत गुरु नामदेव जी का और विरोधी पक्ष इस्लाम के पैरोंकारों का है। दूसरा दृष्टांत प्रहलाद और विरोधी पक्ष और हिरण्याक्ष का है। दोनों घटनाओं में प्रभ प्रेमियों और प्रभ को मानने वालों की विचारधाराओं के बीच टकराव है। दोनों घटनाओं के बीच प्रभ प्रेमियों गुरु नामदेव जी और भगत प्रह्लाद की विचारधाराओं की जीत हुई है। संगीत शास्त्रियों ने अपने शब्दों में इसकी पुष्टि की है,

> ''इस राग में भगत प्रह्लाद जी की कथा का जिक्र गुरु साहिब (महल्ला-3) में विस्तारपूर्वक किया है, जिसने हिरण्याक्ष का हंकार तोड़ा है। गुरु की करनी के बारे में भी दर्शाया गया है कि 'मृग पकरे बिन घोर हथियार।' यहां भी नामदेव जी की शूरवीरता का भी ज़िक्र है जिन्होंने मां को कह दिया था, **'न हउ तेरा पूंगरा ना तू मेरी माई।।'**[2]

इस शब्द में आत्मा परमात्मा को न मानने वाली बुद्ध धम्म की विचारधारा का गुरु रविदास जी की आत्मा परमात्मा को मानने वाली विचारधारा के साथ टकराव है, आपसी विरोध है। गुरु रविदास जी ने भी प्रभ को न मानने वाली बुद्ध धर्म की विचारधारा में आत्मा और परमात्मा के संकल्प को दर्ज करके संशोधन किया है और एक नई विचारधारा का सृजन कर के नए विश्व धर्म का सृजन किया है। इस तरह विचाराधीन शब्द की रचना राग भैरव की ज़रूरतों के अनुसार की गई है।

1. धमपद - पृष्ठ : १३९ 2. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ९४

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि परमात्मा को देखे बिना मन में प्रभु प्राप्ति के लिए विश्वास पैदा नहीं होता है, प्रभु प्राप्ति की उत्सुकता (इच्छा) पैदा नहीं होती है। समस्या यह भी है कि जो दिखाई देता है वह नाशवान है। जबकि प्रभु अविनाशी है। अगली तुकों में आप ही इसका हल बताते हैं कि जो साधक (जोगी) सृष्टि के नियमों की पहचान करके प्रभु का सिमरन करता है, केवल वही साधक ही इच्छाओं रहित, वासना रहित हो जाता है अर्थात् प्रभु को प्राप्त होता है।।१।।

इसलिए जो भी कोई साधक प्रभु का नाम सिमरन करता है, वह जिस तरह पारस का स्पर्श करते ही लोहे से सोना बन जाता है, उसी तरह साधक प्रभ रूपी पारस के स्पर्श करते ही दुखों, इच्छाओं और विकारों आदि से निर्लेप हो जाता है और प्रभु रूप बन जाता है।।२।। जो जोगी, मुनि प्रभु सिमरन द्वारा प्रत्यक्ष बुध संकल्प प्राप्त करता है, इस तरह गुरु रविदास जी की विचारधारा बुध विचारधारा से भिन्न हो जाती है। यह बौद्ध विचारधारा में वृद्धि करके उस में संशोधन कर के वैज्ञानिक बना दिया है।। रहाउ।।१।।

गुरु रविदास, बुद्ध मत के मुनि को समझा रहे हैं कि केवल वही मुनि है, जो मन के दुखों दुविधा को मिटा देता है, इच्छाओं पर काबू पा लेता है। इस तरह वह मुनि तीन लोगों के बीच अर्थात् सृष्टि में व्यापक प्रभ के साथ समरस हो जाता है परन्तु बुद्ध मत में आत्मा परमात्मा का संकल्प दर्ज कर के बुद्ध विचारधारा को संशोधित कर दिया है। समूची दुनिया मन के विकारों, इच्छाओं के पीछे व्याकुल होकर दुखों में तड़प रही है, परंतु जो जोगी, मुनि (साधक) प्रभ का सिमरन करता है, वह प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करके करतार रूप ही बन जाता है।।२।।

बुद्ध मत के अनुसार जिस प्रकार सारी सृष्टि की वनस्पति फल देने के लिए ही प्रफुल्लित होती है और फूल लगते हैं परंतु फल लगते ही फूल टूट जाते हैं अर्थात् नष्ट हो जाते हैं। उसी तरह ही साधक प्रभ सिमरन द्वारा अपने अनुभव से प्राप्त किये गए उपरोक्त ज्ञान को परिपक्व करने के लिए अमली रूप में जीवन के बीच इच्छाओं, विकारों आदि का नाश करने के लिए कर्म करता है, कड़ी मेहनत के साथ अभ्यास करता है। जब साधक को ब्रह्म-ज्ञान (प्रत्यक्ष ज्ञान) प्राप्त हो

जाता है तो विकारों और इच्छाओं का नाश हो जाता है, प्रभ प्राप्ति हो जाती है।।३।।

इसी तरह बुद्धिमान स्त्री घी की प्राप्ति के लिए दही को मथती है। जब घी बन जाता है तो मथना बंद कर देती है अर्थात् साधक ने कड़ी मेहनत से उद्यम करके विकारों और इच्छाओं पर काबू पाकर ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति की है। यही ज्ञान का प्रकाश ही मुनि (साधक) को इसी जीवन में जीते जी ही शाश्वत निर्वाण पद की प्राप्ति प्रदान करता है। यही प्रभ प्राप्ति है। इस कारण गुरु रविदास जी अपने आप को कह रहे हैं कि हे अभाग्य! तू इस परम वैराग्य की प्राप्ति अर्थात् प्रभ प्राप्ति के लिए अपने ही हृदय में निवास करने वाले प्रभु का सिमरन क्यों नहीं करता? अर्थात् तू हृदय में निवास करने वाले प्रभु का सिमरन अवश्य कर।।४।।१।।

शब्द - 37

बसंत वाणी गुरु रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

तुझहि सुझंता कछू नाहि॥
पहिरावा देखे ऊभि जाहि॥
गरबवती का नाही ठाउ॥
तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ॥१॥
तू कांइ गरबहि बावली॥
जैसे भादउ खूंबराजु
तू तिस ते खरी उतावली॥१॥ रहाउ॥
जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु॥
तनि सुगंध ढूढै प्रदेसु॥
अप तन का जो करे बीचारु॥
तिसु नही जमकंकुर करे खुआरु॥२॥
पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु॥
ठाकुरु लेखा मगनहारु॥
फेड़े का दुखु सहै जीउ॥
पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ॥३॥
साधू की जउ लेहि ओट॥
तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि॥
कहि रविदास जो जपै नामु॥
तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु॥ ४॥१॥[1]

(पृष्ठ ११९६)

पद अर्थ - **ऊभी जाहि**-अकड़ती है। **गरबवति**-अहंकारन। **लवै काऊ**-काल चक्कर लगा रहा है।।१।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ११९६

काई-क्यों। **खरी**-बहुत उताबली-बहुत जल्दी में।।१।। रहाउ।।

कुरंक-हिरन। **जम कंकरु**-यमदूत।।२।।

कलत्र-पत्नी। **फ़ेड़े का**-बुरे कर्मों का। **पीउ**-प्यारा।।३।।

साधु-महापुरुष, गुरु। **कोटि**-करोड़ों। **जाति**-मनुष्य का विकारी स्वभाव। जाति, स्वाभाविक अलंकार है। इस का नाम जाति अलंकार भी है।।४।।१।।

क्या मन का खेड़ा जाति के कारण मिलता है, बिल्कुल नहीं। फिर जाति के अर्थ जात-पात किस प्रकार सिद्ध होते हैं। जाति का अर्थ है सुभा। सुभा में 6 अहंकार तथा भय समाप्त करने ज़रूरी हैं। स्वामी रामानन्द वैराग्य में

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में सभी विकारों में से अकेले विकार, अहंकार को चुनकर, दृष्टांतों द्वारा इसकी घातक शक्ति के प्रभाव की व्याख्या की है। उन्होंने पहरावा, शरीर, हिरण, प्रभ कलत्र आदि दृष्टांत देकर मनुष्य के अहंकार के घातक प्रभाव का बोध कराया है और स्पष्ट किया है कि ज्यादातर अहंकार ही मनुष्य के दुखों का घर है। यही इस शब्द का मुख्य उद्देश्य है, जिसकी रहाउ में पुष्टि की गई है और अहंकार की विनाशकारी शक्ति को इतना भयानक दर्शाया गया है कि अहंकार मनुष्य के विनाश में बड़ी खुंब के विनाश जितना समय भी नहीं लगता है। आखिरी प्रस्तावना नंबर 4 में गुरु जी ने इसका इलाज भी बताया है कि जो जीव प्रभ का सिमरन करता है वह दुखों से छुटकारा पा लेता है।

बन्द नंबर 1 में संसारिक पदार्थों के कारण मनुष्य के अहंकारी स्वभाव को प्रकट किया गया है। मनुष्य को अपने शाही ठाठ बाट वाले पहरावे को देखकर ही अहंकार में कुछ दिखाई नहीं देता है, जिस की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। उस को भी ज्ञान नहीं होता है कि अहंकार का जीवन में कोई स्थान नहीं है। अहंकार के कारण ही जीवन 'काल' के मुंह में जा रहा है।

इसलिए 'रहाउ' में शरीर की नश्वरता का बोध करवाया गया है कि जिस प्रकार भाद्रपद महीने में उत्पन्न होने वाली खुंब की आयु बहुत कम होती है, उसी प्रकार ही अहंकार से भरे जीव की आयु उससे भी कम होती है। तू अहंकार में मस्त अपनी उम्र को बड़ी जल्दी से बर्बाद कर रहा है। यह सब अज्ञानता के कारण ही है।

इस अज्ञानता को खत्म करने के लिए बन्द नंबर 2 में गुरु रविदास जी हिरण का दृष्टांत देकर मनुष्य को इससे मुक्त होने का उपाय बताते हैं। वे फरमाते हैं कि जिस प्रकार हिरण को अज्ञानता के कारण यह पता नहीं कि सुगन्धी उसके अपने अंदर है, परंतु वह ढूंढता बाहर फिरता है। उसी तरह जीव भी अज्ञानता के कारण अपने मन में झांक कर नहीं देखता है। यदि वह विचार करके अपने मन से पड़ताल करके अपने अंदर निवास करते प्रभ का सिमरन करे तो वह यमदूतों की खुआरी से मुक्त हो जाता है।

बन्द नंबर 3 में पत्नी और पुत्र के प्रति अहंकार को लेकर जीव को इसके घातक प्रभाव का बोध करवाया है। पुत्र और पत्नी का अहंकार बहुत ही घातक और बुरे कर्मों वाला है। इन अहंकार भरे बुरे कर्मों के कारण प्रभ ने इनका हिसाब लेना है। प्रभ का सिमरन न करके जीव इन बुरे कर्मों के कारण ही अंत समय दुख प्राप्त करता है। इन बुरे कर्मों के कारण ही अंत समय उसका कोई साथी नहीं होता है, फिर वह किसको प्यारा-प्यारा कह कर अपनी सहायता के लिए बुलाएगा अर्थात् अंत समय पर ऐसे मनुष्य का कोई साथी नहीं हो सकता है।

इस कारण इन अहंकार आदि विकारों से मुक्त होने के लिए जीव गुरु की शरण में आ जाते हैं और उनके करोड़ों पाप मिट जाते हैं। इसलिए बन्द नंबर 4 में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि यदि प्रभ की भक्ति करते हैं, नाम का सिमरन करते हैं, उनका विकारी स्वभाव मिट जाता है, जन्म-मरण का चक्कर खत्म हो जाता है और चौरासी लाख योनियों के साथ उनका कोई संबंध नहीं रहता है।

परंतु लगभग सभी विद्वान जाति का अर्थ नीची जाति अर्थात् चमार जाति बताते हैं। यदि इन अर्थों को सही मान लिया जाए तो एक बड़ी कठिन समस्या उत्पन्न हो जाती है। गुरु रविदास जी ने जन्म मरण से मुक्ति पाने के लिए और चौरासी लाख योनियों से भी वे मुक्त हो गए हैं, परंतु उन को चमार जाति से मुक्ति नहीं मिली है। विद्वान उनको प्रभ प्राप्ति के कारण ब्रह्मज्ञानी कहते हैं, परंतु ब्रह्म ज्ञान होने के बावजूद उनकी जाति चमार ही रही। उदाहरण के लिए भाई गुरदास को पेश किया जा सकता है। 'भगत भगत कर बजिआ चौंह चकां बिच इक चमरेटा।' प्रश्न किया जा सकता है कि गुरु रविदास जी खुद अपने-आप को चमार क्यों लिखते हैं? इसका उत्तर बड़ा महत्वपूर्ण और अर्थ से भरपूर है। वह चमार जात लिखते हुए फक्र करते हैं और साथ ही साथ अपनी कौम की हीन भावना को शक्तिशाली ढंग से खत्म करने के लिए ऊंची जाति वालों को चुनौती (Challenge) भी देते हैं कि वे चमार होते हुए भी प्रभ को प्राप्त हो गए हैं, इसके बावजूद हिंदू धर्म के ग्रंथों की विरोधता के। वह ग्रंथ मेरी प्रभ प्राप्ति के कारण अर्थहीन हो गए हैं। इस चर्चा से स्पष्ट है कि इस तुक में आई जाति का हिंदू धर्म ग्रंथों द्वारा पैदा की गई जाति के साथ कोई संबंध नहीं है। हिंदू धर्म ग्रंथों की पैदा की गई जाति हीन भावना पैदा करती है, जबकि इस तुक में

आई जाति एक विकार के रूप में प्रयोग की गई है और मानवीय स्वभाव को उजागर करती है। इस कारण गुरु रविदास जी की तुक, 'तिस जाति ना जन्म ना जोनी काम।।' के बीच जाति के अर्थ हैं, जो भी जीव मुक्ति प्राप्त कर लेता है उसका विकारी स्वभाव भी मिट जाता है।

अत: विद्वानों के अर्थ और इस तुक के हमारे अर्थ अंतर्विरोधी हो गए हैं।

यह विरोधात्मक स्थिति इस कारण उत्पन्न हो गई है कि विद्वानों ने चमार जाति को विकारों का अंग मान लिया है, परंतु इस शब्द की बन्द नंबर 4 में स्पष्ट किया गया है कि जो भी साध की शरण में जाता है, उसके करोड़ों विकारों द्वारा सृजित पाप मिट जाते हैं। क्या जाति पापों में शामिल है? पाप तो विकारों ने पैदा किए हैं। विकार कुदरत की रचना है। जाति हिंदू धर्म ग्रंथ ऋग्वेद, रामायण, गीता आदि द्वारा पैदा की गई है। विकार विश्वव्यापी है परंतु जाति केवल हिंदू धर्म व्यापी है। विकार केवल कुदरत की ही रचना है, परंतु जाति कुदरत की रचना नहीं है। प्रभ के विधान का हिस्सा नहीं है। इसलिए चमार जाति विकारों का अंग नहीं है। जब चमार जाति विकार का अंग ही नहीं है, फिर इससे मुक्ति का क्या अर्थ है?

इसलिए निर्णायक निष्कर्ष यही निकलता है कि विचाराधीन शब्द में आया शब्द 'जाति' का अर्थ जात पात से संबंधित नहीं है। इसका अर्थ है 'मनुष्य का विकारी स्वभाव' जिससे जीव ने प्रभ प्राप्ति के लिए मुक्ति प्राप्त करनी है। भाई काहन सिंह नाभा लिखते हैं -

(सहज धर्म का कथन) किसी वस्तु के जाति स्वभाव का वर्णन 'स्वभाविक' अलंकार है। इसका नाम 'जाति' भी है।

उदाहरण

लउकी अठसठि तीरथी नाई।।
कउरापनु तऊ न जाई।। **(सोर कबीर, पृष्ठ ६५६)**[1]

इसलिए विचाराधीन शब्द की तुक में आए शब्द का अर्थ है 'मानवीय स्वभाव'। अब सारी तुक का अर्थ इस तरह है, 'गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि प्रभ के सिमरन से मनुष्य का विकारी स्वभाव मिट जाता है और मन पवित्र हो जाता है। लाखों योनियों से उसका कोई वास्ता नहीं रहता है। इस तरह जीव को

1. महान कोश - पृष्ठ : १८९

परमानंद प्राप्त हो जाता है।' भारत के प्रसिद्ध संगीत शास्त्रियों के अनुसार भी राग बसंत गाने पर मन को प्रसन्नता मिलती है।

उनका कथन है ,

''जहां बसंत में चारों ओर फूल खिले होते हैं, वहां बसंत राग गाते समय मन को प्रसन्नता मिलती है।''[1]

1. राग नाद शब्दि सोहणे - पृष्ठ : ९६

शब्द अर्थ - हे जीव! आपको तो सूरत ही नहीं है, आप तो अपने अमीरी ठाठ-वाट के पहरावे को देख कर अहंकार में घमंड करता है, परंतु यहां अहंकार को कोई जगह नहीं है। अहंकार के कारण आपके सिर के ऊपर कालचक्र मंडरा रहा है।।१।।

इसलिए हे कमले शरीर! तू किस बात का अहंकार करता है? जिस प्रकार भादों के महीने में उत्पन्न हुई खुंब की कुछ दिन की ही उम्र होती है, उसी तरह तू भी अहंकार के कारण, उससे भी जल्दी ही नष्ट होने वाला है।।१।। रहाउ।।

इस कारण अहंकार आदि विकारों के कारण अर्थात् अज्ञानता के कारण ही हे जीव! जिस प्रकार हिरण को इस तथ्य का ज्ञान नहीं है कि जिस सुगंधि की तलाश में वह बाहर भटक रहा है, वह, दरअसल उसके अपने शरीर के अंदर ही नाभि में है, उसी प्रकार अज्ञानता के कारण जीव को पता नहीं कि आनंद प्राप्ति का स्रोत प्रभ उसके मन के अंदर ही है। इसलिए जो जीव विचार के साथ खोज करके अज्ञानता को खत्म करने के लिए प्रभ का सिमरन करता है, वह यमदूतों की परेशानी से बच जाता है और आनंद प्राप्त कर लेता है।।२।।

इस तरह जो जीव अपनी पत्नी और पुत्र का अहंकार करता है और प्रभ को भूल जाता है, उससे प्रभ ने उसके बुरे कर्मों का लेखा मांगना ही है। इस प्रकार जीव पत्नी और पुत्र के अहंकार के कारण ही दुख भोगता है। मरने के बाद इन रिश्तेदारों ने उसके साथ नहीं जाना है। उस समय हे जीव! अपनी मदद के लिए तू 'प्यारा' 'प्यारा' कह करके कि इसको पुकारेगा?।।३।।

इसलिए इन अहंकार आदि विकारों से मुक्ति पाने के लिए जो जीव गुरु की शरण में चला जाता है, उसके सभी पाप मिट जाते हैं। इसलिए गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि जो जीव प्रभ का सिमरन करता है, उनका अहंकार आदि विकारों के कारण बना अज्ञानता वाला विकारी स्वभाव मिट जाता है, जन्म मरण का चक्कर खत्म हो जाता है। इस तरह जीव का चौरासी लाख योनियों के साथ कोई संबंध नहीं रहता।।१।।

शब्द - 38

मलार वाणी भगत रविदास जी की

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं॥
रिदै राम गोबिंद गुन सारं॥१॥ रहाउ॥
सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे
संत जन करत नही पानं॥
सुरा अपवित्र नत अवर जल रे
सुरसरी मिलत नहि होइ आनं॥१॥
तर तारि अपवित्र कर मानीऐ रे
जैसे कागरा करत बीचारं॥
भगति भागउतु लिखीऐ तिह ऊपरे
पूजीऐ करि नमसकारं॥२॥
मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता
नितहि बानारसी आस पासा॥
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति
तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा॥३॥१॥[1]

(पृष्ठ १२९३)

शब्दार्थ - बिखिआत- प्रसिद्ध, **जानी**-मानी। **सारं**-वसे हैं, सिमरन करता।१।। रहाउ।।

सुरसरि-गंगा। **सलल**-पानी। कृत-बनाई हुई। **बारूनी**-शराब। **सुरा**=शराब। **न त**-नहीं तो, भावें। **आनं**-अलग।।।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : १२९३

तरि- वृक्ष। **तारि**-ताड़ का वृक्ष जिस से नशीला रस निकाला जाता है अर्थात् ताड़ की शराब। **कागरा**-कागज़। **बीचारे**-विचार करना। **भगति भगउत**-प्रभ का गुणगान, प्रभ की सिफत सलाह।।२।।

कुट बांडला-चमड़ा उतारना, ढोर-मरे हुए पशु। विप्र-ब्राह्मण। शरणाई-शरण में।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

इस शब्द का उच्चारण राग मलार में किया गया है। मलार राग के बारे में भारत के संगीत शास्त्रियों का निर्णय है कि –

'राग मलार' के बारे में गुरु अमर दास जी का बचन है –

'मलारु सीतल रागु है हरि धिआइऐ सांति होइ।।'[1]

इस शब्द में सारे जीव विशेष कर ब्राह्मण लोगों का गुरु रविदास जी की कृपा के साथ प्रभ के साथ जुड़कर मन शीतल और शांत हो गया है। इसी कारण वे रविदास जी को श्रद्धा सहित दंडवत प्रणाम करते हैं।

इस शब्द के 'रहाउ' में गुरु जी ने एक सिद्धांत निरूपित किया है कि चाहे कोई ब्राह्मण हो चाहे चमार, प्रभ सब को प्राप्त हो सकता है। बन्द नंबर 1 में इस सिद्धांत को ऊंच का दृष्टांत देकर सिद्ध किया है और बन्द नंबर 2 में इसी सिद्धांत को नीच का दृष्टांत दे कर सिद्ध किया है। अन्तिम बन्द के नंबर 3 में हू-ब-हू प्रत्यक्ष हो रहे आलौकिक दृश्य को पेश करके इस सिद्धांत की सार्थकता को दृढ़ किया गया है।

यह शब्द नागर ब्राह्मणों को संबोधित करके उच्चारण किया गया है। गुरु रविदास जी ब्राह्मणों को समझाते हुए कहते हैं कि, हे ब्राह्मण लोगो! मैं डंके की चोट पर कहता हूं कि मेरी जात चमार है। इसको हिंदू धर्म ग्रंथ, प्रभ की पूजा की आज्ञा नहीं देते हैं और न ही शूद्र को हिंदू धर्म के कथित स्वर्ग में जाने की अनुमति देते हैं। गुरु जी परिपक्वता के साथ स्पष्ट करते हैं कि मेरे चमार होने के बावजूद भी प्रभ ने मेरे ऊपर बख्शिश की है और प्रभ के समूचे गुण मेरे हृदय में प्रकाशमान हो गए हैं अर्थात् प्रभ मेरे अंदर निवास करता है।

इस प्रकार गुरु जी ने स्पष्ट किया है कि हिंदू धर्म ग्रंथ वेद[2], रामायण, गीता आदि प्रभ ने खुद ही रद्द कर दिए हैं। इन ग्रंथों के अनुसार शूद्र का प्रभ प्राप्ति करना महापाप है।[3] इस बात के लिए उसे मौत की सजा मिलती है[4] परंतु यहां

1. राग नाद शब्दि सोहणे – पृष्ठ : १०० 2. ऋग्वेद – १०-९०. ११-१२
3. गीता – २/३३ तथा ३/३५
4. श्रीमद् वाल्मीकि रामायण अनुवादक चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा – १०.६५.४

प्रत्यक्ष रूप में प्रभ चमार के मन में विराजमान हो गए हैं, इस के साथ ही हिंदू धर्म ग्रंथों की विचारधारा बुनियादी तौर से रद्द हो गई है।

अपने उपरोक्त विचार को पुष्टि करने के लिए बन्द नंबर 1 में ब्राह्मणों के सबसे महत्वपूर्ण तीर्थ स्थान गंगा का दृष्टांत देते हुए, गुरु रविदास जी ब्राह्मणों को समझाते हैं कि हे ब्राह्मण लोगो! गंगा का जल पवित्र है परंतु यदि इस जल की शराब निकाली जाए तो वह जल शराब बन जाने के कारण अपवित्र बन जाता है। इस कारण महापुरुष उस का सेवन नहीं करते हैं। चाहे यह शराब गंगा के पवित्र जल से ही बनी हो। इसी तरह जो ब्राह्मण अपने अंदर प्रभ के महान गुण खो बैठता है तो वह ब्राह्मण नहीं रहता, वह एक अपवित्र मनुष्य बन जाता है।

इस बन्द की दूसरी तुक में ब्राह्मणों को समझाने के लिए बिल्कुल विपरीत दृष्टांत दे कर अपने विचारों को और परिपक्व करते हैं कि हे ब्राह्मण लोगो! यदि पवित्र शराब और चाहे और कोई गंदा पानी गंगा के पानी में जा मिले तो वह अलग नहीं रह जाता है अर्थात् वह भी पवित्र गंगाजल बन जाता है

इसलिए स्पष्ट है कि जो चमार प्रभ के गुण प्राप्त कर लेता है तो वह नीच नहीं रह जाता है बल्कि वह महान बन जाता है।

अत: स्पष्ट है जो चमार प्रभ के गुण प्राप्त कर लेता है वह नीच नहीं रह जाता है, बल्कि वह महान बन जाता है

यह सैद्धांतिक अटल सच्चाई है कि यदि अच्छाई बुराई बन जाए तो वह अपना मान और महत्व खो बैठती है। इससे विपरीत जो बुराई, अच्छाई बन जाए तो मान और महत्ता पुन: पुणे सजीव होकर प्रकाशमय होकर जगमगा उठती है।

अगली बन्द नंबर 2 में नीच और अपवित्र दृष्टांत को लेकर ब्राह्मणों को गुरु रविदास जी समझाते हैं कि हे ब्राह्मण लोगो! ताड़ के वृक्ष को अपवित्र माना जाता है, क्योंकि उस में से नशे वाला रस निकलता है, जिसको ताड़ की शराब भी कहा जाता है। इसी कारण ताड़ के बने कागज़ों को भी अपवित्र ही समझा जाता है अर्थात् बुरी वस्तु से बनी हुई हर वस्तु भी बुरी ही है। इस प्रकार चमार को भी हर तरफ से बुरा ही माना जाता है

इस बन्द की दूसरी तुक में नीच को उत्तम सिद्ध किया गया है परंतु जब इन कागज़ों के ऊपर प्रभ का गुणगान, उस की प्रशंसा-सिफत सलाह लिख दिए जाते हैं तो यह अपवित्र नहीं रहते हैं, बल्कि पवित्र बन जाते हैं और लोग उन

कागज़ों को नमस्कार करते हैं। इसी तरह ही ब्राह्मण लोगो! हिंदू धर्म ग्रंथों द्वारा नीच समझा जाने वाला चमार अब नीच नहीं रहा। अब मैं प्रभ के गुण धारण करके उत्तम पदवी प्राप्त कर चुका हूं।

इस कारण बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी हूबहू प्रत्यक्ष घट रही आलौकिक घटनाओं को पेश करते हैं। यह आश्चर्यजनक घटना बनारस में हुई है, जहां हिंदू धर्म के दुनिया भर के जाने-माने विद्वान रहते हैं। बनारस में गंगा के किनारे हिंदू धर्म की उत्पत्ति हुई है और यहां ही विस्तार हुआ है, यहां ही फला-फूला है और प्रचार किया गया है, परिणामस्वरूप यहां ही जात पात का घातक-खूंखार दैत्य हिंदू धर्म की कोख से जन्मा और उत्पन्न और जवान होकर विकराल रूप धारण किया है, जिस का पालन पोषण पहले वेदों के रचयिता ब्रह्म ऋषियों ने किया है और पालन पोषण 'भगवान' राम ने रामायण के बीच और कृष्ण ने गीता में किया है। ऐसे भयानक विकराल रूप धारण कर चुकी जात-पात के बंधनों को तोड़ने की तड़पा-तड़पा कर मार देने वाली मौत से भी भयानक सज़ा, महाबलि क्रांतिकारी महान शूरवीर गुरु रविदास जी को अपने मार्ग से रोक न सकी। इसके विपरीत उसने महाबलि योद्धा बनकर इस जात-पात के घातक दैत्य का मलिया मेट (संहार) करके हिंदू धर्म ग्रंथों और उनके अवतारों का सदा-सदा के लिए अंत कर के, वे बन्द नंबर 3 में निरूपित सिद्धांत को दृढ़ता प्रदान करते हैं। वे स्पष्ट करते हैं कि चाहे मेरे कुटंब के लोग हर रोज़ बनारस के आसपास मरे हुए पशुओं को ढोते और उन की चमड़ी उतारते हैं, फिर भी हिंदू धर्म के धर्म कर्म में जाने-माने परिपक्व महान ब्राह्मणों के प्रधान नेता गुरु जी की दलीलों को समझ कर आध्यात्मिक विचारधारा को मान कर शीतल मन और शांत हो जाते हैं तथा अपने हिंदू धर्म और उसकी पक्षपाती विचारधारा को त्याग देते हैं, सिर्फ प्रभ की शरण में आए दासों के दास गुरु रविदास को गुरु स्वीकार कर के श्रद्धा सहित धरती पर सो कर, पांवों पर गिर कर दंडवत् प्रणाम करते हैं।

इसलिए निर्णय स्पष्ट है कि प्रभ के विधान में सब बराबर हैं, जो प्रभ से प्रेम करता है, वही प्रभ रूप हो जाता है

शब्दार्थ - हे नागर ब्राह्मण जनो! हिंदू धर्म के अनुसार मेरी जात चमार प्रसिद्ध है। हिंदू धर्म के अनुसार चमार प्रभ भक्ति नहीं कर सकता है। इसलिए प्रभ प्राप्ति का तो प्रश्न ही नहीं उठता परंतु हिंदू धर्म के इस फतवे के बावजूद मेरे हृदय में प्रभ का निवास है।।१ ।। रहाउ।।

इस अटल सच्चाई को ब्राह्मणों को समझाते हुए गुरु रविदास जी फरमाते हैं कि हे ब्राह्मण लोगो! गंगा के पवित्र जल से बनी शराब का महापुरुष सेवन नहीं करते हैं, इस तरह यदि कोई ब्राह्मण इस प्रकार का सेवन करे तो वह ब्राह्मण अपना महान गुण खो बैठता है और वह बुरा बन जाता है।

इस के विपरीत यदि अपवित्र शराब या इससे अलग कोई अन्य गंदा पानी गंगा में मिल जाए तो वह गंदा नहीं रहता है, अपितु गंगाजल ही बन जाता है। इस तरह जो चमार प्रभ के गुण प्राप्त कर लेता है, वह भी प्रभ रूप ही बन जाता है।।१ ।।

इस विचार को नीच और अपवित्र दृष्टांत देकर गुरु रविदास जी ब्राह्मणों को समझाते हैं कि हे ब्राह्मण जनो! ताड़ के वृक्ष को अपवित्र माना जाता है, क्योंकि उस में से ताड़ की शराब निकलती है। इसी कारण ताड़ से बने कागज़ों को भी अपवित्र ही माना जाता है परंतु जब उन अपवित्र कागज़ों के ऊपर प्रभ के गुणगान उसकी प्रशंसा लिखी जाती है, तो वह भी पवित्र बन जाते हैं और लोग उसकी पूजा करते हैं और श्रद्धापूर्वक नमस्कार करते हैं।

इसी तरह हिंदू धर्म के अनुसार मैं नीच चमार हूं, परंतु प्रभ प्राप्ति के कारण मैं उत्तम पदवी पर पहुंच गया हूं।।२ ।।

परिणाम स्वरूप चाहे हर रोज़ मेरे गांव वासी बनारस के आसपास मरे हुए पशुओं को ढोते हैं और उनकी चमड़ी को उतारते हैं, फिर भी हिंदू धर्म के धर्म-कर्म में परिपक्व जाने-माने ब्राह्मण नेता मुझे दासों के दास रविदास को गुरु स्वीकार करके श्रद्धापूर्वक मेरे पांवों पर गिर कर दंडवत् प्रणाम करते हैं।।३ ।।१ ।।

शब्द - 39

मलार वाणी भगत रविदास जी की

੧ੴ सतिगुर प्रसादि।।

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
तास सम तुलि नही आन कोऊ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥
जा कै भागवतु लेखिऐ अवरु नही पेखीऐ
तास की जाति आछोप छीपा॥
बिआस महि लेखीऐ सनक महि पेखीऐ
नाम की नामना सपत दीपा॥१॥
जा कै ईदि बकरीदि कुल
गऊ रे बधु करहि मानीआहि सेख सहीद पीरा॥
जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी
तिहू रे लोक परसिध कबीरा॥२॥
जा के कुटंब के ढेढ सभ
ढोर ढोवंत फिरहि
अजहु बंनारसी आस पासा॥
आचार सहित बिप्र करहि डंडउति
तिन तनै रविदास दासान दासा॥३॥१॥[1]

(पृष्ठ १२९३)

पद अर्थ - तेऊ-वही। जना-जन का बहुवचन, पुरुष, सेवक। पदम कवलासपति- पद्म पति और कवलास पति, विष्णु और शिव जी। तास-उस, (प्रभ)। सम तुलि-बराबर का। आन-अन्य, ब्रह्मा आदि। कोऊ-कोई। ऐक ही ऐक-केवल और केवल एक पारब्रह्म। अनेक होइ बिस्थारिउ-अनेकों रूप

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : १२९३

धारण कर विस्तार किया हुआ, भाव सृष्टि का सृजन कर के उस में व्यापक। आन-दूसरा (डा. साहिब सिंह-घर घर सृष्टि के घट घट में)। भरपूरि-व्यापक। सोऊ-वही प्रभ। आन रे आन-सोउ-हे भाई! वही प्रभ घट घट में व्यापक है।रहाउ।।

जा के-जिस के। भागवतु-प्रभ संबंधी। अबरू-अन्य। पेखीए-देखा। आछोप-अछूत। छीपा-छींबा जाति। बिआस-झीवरी का पुत्र है, महा पण्डित है। सनक- ब्रह्मा का मानसिक पुत्र है, जिस का गुरु शूद्र है।। नाम की नामना-नाम जपने के कारण प्रसिद्धि। सप्त दीपा-सात द्वीप।। 1।।

बकरीदि-बकर का अर्थ है गाय, वह ईद जिस में गाय की कुर्बानी दी जाती है। बधु करहि-कत्ल, हत्या करते हैं, कुर्बानी देते हैं। मानीअहि-मान्यता होती हैं। वैसी करी-वैसे ही किया। ऐसी सरी-इस प्रकार का हो सका, ऐसी जैसी कर सके। तिहू लोक-तीनों लोक, मात लोक, स्वर्ग लोक, पाताल लोक, पाताल लोक अर्थात् समूचा जगत।

ढेढ-चमार। चमार मुर्दे का मांस खाने वाला नीच। पृष्ठ-५६६

ढोर-मरे हुए पशु। ढोवन्त-ढोते हैं। अजहू-आज तक। आचार सहित- रीति सहित, मर्यादा सहित, धार्मिक शास्त्रों की मर्यादा। बिप्र-ब्राह्मण। डंडउति-डण्डे की तरह सीधे पड़ने की क्रिया। तिन तिनै-उन के पुत्र रविदास को। दासन दासा-प्रभ के दासों के दास, अति विनम्रता भाव।

पहले शब्द में सिद्धांत को परिपक्व तौर पर साबित किया है। इस शब्द में अछूत महापुरुषों ने इस सिद्धांत को लागू करके उनकी अनुभवहीन तथा उत्सत तथा उच्चतम महान को साबित किया है। इस शब्द में हिन्दू धर्म, इसाई धर्म तथा इस्लाम की विचारधारा को रद्द करके विश्व धर्म की विचारधारा प्रदान की है, जिससे प्राकृतिक नियमों के अनुसार आत्मिक विकास की सम्पूर्णता परिपक्वता साबित हो गई है।

एक प्रभु का संकल्प और नए विश्व धर्म की स्थापना

(इस्लाम और ईसाई मत की विचारधारा का खंडन)

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में 'एक प्रभ' जो कण-कण में विराजमान है, को स्पष्ट कर के इस से संबंधित नए विश्व धर्म की विचारधारा का सृजन किया है। इस उद्देश्य के लिए उन्होंने दुनिया में स्थापित हिंदू धर्म, (बिन देखे उपजै नहीं आसा) शब्द में बुध धर्म और इस शब्द में ईसाई धर्म तथा इस्लाम की विचारधारा को शक्तिशाली तर्क के साथ रद्द किया है। इसलिए ध्यान देने वाली बात यह है, कि गुरु रविदास जी के इस शब्द में किसी भी 'भगवान' 'अवतार' या देवी-देवताओं का नाम दर्ज नहीं है, बल्कि वे तो देहधारी भगवानों, अवतारों आदि को रद्द कर के लिखते हैं -

एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥

रहाउ में समूचे शब्द का तत्व सिद्धांत और मुख्य उद्देश्य होता है। इसलिए गुरु रविदास जी ने जानबूझ कर चेतन मन से प्रभ के संकल्प और नए विश्व धर्म की स्थापना को 'रहाउ' में निरूपित करके इस तत्व सिद्धांत को स्पष्ट किया है कि परमात्मा 'केवल और केवल एक' है और वह एक परमात्मा, अपने ही अनेकों रूपों में ब्रह्मांड में फैला हुआ है अर्थात् वह सृष्टि के कण-कण में विचरण कर रहा है। गुरु रविदास जी की रचना 'रहाउ' में इस तथ्य पर विचार करो -

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
तास सम तुलि नही आन कोऊ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥

इस प्रकार गुरु रविदास जी इस शब्द के उपरोक्त दिए गए 'रहाउ' की पहली तुक में ही हिंदू धर्म के देहधारी भगवानों ब्रह्मा, विष्णु, महेश का खास कर के और शेष समूचे तेतीस करोड़ देवी-देवताओं को रद्द कर देते हैं, क्योंकि ये देहधारी भगवान तो परमात्मा का ही सृजन हैं, फिर यह सृष्टि के कण-कण में विचरण कर के सृष्टि का सृजन किस प्रकार कर सकते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश

आदि तो हरि के भगत के भी बराबर नहीं हैं। ये तीनों तो आम आदमी ही हैं, इसी कारण ये तीनों किसी भी तरह भगवान नहीं हैं।

सो 'रहाउ' की पहली तुक में ही गुरु रविदास जी ने हिंदू धर्म के प्रमुख तीन भगवानों ब्रह्मा, विष्णु और महेश का विशेष तौर से और बाकी समूचे तेतीस करोड़ देवताओं को रद्द कर दिया है, परिणाम स्वरूप इन सभी भगवानों और देवी-देवताओं से संबंधित धार्मिक ग्रंथ भी अपने-आप ही रद्द हो जाते हैं। इस तरह उन्होंने सचेत हो कर, जान बूझ कर उन से पहले विचरण कर रहे हिंदू धर्म के 'भगवानों' और उन से संबंधित विचारधारा को रद्द किया है।

गुरु कबीर जी ने भी ब्रह्मा, विष्णु, महेश को माया के जाल में फंसे हुए आम आदमी कहा है -

सरपनी ते के ऊपरि नहीं बलीआ।।
जिनि ब्रहमा बिसन महादेउ छलीआ।।

आदि ग्रंथ-पन्ना 480

अत: 'रहाउ' की दूसरी तुक में गुरु रविदास जी ने रद्द किए गए भगवानों की जगह 'केवल और केवल एक पारब्रह्म' दृढ़ किया है और यह दृढ़ किया है कि समूची सृष्टि उस का अपना सृजन है और वह अपने-आप सृष्टि के कण-कण में विराजमान है। इस तरह गुरु जी ने देहधारी 'भगवानों' और ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म के सातवें आकाश में बैठे परमेश्वर की जगह एक सर्वव्यापी पारब्रह्म का अस्तित्व स्पष्ट किया है और एक नई विश्वव्यापी धर्म की वैज्ञानिक विचारधारा का सृजन भी किया है।

अत: पारब्रह्म परमात्मा एक है और सर्व व्यापक है। सृष्टि की रचना करना, उसका पालन करना और उसका संहार करना उसकी शक्तियां हैं। वह एक से अनेक होकर अपनी सृष्टि में विचरण कर रहा है। विज्ञान भी यही कहता है। विज्ञान ने इस 'एक' को 'ऊर्जा' कहा है। इस ऊर्जा (विद्युत्) के कणों से ही सब कुछ बना है। 'एक' से सब बना है। विज्ञान कहता है इलैक्ट्रिसिटी (ऊर्जा) तीनों में मलीन होती है- इलैक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन और प्रोटॉन। इलैक्ट्रॉन ऊर्जा सृजन, न्यूट्रॉन ऊर्जा पालन और प्रोटॉन ऊर्जा संहार का कार्य करते हैं भावार्थ ऊर्जा पारब्रह्म परमात्मा है और इस की ये तीन शक्तियां हैं। सो ब्रह्मा, विष्णु, महेश परमात्मा के ही सृजन हैं। जिस प्रकार ये तीनों शक्तियां परमात्मा का ही सृजन हैं। इसी कारण वे भगवान बन ही नहीं सकते। वे तो हर हालत में आम

मनुष्य ही हैं।

इस वैज्ञानिक विचारधारा से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि उस 'एक पारब्रह्म' जिस को विज्ञान ने शक्ति का नाम दिया है- के विधान में जात- पात, छुआ-छूत, बड़ा-छोटा, अमीर-गरीब नहीं होता है। उस का सृजनहार सभी के बीच विराजमान है, इस कारण सभी जीव बराबर हैं। उस के विधान में न कोई हिंदू और न ही कोई मुसलमान व ईसाई आदि है। उस के विधान में कोई धर्म नहीं है न हिंदू धर्म है, न इसाई धर्म है, न इस्लाम और न ही कोई अन्य धर्म है। अन्य उस के विधान में 'एको एक धर्म' है 'मनुष्यता का धर्म' जिसकी बुनियाद कुदरत के नियम हैं, जिस का सृजन उस पारब्रह्म (शक्ति) ने किया है; जो घटता-बढ़ता नहीं है। वह मरता नहीं है, वह अमर है, वह सदा-सदा स्थिर है, वह निरंतर स्थिर है। स्पष्ट है पारब्रह्म (शक्ति) पहले भी थी, अब भी है और आगे भी रहेगी। यह तथ्य गुरु रविदास जी की वाणी से प्रमाणित होता है।

काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
दोम न सेम एक सो आही॥

पृष्ठ संख्या ३४५

इस महान तथ्य को अब विज्ञान ने भी प्रमाणित कर दिया है।

Energy can neither be created nor can be destroyed. The sum total of energy always remains the same in the universe.

शक्ति को न तो बनाया जा सकता और न ही खत्म किया जा सकता है। कुल शक्ति हमेशा स्थिर रहती है। (घटती या बढ़ती नहीं है)

From the book of Popular Science Vol-y New York, Page216''[1]

'हरि जपत' शब्द के प्रथम और दूसरे बन्द में गुरु रविदास जी ने इसी शब्द के 'रहाउ' में निरूपित विचारधारा को अमली रूप में लागू किया है और गुरु नामदेव जी और गुरु कबीर जी का दृष्टांत देकर सिद्ध किया है, कि प्रभु 'एक' है और उस के विधान में सभी बराबर हैं। पहले बन्द की पहली तुक में गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि गुरु नामदेव जी अछूत (शूद्र) हैं और प्रभु की सिफत सलाह

1. गुरबाणी तथा विज्ञान : पृष्ठ : ७९

लिखते हुए उन को एक प्रभु के बिना अन्य दूसरा कोई भी नज़र नहीं आता है। इसलिए वह शूद्र हो कर भी प्रभु को प्राप्त हुए। शूद्र की प्रभ प्राप्ति से समूचा हिंदू धर्म रद्द हो गया है, क्योंकि हिंदू धर्म के अनुसार शूद्र को प्रभ भक्ति के दोष में मौत की सजा दी जाती है। महर्षि शंभूक इस तथ्य की गवाही हैं। इस बन्द की दूसरी तुक में विद्वान ऋषि व्यास जी का ज़िक्र है। वह भी शूद्र हैं, उनका जन्म झीवरों की लड़की के गर्व से हुआ था और उन्होंने ही पाला। सनक ने शूद्र से उपदेश लिया था। संत हीरा दास चक हकीम लिखते हैं कि -

''सूत से सोनकादि ऋषियों ने उपदेश लिया ये
पुराणों में अति प्रसिद्ध है।''[1]

इसलिए शूद्र से शिक्षा प्राप्त कर के संनक और शूद्र व्यास भी स्पष्ट करते हैं कि प्रभु के विधान में सब बराबर हैं। वह स्पष्ट करते हैं कि जिस ने भी प्रभ के नाम की बढ़ाई प्राप्त की है, वे सातों द्वीपों में प्रसिद्ध हो गए हैं। इस तथ्य से भी हिंदू धर्म की विचारधारा रद्द हो गई है। इस बन्द नंबर 1 से स्पष्ट हो गया है कि सारे विश्व का 'एक' ही धर्म है और एक प्रभ है और सारे जीव बराबर हैं।

इस शब्द की दूसरे बन्द में गुरु रविदास जी, गुरु कबीर जी का उदाहरण देते हुए बताते हैं, कि इस्लाम धर्म की विचारधारा के अनुसार रब्ब सृष्टि के किसी जीव में नहीं विचरण करता है, वह तो अपनी कायनात से अलग सातवें आकाश में विराजमान है। अत: गुरु रविदास जी सातवें आकाश में भी विराजमान रब्ब और इस के ही कर्मकांड को रद्द कर के, उस की विचारधारा का खंडन करते हैं। साथ ही साथ अपनी नए विश्व धर्म की विचारधारा को सृजित करके सिद्ध करते हैं कि वह शूद्र होते हुए भी तीनों लोकों में प्रसिद्ध हैं। गुरु रविदास जी लोगों को संबोधित कर के स्पष्ट करते हैं, कि हे लोगो! कबीर के कुल के बुजुर्ग बकरीद वाले दिन गाय की कुर्बानी देते थे और शेखों, शहीदों और पीरों को मानते थे। वे उस रब्ब को मानते थे, जो सातवें आकाश में विराजमान है। उन के ऐसे कर्मकांड थे- 'जाके बाप ऐसी करि' पर पूत ऐसी सरि अर्थात् गुरु कबीर जी ने अपने पिता दादा के विपरीत कण-कण में विचरण कर रहे प्रभ को स्पष्ट किया और गाय की कुर्बानी जैसे कर्म- कांडों को त्याग दिया, क्योंकि प्रभु तो गाय में आप विराजमान है। इस कारण कुर्बानी प्रभ के विधान के विरुद्ध है। इस तरह

1. रविदास दीप - पृष्ठ : १६८

दूसरे बन्द 'रहाउ' की दूसरी तुक की ही व्याख्या है। इस रहाउ वाले संकल्प को गुरु कबीर जी ने अपनी वाणी में सृजित करके इस संकल्प को परिपक्वता प्रदान की है।

1. **रोज़ा धरै मनावै अल्हु सुआदति जीव संघारै।।**
   आपा देखि अबर नही देखै काहे कउ झख मारै।।1।।[1]

'(हे भाई! काज़ी) रोज़ा रखता है (रोज़ों के अन्त में ईद वाले दिन) अल्लाह के नाम पर कुर्बानी देता है, परंतु अपने स्वाद की खातिर यह जीव मारता है)।''[2]

2. **जोगी गोरखु गोरखु करै।।**
   हिंदू राम नामु उचरै।।
   मुसलमान का एकु खुदाइ।।
   कबीर का सुआमी रहिआ समाइ।।।।४।।३।।११।।[3]

(आदि ग्रंथ ११५९)

प्रो. साहिब सिंह की टिप्पणी देखो -

''जोगी (प्रभ को विचार के) गोरख गोरख जपता है, हिंदू श्री रामचंद्र की मूर्ति ही माने हुए हैं) राम का नाम उच्चारता है, मुसलमान ने (सातवें आसमान में बैठा हुआ) केवल अपना (मुसलमानों का ही) रब्ब मान रखा है, परंतु मेरा कबीर का प्रभ वह है, जो सब के बीच व्यापक है और सबका साझा है।।4।।3।।11।।''[4]

अतः उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो गया है -

1. पारब्रह्म-परमात्मा हमेशा स्थिर है, निरंतर रूप में स्थिर है।

2. वह कण-कण में विराजमान है अर्थात् पौधे, धरती, धातु, जानवर आदि में विराजमान है।

3. हर वस्तु के बीच रब्ब होने के कारण वह कुर्बानी से खुश नहीं होता है।

यह सही है, कि ईसाई धर्म ने गुरु रविदास जी के समय में भारत में प्रवेश नहीं किया था परंतु ईसाई धर्म का धार्मिक ग्रंथ बाइबल 'चार किताबों' में से एक है। ये चार किताबें हैं- तैरात, इंजील, बाईबल जबूर और फकरान (कुरान मजीद)। स्वभाविक है कि इस्लाम धर्म और ईसाई धर्म के रब्ब के संकल्प और

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : ४८३
2. श्री गुरु ग्रन्थ साहिब दर्पण - ७४५
3. वही - पृष्ठ : ११६०
4. वही (पोथी आठवीं) - पृष्ठ : ४३३-४३४

कर्मकांड भी एक जैसे ही है। कुरान मजीद की विचारधारा पहली तीन किताबों का ही विकास है।

अतः विचारधारा और कर्मकांड की तरफ से कुरान मजीद और बाइबल में कोई अंतर नहीं है। गुरु रविदास जी ने गुरु कबीर जी का दृष्टांत देकर इस्लाम धर्म के केवल दो मूलभूत सिद्धांतों रब्ब और बकरीद को ही रद्द किया है। परिणामस्वरूप कुदरती ही इस आधार से ईसाई धर्म के परमेश्वर का सिद्धांत और पशु बलि अपने-आप ही रद्द हो जाते हैं। इस को सिद्ध करने के लिए हम दोनों नुक्तों को अलग-अलग सिद्ध करने के लिए इस्लाम धर्म और ईसाई धर्म का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं।

रब्ब के संकल्प के बारे में इस्लाम धर्म में दर्ज है कि रब्ब अकेला ही सातवें अर्श में अपने तख्त पर विराजमान है और उसका अपनी कायनात (सृष्टि) के साथ कोई संबंध नहीं है। यही रब्ब का संकल्प ईसाई धर्म का है। इस्लाम धर्म का 'रब्ब' अपनी कायनात से अलग सातवें आकाश (अर्श) के ऊपर बैठा सारी कायनात का इंतज़ाम करता है। पाकिस्तानी विद्वान जनाब हाज़ी गुलाम हसन के उर्दू टीका कुरान और कायनात में दर्ज है।

''3 तुम्हारा परवरदगार तो खुदा ही है, जिस ने आसमान और ज़मीन छः दिन में बनाए फिर अर्श (तख्त-ऐ-शाही) पर कायम हुआ, वहीं हर एक काम का अजन (आज्ञा) हासिल किए बिना (किसी की) सिफारिश नहीं कर सकता, यही खुदा तुम्हारा परवरदगार है, उसकी इबादत करो, तुम गौर क्यों नहीं करते?''[1]

(सुरा-10-युन्स)

इस बारे में कुरान मजीद में स्पष्ट लिखा हुआ है कि पहले आई किताबों में तैरात और इंजील (बाईबल) की विचारधारक तैर पर कुरान शरीफ़ मजीद तस्दीक करती है। कुरान मजीद हिंदी अनुवाद सटीक के टिप्पणी जनाब मोहम्मद फारूख खान हैं, उस मैं दर्ज है -

'3 उसने तुम पर हक के साथ किताब उतारी जो उसकी तस्दीक कर रही है, जो कि इसके आगे से मौजूद है और उसने तैरात और इंजील उतारी'।[2] (सूरा-3-आले इमरान)।

1. जंग पब्लिशर्ज (पाकिस्तान) - पृष्ठ : ३०१
2. प्रकाशक 'मकतब' अल हसनाल रामपुर (यू.पी.) - पृष्ठ : १८५

उपरोक्त का उर्दू में टीका जनाब हाज़ी गुलाम हसन 'कुरान और कायनात' नीचे लिखे अनुसार हैं -

'3 उसने (ए मोहम्मद) तुम पर सच्ची किताब नाजल की, जो प्रथम आसमानी किताबों की तस्वीर करती है और उसी ने तैरात और इंजील नाजल की'।[1]

(सूरा 3 आले इमरान)

कुरान मजीद में यह भी स्पष्ट किया गया है कि कुरान मजीद पहली किताबों तैरात, इंजील आदि का ही विस्तार है। उर्दू टिप्पणीकार जनाब हाजी गुलाम हसन-

'37-और ईऐ कुरान ऐसा नहीं कि खुदा के सिवाय कोई इसको अपनी तरफ से बना लाए। हां (हां यह खुदा का कलाम है) जो (किताबें) इससे पहले की हैं, उनकी तस्दीक करना है और उन्हीं किताबों की (इस में) तफसील है। इस में कुछ सन्देह नहीं कि (यह) खबल आमीन की तरफ से (नाजल) हुआ है'।[2]

सूरा-यूनस- (सूरा-10-युनस)

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि कुरान मजीद गवाही देती है कि इस्लाम धर्म की धार्मिक पुस्तक कुरान मजीद तथा तैरतेय इंजील आदि दूसरी धार्मिक पुस्तकों की विचारधारा एक जैसी ही है। दूसरे कुरान-मजीद, और तैरात इंजील आदि धार्मिक ग्रन्थों का विस्तार ही है।

सबूत : यहूदियों की धर्म पुस्तक तैरतेय में बताये दस हुक्म हज़रत मूसा ने भी व्यक्त किये हैं। यही दस हुक्म बाइबल में भी दर्ज हैं। इस प्रकार तैरात तथा बाइबल में विचारधारक तौर पर गहरी सांझ है। इसी कारण महान कोश के पृष्ठ नं. 990, नाभा जी लिखते हैं कि बाइबल मूसाइ तथा इसाईमत का धर्म ग्रन्थ है। द्वितीय तैरात तथा जबूर बाइबल का भाग हैं। तीसरा कुरान, बाइबल तथा तैरतेय को इस्लामी पुस्तक तस्दीक करता है।

इसी प्रकार गुरु रविदास जी ने कुरान शरीफ़ को तो रद्द किया ही है, साथ ही साथ बाइबल तथा तैरात अर्थात् इसाई धर्म तथा यहूदी धर्म (Judaism) भी रद्द हो जाते हैं।

1. जंग पब्लिशर्ज (पाकिस्तान) - पृष्ठ : ३०१
2. वही - पृष्ठ : १६६

क्योंकि हज़रत दाऊद (David) द्वारा प्राप्त हुआ धर्म ग्रन्थ ज़बूर भी बाइबल का ही हिस्सा है। इस प्रकार अस्थाई तौर पर धर्म पुस्तक ज़बूर भी स्वयं ही रद्द हो जाते हैं।

अत: गुरु रविदास जी ने विश्व धर्म की विचारधारा की सृजना करने से पूर्व वह धर्म ग्रन्थ जिसने प्रकृति के नियम को स्वीकार करते थे, उसे रद्द किया है। ये हैं यहूदी धर्म ग्रन्थ (Judaism)

2. धर्म ग्रन्थ ज़बूर 3. बाइबल तथा 4. कुरान शरीफ़।

इस प्रकार विश्व धर्म की विचारधारक तथा प्रकृति के नियमों पर आधारित विश्व विचारधारा का जन्म होता है।

अब ईसाई धर्म के उदाहरण की परीक्षा करो -

'1.8- परमेश्वर ने इस दूरी को 'आकाश' कहा है। तब शाम हुई और तब सवेर आई, जो दूसरा दिन था।

'1.10-परमेश्वर ने सूखी ज़मीन को धरती कहा और एक जगह पर इकट्ठे हो चुके पानी को समुंद्र कहा....'।[1]

'2.1-4 अत: सब सृष्टि और इस की चीज़ों का बनाना समाप्त हो गया। 2. इस तरह परमेश्वर ने अपना काम जो वह कर रहा था, सातवें दिन समाप्त किया और उस दिन उसने अपने सब कामों से फुर्सत पाई। 3. परमेश्वर ने सातवें दिन आशीष देकर पवित्र ठहराया, क्योंकि इस दिन उस ने अपनी बनाई सब रचना के काम से फुर्सत पाई थी। 4. ये सब सृष्टि के बनाए जाने का वर्णन है'।[2]

'31- अत: न डरो। आप अधिकतर चिड़ियों की अपेक्षा उत्तम हो। 32- उपरांत जो कोई मनुष्य के आगे मेरा जो इकरार करेगा, मैं भी अपने पिता के आगे जो स्वर्ग में हैं, उस का इकरार करूंगा'। मती-10)[3]

इस्लाम धर्म और ईसाई धर्म के उपरोक्त पैरों से स्पष्ट हो गया है कि दोनों धर्मों का रब्ब/ परमेश्वर अपनी सृष्टि से बाहर अर्श/स्वर्ग में अकेला बैठा है। वह सृष्टि के कण-कण में विराजमान नहीं है। विचारणीय, दूसरा नुक्ता था पशु बलि का।

इस्लाम धर्म में पशु बलि को साबित करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि

1. पवित्र बाइबल (पुराना नाम) - पृष्ठ : २ 2. वही - पृष्ठ : ३
3. नया नियम (पंजाबी) इंडियन बाइबल लिटरेचर, मद्रास - पृष्ठ : १३

इस्लाम धर्म में अल्लाह को खुश करने के लिए हर साल बकरीद बड़ी धूमधाम से मनाई जाती है।

अब हम ईसाई धर्म में पशु बलि के बारे में चर्चा करते हैं। ईसाई धर्म के धार्मिक ग्रंथ पवित्र बाइबल के पुराने नियमों के पहले अध्याय में दर्ज है।

'3. कुछ दिनों के बाद काईन अपनी फसल के कुछ फल चढ़ावे के तौर पर प्रभु के सामने ले कर आया। 4. हाबल भी अपने इजड़ (झुंड) का पिलौठा लेला (पहला जन्मा बच्चा) लेकर आया और उस ने उस की चर्बी प्रभु के सामने चढ़ावे के तौर पर चढ़ाई। प्रभु हाबल के चढ़ावे से खुश हुआ; 5. परंतु उस ने काईन और उस के चढ़ावे को पसंद नहीं किया। इससे काईन बहुत क्रोधित हुआ और उसका मुंह उतर गया'।[1] (उतपत 4.3-5)

'20. तब नूह ने प्रभु के लिए एक वेदी बनाई और उस पर शुद्ध जानवरों और पक्षियों में से लेकर होम बलि चढ़ाई। 21. प्रभु को उस बलि की सुगंधि अच्छी लगी-----'।[2] (उतपत -8. 20-21)

ईसाई धर्म की धार्मिक पुस्तक बाइबल में से दिए उपरोक्त पैरों से स्पष्ट हो गया है कि ईसाई धर्म में 'प्रभ' पशु बलि* प्राप्त करके खुश होता है, परंतु फलों का चढ़ावा प्राप्त करके नहीं। इस तरह इस्लाम धर्म और ईसाई धर्म की विचारधारा में पशु की बलि को मान्यता प्राप्त है। दूसरे यह बलि 'प्रभ' की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए की जाती है।

उपरोक्त चर्चा से सिद्ध हो गया है कि,

1. इस्लाम धर्म का 'रब्ब' सातवें आकाश में विराजमान है।
2. रब्ब अपनी कायनात में विराजमान नहीं है।
3. रब्ब पशु की कुर्बानी लेकर खुश होता है।

नोट- इस्लाम धर्म की उपरोक्त बुनियादी सिद्धांत ईसाई धर्म के भी बुनियादी सिद्धांत हैं। दोनों धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन की चर्चा से सिद्ध हो गया है कि जो संकल्प 'रब्ब' और 'पशु बलि' के प्रति इस्लाम धर्म में निरूपित है, वही संकल्प ईसाई धर्म में भी निरूपित है परंतु गुरु रविदास जी ने गुरु कबीर जी का दृष्टांत दे कर ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म के अपने कायनात से अलग सातवें आकाश में बैठे 'रब्ब' के संकल्प को रद्द कर दिया है और गाय को बकरीद

1. पवित्र बाइबल (पुराना नाम) - पृष्ठ : ६
2. वही - पृष्ठ : ११

* नये नियम में पशु बलि की प्रथा नहीं है।

वाले दिन हलाल करने भावार्थ 'पशु बलि' के कर्मकांड को भी शक्तिशाली दलीलें देकर रद्द कर दिया है।

इसलिए गुरु रविदास जी ने बन्द नंबर 2 में इस्लाम धर्म और ईसाई धर्म की विचारधारा और कर्मकांड को रद्द करके और उन की जगह एक नए विश्वव्यापी विचारधारा का सृजन कर के एक नए विश्व धर्म का सृजन किया है, जो इस शब्द की 'रहाउ' में निरूपित है।

गुरु नामदेव जी, गुरु रविदास जी और गुरु कबीर जी ये तीनों अछूत महापुरुष हिंदू धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म की विचारधारा का त्याग कर के कण-कण में विचरण कर रहे प्रभ का सिमरन कर के प्रभ को प्राप्त होते हैं। इस तरह तीनों महापुरुष एक ही स्तर पर ही विचरण करते हैं परन्तु बन्द नंबर 3 में गुरु रविदास जी क्रांतिकारी चमत्कार करते हैं। वे इस चमत्कार से दोनों महापुरुषों से बहुत आगे निकल जाते हैं। वे अछूत भी हैं और मरे हुए पशुओं को ढोते भी हैं। यह सब कुछ होने के बावजूद, गुरु जी ब्राह्मणों से ही उन के अपने हिंदू धर्म की विचारधारा और कर्मकांड का खंडन करवाते हैं। हिंदू धर्म ग्रंथों वेदों, रामायण, गीता और शास्त्रों की मर्यादा में प्रवीण और परिपक्व, अपने ही देहधारी भगवानों का और विचारधारा का खंडन करते हैं। यहां पर ही बस नहीं, फिर यही ब्राह्मण बड़ी ही विनम्रता सहित डंडे की तरह सीधे ज़मीन पर लेट कर गुरु जी को दंडवत् करते हैं। ये ब्राह्मण केवल और केवल एक प्रभ को जो कण-कण में विराजमान है, का सिमरन करते हुए नए विश्व धर्म की विचारधारा को स्वीकार करते हैं और गुरु रविदास जी को गुरु धारण करते हैं। यह क्रांतिकारी चमत्कार गुरु रविदास जी के शब्दों में दर्ज हैं;

जा के कुटंब के ढेढ सभ
ढोर ढोवंत फिरहि
अजहु बंनारसी आस पासा॥
आचार सहित बिप्र करहि डंडउति
तिन तनै रविदास दासान दासा॥३॥१॥

इस नई विश्व धर्म की विचारधारा से भारत में धार्मिक सामाजिक समानता और न्याय पर आधारित भाईचारे की भूमिका बनती है। इस महान क्रांतिकारी चमत्कार से भारत के नव-निर्माण की भी भूमिका बनती है।

शब्द का अंतरीव विचार विधान

गुरु रविदास जी ने इस शब्द में हिंदू धर्म के बहु भगवानवाद, बहुदेवताबाद, उन से संबंधित विचारधारा और कर्मकांड का खंडन किया है और ईसाई धर्म तथा इस्लाम धर्म के अर्श/स्वर्ग में विराजमान रब्ब/ परमेश्वर का और कुर्बानी का खंडन कर के एक नए विश्व धर्म की विचारधारा तथा एक सर्वव्यापक प्रभ की स्थापना की है।

'रहाउ' में गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि केवल और केवल प्रभ ही सृष्टि का सृजनहार, पालक तथा संहार करने वाला है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश की सृजना भी प्रभ ने ही की है। यह हिन्दू धर्म के प्रमुख भगवान तथा प्रभ के भक्त के भी बराबर नहीं हैं। इस कारण वह सृष्टि सृजक, पालक तथा संहार करने वाले तो हो नहीं सकते। इस कारण हिंदू धर्म के प्रमुख भगवान ब्रह्मा, विष्णु, महेश का खंडन किया है। परिणाम स्वरूप हिंदू धर्म की विचारधारा का भी खंडन हो गया है। इस प्रस्तावना में स्पष्ट किया गया है कि प्रभ केवल और केवल 'एक' ही है। वह अपनी सृजित सृष्टि के बीच एक से अनेक बन कर सृष्टि के कण-कण में विचरण कर रहा है। वे केवल और केवल एक है और दिखाई दे रही उस की सृजित सृष्टि के बीच वह स्वयं ही विराजमान है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी प्रभ के ही सृजन है और प्रभ उन में भी विराजमान है, इसी कारण सब बराबर हैं। उस के विधान के बीच जात-पात, छुआ-छूत, ऊंच-नीच, अमीर-गरीब कोई नहीं है। दूसरे ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी प्रभु के ही अधीन हैं।

इस तरह इस 'रहाउ' वाली बन्द का केंद्रीय बिंदु यह है, कि प्रभ केवल और केवल एक है। परिणाम स्वरूप धर्म एक है और सभी जीवों में व्यापक होने के कारण सब जीव बराबर हैं। इसी कारण इस शब्द की बन्द नंबर 1, 2 और 3 में हिंदू धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म आदि की विचारधारा और कर्मकांड का खंडन किया गया है।

बन्द नंबर 1 में गुरु नामदेव का दृष्टांत दे कर 'रहाउ' में निरूपित हिंदू धर्म के भगवानों और उन की विचारधारा को वास्तविक रूप में प्रत्यक्ष प्रमाण देकर रद्द करते हुए सिद्ध किया गया है, कि प्रभ के विधान में जाति प्रथा, छुआछूत नहीं है। सभी जीव बराबर है।

बन्द नंबर 2 में गुरु कबीर जी का दृष्टांत दे कर स्पष्ट किया गया है, कि इस्लाम धर्म कुर्बानी दे कर अल्लाह को खुश करने के लिए गाय की हत्या करता है। ऐसा करना प्रकृति के नियम के विरुद्ध है तथा 'रहाउ' में विचारधारक साझ की भी उल्लंघना है। इस तरह इस्लाम का कर्मकांड अल्लाह को खुश नहीं करता है, इस कारण गुरु रविदास जी ने गुरु कबीर जी का सहारा ले कर इस्लाम धर्म और इसाई धर्म के दर्शन और कर्मकांड को रद्द कर दिया है।

बन्द नंबर 2 'रहाउ' और बन्द नंबर 1 में हिंदू धर्म के प्रमुख भगवानों और फिर अछूत महापुरुषों के उदाहरण देकर पुनः हिंदू धर्म के भगवानों, देवी-देवताओं और उनकी विचारधारा को रद्द किया गया है.

बन्द नबर 3 में एक क्रांतिकारी चमत्कार होता है। हिंदू धर्म के धर्म ग्रंथ और शास्त्रों की मर्यादा के बीच परिपक्व और प्रवीण ब्राह्मणों ने खुद हिंदू धर्म के भगवानों, देवी-देवताओं और उन की विचारधारा को रद्द कर के 'गुरु' रविदास चमार की विश्व धर्म की नई विचारधारा और एकमात्र प्रभ को स्वीकार किया है और उन्होंने उन को गुरु धारण किया है। यह क्रांतिकारी घटना भारत के नवनिर्माण की भूमिका बनती है।

यही राग 'मलार का प्रभाव है कि हर तरफ उत्साह का वातावरण हो जाना' यही कारण है कि ब्राह्मण लोग राग मल्हार के बीच इस शब्द को सुन कर निहाल हो जाते हैं और गुरु रविदास जी को 'गुरु' धारण कर लेते हैं। इस भावना को गुरु ग्रंथ साहिब में बड़े स्पष्ट रूप में प्रकट किया गया है।

गुरुमुखि मलार राग जो करहि
तिन तनु मनु सीतल होइ।।
गुर सबदी एक पछाणिआ
ऐको साचा सोइ।।

अतः समूचा सवेरा मलार राग की परिभाषा अनुसार ही सृजित किया गया है।

उत्साह का वातावरण नहीं बन सकता जितना समय हिन्दू धर्म के खूंखार मानवता विरोधी नियम तथा विचारधारा का खंडन करके अस्वीकार नहीं किया जाता तथा आत्म विकास की सम्पूर्णता करके अन्य धर्मों में प्राकृतिक..... नहीं किया जाता।

'रहाउ' वाली बन्द में निम्नलिखित सिद्धांत रूपमान होते हैं :-

1. ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश भी जीव हैं तथा प्रभ का सृजन हैं। इनमें ही वह प्रभ विराजमान है।

2. प्रभ परमात्मा केवल व केवल एक ही है।

3. वह 'ऐको' ही 'अनेक' होकर विस्तार कर सृष्टि की सृजन करता है।

4. वह सृष्टि के कण-कण में रमा हुआ है, मूर्तिमान है, निरूपित है।

आज के विश्व वैज्ञानिकों ने गुरु रविदास जी द्वारा की गई खोज की पुष्टि की है। इक्कीसवीं शताब्दि के वैज्ञानिक गुरु जी की खोज के आगे नहीं बढ़ सके।

विश्व के सभी वैज्ञानिकों ने भूमिगत 28 किलोमीटर लम्बी सुरंग (Tunel) बनाकर बड़ा पसारा (Big Bang) किया तथा प्रभ अंश (God Partical) का आविष्कार किया। इसका तात्पर्य यह है कि यह प्रभ-अंश अनंत हैं, किताब से ही बाहर है। इनका आगे और अर्थ है कि हर अंश (Particle) एक प्रभ अंश विराजमान है। स्पष्ट है कि एक अकेला अंश विश्व की सृजना नहीं कर सकता। कारण! इस प्रकार के अनक्यासे अंश सृष्टि में विराजमान हैं।

पर प्रश्न तो वहां ही खड़ा है, इसका उत्तर नहीं दिया गया कि यह अंश किस ने उत्पन्न किया है? विश्व के वैज्ञानिकों के लिये यह भी बहुत गंभीर छिपा हुआ रहस्य है। यह स्थाई है तथा है भी सत्य कि गुरु रविदास जी की खोज है कि समूचे विश्व की सृजना एक प्रभ ही करता है। इसी प्रभ के द्वारा अनंत अंश, अणु आदि उत्पन्न किये गये हैं। सभी विश्व के वैज्ञानिकों ने इन अंश, अणुओं को प्रभ अणुं या अंश (God Particle) का नाम दिया है। इस प्रकार यह परिपक्व रूप में स्पष्ट हो गया है कि गुरु रविदास जी ने अनंत अणुओं, अंशों की खोज की तथा स्पष्ट किया कि इन अणुओं का समूह, यह सृष्टि के सृजन का साधन बना है। गुरु रविदास जी का कथन है :

एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ॥ रहाउ॥

इस प्रकार प्रभ ने एक नहीं अनेकों अणु, अंश स्वयं उत्पन्न किये हैं तथा हर एक अणु-अंश में स्वयं प्रभ विराजमान है।

इस प्रकार गुरु रविदास जी की खोज स्पष्ट करती है कि प्रभ केवल एक अकेला स्वयं ही है, जिसके सभी अंश, अणु (Particle) का सृजन किया है तथा स्वयं इसमें विराजमान हो गया। इक्कीसवीं शताब्दि के विश्व वैज्ञानियों ने भूमिगत 28 किलोमीटर लम्बी सुरंग बना कर धमाका करके ऐसे अणु-अंशों की खोज की, जिस से सृष्टि का सृजन हुआ है। इस सृष्टि के सृजन के कारण ही वैज्ञानिकों ने इसे गॉड पार्टीकल (God Particle) का नाम दिया है।

अत: वैज्ञानिकों ने गुरु रविदास जी की साढ़े छह सौ वर्ष पुरानी खोज की भी पुष्टि (Confirmation) की है। इससे परिपक्व रूप में स्पष्ट रूप से साबित हो गया है, कि गुर रविदास जी विश्व के सिरमौर (शिरोमणी) वैज्ञानिक हैं।

शब्दार्थ - जो सेवक प्रभु का सिमरन करते हैं, उन के बराबर न विष्णु, न शिव और न ही कोई अन्य भावार्थ ब्रह्मा आदि हैं। वह पारब्रह्म प्रभ केवल और केवल एक है और अनेकों रूपों को धारण कर अर्थात् सृष्टि का सृजन कर के वह आप ही (सृष्टि के) घट-घट में व्यापक हैं।। रहाउ।।

(गुरु) नामदेव जी अछूत हैं और जाति छींबा है, फिर भी वह प्रभ की शिफत सलाह लिखते हैं और अन्य सभी कुछ से अर्थात् विकारों से मुक्त हैं। प्रभ सिमरन के बिना अन्य कुछ भी दिखाई नहीं देता है। ब्यास (शूद्र थे) उस ने भी लिखा है और सनक (जिस का गुरु शूद्र था) के ग्रंथों में भी स्पष्ट दर्ज है, कि नाम के सिमरन की महिमा सातों दीपों अर्थात्, समस्त संसार में प्रसिद्ध है। इसी कारण नाम सिमरन वाले महापुरुष भी संसार में प्रसिद्ध हैं।।१।।

जिस कबीर के कुल के बाप-दादा, बुजुर्ग बकरीद वाले दिन कुर्बानी देने के लिए गाय की हत्या करते थे, मुसलमानी ढंग, तरीकों से शेखों, शहीदों और पीरों की मान्यता करते थे, जो पीर सातवें आकाश में विराजमान रब्ब को मानते हैं, उस कुल के बाप, दादा, बुजर्ग जैसी की है परंतु उन के कुल के पुत्र 'कबीर' से यही ऐसी जैसी ही हो सकी है अर्थात् उस ने अपने कुल के बुजुर्गों के मुसलमानी रीति-रिवाज़ों और कर्मकांडों को रद्द कर दिया है और मुसलमानों के सातवें आकाश में बैठे रब्ब का त्याग कर के कण-कण में विचरण कर रहे प्रभु का सिमरन कर के प्रभ प्राप्ति की है। इस कारण 'गुरु' कबीर समूचे संसार में प्रसिद्ध हो गए हैं।।२।।

जिस के परिवार के चमार आज तक बनारस के इर्द-गिर्द मरे हुए पशुओं को ढोते फिरते हैं, उन के पुत्र प्रभ के दासों के दास रविदास चमार को हिंदू धर्म ग्रंथ (वेद, रामायण और गीता आदि) और शास्त्रों की मर्यादा के बीच परिपक्व और प्रवीण ब्राह्मण अपने भगवानों, देवी-देवताओं और उन की विचारधारा का खंडन कर के अत्यंत विनम्रता सहित डंडे की तरह सीधे ज़मीन पर पड़ कर नमस्कार करते हैं। यह ब्राह्मण केवल और केवल एक प्रभ को और नई विश्व धर्म की विचारधारा को स्वीकार कर के चमार गुरु रविदास को अपना गुरु धारण करते हैं।।३।।२।।

शब्द - 40

मलार वाणी भगत रविदास जी की

१ॐ सतिगुर प्रसादि।।

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते॥
साधसंगति पाई परम गते॥ रहाउ॥
मैले कपरे कहा लउ धोवउ॥
आवैगी नीद कहा लगु सोवउ॥१॥
जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ॥
झूठै बनजि उठि ही गई हाटिओ॥२॥
कहु रविदास भइओ जब लेखो॥
जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ॥ ३॥१॥३॥[1]

(पन्ना 1293)

पद-अर्थ - **प्राणनाथु**-प्राणों से प्यारे प्रभ। **ते**-से। **परम गते**-उच्चतम आत्मिक अवस्था, प्रभ प्राप्ति।रहाउ।।

मैले कपरे-मलिन अंत:करण। **कहा लउ**-कितने समय तक। नींद-अविद्या, अज्ञानता की नींद।।१।।

फाटिउ-दूर हो गया, पवित्र हो गया। **झूठे वनजि**-पापों का व्यापार, विकारों की घटिया कमाई, बुरे कर्मों की कमाई। **उठि ही गई**-नष्ट हो गई। **हाटिउ**-बुरे व्यापार करने की जगह, मन। झूठे-हाटिउ-मन में से पापों की कमाई का नाश हो गया है और मुक्ति प्राप्त हो गई है।।२।।

भयउ जब लेखो-साध सँगत में मुक्ति के पीछे, ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति के पीछे जब जांच पड़ताल हुई।।३।।३।।

1. आदि ग्रन्थ - पृष्ठ : १२९३

साध-संगत के सिद्धांत की संपूर्णता

इस शब्द में गुरु रविदास जी ने अपनी समूची वाणी में निरूपित विचारधारा के केंद्रीय और प्रमुख सिद्धांत सत्संगत तथा साध संगत को संपूर्ण किया है और किया भी 'रहाउ' में है। जिस से प्रमुख सिद्धांत की स्पष्टता और भी मजबूत हो जाती है। इस शब्द के सृजन से साध-संगत का सिद्धांत संपूर्ण हो जाता है।

1. शब्द 'संत तुझी तनु' में (साध संगत की रचना)

साध-सँगत की रचना में कौन-कौन से तत्व मिले हुए हैं, उनके बारे में स्पष्ट किया गया है। जो संतों के साथ साध-संगत की बनावट बनी है, वह संत प्रभ रूप हैं, 'संत अनंतहि अंतरु नाहि।।'

2. शब्द 'तुम चंदन हम इरंड बापरे' में (साध संगत का प्रयोग)

साध संगत के बीच जाने के लिए सेवक में कौन-कौन से गुण होने चाहिएं? साध-संगत के बीच सेवक इस प्रकार घुल मिल जावे, जिस प्रकार मधुमक्खी शहद के छत्ते में घुल मिल जाती है। यह साध-संगत और सेवक के बीच अमली प्रक्रिया (Practical) है। इस शब्द में सेवक संत नहीं बनता, बल्कि यह पूर्ण रूप से स्पष्ट किया गया है कि प्रभ की सेवा न करने से प्रभ प्राप्ति नहीं होती है। प्रभ की सेवा साध-संगत द्वारा ही हो सकती हैं।

3. शब्द 'मिलत पिआरे प्राणनाथ' में
(साध संगत की शक्ति के कारण सेवक में तबदीली)

साध-संगत में जाकर सेवक में जो तबदीली आती है, उसका ज़िक्र है। यहां सेवक/ साध/भगत बनता है, जो संतों के इकट्ठे होने से संगत का रूप बनता है। जो संतों के समूह ने साध-संगत का रूप धारण करना होता है, उस संत का सृजन मुकम्मल रूप में इस शब्द के बीच किया गया है। अब 'संत और अनंतहि' के बीच अंतर नहीं रहा, 'संत अंनतहि अंतरु नाही।।'

इस शब्द में इस तुक को यह रूप प्रदान किया गया है; 'साध

संगति पाई परम गते।।' साध संगत के बीच विचरण से प्रभ प्राप्ति हो गई है। यह सिद्धांत की संपूर्णता है।

इन तीनों शब्दों का मिलाप साध-संगत की रचना, उसके प्रयोग और साध संगत की शक्ति के कारण सेवक में तबदीली साध संगत के सिद्धांत को संपूर्णता प्रदान करती है। गुरुमत के मूलभूत उद्देश्य 'मिलत पिआरो प्राणनाथ कवन भगति ते।।' की पूर्ति के लिए अति आवश्यक एको एक सिद्धांत 'साध-संगति पाई परम गते' का सृजन महान और उत्तम चिंतक गुरु रविदास जी ने ही किया है।

शब्द का अंतरीव (आंतरिक) विचार-विधान

इस शब्द में गुरु रविदास जी प्रश्न करते हैं कि प्राणों से प्यारे प्रभ को कौन सी भक्ति द्वारा प्राप्त किया जा सकता है? अगली तुक में आप ही उत्तर देते हुए फरमाते हैं कि प्रभ को प्राप्त करने के लिए केवल और केवल साध संगत की ही ज़रूरत है।

बन्द नंबर 1 में जो तबदीली साध संगत में विचरण करते हुई है, उसका यहां उल्लेख किया गया है। गुरु जी फरमाते हैं कि यदि मुझे संतों की संगत न मिलती तो मेरे मन के विकारों की मैल नहीं उतरनी थी। मैं अज्ञानता के बीच ही भटकता रहता। यह साध संगत की कृपा ही है कि मेरा मन पवित्र हो गया है।

बन्द नंबर 2 में गुरु जी बन्द नंबर 1 में आए विचारों को और स्पष्ट करते हुए फरमाते हैं कि साध संगत के बीच आने से पहले के बुरे कर्मों का व्यापार होता था, वह व्यापारिक केंद्र ही खत्म कर दिया गया है। माया के दूत पांचों विकारों का व्यापारिक केंद्र मन के अंदर स्थापित था, उस व्यापारिक केंद्र को जड़ से ही नष्ट करके, मन की आंतरिक पूर्ण सफाई कर दी गई है। अब मन के अंदर प्रभ के प्रेम का प्रभाव चल रहा है। प्रभ प्राप्ति हो गई है।

बन्द नंबर 3 में साध संगत में विचरण करने के पीछे की परम आत्मिक अवस्था का वर्णन है। गुरु जी फरमाते हैं कि जब कर्मों की जांच पड़ताल होती है तो वह सब कुछ सामने जो कुछ देखा और सुना है साध संगत की कृपा के साथ बुरे कर्मों का नाश होता भी देखा है और उसकी जगह साथ संगत की बख्शिश के साथ मन पूरी तरह पवित्र होने के उपरांत परम आत्मिक अवस्था में परमानंद का प्रभाव भी देखा है। प्राणों की अपेक्षा प्यारे प्रभ की प्राप्ति हो गई है। साध संगत की अपार कृपा से यही राग मलार है -

'मलार शीतल राग है
हरि धिआईऐ शांति होइ।।'

शब्दार्थ - गुरु रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि प्राणों के प्यारे प्रभ की प्राप्ति किसी और भक्ति से नहीं हो सकती है। मुझे प्रभ प्राप्ति केवल साध संगत के बीच विचरण करने से ही हुई है।।रहाउ।।

चाहे मैं कितनी ही भक्ति करता रहता, संतों की संगत के बिना मेरा मैला अंत:करण पवित्र नहीं हो सकता था। पता नहीं मैं अज्ञानता में कितना समय भटकता रहता, यदि मुझे संतों की संगत न मिलती।

साध संगत में विचरण कर के जो-जो बुरे कर्म किए थे, उन सब का नाश हो गया है और जहां ये बुरे कर्म हुए थे, घटिया व्यापार होता था, उन व्यापारिक स्थानों का अंदर जो पूर्ण तौर से नाश करके सफाया कर दिया गया है अर्थात् मलीन मन पवित्र हो गया है, मुक्ति प्राप्त हो गई है।।२।।

कहि रविदास! साध संगत के बीच में से ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के पीछे पहले किए गए कर्मों की जांच पड़ताल हुई तब, जो-जो किया था प्रत्यक्ष दिखाई दिया। साध संगत के बीच विचरण करने से पहले का बुरे कर्मों का लेखा भी देखा गया है। उस के पीछे परम आनंद की प्राप्ति का प्रवाह भी देखा गया। इस प्रकार प्राणों की अपेक्षा प्यारे प्रभ की साध-संगत की कृपा से प्राप्ति हो गई है।।३।।३।।